सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

२६

(जनवरी - अप्रैल १९२५)

मद्रासकी सार्वजनिक सभामें, एस० सत्यमूर्ति और एस० श्रीनिवास आयंगरके साथ

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

२६

(जनवरी – अप्रैल १९२५)

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मन्त्रालय

भूमिका

इस खण्डमे १६ जनवरीसे लेकर ३० अप्रैलतक साढे तीन महीनेका समय आता है। इस अवधिमे गाधीजीका अधिकाश समय दौरेमे व्यतीत हुआ। खण्डका आरम्भ गुजरातमे हुई कई परिषदोमें दिये गये भाषणोसे होता है। फरवरीके आरम्भमे गाधीजीने रावलपिंडी जाकर कोहाटके हिन्दुओ और वहाँकी मुस्लिम आबादीके बीच मेलजोल करानेकी कोशिश की, किन्तु व्यर्थ। वहाँसे लौटकर उन्होने दक्षिण गुजरात और सौराष्ट्र-का दौरा किया और तत्पश्चात् उन्होने एक माह दक्षिणमे, ज्यादातर त्रावणकोरमे, व्यतीत किया। वहाँ वाइकोममे एक विशेप रूपसे अपमानजनक ढगकी अस्पृश्यताके विरुद्ध पिछले एक वर्षसे सत्याग्रह चल रहा था। अप्रैलके आरम्भमे उन्होने सौराष्ट्रका दौरा पूरा किया और अप्रैलके मध्यमे दक्षिण गुजरातका दौरा पूरा किया। २५ अप्रैलको उन्होने सी० एफ० एन्ड्र्यूजको एक पत्रमे लिखा ‘मै एक जगहसे दूसरी जगहका दौरा ही करता रहता हूँ और साँसतक नही ले पाया हूँ। बगालकी आगामी कठिन परीक्षाकी तैयारीके खयालसे मै चार दिन तिथिलमे रहकर कुछ शक्ति सचित कर रहा हूँ” (पृष्ठ ५३७)। १ मईको वे कलकत्तामे थे।

काग्रेस-अध्यक्षकी हैसियतसे गाधीजीने १९२५ के लिए अपना कार्यक्रम निर्धारित कर लिया था। १६ अप्रैलको ‘यग इडिया’ मे लिखते हुए उन्होने कहा “मुझे तो अपने-आपको ऐसे कार्यकर्त्ताओको तैयार करनेमे लगाना है जो कार्यदक्ष हो, अहिसापरायण हो, आत्म-त्यागी हो, जो चरखे और खादीमे, हिन्दू-मुस्लिम एकतामे, और यदि वे हिन्दू हो तो अस्पृश्यता-निवारणमे भी जीवन्त विश्वास रखते हो। कमसे-कम इस सालके लिए तो राष्ट्रका यही कार्यक्रम है, दूसरा नही” (पृष्ठ ५०५)। गाधीजीका पक्का विश्वास था कि इस तीन-सूत्री कार्यक्रमका सफल कार्यान्वियन ही ऐसी आन्तरिक शक्ति उत्पन्न करनेका एकमात्र साधन था जिसके बिना विधान परिषदोमे स्वराज्यवादी दलका काम निष्प्रभावी होगा। किन्तु वह अच्छी तरह समझते थे कि यह एक दुष्कर कार्य है। लोग उनकी सभाओमे बडी सख्यामे उपस्थित होते थे, किन्तु कताई और खादीके प्रति गाधीजीके आग्रहका उनपर कोई प्रभाव नही पडता था। कलकत्ता जाते हुए नागपुर स्टेशनपर उन्हे इस सत्यका प्रत्यक्ष और कटु अनुभव हुआ। प्लेटफार्मपर बहुत बडी भीड उनके दर्शनोके लिए इकट्ठी हो गई थी। “वे मेरे दर्शन हर्षविह्वल होकर कर रहे थे। परन्तु उनका यह हर्ष मेरे लिए व्यथा ही था। जबान-पर तो मेरा नाम और सिरपर काली टोपी। कैसा भीषण विरोध? कितना असत्य? इस भीडको साथ लेकर मै स्वराज्यकी लडाई नही लड सकता” (पृष्ठ ५७२)। इस अनुभवने उन्हे उदास कर दिया, लेकिन हतोत्साह नही किया। “यह खादीके प्रति विद्रोह नही तो उदासीनता अवश्य है। इसे देखकर खादीके प्रति मेरी श्रद्धा और भी बढ जाती है” (पृष्ठ ५७१)। गाधीजीकी रायमे खादी कुछ हदतक बेरोजगारी कम करनेके एक साधनके रूपमे महत्त्व रखती थी, किन्तु इसके अलावा उनकी रायमे खादी

कार्यक्रमका राजनीतिक महत्त्व भी था जिसे उन्होंने एक अग्रेज मित्रको इस प्रकार समझानेकी कोशिश की "स्वराज्य शान्तिपूर्ण उपायोंगे तभी मिल सकता है जब, किसी बहुत थोटी ही अवधिके लिए और बहुत सामान्य कामके लिए ही क्यो न हो, हिन्दुस्तान-की सारी जनता एक मनसे कोई रचनात्मक और उपयोगी काम करे। ऐसा प्रयत्न राष्ट्रके पूरी तरह जागरूक हो चुकनेकी अपेक्षा तो रखता ही है। यह उद्देश्य केवल चरखेके द्वारा ही साध्य हो सकता है" (पृष्ठ ४७)। तथापि अपने सार्वजनिक भाषणोमे वह खादीके आर्थिक और मानवके लिए कल्याणकारी फलितार्थोकी ही चर्चा करते थे।

हिन्दू-मुस्लिम समस्या इतनी जटिल हो गई थी कि गाधीजीने फिलहाल उसके सम्बन्धमे कुछ न करनेमे ही बुद्धिमानी मानी। अपने धर्मसकटको ७ मार्चको मद्रासकी एक सार्वजनिक सभामे स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा "फिलहाल मैंने इस समस्याको ताकपर रख दिया है, किन्तु इसका यह मतलब नही है कि मुझे इसके सुलझनेकी कोई आशा नही रही है। जबतक मुझे इसका कोई हल नही मिलता तबतक मेरा मस्तिष्क इस समस्यापर विचार करता ही रहेगा। किन्तु मुझे यह बात स्वीकार करनी ही होगी कि मै कोई ऐसा व्यवहार्य हल, जिसकी आप आशा करते है, फिलहाल प्रस्तुत नही कर सकता" (पृष्ठ २३९)। उन्होंने 'मेरी स्थिति' (१६-४-१९२५) शीर्षक लेखमे अपनी लाचारी पुन स्वीकार की "मै हिन्दू मुस्लिम एकतामे जान नही डाल सकता। सो उसके लिए मुझे कोई प्रत्यक्ष कार्यवाही करनेकी जरूरत नही। एक हिन्दूकी हैसियतसे मै उन तमाम मुसलमानोकी सेवा करूँगा जो मुझे करने देगे। जो मेरी सलाह चाहेगे मै उन लोगोको सलाह दूंगा। उन दूसरोकी मै चिन्ता करना छोड देता हूँ जिनके लिए मै कुछ नही कर सकता। लेकिन मुझे अपने मनमे पूर्ण विश्वास है कि एकता जरूर होगी, चाहे वह कुछ घमासान लडाइयोके बाद ही क्यो न हो, किन्तु होगी जरूर" (पृष्ठ ५०६)।

ऐसे पारस्परिक अविश्वासके वातावरणमे गाधीजीने दो सवालोपर अपने-आपको एक ऐसी स्थितिमे पाया जिसे आसानीसे गलत समझा जा सकता था। गत सितम्बरमे कोहाटके दगोके कारणोकी जॉच करने और दोनो सम्प्रदायोके बीच मेलजोल स्थापित करनेका काम शौकत अली और गाधीजीने सयुक्त रूपसे करनेका बीडा उठाया था। इस जॉच-कार्यमे स्थानीय मुसलमानोने उनकी मदद करनेसे इनकार कर दिया, और जो भी साक्ष्य उपलब्ध था उसके आधारपर गाधीजी और मौलाना अलग-अलग निर्णयोपर पहुँचे। इस आपसी मतभेदको सार्वजनिक रूपसे स्वीकार करनेमे यह खतरा था कि उसे गलत रूपमे पेश किया जायेगा और साम्प्रदायिक तत्त्व उसका नाजायज लाभ उठायेगे। १९२०-२१ मे खिलाफत आन्दोलन आरम्भ होनेके समयसे ही गाधीजी और मौलाना शौकत अलीने मिलजुलकर काम किया था और गाधीजीने जनसाधारण मुसलमानकी सद्भावना जीत ली थी। एक साम्प्रदायिक प्रश्नपर इन दोनो नेताओके मतभेदका उनके निजी सम्बन्धोपर असर पडता या न पडता, लेकिन उसका देशके सामान्य वातावरण-पर बुरा असर पडना निश्चित था। गाधीजीने मामलेको बडी सावधानीके साथ और सम्यक् रूपसे मौलाना और सामान्य जनताके सामने प्रस्तुत किया। अपने आपसी

मतभेदका सार्वजनिक रूपसे स्वीकार करनेके सम्भावित परिणामोंसे वह अवगत थे। "मैं अपना वक्तव्य प्रकाशित करनेके विचारतकसे काँप उठता हूँ। उसके प्रकाशनसे कटुतापूर्ण विवाद छिड़ जायेगा" (पृष्ठ १८५)। लेकिन सत्यकी शक्तिमें उनकी निष्ठा पूर्ण थी और उन्हें लगा कि खतरा अवश्य उठाया जाना चाहिए। "लेकिन यदि एक ही निष्कर्षपर पहुँचनेके हमारे सभी उपाय विफल हो जाये तो हमें जनताके समक्ष अपने मतभेद प्रस्तुत करने और उसपर यह बात जाहिर कर देनेका साहस अवश्य रखना होगा कि इन मतभेदोंके बावजूद हम दोनोंके बीच प्रेम बना रहेगा, और हम साथ-साथ काम करते रहेंगे" (पृष्ठ १८५)। हकीम अजमलखाने सुझाव दिया, और पंडित मोतीलाल नेहरू उनसे सहमत थे, कि वक्तव्योंको प्रकाशित नही करना चाहिये। लेकिन गांधीजीने १९ मार्चको दोनों वक्तव्य इस स्पष्टीकरणके साथ अखबारोंको, दे दिये "लेकिन हम, कमसे कम मैं तो इस नतीजेपर पहुँचा हू कि जनताको, जो मुझे और अली भाइयोंको कुछ सार्वजनिक प्रश्नोंपर हमेशा एक मानती थी, यह भी जान लेना चाहिए कि कुछ प्रश्नोंपर हममें भी मतभेद हो सकता है। इस मतभेदके बावजूद हमारे मनमें यह शंका नही आई कि हममें से किसीने जानबूझकर पक्षपात किया है या सत्य प्रमाणोंको तोड़-मरोड़कर उनसे अपना मतलब निकाला है और न इससे हमारे आपसी प्रेममें कोई फर्क ही आया है। हम यदि खुले तौरसे अपने मतभेदोंको स्वीकार कर लेंगे तो वह जनताके लिए आपसी सहनशीलताका एक पदार्थपाठ बन सकेगा" (पृष्ठ ३३३)।

दूसरा प्रश्न जिसपर गांधीजीके रुखसे विवाद उत्पन्न हुआ, वह भी बहुत नाजुक था। एक समाचारके अनुसार अफगानिस्तानमें अहमदिया सम्प्रदायके दो सदस्योंको धर्मत्यागके दण्ड-स्वरूप पत्थर फेंक-फेंककर मार डाला गया था। इस समाचारपर 'यंग इंडिया' में टिप्पणी करते हुए गांधीजीने लिखा था "मुझे मालूम हुआ है कि 'कुरान' में केवल कुछ अवस्थाओंमें ही संगसारीकी हिदायत दी गई है, किन्तु जिन मामलोंपर हम विचार कर रहे हैं उनपर ये अवस्थाएँ लागू नही होती। मैं मनुष्य हूँ और ईश्वरसे डरता हूँ। इस रूपमें किन्ही भी स्थितियोंमें ऐसे तरीकोंकी नैतिकतापर मुझे शंका करनी चाहिए। . . . प्रत्येक धर्मके प्रत्येक नियमको विवेकके इस युगमें पहले तर्क और व्यापक न्यायकी अचूक कसौटीपर कसना होगा। तभी उसपर संसारकी स्वीकृति मागी जा सकती है। किसी भूलका समर्थन ससारके समस्त धर्मग्रन्थोंमें भी किया गया हो तो भी वह इस नियमसे मुक्त नही हो सकती" (पृष्ठ १९५-९६)। कट्टरपन्थियोंके लिए यह रवैया बहुत ही क्रान्तिकारी था और इसपर कुछ आक्रोशपूर्ण आपत्तियाँ की गई। पजाब खिलाफत समितिके अध्यक्षने लिखा "आपने . . . अपने लाखों मुसलमान प्रशसकोंके दिलमें यह भावना पैदा कर दी है कि आप उनकी रहनुमाई करने लायक नही है" (पृष्ठ २२०)। गांधीजीने स्पष्ट किया कि उन्होंने 'कुरान' की नही, केवल उसके व्याख्याकारोंकी आलोचना की है। लेकिन ऐसा कतई नही था कि वह अपने बचावपर आ गये हों। उन्होंने बहुत स्पष्ट रूपसे घोषणा की कि "खुद 'कुरान' की शिक्षाएँ भी आलोचनासे मुक्त नही रह सकती" (पृष्ठ २२१)। उन्होंने अपनी स्थिति और स्पष्ट करते हुए

लिखा "इस्लामके सम्बन्धमे लिखते समय मै उसकी इज्जतका खयाल उतना ही रखता हूँ, जितना हिन्दू धर्मकी इज्जतका। इस्लामकी व्याख्या करनेके लिए मै वही पद्धति अपनाता हूँ जो हिन्दू धर्मके लिए। मै हिन्दू धर्मग्रथोके किसी भी आदेशका समर्थन केवल इस आधारपर नही करता कि वह शास्त्रकी आज्ञा है। इसी तरह मै 'कुरान' की किसी बातको भी केवल इसलिए नही मान सकता कि वह 'कुरान' मे लिखी है। प्रत्येक बात विवेककी कसौटीपर कसी जानी चाहिए। लोगोकी विवेक-बुद्धिको इस्लाम जंचता है, तभी वह उन्हे पसन्द आता है" (पृष्ठ ४१०)।

धर्मके मामलेमे रूढि और शास्त्रोके बारेमे गाधीजीका जो आलोचनात्मक रवैया था वह अस्पृश्यताके विरुद्ध उनके अनवरत अभियानसे बहुत सशक्त रूपसे प्रकट होता है। गुजरात और दक्षिण भारत, दोनो जगहोपर उन्होने लोगोकी विवेक बुद्धिको स्पर्श करनेकी कोशिश की। मद्रासकी एक सार्वजनिक सभामे उन्होने कहा "यदि कोई मुझसे कहे कि शास्त्रोमे किसी ऐसी बुराईका समर्थन है तो मुझे ऐसे शास्त्रोकी जरूरत नही, लेकिन जिस प्रकार सभामे हमारी उपस्थिति की बात निश्चित है उसी प्रकार मै निश्चित रूपसे जानता हूँ कि शास्त्रोमे ऐसी किसी पैशाचिकताका प्रतिपादन या आदेश नही है। यह कहना कि जन्मके कारण कोई भी मनुष्य अस्पृश्य, अनुपगम्य या अदर्शनीय हो जाता है, ईश्वरकी सत्ता माननेसे इनकार करना है" (पृष्ठ ३६८)। उन्होने इस बुराईको उसके सबसे खराब रूपमे त्रावणकोर राज्यमे देखा था। "धर्मान्ध लोग, कुछ लोगोको देखनातक पाप समझते है। नयाडी लोगोके लिए तो यह आवश्यक होता है कि वे सवर्णोकी नजरके सामने भी न आये। मैने त्रिचूरमे इस जातिके दो मनुष्य देखे थे जिनकी देह तो मनुष्यकी थी पर फिर भी वे मनुष्य नही थे। (हँसी) भाइयो, यह हँसनेकी बात नही, खूनके आँसू बहानेकी बात है" (पृष्ठ३६८)। इस यात्रामे गाधीजीका मुख्य उद्देश्य था कि वे इन अभागी जातियोके लिए एक सार्वजनिक सडकको खुलवानेके लिए वाइकोम-मे चल रहे सत्याग्रहके पक्षमे जनमत तैयार करे। इस उद्देश्यसे वे राज्यके अधिकारियोसे तथा कट्टरपन्थियोके प्रतिनिधियोसे भी मिले। उन्होने इन प्रतिनिधियोके सम्मुख तीन वैकल्पिक प्रस्ताव रखे, जो तीनो ठुकरा दिये गये। इसपर भी गाधीजीने सत्याग्रहियोको सलाह दी कि वे सुधारके विरोधियोके प्रति सद्भाव रखे और उन्हे अपने उद्देश्यकी सचाईका श्रेय दे। "मैने पाया है कि जहाँ पूर्वग्रह युगो पुराने हो और तथा-कथित धार्मिक प्रमाणोपर आधारित हो, वहाँ केवल तर्कद्वारा समझानेकी कोशिश बेकार जाती है। तर्कको कष्ट-सहन द्वारा मजबूत करना होगा और कष्टसहन विवेकको जगा देता है। इसलिए हमारे कार्योमे जबरदस्ती लेश-मात्र भी नही होनी चाहिए" (पृष्ठ २६५)।

अपने अस्पृश्यता-विरोधी अभियानके दौरान गाधीजीसे जाति प्रथा तथा अतर्जातीय भोज और विवाहोपर लगे प्रतिबन्धोके बारेमे उनके विचार पूछे जाते थे। उन्होने कहा "मै अस्पृश्यता और वर्ण या जातिमे बहुत बडा अन्तर मानता हूँ। अस्पृश्यताका कोई वैज्ञानिक आधार नही है। मेरी रायमे वर्ण-व्यवस्थाका आधार वैज्ञानिक

है" (पृष्ठ २८५)। एक अन्य सन्दर्भमे उन्होने स्पष्ट किया है कि वर्ण-व्यवस्था 'जन्मके आधारपर किया गया स्वस्थ कार्य-विभाजन' है (पृष्ठ ५३२)। लेकिन उन्होने तुरन्त ही यह भी कहा कि जातियो-सम्बन्धी वर्तमान विचार मूल व्यवस्थाके विकृत रूप है। गाधीजी अन्तर्जातीय भोज या विवाहपर लगे प्रतिबन्धोको हटानेको आवश्यक सुधार भी नही मानते थे। "स्वय लगाये गये प्रतिबन्धोका स्वच्छता तथा आध्यात्मिकताकी दृष्टिसे अपना मूल्य है। किन्तु इनका पालन न करनेमे आदमी न तो नरकमें चला जाता है और न इनका पालन करनेसे स्वर्गमे पहुँच जाता है" (पृष्ठ ५६५)। पारम्परिक ब्राह्मण सस्कृतिमे जो चीज गाधीजी बहुत मूल्यवान् मानते थे, वह इन प्रतिबन्धोमे निहित आत्मसयमका सिद्धान्त था। "मै नही चाहता कि ब्राह्मणोको बरबाद करके अब्राह्मण ऊँचे उठे। मै यह जरूर चाहता हूँ कि वे उस ऊँचाईको पहुँच जाये जहाँ अबतक ब्राह्मण पहुँचे हुए थे" (पृष्ठ ३२७)।

अपने तीन लेखोमे (शीर्षक ६२, २६७ और ३२०) एक क्रान्तिकारीको मुखातिब करते हुए गाधीजीने स्पष्ट रूपसे और धीरजके साथ उस जीवन-दर्शनका प्रतिपादन किया जिसका वे उपदेश कर रहे थे और स्वय अमलमे लानेका प्रयत्न कर रहे थे। "किसी शैतानी व्यवस्थाके मुकाबलेमे सशस्त्र षड्यत्र रचना मानो शैतानके मुकाबले शैतान खडा करना है। पर चूँकि एक ही शैतान मेरे लिए बहुतसे शैतानोके बराबर है, इसलिए मै उसकी सख्या न बढने दूँगा। मेरी प्रवृत्ति उद्योगहीन है या वह उद्योगमय है, यह तो आगे चलकर मालूम होगा। यदि तबतक उसके फलस्वरूप एक गज की जगह दो गज सूत कते तो उससे उतना हित तो होगा ही। भीरुता चाहे दार्शनिक हो, चाहे किसी दूसरी तरहकी, मै उससे घृणा करता हूँ" (पृष्ठ ४८१-८२)। और उन्होने मर्त्य लोगोके धर्ममे तथा अवतारी पुरुषोके रहस्योमे बहुत बडा अन्तर बताया। "श्रीकृष्ण-के नामको बीचमे घसीटना फिजूल है। यदि हम उन्हे मानते हो तो हम उन्हे साक्षात् ईश्वर माने अथवा फिर बिलकुल न माने, यदि मानते है तो फिर हम उनमे सर्वज्ञता और सर्वशक्तिमत्ता होना मानते है। ऐसी शक्ति अवश्य सहार कर सकती है। पर हम तो ठहरे पामर मर्त्य। हम हमेशा भूले करते रहते है और अपने विचार और राये बदलते रहते है। यदि हम 'गीता' के गायक कृष्णकी नकल करेंगे तो हम घोर विपत्तिमे पडेंगे" (पृष्ठ ५६३)।

गाधीजी पारम्परिक हिन्दू भावनासे पूरी तरह आप्लावित थे और उसे उन्होने जिस प्रकार व्यावहारिक और रचनात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करनेकी कोशिश की उसे गोरक्षा सम्बन्धी उनके रुखसे देखा जा सकता है। उन्होने गायके वधको रोकनेके लिए अन्य सम्प्रदायोके लोगोसे लडनेकी अपेक्षा अपने हिन्दू भाइयोसे कहा कि वे आदर्श गोशालाएँ और दुग्धशालाएँ स्थापित करे जिनमे कमजोर और अपग गायोको भी प्रश्रय दिया जाये। उन्होने अन्य कार्यकर्त्ताओंके साथ मिलकर अखिल भारतीय गोरक्षा मडल स्थापित किया और उसका सविधान तैयार किया। उन्होने जवाहरलाल नेहरूको एक पत्र-लिखकर गायके प्रति अपने प्रेमको युक्तियुक्त ढँगसे स्पष्ट करनेका प्रयत्न किया। "गाय तो प्राणि-मात्रका सिर्फ प्रतीक है। गोरक्षाका अर्थ है दुर्बलो, असहायो, गूगो और बहरोकी

रक्षा। फिर तो मनुष्य सारी सृष्टिका प्रभु और स्वामी न रहकर सेवक बन जाता है। मेरी रायमे गाय दयाका जीता-जागता उपदेश है।" (पृष्ठ ५३९)।

तर्क और भावनाका यह मेल गाधीजीके धार्मिक दृष्टिकोणका सार था। एक मित्रको, जिन्होने काग्रेसकी शपथमे ईश्वरके नामके उल्लेखपर आपत्ति उठाई थी, उन्होने पत्रमे लिखा "मेरा ईश्वर तो मेरा सत्य और प्रेम है। नीति और सदाचार ईश्वर है। निर्भयता ईश्वर है। ईश्वर अन्तरात्मा ही है। वह तो नास्तिकोकी नास्तिकता भी है" (पृष्ठ २१८)। लेकिन स्वय गाधीजीके लिए ईश्वर एक कोरा सिद्धान्त या अनुमान नही था। उसकी उपस्थितिको वे बडी गहराईके साथ अनुभव करते थे। "हम कुछ नही है, सिर्फ वही है; और अगर हम हो तो हमे सदा उसके गुणोका गान करना चाहिए और उसकी इच्छानुसार चलना चाहिए। आइए, उसकी बसीकी धुनपर हम नाचे। सब अच्छा ही होगा" (पृष्ठ २१९)। गोरक्षा मडलकी अध्यक्षता स्वीकार करते हुए उनके मनकी जो अवस्था थी उससे उनकी धार्मिक भावनाकी शक्ति प्रकट होती है "लिखते हुए मेरे हाथ काँप रहे है। आँखोमे आँसू है। जिस प्रकार किसी बालकको खूब खानेकी इच्छा तो हो पर खानेकी शक्ति न होनेके कारण वह फूट-फूट कर रोता है, मेरी स्थिति भी कुछ वैसी है। मै लोभी हूँ। मै धर्मकी विजय देखने और उसे ससारके सामने रखनेके लिए बडा आतुर हूँ। तूफानी समुद्रमे मेरी अभिलाषा-रूपी नैया डोल रही है" (पृष्ठ ३१४-१५)। और भावनाका यह आवेग उनके मनमे एक दिन पहले कन्याकुमारीकी यात्राकी स्मृतिके कारण उमडा था। "कन्याकुमारीके दर्शन" शीर्षक लेखमे उन्होने लिखा "समुद्रकी लहरोका मद और मधुर सगीत तो समाधिमे सहायक होता है। . . . 'गीता'कारका मन-ही-मन स्मरण करके मै शान्त बैठा रहा" (पृष्ठ ४२०)।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमे गाधीजीके स्वाक्षरोमे मिली है, उसे अविकल रूपमे दिया गया है। किन्तु दूसरो द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमे हिज्जो-की स्पष्ट भूले सुधार दी गई है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय उसे यथासम्भव मूलके समीप रख-नेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद हमे प्राप्त हो सके है, हमने उनका मूलसे मिलान और संशोधन करनेके बाद उपयोग किया है। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोके उच्चारणमे संशय था, उनको वैसा ही लिखा गया है, जैसा गाधीजीने अपने गुजराती लेखोमे लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोमे दिये गये अंश सम्पादकीय है। गाधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमे उद्धृत किया है वह हाशिया छोडकर गहरी स्याहीमे छापा गया है। भाषणोकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गाधीजीके कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोडे गहरी स्याहीमे छापे गये है। भाषणो और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोमे जो गाधीजीके नही है, कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि दाये कोनेमे ऊपर दे दी गई है, जहाँ वह उपलब्ध नही है, वहाँ अनुमानसे निश्चित तिथि चौकोर कोष्ठकोमे दी गई है और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोमे केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हे आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमे रखा गया है। शीर्षकके अन्तमे साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गाधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ है वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

साधन-सूत्रोमे 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमे उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गाधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमे उपलब्ध कागज-पत्रोका, और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गाधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गाधी) द्वारा संगृहीत पत्रोका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध परिशिष्ट तथा अन्तमे साधन-सूत्रोकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई है।

विषय-सूची

१. पत्र : सी० एफ० एन्ड्र्यूजको

सोजित्रा
१६ जनवरी, १९२५

प्रिय चार्ली,

मैं नही जानता कि तुम मुझसे श्री एलेक्जेंडरको[1] किस आशयका तार भिजवाना चाहते हो। क्योंकि पहले जो अधिकारपत्र भेजा जा चुका है वह पर्याप्त रूपसे व्यापक है। फिर भी यदि तुम मुझसे दूसरा अधिकारपत्र भिजवाना चाहते हो तो मुझे मसविदा और पता भेज दो। मैं बहुत थका हुआ हूँ, अधिक नही लिखूंगा।

सस्नेह।

तुम्हारा,
मोहन

[पुनश्च]

मुस्लिम लीगके बारेमे मत सोचो। इस मामलेमें कांग्रेस सबका प्रतिनिधित्व करती है।

अंग्रेजी प्रति (जी० एन० २६१९) की फोटो-नकलसे।

२ भाषण : महिला परिषद्, सोजित्रामें[2]

१६ जनवरी, १९२५

मैं बहनोंके सामने राम-राज्यकी बात करता हूँ। राम-राज्य स्वराज्यसे भी अधिक है। इसलिए वह कैसा होता है, मैं इसीके बारेमे बताऊँगा, स्वराज्यके बारेमें नही। राम-राज्य वही हो सकता है, जहाँ सीताका होना सम्भव हो। हम हिन्दू बहुतेरे श्लोकोंका पाठ करते हैं। उनमें एक श्लोक स्त्रियोंके विषयमें है। इसमें प्रातःस्मरणीय स्त्रियोंके नाम लिए गये हैं। कौन हैं ये स्त्रियाँ?[3] जिनके नाम लेनेसे पुरुष और स्त्रियाँ सभी पुनीत हो जाते हैं। सती स्त्रियोंमें सीताका नाम तो सदा ही लिया जाता है। हम "राम-सीता" नही कहते, "सीता-राम" कहते हैं और इसी प्रकार "कृष्ण-राधा" न

१ होरेस एलेक्जेंडर, जेनेवामें होनेवाले अन्तर्राष्ट्रीय अफीम सम्मेलनमें 'सोसाइटी ऑफ फ्रेंड्स ऑफ ग्रेट ब्रिटेन' के प्रतिनिधि। देखिए खण्ड २५, पृष्ठ २३६।

२ गुजरातके पेटलाद जिलेमें।

३ तारा, कुंती, अहिल्या, मंदोदरी, द्रौपदी।

कहकर "राधा-कृष्ण" कहते है। सुग्गेको भी यही पढाया जाता है। हम सीताका नाम पहले लेते है, इसका कारण यह है कि पवित्र स्त्रियाँ न हो, तो पवित्र पुरुषोका होना असम्भव है। वालक माता जैसे ही वनेगे, पिता जैसे नही। माताके हाथमे वालककी वागडोर होती हे। पिताका कार्यक्षेत्र वाहर है, इसीलिए मै सदा कहता आया हूँ कि जवतक सार्वजनिक जीवनमे भारतकी स्त्रियाँ भाग नही लेती, तवतक हिन्दुस्तानका उद्धार नही हो सकता। सार्वजनिक जीवनमे वही भाग ले सकेगी जो तन और मनसे पवित्र है। जिनके तन और मन एक ही दिशामे — पवित्र दिशामे चलते जा रहे हो, जवतक एसी स्त्रियाँ हिन्दुस्तानके सार्वजनिक जीवनको पवित्र न करे, तवतक राम-राज्य अथवा स्वराज्य असम्भव है। अथवा स्वराज्य सम्भव हो, तो वह ऐसा स्वराज्य होगा, जिसमे स्त्रियोका पूरा-पूरा भाग नही रहेगा। और जिस स्वराज्यमे स्त्रियोका पूरा-पूरा भाग न हो, वह मेरे लेखे निकम्मा स्वराज्य हे। पवित्र मन और हृदय रखनेवाली स्त्री सदा साष्टाग नमस्कार करने योग्य हे। मै चाहता हूँ कि ऐसी स्त्रियाँ सार्वजनिक जीवनमे भाग ले।

हम किसे ऐसी स्त्री कहे? कहा जाता है कि सतीका तेज चेहरेसे प्रकट हो जाता है। कोई कह सकता है कि भारतमे जितनी वेश्याएँ हैं, क्या उन सवको भी सती माने, क्योकि वे तो चेहरेको तेजवन्त रखनेका व्यवसाय ही करती है। नही, वात ऐसी नही है। मुख्य वात तो हृदयकी पवित्रता है। जिसका मन और हृदय पवित्र है, वह सती सदैव पूज्य है। हम जैसे भीतर होते है, वाहर भी वैसे] ही प्रकट होते है। यही प्रकृतिका नियम है। यदि हम भीतरसे मलिन हो, तो वाहर भी वैसे ही दिखाई देगे। दृष्टि और वाणी, ये वाह्य चिह्न है किन्तु जाननेवाला गुण-अवगुणकी पहचान इन वाह्य चिह्नोसे भी कर लेता है।

तव फिर पवित्रताका क्या अर्थ हे? इसका क्या लक्षण है? मै खादीको पवित्रता-की निशानी समझता हूँ, किन्तु यदि मै यह कहूँ कि जो खादी पहनता है, वह पवित्र हो जाता है, तो इसे मानना ठीक नही हो सकता।

मै कहता हूँ कि सार्वजनिक जीवनमे हाथ बटाओ। इसका भी क्या अर्थ है? सार्वजनिक जीवनमे भाग लेनेका अर्थ सभा-मण्डलोमे जाकर उपस्थित हो जाना नही है, वल्कि यह है कि लोग पवित्रताके चिह्नस्वरूप खादी पहनकर हिन्दुस्तानके स्त्री-पुरुषोकी सेवा करे। यदि हम राजा-महाराजाओकी सेवा करे, तो उससे क्या होगा? यदि हम वहाँ जाये, तो सम्भव है कि दरवान ही महाराजा साहवके पास न जाने दे। किसी धनिक व्यक्तिकी सेवा करनेकी इच्छाका भी 'ऐसा ही फल हो सकता है]। हिन्दुस्तान-की सेवाका अर्थ है गरीवोकी सेवा। ईश्वर अदृश्य है, इसलिए यदि हम दृश्यकी सेवा करे तो पर्याप्त है। दृश्य ईश्वरकी सेवाका अर्थ है गरीवोकी सेवा और यही हमारे सार्वजनिक जीवनका अर्थ है। यदि हमे जनताकी सेवा करनी हो तो भगवानका नाम लेकर हमे गरीवोके वीचमे जाकर चरखा चलाना चाहिए।

सार्वजनिक जीवनमे हाथ वँटानेका अर्थ गरीव वहनोकी सेवा करना है। इन वहनोकी हालत वहुत दयनीय है। गगाके उस तीरपर जहाँ जनक राजा हुए और सीताजी हुई, अपनी पत्नीके साथ मेरी इनसे मुलाकात हुई। वडी ही दयाजनक

स्थिति मैंने इनकी देखी। शरीरपर पूरे कपडे नही थे। किन्तु उस समय मैं इन्हे कपडे नही दे सका, क्योकि तबतक चरखा मेरे हाथ नही लगा था। हिन्दुस्तानकी स्त्रियोको कपडा मिलता है, फिर भी वे नग्न है। क्योकि जबतक देशमे एक भी बहनको विना कपडेके रहना पडता हो, तबतक यही माना जायेगा कि देशकी सारी स्त्रियोके पास कपडे नही है। इसी प्रकार अगर कोई स्त्री सोलह सिंगार किये हुए हो और उसका हृदय अपवित्र हो, तो उसे भी विवस्त्र ही माना जायेगा। हमे विचार करना है कि कैसे इन सबसे चरखा चलवाये ताकि वस्त्रहीनताका यह अभिशाप दूर हो।

आज तो जब सेवा करनेवाले लोग गाँवमे जाते है तो वहाँके लोगोको ऐसा लगता है कि कोई चौथ वसूल करनेवाला आ गया। उन्हे ऐसा आभास क्यो होता है? आप लोगोको यह समझ लेना चाहिए कि आप गाँवोमे देनेके लिए जाते है, लेनेके लिए नही।

हमारी माताएँ सूत कातती थी। क्या वे मूर्ख थी? मै जब आप लोगोको कातनेको कहता हूँ तो मै आपको मूर्ख लग सकता हूँ। किन्तु पागल गाधी नही है, आप खुद पागल है। आपके मनमे गरीबोके लिए दया नही है। और इसके बाद भी आप अपने मनको धीरज देना चाहते है कि देश सम्पन्न हो गया है। और फिर आप लोग सम्पन्नताके गीत गाते है। यदि आप सार्वजनिक जीवनमे पाँव रखना चाहती है। तो जनताकी सेवा कीजिए, चरखा कातिए, खादी पहनिये। यदि आपका तन और मन शुद्ध हो गया, तो आप सच्ची देशभक्त बनेगी। भगवानका नाम लेकर सूत कातिए। भगवानका नाम लेकर सूत कातनेका अर्थ है, गरीब बहनोके लिए कातना। दरिद्रको दिया गया दान ईश्वरको पूजा चढाने जैसा है। दान तो वही है जो दरिद्रको सुख पहुँचाये। आप चाहे जिसको पैसा लुटाये, तो उसका तो यही अर्थ होगा कि आप अपनी सनक पूरी करती है। जिसे ईश्वरने दो हाथ, दो पाँव और स्वास्थ्य दिया है, यदि आप उसे दान देती है, तो कहना पडेगा कि आप उसे कगाल बनानेपर तुली हुई है। कोई ब्राह्मण है, केवल इसीलिए उसे भिक्षा न दी जाये। उससे चरखा चलवाइए और फिर एक मुट्ठी ज्वार या चावल दे दीजिए। गरीबोमे जाकर खादीका प्रचार करना मनकी पवित्रताका पहला लक्षण है।

दूसरा लक्षण है अन्त्यजकी सेवा करना। आजकलके ब्राह्मण और गुरुगण आदि अन्त्यजको छूनेमे पाप मानते है। मै कहता हूँ कि यह पाप नही है, धर्म है। मै इनके साथ खाने-पीनेकी बात नही कहता। मै तो उनकी सेवाके लिए, उनके बीच जानेके लिए कहता हूँ। अन्त्यजके जो बच्चे बीमार है, उनकी सेवा करना धर्म है। अन्त्यज खाते है, पीते है, खडे होते है और बैठते है। हम सब भी यही करते है। इन सब क्रियाओमे न कोई धर्म है, न कोई पवित्रता। निश्चित अवधिमे मेरी माता भी अस्पृश्य हो जाती थी और उस समय वह अपनेको छूने नही देती थी। मेरी पत्नी भी इसी तरह अस्पृश्य हो जाती थी। कह सकते है कि उस समय वह अन्त्यज हो जाती थी। जब हमारे भगी मैला फेकनेका काम करते है, तब वे अस्पृश्य होते है। जबतक वे नहा-धो न ले, तबतक उनको न छूनेकी बात समझमे आ सकती है। किन्तु नहा-धोकर साफ सुथरे बन चुकनेके बाद भी यदि हम उन्हे नही छूते, तो फिर उनके

नहाने-धोनेका अर्थ ही क्या है। उनका तो कोई ईश्वर भी नही है। वे सोचते है कि दूसरोके भी मेरे जैसे आँख, नाक इत्यादि है, फिर भी ये लोग हमारा तिरस्कार करते है ऐसी अवस्थामे हम क्या करे? जरा इस परिस्थितिपर विचार कीजिए। क्या रामचन्द्रने अन्त्यजोका तिरस्कार किया था? उन्होने शबरीके जूठे बेर खाये थे; उन्होने निषादराजको गले लगाया था। और शबरी तथा निषादराज दोनो ही अस्पृश्य थे। इसपरसे आपको यह बात समझ लेनी चाहिए कि हिन्दू धर्मके अन्तर्गत अस्पृश्यता है ही नही।

पवित्रताका तीसरा लक्षण है मुसलमानोके प्रति मित्रभावका विकास। "यह तो मियाँ ठहरा", "मियाँ और महादेव साथ-साथ कैसे बैठ सकते है" यदि कोई ऐसा कहे, तो उसे बताइए कि आप मुसलमानोके प्रति वैरभाव नही रख सकते।

यदि आप ये तीन बाते करे, तो कहा जा सकता है कि आपने सार्वजनिक जीवनमे पूरा भाग लिया है। इस तरहके आचरणसे आप प्रात स्मरणीय बन जायेगी और ऐसा माना जायेगा कि आपने हिन्दुस्तानको तारनेका काम किया। मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप ऐसी बने।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी: खण्ड ७

३. भाषण: बारिया क्षत्रिय परिषद्, सोजित्रामें

१६ जनवरी, १९२५

भाइयो, मुझे दु ख है कि इस परिषद्का काम समाप्त करनेके लिए हमारे पास केवल १० मिनट बच रहे है, क्योकि ४ बजे अन्त्यज भाइयोको बुलाया गया है। आपने तीन प्रस्ताव पास किये। ये तीनो अत्यन्त उपयोगी है। आपने शराब न पीने-का प्रस्ताव किया, यह अच्छी बात है। यह ठीक है कि शराब न पीनेकी जरूरत केवल आप ही की जातिको नही है। और भी दूसरी कौमे पीती है। आपने यह प्रस्ताव भी किया कि पैसा लेकर लडकी न दी जाये और स्त्रियोका अपहरण न किया जाये। ये भी अच्छी बाते है। आप लोग क्षत्रिय है, और मानते है कि आपमे क्षत्रियोके गुण है। यदि आप शास्त्रोके पन्ने उलटेगे, तो आपको मालूम हो जायेगा कि सच्चा क्षत्रिय कदम बढाकर फिर उसे पीछे नही रखता। इसके सिवा वह दूसरोका रक्षक होता है। मेरे लिए कहे बिना भी आप इस बातको समझते है कि ऐसा आचरण क्षत्रियका धर्म है। इस सिद्धान्तको मान लेनेके बाद आप पीछे नही हटेगे। प्रतिज्ञा करनेका अर्थ है, वचन देना। किसी कामको करनेकी शपथ ईश्वरको साक्षी रखकर ही ली जानी चाहिए। आपने शराब न पीने, बेटी न बेचने और स्त्रियोका हरण न करनेकी प्रतिज्ञा ली है। यदि आप अपने इन वचनोका पालन नही करेगे, तो समझना चाहिए कि आपने सारे ससारके प्रति गुनाह किया है। चारो वर्णोको अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार चलना चाहिए।

वचन-भग करनेका अर्थ है पीछे हटना। इसलिए यदि आप प्रतिज्ञा लेते समय अपना हाथ ऊँचा करे और वादमे उसे भूल जाये, तो आप क्षत्रिय नही रहेगे। वह आपके लिए लज्जाकी वात होगी, इतना ही नही, मेरे लिए भी लज्जाकी वात होगी। मेरे मनपर उसका वडा वोझ रहेगा। आपके वीचमे रविशकर[1] काम कर रहे है। यदि आप उन्हे वचन दे दे कि चोरी नही करेगे और फिर चोरी करे, तो रविशकर क्या कर सकता है। सरकार आपको जेल भेज सकती है, किन्तु रविशकर तो उपवास करेगा और खुद भूखो मरेगा। उसके ऐसा करनेका अभिप्राय यह होगा कि आप लोगो द्वारा वचन-भग किये जानेकी अपेक्षा तो यह अच्छा है कि आप मुझे मार डाले। रविशकरके सामने आपने वचन लिया है, इसलिए आपके वचन तोडनेका अर्थ होगा उसके लिए उपवासका अवसर उपस्थित करना। मै भी रविशकरकी जातिका आदमी हूँ और उसके कदमसे कदम मिलाकर चलना चाहता हूँ। मै मारना तो नही जानता, किन्तु मरना जानता हूँ। आप समझ लीजिए कि रविशकर कोई अकेला आदमी नही है — एक पूरी पलटन उसके साथ है। आपको इस तरह सावधान कर देनेके वाद मै यह पूछना चाहता हूँ कि क्या आपको अपनी प्रतिज्ञा कबूल है? यह कोई नाटक नही है। मुझे नाटक करना पसन्द नही है। कोई भी जाति नाटक करके ऊँचा नही उठ सकती। हम पढे-लिखे लोगोने आपके सामने नाटक कर-करके आप लोगोको विगाड दिया है। इसलिए इस वार पूरी तरह सोच-विचार करके आप अपने हाथ उठाये। वह समय चला गया कि जव हाथ ऊँचा करनेका मतलव ही प्रतिज्ञाका पालन मान लिया जाता था। इतना मैने प्रतिज्ञाके विपयमे कहा।

अव दूसरी दो वाते कहता हूँ। एक वात यह है कि आप लोगोको खादी पहननी चाहिए। आप लोगोको यह नही मानना चाहिए कि केवल नर्मदा और सावरमतीके वीच वसा हुआ भाग ही आपका देश है। आपका देश एक वहुत वडा देश है। १९०० मील लम्वा और १५०० मील चौडा। यदि आप पैदल इसके आर-पार जाना चाहे, तो १९० दिन लगेगे। इस वडे देशमे रहनेवाले सभी व्यक्ति आपके भाई-वहन है। उसके लिए आपको सूत कातना चाहिए। कता हुआ सूत काग्रेसके पास भेजना चाहिए। खादीको सस्ता करनेका और कोई उपाय नही है। आप रोज आधा घटा काते। यदि करोडो लोग आधा घटा रोज काते, तो खादी मुफ्त मिलने लगे।

दूसरी वात है अन्त्यजोको अपनानेकी। क्षत्रियका अर्थ है गो-ब्राह्मण प्रतिपालक। गोका अर्थ दो सीगोवाला प्राणी ही नही है। गायका अर्थ है कोई भी दुखी प्राणी। अन्त्यज एक दुखी जाति है। जिस क्षत्रियने अन्त्यजको भुला दिया वह क्षत्रिय ही नही रहा। अपनेको क्षत्रिय जातिका माननेवाला यदि अन्त्यजको त्याग दे, तो वह क्षत्रिय ही नही कहा जा सकता।

मै ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह प्रतिज्ञा पालन करनेमे आपकी सहायता करे। यदि आप अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेके इच्छुक हो, तो मुझ गाँवारकी बात मानिए। जिसे भी व्रत पालना हो, वह सवेरे उठकर रामका नाम ले, सोनेके पहले

१ रविशकर महाराज, गुजरातके एक सार्वजनिक कार्यकर्ता।

रामका नाम ले और प्रार्थना करे कि हे राम, मेरे सहायक बनो, मुझे प्रतिज्ञा पूरी करनेमे सहायता दो। यदि आप ऐसा करेगे तो शराब देखकर आपका मन विचलित नही होगा, किसी बहनको देखकर मनमे विकार उत्पन्न न होगा। लडकी बेचारी तो गाय है। उसे बेचते हुए स्वय आपके मनमे अपने प्रति तिरस्कार पैदा होगा।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

४. भाषण : अन्त्यज परिषद्, सोजित्रामें

१६ जनवरी, १९२५

हमे अपने दुर्गुण न तो छिपाने चाहिए और न उनके कारण शरमाना चाहिए। बहनोको हुक्का पीते देखकर मुझे कष्ट होता है। उनके मुँहसे दुर्गंध आती है। जिन्हे शराबकी लत है उनका भी यही हाल है। शराब पीनेवालोकी क्या दशा होती है, मुझे इसका अनुभव है। भाँग पीनेवालोका भी मुझे अनुभव है। शराब और भाँग एक-सी चीजे है। मै तो यही चाहता हूँ कि आप इन सब व्यसनोका त्याग करे और यदि आप मेरी बात सुने तो माँस खाना भी बिलकुल छोड दे।

अन्त्यजोका स्पर्श न करनेवाले सज्जन अनेक आपत्तियाँ खडी करते है, जब मै उन लोगोसे बहस करता हूँ, तब वे कहते है कि 'अन्त्यज बहुत गन्दे रहते है, शराब पीते है और माँस खाते है। मै जवाब देता हूँ कि ब्राह्मणो, वैश्यो और दूसरी जातियोमे भी ऐसे लोग होते है, फिर भी उनके बच्चे शालाओमे जाते है, मन्दिरोमे जा सकते है, यह उलटा न्याय किस लिए? तथापि आपसे तो मै यही कहूँगा कि आपके खिलाफ जो-जो बाते कही जाती है उनसे आप अपनेको बरी रखे, जिससे फिर उन्हे भी कुछ कहनेकी गुजाइश न रहे। अपना काम करनेके बाद आपको रोज नहाना जरूर चाहिए। भगीका काम मैने बहुत किया है। मेरे लडकोने भी यह काम बहुत किया है। आपके रावजीभाईने[1] भी किया है। इसमे शर्मकी कोई बात है ही नही, यह तो एक पवित्र काम है। जो शख्स गन्दगी हटाता है वह पवित्र काम करता है। आप यदि खाल उतारे या साफ करे तो उसके बाद नहाये। भले आदमी हमेशा दातून करते है, दाँत साफ करते है, और नहा धोकर शरीर भी साफ रखते है। आप इतना सब करे और हाथमे माला लेकर रामनाम जपे। माला न हो तो उँगलियोपर रामनाम जपे। इस रामनामके लेनेसे आपके व्यसन छूट जायेगे, आप स्वच्छ हो जायेगे और सब आपको मान देगे। सुबह उठकर रामनाम लेनेसे और सोते समय रामनाम लेनेसे दिन अच्छी तरह बीतेगा। और रातको बुरे सपने भी नही आयेगे। स्वच्छ रहनेके लिए यह भी जरूरी है कि किसीकी जूठन या किसीका दिया हुआ बासी भोजन न लिया जाये। मेवा-मिठाई भी यदि जूठी दी जाये तो स्वीकार न करे और खुद हाथसे

१ रावजी भाइ पटेल, विगत कुछ वर्षोंसे वे जिलेके अन्त्यजोमें काम कर रहे थे।

बनाकर खाये। आपका जन्म जूठन खानेके लिए नही हुआ है। आपके भी आँख है, नाक ह, कान है। आप पूरे मनुष्य है, इसलिए आप मनुष्यत्वकी रक्षा करना सीखे।

ऐसे भी बहुतसे लोग है जो आपसे आकर कहेगे कि तुम्हारा हिन्दू धर्म किसी कामका नही है। वह तुम्हे मदरसे या मन्दिर जानेकी इजाजत नही देता। तो उनसे कहना कि हम अपने हिन्दू भाइयोसे स्वय निपट लेगे, भाई-भाई या बाप-बेटे यदि लडे तो जिस तरह कोई उनके बीच नही पडता उसी तरह आप भी हमारे बीच न पडिए — आप उन्हे यह जवाब दे और अपने धर्मपर आरूढ रहे। मै खुद जात-बाहर हू, मेरे जैसे कितने ही लोग जात-बाहर है, तो क्या इससे मै अपना धर्म छोड दूं? कितने ईसाई मित्र मुझसे कहते है कि तुम ईसाई हो जाओ। मै उनसे कहता हूँ मुझे अपने धर्ममे कोई कमी नही मालूम होती, मै क्यो उसे छोडूँ? मै भले ही जात-बाहर रहूँ, पर यदि मै पवित्र हूँ, स्वच्छ हूँ तो मुझे किस बातका दु ख हो सकता है? यदि कोई हिन्दू इसलिए मुझे सताये कि मै अन्त्यजोको गले लगाता हूँ, तो क्या मै हिन्दू धर्म छोड दूंगा? हिन्दूपन मेरे अपने लिए है, मेरी आत्माके लिए है। ईसाई और मुसलमान दोनोसे आप यह बात कहे और हिन्दू धर्ममे दृढ रहे। अन्त्यज लोग शतरजके मोहरे या बाजी नही है कि जो चाहे उनसे खेल करे। मै आपको भाई-बहन कहता हूँ, आपके पास आता हूँ, सो अपनी गरजसे। इसमे मेरा यह स्वार्थ है कि मेरे पूर्वजोने आपके साथ जो पाप किया है, मै उसे धो डालूं। पर आपके प्रति यदि कोई कुछ पाप करता है तो पापका भागी वह होता है, आप नही। इसलिए आप धर्मका त्याग क्यो करे? प्रायश्चित्त तो हमे करना है। आप रामनाम क्यो छोडे? रामका यह न्याय है कि जो रामका सेवक है, रामका दास है, उसे वह दु ख दिया ही करता है और इस तरह उसकी आजमाइश करता है। मै चाहता हूँ कि आप इस आजमाइशमे पूरे उतरे।

आखिरमे मुझे आपसे यह कहना है कि मनमे दया रखें क्योकि दुनियाके हम सब प्राणी परस्पर प्रेमके बलपर जीते है। और अन्तमे यह कहना चाहूँगा कि आप सब चरखा चलाये, खादी बुने और खादी ही पहने।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

५. भाषण : बारडोलीमें

१७ जनवरी, १९२५

यह नारियल, सूत और पैसा आदि लेकर मुझे सुख नही होता। मैं इसे ले लेता हूँ, बस इतना ही समझिए। किन्तु मै तो सच्चे आदमीकी खोजमे हूँ। मैंने वराडमे एक वडी अच्छी पाठशाला देखी। वहाँ वहुतसे अच्छे-अच्छे शिक्षक है। किन्तु विद्यापीठके इस प्रस्तावके वाद कि अन्त्यज वालकोको शालामे प्रवेश दिया जाना चाहिए, उस राष्ट्रीय शालामे से वहुतसे अभिभावकोने अपने वालक हटा लिये है। मै आपको यह भी कह देना चाहता हूँ कि वादमे राष्ट्रीय शाला और गाँवकी शालाको एक करनेका प्रस्ताव भी पास हुआ है। किन्तु पहले अपने कर्त्तव्यको भूल जाना और फिर उसे याद करना इसमे क्या सार है? क्या हम सन् १९२१ मे नाटक कर रहे थे?[1] उन दिनो हमारा विश्वास था कि अस्पृश्यता-निवारणके विना यदि स्वराज्य मिलता है, तो भी वह निकम्मा है, खादीके विना स्वराज्य मिलता है तो वह निकम्मा है। किन्तु आज देखता हूँ कि वारडोलीमे श्रद्धा नही बची है, हिम्मत नही बची। सच्ची हिम्मत तो वही है कि सवके हार मान लेनेके वाद जो पाँच-पच्चीस आदमी वच रहे वे अन्ततक उठाये गये कामको पूरा करे। वारडोलीने न खादीका कार्यक्रम पूरा किया और न अस्पृश्यताका। और दुवलोका भी बुरा हाल किया। मै तो चाहता हूँ कि जो भूल हो गई है, वारडोली आज भी उसे सुधार ले। मैं वारडोलीके प्रति अपनी आशाका त्याग करनेवाला नही हूँ। वहनोकी आँखोमें जो प्रेम और चमक दिखाई देती थी, वह आज भी जैसी की तैसी है। वे सूत, पैसा आदि जो-कुछ लेकर आई हैं, अपने-आप लेकर आई हैं, किसीके कहे विना लाई हैं, ऐसा मैंने सुना है। शक्ति तो पुरुष ही गँवा वैठे है। भाई रायचुराको[2] यह कहनेके वजाय कि गुजरातने पजाव, वगाल इत्यादिकी लाज रख ली, कहना यह चाहिए कि गुजरातने लाज छोड दी। गुजरातके लिए आज भी मौका है। मै आज जेलमे जानेके लिए नही कहता। आज तो मैं इतना ही कहता हूँ कि जो हमारा स्वाभाविक धर्म है और जिसे पालना अत्यन्त आवश्यक है, हम उसका पालन करे। मुझे यहाँ आनेकी धुन नही लगी थी। मैं जो यहाँ आया हूँ, सो अपना धर्म समझकर आया हूँ। मै निराश नही हूँ, किन्तु उदास जरूर हुआ हूँ। कारण यह है कि आप आज भी आत्मविश्वासको खोकर वैठे हुए हैं। किन्तु समय चला नही गया है। वहिष्कारकी वात तो एक क्षणिक वात थी। उसे जाने दीजिये। जो वाते केवल स्वराज्य-प्राप्तिके लिए साधन-मात्र थी, उन्हे मैंने फिलहाल त्याग दिया है। फिर भी आपको उन सव वातोका पालन तो करना ही चाहिए जो आत्मशुद्धिके साधन हैं — अर्थात् खादी, अस्पृश्यता-निवारण और हिन्दू-मुस्लिम एकता। आप इनका

१. संकेत असहयोग आन्दोलनकी ओर है।

२. स्थानीय कवि; कदाचित् उन्होंने उस दिन सभामें इस आशयकी कविता पढी थी।

आचरण कीजिए। स्वराज्य मिलता है या नहीं, इसकी चिन्ता किये बिना इन सबका धर्म मानकर पालन कीजिए, नहीं तो सर्वनाश हुए बिना नहीं रहेगा। अस्पृश्यता-निवारणके बिना हिन्दू धर्मका नाश हो जायेगा और यदि खादीको व्यापक नहीं बनाया गया, तो देशमें ऐसी भुखमरी फैलेगी कि हम कंकाल-मात्र बच रहेंगे और हमारा मांस कौए-कुत्ते खा जायेंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-२-१९२५

६ काठियावाड़के संस्मरण

प्रेम-सागरमें

मैं जहाँ-जहाँ जाता हूँ, वहाँ सभी जगह मुझे असाधारण प्रेम दिखाई देता है। इसलिए अब मुझे उसमें कुछ अनोखापन नहीं लगता। मैं तो जहाँ जाता हूँ, वहाँ काठियावाड़के ही दर्शन करता हूँ। फिर भी काठियावाड़के प्रेमका प्रभाव कुछ जुदा ही पड़ता है। या तो मुझे काठियावाड़में प्रेमकी आवश्यकता ही महसूस नहीं होती अथवा मुझे काठियावाड़की ओरसे प्रेमके प्रदर्शनकी इच्छा ही नहीं होती। मेरी भावना क्या है, मैं इसे समझ ही नहीं सकता। काठियावाड़में प्रेमका प्रदर्शन किस लिए? जो "प्रेम-पूर्तिके लिए विनय" की अपेक्षा करता है, वह कैसा स्नेह?

अतिरिक्त आशा

शायद ऐसा भी हो सकता है कि मैं काठियावाड़में कुछ अधिक आशा रखता हूँ और शायद इसलिए मुझे उसके बाह्य प्रेमसे सन्तोष ही नहीं होता। कहीं ऐसा तो नहीं है कि मैं प्रेमके इस प्रदर्शनसे मन ही मन असन्तुष्ट हो रहा हूँ। यदि कोई माँ विधिका पालन करनेकी धुनमें बच्चेको रोटी परोसना भूल जाये और उसके लिए चौका लगाने बैठ जाये, तो जिस तरह बच्चेको उपेक्षाका भान ही होगा, कहीं मुझे भी तो वैसा नहीं लग रहा है? क्या मैं अपने व्यवहारसे इस बातको स्पष्ट नहीं कर रहा हूँ कि प्रेम-प्रदर्शन छोड़कर यदि आप लोग मुझे वह वस्तु दे देंगे, जिसे माँगनेके लिए मैं लाज-शर्म छोड़कर आ गया हूँ, तो मुझे अधिक सन्तोष होगा। बात ऐसी ही है।

बात ऐसी हो या न हो, मैं भावनगरमें[1] इस भावसे आकर बैठ गया कि यह मेरे पिताकी भूमि है और हवाई-महल बनाने लगा। मेरा भी सपना निष्फल नहीं हुआ। स्वागत समितिने तमाम प्रस्ताव पेश करनेकी तैयारी कर रखी थी। मैंने तो उन्हें लगभग अमान्य ही कर दिया। मैंने सुझाव दिया कि इन प्रस्तावोंको वापस ले लिया जाना चाहिए। किन्तु यह बात सभीके गले नहीं उतरी, फिर भी समितिने मेरी वह सलाह स्वीकार कर ली।

१ काठियावाड़ राजनीतिक परिषद्के लिए। परिषद् ८ और ९ जनवरी, १९२५ को गांधीजीकी अध्यक्षतामें हुई थी। देखिए खण्ड २५।

चरखा

मैं भावनगर ऐसा सोचकर नही गया था कि वहाँ चरखेको मताधिकारकी एक शर्तके रूपमे स्वीकार कर लिया जायेगा। इसलिए चरखेके वारेमे प्रस्ताव देखकर मै तो प्रसन्न ही हुआ था। किन्तु उस प्रस्तावमे कुछ वाते जरूरतसे ज्यादा थी। उसमे कहा गया था कि प्रतिवर्ष हरएक सदस्यको ५० रुपये मूल्यकी खादी वेचनी चाहिए और कार्यकारिणी समितिके सदस्योको ५०० रुपये तककी। मैने इस वातको वापस लेनेका सुझाव दिया। यदि सदस्यगण इस हदतक उत्तरदायित्व स्वीकार करनेके लिए तैयार हो जाये, तब तो हम अविलम्ब विदेशी कपडेका वहिष्कार कर सकते है। किन्तु मताधिकार पानेके लिए ऐसी कोई शर्त लगा देना, जो दूसरोके सहयोगके विना पूरी नही हो सकती, मताधिकारके मूळ तत्त्वपर ही आघात कर देना है।

यद्यपि यह शर्त मताधिकारकी हदतक हटा ली गई हे, फिर भी जो लोग खादीका प्रचार कर सकते है, वे लोग तो करेगे ही। विपय-समितिमे जो चर्चा हुई वह मुझे अतिशय प्रिय लगी। सवने अपनी-अपनी वात निडर होकर कही। मैंने देखा कि कातनेके विरोधमे मत-प्रदर्शित करनेवाले लोग भी काफी थे। किन्तु उनका तर्क अधिकतर लोगोको पसन्द नही आया। यहाँ अपरिवर्तनवादी और स्वराज्यवादियो जैसे कोई वर्ग कदापि नही थे, इसलिए चर्चा कातनेके गुण दोपोको लेकर ही होती रही। इस सम्वन्धमे दो परस्पर विरोधी मत थे। एक कातनेके पक्षमे और दूसरा कातनेकी शर्तको मताविकारके साथ जोडनेके विरोधमे।

जिन लोगोने कातनेके पक्षमे मत दिया है, उनका कर्त्तव्य विलकुल स्पष्ट है। उन्हे अपनी अविचल निष्ठा स्वय कातकर और अन्य प्रकारसे खादीका प्रचार करके सिद्ध करनी है। यदि वे इस प्रकार खादीके पक्षमे मत देनेके बाद नियमसे नही कातते तो वे काठियावाड और मुझे, दोनोको, दगा दे रहे है, ऐसा कहा जायेगा। और यदि वे निरन्तर कातते रहे, तो वर्षके अन्तमे देखेगे कि जो कातनेवाले नही है, वे भी कातन लगे है।

खादी पहनो

जो वात कातनेके विपयमे है, वही खादी पहननेके विषयमे भी है। खादी पहनने-की वातका तो लगभग कोई विरोध ही नही था। खादी पहननेके पक्षमे इतने मत आनेके वाद भी काठियावाडमे खादी पहननेवालोकी सख्या इतनी कम है, यह देखकर दु ख होता है। इसे वडे दु.खकी बात कहना चाहिए कि काठियावाडकी खादी वाहर जाती है और उसकी स्थानीय बिक्री वहुत ही थोडी होती है। किन्तु अब चूंकि खादीके पक्षमे इतने मत आये है, आशा की जा सकती है कि उसकी विक्री काठियावाडमे काफी वढ जायेगी।

आजन्म सदस्य

काठियावाड राजनीतिक समितिके लगभग ३६ आजन्म सदस्य है, क्योकि उन्होने उसका शुल्क पाँच रुपया एक ही वारमे दे दिया है। इन सदस्योमे से एकने आजन्म

सदस्योके अधिकारके विषयमे प्रश्न उठाया और मुझसे अध्यक्ष होनेके नाते निर्णयकी माँग की। कताईसे सम्वन्धित प्रस्ताव अपनी विरोधी धाराओको रद्द कर देता है और इसलिए प्रश्न उठता है कि आजन्म सदस्योका हक रहा या गया? अर्थात् प्रस्तावके अनुसार यदि वे नही कातते है ओर दूसरोसे भी नही कतवाते है, तो क्या शुल्क देकर आजन्म सदस्य होनेके उनके हक समाप्त हो जाते है — प्रस्तावके अनुसार हो जाने चाहिए। प्रश्न अटपटा था, किन्तु कोई निर्णय दिये बिना छुटकारा नही था। मैने निर्णय दिया कि आजन्म सदस्य चाहे काते चाहे न काते, वे आजन्म सदस्य तो बने ही रह सकते है। कायदेके मुताविक समिति ऐसे अधिकार रद्द करनेमे सक्षम है या नही, मैने इस विषयमे कोई निर्णय नही दिया। मुझे इतना ही तय करके बताना था कि समितिका प्रस्ताव आजन्म सदस्योके अधिकारोको प्रभावित करता है या नही और मैने इस प्रश्नके उत्तरमे आजन्म सदस्योक पक्षमे अपना निर्णय दिया।

उनसे प्रार्थना

फिर भी मै उनसे यह प्रार्थना करूँगा कि वे अपने अधिकारसे लाभ न उठाये, वल्कि परिषद्के मन्त्रीको पत्र लिखकर सूचित करे कि उन्होने स्वेच्छासे परिषद्का प्रस्ताव स्वीकार करके अपना हक छोड दिया है। मै जानता हूँ कि अधिकाश सदस्य ऐसा कोई प्रश्न उठाना भी नही चाहते थे। उनमे से वहुतसे लोग कातनेके लिए तैयार भी है। इसलिए जव परिषद्ने कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किये है, तव मेरी नम्र सम्मतिमे उसके आजन्म सदस्योका अपने अधिकारपर जोर देकर प्रस्तावका सम्मान न करना अनुचित है।

सर प्रभाशकर पट्टणी

सर प्रभाशकर पट्टणीका कातनेकी प्रतिज्ञा लेना, मेरी समझमे परिषद्का एक वडा काम है। उन्होने जिन शब्दोमे शपथकी घोषणा की, वे अतिशय गम्भीर थे। सदस्योपर उसका प्रभाव भी गहरा हुआ। प्रतिज्ञाका मूल कारण इस प्रकार था वेलगॉव काग्रेसके[1] समाप्त होनेके बाद अनेक सज्जनोने यह निश्चय किया था कि वे पहली मार्चके पहले-पहले अमुक सख्यामे कातनेवाले सदस्य वनायेगे। मैने स्वय ऐसे १०० सदस्य वनानेका उत्तरदायित्व लिया था और साथ ही यह भी कहा था कि मैं ऐसे दो व्यक्तियोको भी कातनेवाले सदस्य बनाऊँगा जो कातनेका विरोध करनेवाले माने जाते है। मुझे काठियावाडमे तो आना ही था, इसलिए मैने सोचा था कि ये दो नाम मै काठियावाडमे ही खोज निकालूँगा। कातनेके विरोधी सदस्योमे मैने पट्टणी साहवका नाम सोचा था। जव कातनेसे सम्वन्धित प्रस्ताव विषय-समितिने स्वीकार किया, तव मैने १०० नामोवाली वात कही और यह वचन भी दिया कि मै पट्टणी साहवको कातने पर राजी करूँगा। मेरा यह कहना था कि पट्टणी साहव खडे हो गये और उन्होने प्रतिज्ञा की कि तवीयतके अच्छे रहते हुए वे भोजनसे पहले हमेशा नियमके साथ कमसे-कम आधा घटा अवश्य कातेगे। उन्होने एक शर्त यह अवश्य रखी कि मै उन्हे कातना

१ दिसम्वर, १९२४ में।

सिखाऊँगा। यह तो मेरे मनकी बात हुई। परिषद् समाप्त होनेके वाद मुझे उनका मेहमान रहना था। परिषद्के दूसरे ही दिन मैने उन्हे आधा घटा कातना सिखाया। उस आधे घटेमे ही उन्होने पूनीमे से तार निकालना सीख लिया। दूसरे दिन उन्होने दो घटेमे ८ नवरका ४८ गज खासा अच्छा सूत काता और तीसरे दिन एक घटेमे २७ गज काता। इन दोनो दिनो नहाकर सूत कात लेनेके वाद ही उन्होने भोजन किया। यदि अन्य प्रतिष्ठित अधिकारी और राजवशी-गण इसी प्रकार सूत कातकर उदाहरण उपस्थित करे, तो देशके गरीव लोगोके ऊपर वडी अच्छी छाप पडेगी और वे उद्यमी वन जायेगे। मुझे आशा है कि पट्टणी साहवकी प्रतिज्ञा सर्वांशमे सफल होगी।

मुझे यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि वे काग्रेस या काठियावाड राजनीतिक परिषद्के सदस्य नही वनेगे। वे वने, यह मेरी माँग भी नही थी और न इच्छा ही थी। मेरी दृष्टिसे कातनेका राजनीतिसे सम्वन्ध है। किन्तु उस सम्वन्धकी वात सोचे विना भी काता जा सकता है। कातनेमे गरीवके प्रति जो दयाकी भावना है, जो धार्मिक भावना है और उसके पीछे जो आर्थिक दृष्टि है वह तो सभीको स्वीकार्य होने योग्य वस्तु है। मै तो चाहता हूँ कि लॉर्ड रीडिंग भी काते। यदि राजनीतिका खयाल किये विना राजा और प्रजा दोनो सूत कातने और खादी पहनने लग जाये, तो मै भलीभाँति जानता हूँ कि हिन्दुस्तानका उद्धार अपने आप हो जायेगा। यह ऐसा काम है कि जिसमे सभी निस्सकोच भाग ले सकते है और हिन्दुस्तानकी थोडी-वहुत सेवा भी कर सकते है।

कपासकी उगाही

परिषद् जैसे ही समाप्त हुई, वैसे ही भाई देवचन्द पारेख, भाई मणिलाल कोठारी, भाई वरजोरजी, भरूचा वगैरा इस विचारसे कपास उगाहनेके लिए निकल पडे कि गरीवोको कपास देकर उनसे उनके आधे घटेका श्रम प्राप्त किया जा सके। भावनगर छोडनेके पहले ही उन्होने लगभग २७५ मन कपास इकट्ठी कर ली। उम्मीद है कि केवल काठियावाडके ही दानसे लगभग २,००० मन कपास मिल जायेगी। मै आशा करता हूँ कि कपास इकट्ठा करनेका यह काम उत्साहपूर्वक किया जायेगा और जो कपास देनेकी स्थितिमे है, वे उसे देनेमे विलकुल आगा-पीछा नही करेगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १८-१-१९२५

७. भाषण : भुवासणमें

१८ जनवरी, १९२५

आदमी सोचता क्या है और करता क्या है? मैं मेरे और आपके दु खकी वात नही सोचना चाहता। हमने वारडोलीकी मारफत हिन्दुस्तानका बहुत-सा काम करनेकी वात सोची थी।[1] किन्तु आदमी कितना विचार करता है और भगवान उसमें से कितना पूरा करता हे, इसे कोई नही जानता। हम तो उसके हाथकी कठपुतलियाँ हैं।

मैं दो-चार मोटी-मोटी वातें कहूँगा। आप लोग खूव कातते थे और धुननेमे दिलचस्पी लेते थे। आपके बीच शकरलाल वैंकर रहते थे। अभी भोजन करते-करते मैं उनसे पूछ रहा था कि जव तुम यहाँ रहते थे, तव तुम्हारी यहाँ क्या स्थिति थी। उन्होने कहा कि आप सव लोग उनसे कहा करते थे कि "और कुछ भी क्यो न हो जाये, किन्तु खादीका मन्त्र हम समझ गये हैं। हम अच्छेसे-अच्छे वीज वोकर कपास पैदा करते हैं। हमें उसकी जानकारी है और हमारे पास समय भी है। तव फिर हम अपना कपडा स्वय क्यो न तैयार करे?"

यह अच्छी वात है। मैं तो यह भी चाहता हूँ कि वारडोली ताल्लुका जिस तरह अन्नके सम्वन्धमे स्वावलम्वी हे, उस तरह वह वस्त्रके सम्वन्धमे भी स्वावलम्वी वन जाये और वारडोलीके वच्चे, स्त्री और पुरुप आलसी होनेके वदले उद्यमी वने। ऐसा नही है कि जो लोग ईश्वरकी कृपासे पैसेवाले हो जाते हैं। उन्हीको उद्यमी होनेकी जरूरत हे। जो विलकुल कमजोर हैं यदि उनके पास भी कोई छोटा-मोटा उद्यम हो तो यह एक अच्छी वात है। यह कहावत विलकुल सच है कि "नवरो वेठो नख्खोद वाळ"[2]। कातने, धुननेका काम करके हम अपनी स्थिति सुधार सकते है और भुखमरी-की हालतको समाप्त कर सकते हैं। सम्भव है, आप जैसे लोगोको भूख किस चिडियाका नाम है, सो मालूम न हो, किन्तु कालीपरजो या दुवलोंके लिए यह एक वस्तुस्थिति हे। उनकी हालत लगभग पशुओ जैसी है। जिनके पास जमीन है, उनकी स्थिति शायद अच्छी हो, किन्तु इनमेंसे जो लोग सफेदपोशोकी चाकरी वजाकर अपना पेट भरते हैं, अगर आप उनकी आँखोको गौरसे देखे तो लगेगा कि उनकी हालत अच्छी नही है। मैंने एक गाँवमे ऐसे वहुतसे-दुवलोको देखा।

मैं किसीसे यह नही कहता कि फिलहाल तुम्हे जेल जाना है। केवल दयालजी[3], वल्लभभाई और मुझे जेल जाना पड सकता है, और सो भी आज नही। इसका सवव यह है कि सन् १९२१ मे जो नीति निश्चित हुई थी, उसके अनुसार हरएकको

१ १९२२ में सरकारकी खिलाफत, पजाव और स्वराज्य सम्वन्धी नीतिसे विरोध प्रकट करनेके लिए यहाँ सवसे पहले सामूहिक सविनय अवज्ञा करनेका फैसला किया गया था।

२ निठल्ला अपनी जड़ खोदता है।

३ दयाळजी देसाई, सूरतके एक सार्वजनिक कार्यकर्ता।

अपनी इच्छासे जेल जाना था। किन्तु आज जेल जानेका समय नही है। आज जेल जानेके लिए दूसरी ही शर्तें लागू होगी। भारतके सर्वसाधारण लोगोने अभी उन गुणोका अर्जन नही किया हे जो जेल जानेके लिए आवश्यक होते है। फिर भी मै यह मानता हूँ कि इने-गिने लोग ही इस कामके लिए काफी होगे। ये इने-गिने लोग आप लोगोमे से चुने जा सके, यह मेरी महत्त्वाकाक्षा है। किन्तु वह एक अलग वात है। इस समय मेरी अपेक्षा कुछ और ही है।

आप एक अच्छा काम करते थे। सव लोगोको आशा थी कि हम वारडोलीमे चाहे और कुछ भी न कर सके, किन्तु खादीका उत्पादन अवश्य कर सकेगे। आप समझ गये थे कि यह करनेमे ही आपकी शोभा है। किन्तु इस समय आप यह सव भूल गये है। आपकी श्रद्धा कहाँ चली गई? मेरे जैसा कोई आदमी यदि आप लोगोके वीचमे आये और उतावलीमे एकाध काम शुरू कर दे, ऐसा काम जो आप लोगोको पसन्द नही है, तो क्या आप उसकी वातोमे आकर अपने हाथका अच्छा काम भी छोड देगे।

किन्तु आपने तो यही किया। आपने आश्रमकी स्थापना की थी। आश्रमके लिए एक पारसी भाईने पैसा दिया था। यह पारसी भाई हातमताई-जैसा उदार व्यक्ति था। उस जैसे उदार आदमी कम ही होगे। वह राजा वलिके समान दानी था। इसका नाम था रुस्तमजी।[1] सरभोणकी वस्ती जवतक रहेगी, तवतक इसका नाम भी अमर रहेगा। उसका आप लोगोसे कोई ताल्लुक नही था। आपका और उसका धर्म भी एक नही था। किन्तु उसने इन सव वातोको नही सोचा। जव उसने सुना कि वारडोलीके लोग वहादुर है और आत्मत्यागी हैं, तो उसने पैसा भेज दिया और उस पैसेसे आपने जो दो आश्रम वनाये उनके कार्यकर्त्ताओको जीवन-वेतन दिया जा रहा है।

इन आश्रमोमे गुजरातके उत्तमसे-उत्तम सेवक भी आये। नरहरि[2] भी उनमे से एक थे। किन्तु उसने तो आपका गुनाह किया। अगर मै अपने लडकेको अपनी जगह विठा दूँ और वह गलती करे तो वह गलती मेरी मानी जायेगी — अगर वह विगडा हुआ लडका हो तो वात दूसरी है। नरहरिको मैने अपनी जगह वैठाया। आश्रममे यह मेरे साथ काम करनेवाला आदमी है और मेरा उसपर विश्वास है। हमने वाहरसे पैसा लाकर वारडोलीमे उँडेला। सारी दुनियामे हमने वारडोलीका नाम उजागर किया। सारे देशमे वारडोलीके गीत गाये गये। लोगोने यह सोचकर वहाँ कार्यकर्त्ता भेजे कि अगर वारडोलीकी वदनामी हुई तो यह वहुत वुरी वात होगी। नरहरि भी इन्हीमे से एक था। उसने आपका जो अपराध किया, वह यह था कि उसने दुवलोको पढाना और उनकी सेवा करनी शुरु की। मै आपसे कह देना चाहता हूँ कि यह तो एक करने लायक अपराध था।

हिन्दू धर्म सिखाता है कि गरीवसे-गरीवकी सेवा करके ही हम अपने मुँहमे कौर डाले। हमारा धर्म हमसे कमजोर पशुओका रक्षण करनेके लिए भी कहता है।

१. पारसी रुस्तमजी; द० आफ्रिकामें गाधीजीके सहयोगी।

२ नरहरि द्वारकादास परीख।

उनकी हस्ती-हस्ती मिटती हो, तो भी वह उन्हें अवध्य कहता है। हमें चींटियोंको भी दूध डालना चाहिए, प्राणि-मात्रपर ममता रखनी चाहिए। ऐसा शिक्षण देनेवाला धर्म हमें यह सीखा नहीं सकता कि हम मनुष्योंके साथ पशुओंसे भी खराब व्यवहार करें। वह तो हमें गरीब आदमीपर दया करना ही सिखाता है। हमें उनके साथ सगे-सम्बन्धियों जैसा व्यवहार करना चाहिए। बहुत-से पुराने कुटुम्बोंमें नौकर, नौकरकी तरह नहीं, सम्बन्धीकी तरह होता है। हम उनके बच्चोंको जो हमारे ही बच्चोंकी तरह हैं, बिना सिखाये कैसे रह सकते हैं?

मैं कौन हूँ और नरहरि कौन हैं? किसीके साथ जबरदस्ती तो नहीं की जा सकती। नरहरि, जुगतराम[1] और अन्य लोग आपके ऊपर जबरदस्ती करनेके लिए नहीं आये थे। किन्तु अगर उन्हें दुःखका अनुभव होता है, तो वे क्या करें? अगर आदमी शिकार करने जाये और अपनी पत्नीको मार दे तो पत्नी क्या कर सकती है? वह रोयेगी और अन्न छोड़ देगी। आदमी गुनाह करता है तो इसमें दोष आदमीका है कि ईश्वरका? मैं अपने अनुभवसे कहता हूँ। मैं विवाहित हूँ और मुझे गृहस्थीका अनुभव है। पति और पत्नी इन दोनोंमें यदि झगड़ा हो जाये, तो औरत या तो कटुशब्द कहेगी या रोयेगी, नरहरिने ऐसा ही किया, जैसा स्त्री करती है। उसने खाना बन्द कर दिया और आप लोगोंने माना कि उसने आपके ऊपर अत्याचार किया है। किन्तु बात ऐसी नहीं थी। यह व्यक्ति सत्याग्रह कर चुका है। सरकारके विरोधमें सत्याग्रह करनेवाले व्यक्तिने आपके विरोधमें भी सत्याग्रह किया। सरकारके विरोधमें किये जानेवाले सत्याग्रहमें उपवासका स्थान ही नहीं है। आपने देखा है कि मैं खुद भी ऐसा नहीं करता। मैंने बम्बईमें उपवास किया था, किन्तु वह अपने ही लोगोंके विरोधमें था — पारसी और क्रिश्चियनोंके दंगोंके[2] विरोधमें। किन्तु आप लोगोंने जो काम किया है, उसे तो कुछ और ही समझिए। किसीको कष्ट देना, जैसा चौरी-चौराके लोगोंने किया, ऐसा काम करना सरकारके विरोधमें किया गया सत्याग्रह नहीं कहला सकता। सरकारके विरोधमें किये जानेवाले सत्याग्रहमें जेल जाना शामिल था, किन्तु उसमें भूखे मरकर ममता उत्पन्न करनेकी बात शामिल नहीं थी। सरकारका हमारी तरफ वैरभाव था, किन्तु नरहरिका तो आपके साथ सेवाभाव और प्रेमभाव था, मित्रताका दावा था। उसका मन तड़प उठा, किन्तु आप क्रोधसे भर गये। अगर आप उसे मार डालते, तो कोई बात नहीं होती। किन्तु आप स्वयं अपने ऊपर क्रोधित क्यों हुए? आपने खादी क्यों छोड़ी? आपने समझा कि नरहरि आपसे झगड़ना चाहता है। आप यह भी कह सकते थे कि आप दुबलोंके लिए कुछ नहीं करना चाहते। किन्तु बुनना, कातना और खादी पहनना छोड़नेका क्या अर्थ है? यह कितना बड़ा जुल्म, कितना बड़ा अनर्थ है?

इसलिए मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि आप लोग उसे फिर अंगीकार करें और अपने कियेका पश्चात्ताप करें। और वह इस रूपमें कि मिलके कपड़ेका व्यव-

१ जुगतराम दवे, लेखक और शिक्षाविद्, पिछड़ी हुई जातियोंकी सेवामें रत रचनात्मक कार्यकर्ता।
२ नवम्बर १९२१ में।

द्वार छोडना आप अपना धर्म माने और सूत कातने लगे। नरहरिने मुझसे पूछा कि क्या हम लोग सरभोण छोड दे। मैंने कहा कि नही, यह तो कायरका काम है। यदि ऐसा करोगे तो लोग चिढ जायेगे। तुम उन लोगोको छोड़कर भाग नही सकते, अपने स्थानसे भ्रष्ट नही हो सकते। तुम्हे तो वहाँ रहकर ही यह बतलाना चाहिए कि तुम उनका बुरा नही करना चाहते, यह बात सेवा करके ही बताई जा सकेगी, भाग कर नही। किन्तु काम डटकर बैठनेसे होगा। अगर कोई तुम्हारी सेवा स्वीकार न करे, तो तुम अपने स्थानपर ही रहकर कातो, बुनो और धुनो। मैंने ऐसा ही उससे कहा। इससे उसकी आत्माको शान्ति मिली या नही, सो मै नही जानता। उसे आपका बरताव सहन न हो, तो बात अलग है। किन्तु उसका धर्म है कि वह दुबलो और अन्त्यजोको पढाये। वह आपके साथ झगडा नही करना चाहता, इस ओरसे मै आपको निर्भय करता हूँ।

मै आपसे भी अभय माँगना चाहता हूँ। अगर आपका एक हाथ रूठ जाये तो दूसरेको उसकी छूत न लगने दे। एक पक्षके क्रोधित होनेपर दूसरे पक्षको क्रोधित होने देनेमें न न्याय है, न बुद्धि, न विवेक और न दूरदेशी। यह तो 'पच्छिम बुद्धि' कहलाती है। जो सवाल पूछे जा रहे थे उन्हे मै सुन रहा था। आप लोगोको -- सरभोणके आसपासके भाइयोके लिए धुनना और कातना मुश्किल नही है। फिर भी वे अगर २,००० गज सूत नही दे सकते, तो कितनी शर्मकी बात है। जो बारडोली बहादुरोकी तरह बात करती थी, अब वह इतना करनेसे डरती है। वराडकी राष्ट्रीय शालामे सभी विद्यार्थी सूत कातते हैं। पढाई भी अच्छी तरह चल रही है। सुणावमे भी सभी कातते है। वराडके एक शिक्षकने २० दिनोतक १५ घटे रोज काम करके ७०,००० गज सूत काता। यह स्थान भी तो बारडोली तहसीलमें ही है।

क्या आप सब लोग हम लोगोके प्रति शकित है? क्या हम आपको किसी खाईमे ढकेलना चाहते है? अगर आपके मनमें ऐसा कोई भय हो, तो उसे निकाल दीजिए। क्या एक भी ऐसा प्रसग है, जब किसीने आपको धोखा दिया हो? मैं आपसे और क्या कहूँ?

बहनो, आप मुझे नारियल, सूत और पैसा देती है, इससे मुझे खुशी नही होती। मैं बारडोलीकी बहनोसे बडी आशा रखता हूँ। मै चाहता हूँ कि आप विदेशी कपडे को बिलकुल ही काममे न लाये। अगर आप अपने हाथकते सूतकी साडी बुनवाकर पहने तो कितना अच्छा हो। मै आपकी मारफत रामराज्य लाना चाहता हूँ। आप लोग सीता जैसी हो जाये तो कितना अच्छा हो। आपके बच्चोको धर्म और कर्म दोनो सीखने चाहिए। आपमे से कुछ लोग दक्षिण आफ्रिकासे नाजायज तौरसे पैसे कमाकर भेजते है। लेकिन एक जुलाहा ४० रुपये महीना कमा लेता है। अगर आपके बच्चे यह काम सीख ले तो वे सुखी रहेगे। आप लोग अन्त्यजोके प्रति स्नेह रखे। यदि कोई स्त्री अन्त्यजका बुरा चाहती है, तो वह अपने सती-धर्मका पालन नही करती। यदि आपके यहाँ कोई दुबला चाकर हो, तो उसपर स्नेह-दृष्टि रखे। उसे घी लगाकर रोटी दे। जिस घरमे नौकरके साथ अच्छा बरताव होता है, उस घरमे बरकत होती है। जो छल-कपटसे पैसा कमाता है, उसका क्या हाल होता है?

रानीपरज निर्भीक होते देखे गये हैं। भगवान आपको ऐसा निर्मल हृदय और निर्मल आत्मा दे कि आपने जो प्रार्थना अभी यहाँ सुनी, आप उसका अनर्थ न करें और सच्चा अर्थ स्वीकार करें।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

८. भाषण : कालीपरज परिषद्, वेडछीमें

१८ जनवरी, १९२५

भाई जीवनभाई, कालीपरज तथा अन्य जातियोंके भाइयो और बहनो,

मैंने अपने जीवनमें बहुत-सी परिषदें देखी हैं। पचास लोग इकट्ठे हों तो उसे [illegible] कहते हैं और पाँच इकट्ठे हों तो उसे परिषद्। मैंने कुछ परिषदें ऐसी भी देखी हैं जो तीनों यहीं आनेवाली जातियोंके लोगोंकी ही थीं। मैंने आज-जैसी सादी परिषदें भी बहुत देखी हैं। भारतमें ही नहीं, बल्कि आफ्रिका और यूरोपमें भी। किन्तु ऐसा सुन्दर और मनोरम सम्मेलन तो मैंने यह पहला ही देखा है। इसके लिए स्वागत-समिति और स्वयंसेवक दोनों धन्यवादके पात्र हैं। इसमें कमसे-कम रुपया खर्च किया गया है, यह ठीक ही है, क्योंकि एक गरीब मुल्कको यही छाजता है। आज सम्मेलनके साथ सुन्दर और आदर्श प्रदर्शनी भी रखी है। यदि कोई हिन्दुस्तानी नेता इस प्रदर्शनीको देखकर भी चरखेके सम्बन्धमें अश्रद्धालु बना रहे तो मैं उसकी स्थिति दयनीय ही समझूँगा। इसे देखनेके बाद कोई भी खयाल नहीं कर पायेगा कि कातना और बुनना आवश्यक नहीं है। यदि हम देशकी दरिद्रताको दूर करना चाहते हैं तो सबको उन्हें आवश्यक ही मानना चाहिए।

मुहम्मद अली नहीं आ सके हैं। उसके लिए उन्होंने तार भेजा है और क्षमा माँगी है। आप शायद यह जानते हैं कि वे किसी समय बहुत बड़े पदपर थे। बादमें जो-कुछ हुआ वह भी आपको मालूम होगा। उन्होंने उस समय[1] कालीपरजके भाइयों और बहनोंके सुख-दुःखमें भाग लेनेका प्रयत्न किया था। अब वे फिर आपसे मिलकर जान-पहचानको ताजा करना चाहते थे, किन्तु वे बीमार हो गये। इसके अतिरिक्त उन्हें दो पत्र[2] निकालने पड़ते हैं। उन्होंने मुझे तार दिया है कि वे नहीं आ सकते, उसके लिए क्षमा चाहते हैं।

यह परिषद् तीन वर्षसे होती आ रही है। और प्रतिवर्ष ऐसी प्रदर्शनियाँ भी आयोजित की जा रही हैं। पिछली सभी परिषदोंके प्रस्ताव मैं देख गया हूँ, इस बार प्रस्ताव तैयार नहीं किये गये हैं। किन्तु कुछ मिनट बातचीत करनेसे पता चला है कि कुछ प्रस्ताव पास तो किये जाने हैं।

१. असहयोगके दिनोंमें।
२. कॉमरेड और हमदर्द।

कालीपरज या काली प्रजाका अर्थ यह नही है कि इस वर्गके लोगोका वर्ण काला होता है। कालीका अर्थ है निम्न श्रेणीकी वे जातियाँ जिन्हे मेहनत-मजूरी करके अपनी गुजर करनी पडती है। इन लोगोको परिषद् करनेकी जरूरत नही है। आज जमाना मजदूरोका है। जो मनुष्य श्रमको श्रेष्ठ या प्रतिष्ठित नही मानेगा वह स्वय भी प्रतिष्ठित नही रहेगा। भविष्यमे ऊँची जाति, नीची जाति, ऐसा कोई वर्गीकरण रहेगा ही नही।

आज तो पैसा परमेश्वर मान लिया गया है। किन्तु क्या ससारमे इसका स्थान सदा ऐसा ही वना रहेगा? क्या शैतानकी जगह हमेशा ऊँची वनी रहती है? जो ईश्वरसे डरते हैं, उन्होने तो ऐसा नही माना है। पैसा और शैतान परस्पर पूरक हैं। कुछ धर्मग्रथ यह भी कहते है कि पैसेके अनेक शत्रु। मै यह नही कहता कि आपको पैसेकी जरूरत ही नही है। पैसेकी जरूरत आपको भी है। किन्तु हर चीजकी अपनी जगह होती है और वह वही शोभा देती है। जो मनुष्य कोई चीज पैदा नही करता उसकी समाजमे कोई जगह नही होती। हम पैसेको अनावश्यक महत्त्व देकर अपना महत्त्व भूल बैठते है। स्थानभ्रष्ट होकर और पैसेको अनुचित स्थान देकर अपने कर्त्तव्य-पथसे च्युत हो जाते हैं। पैसेको अनुचित स्थानपर आसीन करके हम दुख भोगते है।

मैने पैसेके सम्वन्धमे इतना कहा, इससे कोई यह न समझ ले कि मै धनिको-की अवगणना या निन्दा करता हूँ या उनका वुरा चेतता हूँ। धनी लोग भी हमारे भाई ही है। मै इनसे भी काम लेना चाहता हूँ। यदि ये लोग अपना स्थान समझकर तदनुसार चले तो हम उसे सुव्यवस्था ही मानेगे। आप मजदूर है, इसलिए आप पूज्य है। जिस देशमे मजदूरोका आदर नही है, जिस देशमे इनकी निन्दा होती है — इनका निरादर होता है — उसका अध पतन हो जाता है। यहाँ भी उनका निरादर होता है।

किन्तु यह तो सक्रमण काल है। अब वहुतसे लोग समझ गये है कि मजदूरो-को ठीक स्थान मिलना चाहिए। मजदूरोके विना हिन्दुस्तानका काम नही चल सकता। इसलिए उनको कालीपरज या मजदूर कहकर गिराना ठीक नही है। उनको ऊँचा उठाना चाहिए। कुछ लोगोने मजदूरोका शोपण करके स्वार्थ सिद्ध करना अपना धन्धा वना लिया है। ऐसे लोगोसे मजदूरोका कोई भला नही हुआ। कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो स्वय श्रम करते है और उसमे रस लेते है। वे सुख उठाते है। आप ऐसे लोगोके सम्पर्कमे आते रहते है। मै यह मानता हूँ कि कोई भी मनुष्य कोई त्रुटि या अपराध किये विना नीचे नही गिरता। इसलिए जव हम अपना दोष न देखकर दूसरोकी निन्दा करते है, तव हम और भी नीचे गिरते है। मुझे लगता है कि आप लोग कुछ ऐसा ही कर रहे है। आप यह मानते है कि आप अपनी स्थितिके लिए उत्तरदायी नही है, बल्कि आप दूसरोको उत्तरदायी मानते है। सच तो यह है कि इसका दायित्व किसी दूसरेपर नही है। मै जवसे यहाँ आया हूँ तवसे सवको समझा रहा हूँ कि दोष हमे नीचे गिराते है और सत्कर्म, पुण्यकर्म हमे ऊँचा उठाते है। प्रश्न यह नही है कि रोटी कैसे मिले? मजदूरके सामने यह प्रश्न कभी उपस्थित ही

नहीं हो सकता। जिस मनुष्यको दो हाथ और दो पैर हैं, वह तो स्वतन्त्र है, उसे दुःखी कौन कर सकता है?

आपके दुःखके दो कारण हैं। आप दारू और ताड़ी पीते हैं। दारूके व्यसनसे कितने दुःख आते हैं, आप उसका एक उदाहरण हैं। कालीपरजके भाइयो और बहनो, अब तो एक नया समुदाय बन गया है[1] जो कहता है कि दारू न पीना पाप है। इस समुदाय-के लोग कहते फिरते हैं कि दारू न पियेंगे तो व्यसन न रहेगा और इससे व्यापार नष्ट हो जायेगा। आप लोग उनके जालमें न फँसें। मैं आपको यह याद दिला दूँ कि आप सभी लोगोंने दो वर्ष पहले यह प्रतिज्ञा की थी कि आप दारू नहीं पियेंगे। आप उसपर दृढ़ रहें। यदि कोई वैद्य आपसे यह कहे कि आप दारू नहीं पियेंगे तो मर जायेंगे, तो आप उसकी बात भी कदापि न सुनें। शरीर तो कभी-न-कभी नष्ट होना ही है। किन्तु प्रतिज्ञा तो अमर है। मैं मानता हूँ कि दारू न पीनेसे शरीर क्षीण हो जा सकता है। फिर भी आप एक बार दारू छोड़नेके बाद अपनी प्रतिज्ञा न तोड़ें। अन्य लोग विभिन्न लालचोंमें पड़कर अनेक पाप करते हैं। यदि हम इससे मुक्त होना चाहते हैं तो हम जीवनको उज्ज्वल बनानेके लिए जिन बातोंको सूत्ररूप मानते हैं उनके पालनमें तनिक भी त्रुटि न करें। जैसे यदि हम दीवारमें कोई छेद रहने दें तो उसमें होकर जीव-जन्तु, चोर आदि घरमें घुस आते हैं उसी तरह हमने आत्माको सुरक्षित रखनेके लिए व्रतोंकी जो दीवार बनाई है उसमें यदि कोई छेद रहने देंगे तो उससे होकर पापका प्रवाह भीतर आ जायेगा और पीछे हम पछतायेंगे। इसलिए आप दारूसे दूर रहें। आपका कल्याण उससे बचनेमें ही है।

आपके अज्ञानका कारण आपकी निरक्षरता नहीं है। आप लिखना और पढ़ना जानते हैं या नहीं, यह बात महत्त्वकी नहीं है। आपमें से बहुत से पढ़ना नहीं जानते, किन्तु उनको अनुभवजन्य ज्ञान है। आप भोले हैं, इसलिए भटक जाते हैं। भोला होना तो अच्छा है। सरलता और भोलापन दिव्य गुण हैं। किन्तु एक बार सच्ची बात कह लेनेपर भोला मनुष्य उससे डिगता नहीं है। आप भोलेपनके कारण भूतों और प्रेतोंको भी मानते हैं। आप मेरी भी मानता मानते हैं। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि यह एक भूल है। मेरी मानता माननेसे किसीको कुछ न मिलेगा। मेरी पूजा करनेसे भी आपको कोई लाभ न होगा। कल आपको कोई दूसरा भरमा लेगा और कहेगा कि अब आप अमुककी पूजा करें। कोई कहेगा कि आप दारू पियें। कोई आपसे मेरे नामपर चरखा चलाना बन्द करनेके लिए भी कह सकता है। तब आपकी क्या हालत होगी? आप अपने-आप शपथ लें कि आपको दारू छोड़नी ही है। कुछ लोग यह भी मानते हैं कि मुझे अन्धविश्वासोंका आश्रय लेकर आप लोगोंको दारू छोड़नेके लिए उत्साहित करना चाहिए। किन्तु इस अन्ध-विश्वासोंसे भरे हिन्दुस्तानमें मुझे एक भी नया अन्धविश्वास नहीं बढ़ाना है। यदि आपमें कोई नया अन्धविश्वास उत्पन्न किये बिना आपका दारू पीना बन्द न हो सके तो कोई बात नहीं। मेरा कहना तो यह है कि आप जबतक सोच-समझकर दारू

१. कालीपरजोंका एक नया दल, देखिए "टिप्पणियाँ", २५-१-१९२५ का उपशीर्षक "मद्यपान"।

नही छोडते तबतक दारू छोडना फलदायी न होगा। मै तो चाहता हूँ कि आप दारू पीना छोड़े और आपके पास पडोसमे जो लोग रहते हो वे भी मास-दारू इत्यादि छोड़े। इन चीजोको सारा ससार छोडे, किन्तु झूठे अन्धविश्वाससे नही। क्योकि इस प्रकार किया गया सकल्प ज्यादा दिन नही टिकेगा। हम एक पापको दूसरे पापसे निवृत्त नही कर सकते। मै चाहता था कि मै आपके इस अन्धविश्वासको दूर करूँ और आपको यह बात समझाऊँ कि आप दारू मेरे नामपर न छोडे, बल्कि यह समझ कर छोडे कि दारू छोडना अच्छा है। आपको कोई भी धोखा दे जाता है, इसका कारण तो आपका अज्ञान है। मैंने आपके स्वयसेवकोसे कहा है कि वे आपको इस अज्ञानमे से धैर्यपूर्वक मुक्त करे। मै आज भी उनको यही सलाह देता हूँ। आप अच्छी तरह सोच-समझकर कदम उठाये और दूसरोको भी ऐसा ही करनेके लिए कहे।

आपने इसमे अपने पारसी भाइयोका दोष बताया है। मै तो पारसी जातिपर मुग्ध हूँ। यह जाति छोटीसी है, किन्तु इसने बडा नाम कमाया है। इसमे बहुत गुण है, किन्तु इसमे दुर्गुण भी है। किन्तु आज तो बहुतसे पारसी भाई और बहन दारू छोड रहे है। इसमे शक नही है कि उनमे से बहुत-से दारू पीते भी है। पारसी दारू बेचनेका व्यवसाय करते है। वे इसके लिए पाप करते है और अत्याचार भी करते है। किन्तु मै उनसे क्या कहूँ? वे आपको लालच देते है, इनाम देते है और घूस भी देते है। मै उनसे क्या कहूँ? यदि यह धन्धा मेरा हो तो मै भी यही करूँ। पेटके लिए लोग सब-कुछ करते है। 'पेट ढुलाये भार, पेट बाजा बजवाये' इसीलिए मै यह भाषण दे रहा हूँ, लेख लिख रहा हूँ और फिर मुझे इसका सम्पादन भी करना होगा। मै चाहता हूँ कि जैसे भी हो, आपमे जीवनका सचार हो।

आप जैसी शिकायत पारसियोके विरुद्ध करते है वैसी ही मेरी शिकायत आप लोगोके विरुद्ध भी है। आपका एक समुदाय है जो यह कहता है कि जो दारू नही पीता वह पाप करता है। आप इससे लडकर नही, बल्कि अपनी शपथ और प्रतिज्ञापर दृढ रहकर बच सकते है। आप पारसियोसे कह दे, हमने दारू छोड दी है और अब आप भी यह धन्धा न करे। कई पारसी मेरे मित्र है। उनमे इजीनियर, डाक्टर, वकील और व्यापारी भी है। इनमे एक बुद्धिशाली और उदार व्यापारी था। उसने बहुत पैसा दिया था और एक आश्रम भी बनवाया था। मान ले कि मै पारसी जातिको समझानेमे समर्थ हो जाता हूँ। किन्तु कल कोई दूसरा आयेगा। ईसाई, मुसलमान, यहूदी, हिन्दू — कोई भी आ सकता है और आपसे कह सकता है कि आप दारू पियें, तब मै इन सबको कैसे समझाऊँगा? इसलिए इसका सच्चा उपाय तो यह है कि मै आपको ही समझाऊँ और आप स्वय भी समझे।

मै गायकवाड और बासदा सरकारसे निवेदन करता हूँ कि वे अपने राज्योकी सीमाओमे शराबकी दूकाने बन्द कर दे। किन्तु राजाओको समझाना बहुत कठिन काम है। फिर भी मै प्रयत्न करूँगा। किन्तु वे भी पारसियो-जैसे ही है, इसलिए उनको समझानेमे सफल होना कठिन है। यह उनका भी धन्धा है और इससे उन्हे बहुत राजस्व मिलता है। किन्तु आप तो उनकी प्रजा अथवा उनके पुत्र कहे जाते है। मेरा

अनुभव यह है कि पुत्रोको समझाना सरल होता है। माँ-बापोको समझाना कठिन होता है। इसलिए मेरा विश्वास तो आपपर ही है।

शराव छोडनेमे किन-किन चीजोसे सहायता मिल सकती है? इनमे चरखा मुख्य है। मैंने इसमे अपने सर्वस्वकी आहुति दे दी है। यदि हिन्दुस्तानका उद्धार होना है तो वह चरखेसे ही होगा। छोटे-छोटे बालकोको सूत कातते देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है और मेरा विश्वास चरखेमे और भी दृढ हो गया है। मेरा यह विश्वास दिन-प्रतिदिन बढता ही जाता है। आपकी आजीविकाका साधन खती है, किन्तु आप गरीब है और आपको खानेके भी लाले पडे रहते है। इस स्थितिमे चरखा आपका अवलम्ब है और उससे आपको शान्ति मिलेगी। आपको जब दारु पीनेकी इच्छा हो तो आप चरखेपर बैठ जाये। आप उसे ज्यो-ज्यो धीरे-धीरे चलायेगे त्यो-त्यो आपकी दारुकी चाह कम होती जायेगी। आप मेरा कहना मानकर इतना ही करे। यदि वर्षा नही होती तो फसल सूख जाती है, किन्तु चरखा तो सतत फलदायी है। यदि आप चरखेकी पर्याप्त सेवा करेगे तो यह अन्नपूर्णा बन जायेगा।

यहाँ जो प्रस्ताव पास किये जायेगे मै उनमे आपसे प्रतिज्ञा कराना चाहता हूँ। यदि आप दारू छोडना अभीष्ट मानते हो तो आप यह प्रतिज्ञा करे "हम ईश्वरको साक्षी मानकर प्रतिज्ञा करते है कि हम दारू और ताडी नही पियेगे। और अपने दूसरे भाइयो और बहनोसे भी दारू न पीनेका अनुरोध करेगे।"

अब मै दूसरी बात लेता हूँ। मै आपको सब बाते समझानेके बाद ही आपसे हाथ उठवाना चाहता हूँ। यदि आप सब भाई और बहन बुनाईकी बात समझ गये हो तो ऐसी प्रतिज्ञा करे कि हम अबसे हाथकते सूतकी और हाथबुनी खादी ही पहनेगे। विदेशी कपडा पहनना भयानक है। यदि आपमे से ज्यादातर लोग यहाँसे जानेके बाद विदेशी कपडे पहनते रहे तो यह उनके लिए डूब मरनेकी बात होगी जिनके देखते आप यह प्रतिज्ञा ले रहे है।

भाइयो और बहनो, मैंने आपसे ये दो प्रतिज्ञाएँ कराईं। आपने इनमे ईश्वरको साक्षी रखा है। मै चाहता हूँ कि आपकी ये प्रतिज्ञाएँ पूरी हो। प्रतिज्ञा-पालन करना सरल नही है। किन्तु आपको मै इनके पालन करनेका उपाय बताता हूँ। यह उपाय दुखियोका सहारा है। इसकी सहायतासे बहुतसे तर गये है। मैंने यह उपाय सोजित्रामे अन्त्यजो और धारालाओको बताया था।[1] आप प्रात बहुत जल्दी उठे, मुँह-हाथ धोये, आँखे साफ कर ले और तब रामनाम ले। रामका अर्थ है ईश्वर। राम-राम अर्थात् सब-कुछ। उसीसे यह प्रार्थना करनी चाहिए, "हे राम, तू मुझे पवित्र रख और वेडछीमे मैंने जो प्रतिज्ञा ली है उसके पालनमे सहायक बन" आप थके हो और आपको नीद आ रही हो तो भी आप क्षण भर रामका स्मरण करे और रामसे कहे, "तूने प्रतिज्ञाके पालनमे मेरी बहुत सहायता की है। इसके लिए मै तेरा उपकार मानता हूँ। मुझे दारूकी गन्धतक न आये और स्वप्नमे भी उसकी याद न आये। विदेशी कपडेकी

१ देखिए "भाषण बारिया क्षत्रिय परिषद्, सोजित्रामें", १६-१-१९२५ और "भाषण अन्त्यज परिषद्, सोजित्रामें", १६-१-१९२५।

भी नही।" बस, फिर आपको भूतो और प्रेतोसे भी डरनेकी कोई जरूरत नही बचेगी। राम आपसे नारियल नही माँगता। वह तो आपके भावका भूखा है। वह सभीके हृदयो-मे बैठा है। आप उसे पहचाने। यह घडी टिक-टिक कर रही हे। किन्तु राम कोई भी शब्द नही करता। राम आप सबका कल्याण करे।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

९. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

सरभोण

पौष वदी ९ [१९ जनवरी, १९२५][1]

मै ब्रह्मचर्य पालनके सम्बन्धमे किसीपर भी दबाव नही डालता, बल्कि तटस्थ रहता हूँ। यह बात मेरे गले नही उतरती कि बालक जब युवावस्थाको प्राप्त कर ले तब उनके विवाहकी व्यवस्था करना माता-पिताका कर्त्तव्य होता है। मै यह अवश्य मानता हूँ कि इस सम्बन्धमे माता-पिताको उनकी सहायता करनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी

१० टिप्पणियाँ

पच्चीस हजार नहीं

मौलाना जफर अली खाँ[2] ने नीचे लिखा तार भेजा है

लाहौर वापस पहुँचनेपर मैंने यहाँके अखबारोमें 'यंग इडिया'के आधार पर यह खबर पढ़ी कि मैंने आपसे इस सालके भीतर २५,००० सूत कातने-वाले मुसलमान कांग्रेस कार्यकर्त्ता देनेका वादा किया है। मुझे अन्देशा है कि इसमें कोई गलतफहमी हुई है। शायद मेरे शब्द भावको ठीक-ठीक व्यक्त नहीं कर सके। मैंने तो सिर्फ इतना ही वादा किया था कि मैं आपकी पदावधि समाप्त होनेतक १०,००० मुस्लिम स्वयंसेवक आपकी खिदमतमें पेश करनेकी पूरी कोशिश करूँगा, और मैं इस वादेपर कायम हूँ।

इस तारको मैं सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ। जहाँतक मेरा ताल्लुक है किसी किस्मकी गलतफहमी नही हुई। मौलाना साहबके वादेपर मुझे इतना ताज्जुब हुआ था कि मैंने मौलाना साहबको अति आशावादी न बननेके लिए चेताया भी था। पर वे अपनी बातपर दृढ रहे और यह वादा था भी ऐसा कि जो सर्वसाधारणसे छिपाकर नही रखा जा सकता था। यह वादा तो एक बिन माँगा मोती था। और फिर कोई

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

२. पंजाब खिलाफत समितिके अध्यक्ष।

भी [illegible] आगे जाकर [illegible] द्वार नहीं देखता। बहरहाल, १०,००० स्वयंसेवक भी [illegible] लोगोंकी तादाद है। पर मैं मौलाना साहबको याद दिला दूं कि [illegible] जो हम चाहते हों। यह प्रस्ताव दिल्लीका पुराना प्रस्ताव है — जिसकी पुष्टि १९२१में अहमदाबादकी कांग्रेसमें हो चुकी है। इसलिए मैं तो १०,००० सुसंगठित स्वयंसेवकोंसे ही सब्र कर लूंगा, जो घड़ीके कांटेकी तरह [illegible] करते हों। अगर मौलाना साहब १०,००० स्वयंसेवक जमा कर पायें तो मुझे कोई शक नहीं कि उन्हें २५,००० मिलनेमें तो कोई दिक्कत न होगी। क्योंकि एक बार जहाँ चरखेका आन्दोलन पैर जमा सका कि फिर उसे [illegible] देर नहीं लगेगी।

कुछ परिषदें[1]

[illegible] परिषदोंमें शरीक होनेका सौभाग्य मिला। [illegible] चाहता हूँ। उनके नाम हैं मोजिआ [illegible] खेड़ा जिला किसान परिषद्, धाराला परिषद्, [illegible] परिषद् और [illegible] महिला परिषद् और अन्त्यज परिषद्। [illegible] परिषद् भी हुई थी। इन तमाम परिषदोंमें [illegible]। किसान परिषद्की एक विशेषता थी, डाक्टर सुमन्त मेहताका [illegible] कि यदि एक सालके लिए अपना पूरा समय देनेवाले ४० स्वयंसेवक उन्हें मिल जायें तो मैं एक साल[illegible] खेड़ा जिलेसे बाहर जाऊँगा ही नहीं। उनके कहने-भरकी देर थी कि ४५ से भी अधिक स्वयंसेवक पूरे साल-भर उनके साथ काम करनेके लिए तैयार हो गये। इन परिषदोंमें दर्शक चार दर्जोंमें विभक्त थे। एक दर्जेमें थे वे दर्शक जिन्हें एक निश्चित तादादमें हाथ कता सूत देनेपर ही प्रवेश मिल सकता था। स्वागत-समितिको परिषदोंपर बहुत कम खर्च उठाना पड़ा। सभा-मंडप विशाल और [illegible] था, कुर्सियोंके होनेका तो सवाल ही नहीं उठता। लकड़ी और कपड़ा, [illegible] मिल गई थी। मेहनत लोगोंने स्वेच्छासे मुफ्त कर दी थी। गांवके एक सज्जनने बाहरी यात्रियोंके खान-पानका इन्तजाम कर दिया था। एक दूसरे सज्जनने मेहमानोंका और तीसरे साहबने प्रतिनिधियोंके भोजनका भार अपने ऊपर ले लिया था। यह इन्तजाम सोलहों आने सन्तोषप्रद साबित हुआ। प्रोफेसर माणिकरावकी बड़ौदा स्थित व्यायामशालासे आये हुए स्वयंसेवकोंके प्रबन्धने सभामें पूरी शान्ति रखी। सभाकी कार्रवाई मुख्तसिर थी और उसमें कामकी ही बातें हुईं। स्वागत-समितिके अध्यक्षका भाषण सिर्फ १५ मिनटका था। उन्होंने अपने छपे हुए भाषणके महत्त्वपूर्ण अंशोंको पढ़कर सुनाया। सभापतिने ३० मिनटसे ज्यादा अपने भाषणके लिए नहीं लिये। सभामें एक भी फिजूल लफ्ज नहीं बोला गया। सभाके पदाधिकारीगण नेता होनेके बजाय सेवक ही अधिक प्रतीत होते थे। प्रस्ताव महज उन्हीं बातोंके सम्बन्धमें थे जो लोगोंको खुद करनी थीं।

१ यहाँसे आगेकी सभी टिप्पणियाँ २५-२-१९२५ के नवजीवनमें प्रकारान्तरसे दी गई हैं।

२ गुजरातके एक राजनीतिक और सामाजिक कार्यकर्ता।

धाराला

गुजरातमे धाराला एक खूंखार लडाका कौम है। उसका मुख्य पेशा खेती है। लेकिन रुपये-पैसेकी तगीके कारण उन्होने लूट मारको भी अपना पेशा बना लिया है। खून करना उनके लिए कोई असाधारण बात नही। १९२१ मे आत्मशुद्धिकी जो लहर भारतमे उठी थी, उसका उनपर भी असर हुए बिना न रहा। इस बीच जो कार्यकर्त्ता तैयार हुए है वे उनके अन्दर इसी इरादेसे काम कर रहे है कि उनका भीतरी सुधार हो। १९२३ मे श्री वल्लभभाईने जिस शानदार सत्याग्रह सग्रामको शुरू किया था और जिसका उन्होने बहुत सफलतापूर्वक नेतृत्व भी किया था, उसने उन लोगोके अन्दर एक जबरदस्त जागृति पैदा कर दी है। सोजित्राकी यह परिषद् इसी सुधारका एक फल थी। वे हजारोकी तादादमे एकत्र हुए थे। उन्होने सभामे होनेवाले भाषणोको पूरी शान्तिके साथ सुना। जो प्रस्ताव पास हुए उनका सम्बन्ध शराब और नशीली चीजोका सेवन न करने, अपनी लडकियोको पैसा लेकर न बेचने तथा लडकियोका अपहरण न करनेसे था। उनमे यह बुराई बहुत फैली हुई है।

अन्त्यज

उसी सभा-मण्डपमे सोजित्रा तथा आसपासके अन्त्यज भी एकत्र हुए थे। और उनके नेता मचपर बैठाये गये थे। सवर्ण और अस्पृश्य आपसमे निस्सकोच होकर मिलते थे। शराब न पीने ओर खादी पहननेके प्रस्ताव पास हुए। सभाके सचालकोने अपना सभा-मण्डप अन्त्यजोको देकर साहसका परिचय दिया। क्योकि मैने देखा कि पेटलाद जिला छुआछूतके भावसे मुक्त नही है।

महिला परिषद्

इस परिषद्का दृश्य तो एक बडा ही प्रेरणादायक दृश्य था। पाटीदार[1] महिलाये थोडा-बहुत पर्दा करती है। सोजित्राकी जनसख्या सात हजारसे ज्यादा नही है। पर सभामे कोई १० हजार महिलाये जरूर रही होगी। मेरी जानकारीमे तो बडे-बडे शहरोमे भी महिलाओकी इतनी बडी सभा नही हुई। महिलाओने भाषणोको ध्यान-पूर्वक और बिना शोरगुलके सुना। मैने अक्सर देखा है कि महिलाओकी सभामे शान्ति रखना बडा कठिन होता है। सो इस सभाका हाल देखकर सबको — व्यवस्थापकोको भी — बडा आनन्द और ताज्जुब हुआ। इस परिषद्मे कोई प्रस्ताव नही रखा गया। व्याख्यान खास तौरपर खादी और चरखेपर ही हुए।

किसानोकी परिषद् दो दिनतक कुल मिलाकर पाँच घटे चली। दूसरी परिषदे एक-एक घटेमे समाप्त हो गईं।

कालीपरज

सोजित्राका सारा प्रबन्ध सादा और व्यवस्थित था ही, पर वेडछीने तो कमाल कर दिया। मेरे मुँहसे हठात् निकल पडा कि सादगी, स्वाभाविकता और रुचिकी

१. जमींदार।

[illegible] परिषद् मैंने कहीं नहीं देखी। जिसने उस जगहको पसन्द किया और सारी व्यवस्थाकी रूपरेखा बनाई वह जरूर ही कोई कलाविद और कुदरती [illegible] होगा। परिषद्का स्थान एक नदीके किनारे चुना गया था। नदी [illegible] और [illegible] छोटे-छोटे टीलोंकी कतारके बीचमें बहती थी। [illegible] था, गहरा नहीं। मगर सभामंच नदीके बहते पानीपर बना दिया गया था। और वह कोई ८ फीट ऊँचा था। रेतसे भरा हुआ एक बोरा [illegible] था। सभापति मंचके सामने ही था। लोग सामनेकी टेकड़ियोंपर [illegible] बैठे हुए थे। सारा मंडप ताड़ और हरे पत्तोंसे सजाया गया था। चित्र बिलकुल नहीं लगाये गये थे। सजावटमें कागजका एक भी टुकड़ा या सूतका एक भी धागा काममें नहीं लिया गया था। ऐसी सजावटमें सूतका कोई काम नहीं है और उसके [illegible] हैं। वितान बांस और हरी पत्तियोंका बना था और वह सुन्दर लगता था। मंडपके मध्य-भागके दोनों ओर कोई १२,००० से ऊपर स्त्री-पुरुष शान्तिसे सटे बैठे हुए थे। कोई प्रवेश-शुल्क नहीं था। सभी प्रतिनिधि थे। प्रतिनिधियों और दर्शकोंमें कोई अन्तर नहीं था। (मैं अनुकरण करनेके लिए यह बात नहीं कह रहा हूँ। यहाँ ऐसा अन्तर रखना एक तरहकी निष्ठुरता होती। संगठित संस्थाओंमें ऐसा अन्तर रखना अनिवार्य है)। सभा-स्थानसे कुछ ही दूर टीलोंकी कतारकी [illegible] लम्बी पट्टी चरखा प्रदर्शनीके लिए थी। बूढ़े पुरुष, बूढ़ी स्त्रियां और ५ से १० सालतकके छोटे-छोटे बच्चे चरखे चला रहे थे। बूढ़े स्त्री-पुरुषों और छोटे बालकोंको ही उनमें लगानेका एक विशेष हेतु था। कात सकनेवाले अवेड लोग स्वयंसेवक बनकर सेवा कर रहे थे। वे सब कालीपरज जातिके ही लोग थे। चरखोंकी कतारके पास ही गुजरातमें बनी खादीका भंडार था। आन्ध्रकी बढ़िया खादी वहां लोगोंके मतलबकी ही न थी। खादी पहननेवाले कालीपरज लोग मोटी ही खादी पहनते थे। एक बहुत छोटे हिस्सेमें देशके नेताओंके चुने हुए चित्र और कुछ साहित्य रखा गया था। उसमें सब एक कौड़ीका भी नहीं हुआ था। बांस और लता-पत्र तो लोगोंके ही थे। वे सारी चीजें ले आये और व्यवस्थापक जैसा बताते गये वैसा बिना कुछ लिये सजाते चले गये। जो हजारों आदमी आये थे उनके खान-पान आदिके लिए किसी इन्तजामकी जरूरत न थी, क्योंकि वे या तो पैदल आये थे या बैलगाड़ियोंमें, और सबसे नजदीकी रेलवे स्टेशन सभा-स्थानसे कोई १२ मील था। लोग घरसे अपने लिए पका खाना या सूखा अनाज बाँध लाये थे। मैदानमें ही, जहाँ जी चाहा, उन्होंने अपना पड़ाव डाल दिया। हर काम बिना शोरगुलके शान्तिपूर्वक हुआ।

सारी कार्रवाई बड़ी स्वाभाविक और अत्यन्त सादगीसे भरी हुई थी। लोगोंके सामने ऐसी कोई बात पेश नहीं की गई जो उनकी जरूरतको पूरा करनेवाली न हो।

उनकी दो प्रतिज्ञाएँ

उनकी यह तीसरी वार्षिक परिषद् थी। सभी परिषदोंमें इने-गिने ही प्रस्ताव स्वीकृत किये गये थे। एक प्रस्ताव शराब न पीनेके बारेमें — इनके बीच शराबखोरी बहुत

ज्यादा है, दूसरा खादी पहननेके बारेमे और तीसरा औरतोको पत्थरके गहने न पहनानेके विषयमे था। शराब न पीने और खादी पहननेके लिए जो प्रस्ताव हुए वे प्रतिज्ञाके रूपमे थे। लोगोने बडी सजीदगीके साथ खुद शराब न पीने और नम्रताके साथ अपने पडोसियोको भी ऐसा समझानेका उत्तरदायित्व स्वीकार किया। दूसरी प्रतिज्ञा खुद सूत कातने तथा हाथकती खादीके अलावा सभी किस्मके कपडेसे विमुख रहने एव औरोको भी ऐसा ही करनेके लिए समझानेकी ली गई। मैंने खास तौरपर कोशिश की कि वे उन तमाम बातोका मतलब समझ ले जो उनसे कही जा रही थी और जिनकी प्रतिज्ञा उनसे कराई जा रही थी। सभाके छोरोपर बैठे हुए लोगोके बीच स्वयसेवक भेजकर यह दिलजमई करा ली जाती थी कि वे लोग सभाकी कार्रवाईको समझ रहे है या नही। हवाका रुख अनुकूल था। इससे आवाज उनतक बखूबी और आसानीसे पहुँच जाती थी। क्या स्त्री और क्या पुरुष दोनोने ईश्वरको साक्षी रखकर शपथ ली। पाठक इस बातको जान ले कि वे दो वर्षोसे ऐसे प्रस्ताव पास करते आ रहे है और लगभग सभी लोगोके बदनपर कुछ-न-कुछ खादी अवश्य थी। उन्होने तत्परतासे और समझ-बूझकर उसे अगीकार किया है। सैकडो लोगोने कातना सीख लिया है। कुछ युवकोने तो बारडोली आश्रममे रहकर धुनना, कातना और बुनना सीखा है। इनमेसे कुछ कपडा बुनकर अपनी रोजी भी कमा रहे है। उपस्थित श्रोतागण खादी और चरखेकी प्रतिज्ञाके लिए वास्तवमे उसी तरह तैयार थे जिस तरह नशीली चीजोको छोडनेकी प्रतिज्ञाके लिए।

मैंने ६० सालके एक बूढेसे अच्छी तरह बातचीत की और यह जानना चाहा कि दिनभर खेतमे कडी मेहनत करनेके बाद वह चरखा क्यो चलाता है। वह रोज ४–५ घटे सूत कातता है। वह सोता बहुत कम है इसलिए रातको भी कातता है और तडके ही उठकर फिर चरखा लेकर बैठ जाता है। मैंने सोचा था कि वह मुझसे कहेगा कि मै मन-बहलावके लिए या परिवारवालोके लिए कातता हूँ। पर उसने मुझे उसका कारण आँकडे पेश करते हुए बताया, जिससे मुझे आनन्द और आश्चर्य दोनो हुए। उसने कहा कि मै अपना सूत खुद कातता हूँ। अपने लिए कपास भी बो लेता हूँ और अब मैं अपना कपडा भी घरमे ही बुन लेता हूँ। और इस तरह फी व्यक्ति दस रुपये साल बच जाते है। इन लोगोको अपने लिए कपासकी तमाम विधियोकी व्यवस्था करते देखकर हाथकताई और खादीकी जरूरतमे घोर अविश्वास करनेवाले लोगोको भी उसका कायल हो जाना चाहिए। यहाँ निपट अपढ और अनजान देहातियोमे, सच्चेसे-सच्चे नमूनेका ग्राम-सगठन खामोशीके साथ चल रहा है। वह उनके जीवनके हर क्षेत्रमे क्राति ला रहा है। वे अपनी ही विचारशक्तिसे काम लेना सीख रहे है।

परिषद्के बाद

परिषद्के बाद मैंने समाजके बडे लोगोकी सभा बुलाई। तीससे ऊपरके लोगोने अपने नाम बतौर कार्यकर्त्ता लिखाये। उनमे औरते भी थी। उन्होने स्वय भी कातने, खादी पहनने और शराब कतई न पीनेकी प्रतिज्ञा की। और उन्होने पाँच हफ्तोके भीतर पाँच-पाँच ऐसे ही कार्यकर्त्ता तैयार करनेका वचन दिया और पाँच सप्ताह

बीत जानेके बाद इस बातपर विचार करनेके लिए वे पुन एकत्र होगे कि अब यह सुधार-कार्य किस तरह आगे बढाया जाये।

रामनाम

जोशमे प्रतिज्ञा कर लेना काफी आसान है। पर उसपर कायम रहना और खासकर प्रलोभनोके बीच, मुश्किल होता है। ऐसी परिस्थितिमे ईश्वर ही मददगार होता है। इसीलिए मैंने सभाको रामनामका सहारा लेनेकी सलाह दी। राम, अल्लाह, गॉड, सब मेरे नजदीक एकार्थक शब्द है। मैंने देखा कि भोले-भाले लोगोके दिलोमे जाने कैसे यह खयाल बैठ गया है कि उनके सकटकी घडीमे मैं कोई अवतार आ खडा हुआ हूँ। मै उनके इस अन्धविश्वासको दूर कर देना चाहता था। मै जानता हूँ कि मै अवतरित नही हुआ हूँ। एक निर्बल व्यक्तिके प्रति उनका ऐसा भरोसा केवल भ्रम ही है। इसलिए मैंने उनके सामने एक सादा और आजमूदा नुस्खा पेश किया जो आजतक कभी व्यर्थ सिद्ध नही हुआ है अर्थात् हर रोज सूर्योदयसे पूर्व और शामको सोने जानेके पहले अपनी प्रतिज्ञाएँ पूरी करनेके लिए ईश्वरकी सहायता माँगना। करोडो हिन्दू उसे रामके नाममे पहचानते है। बचपनके दिनोमे मै जब कभी डरता तब मुझसे रामनाम लेनेको कहा जाता था। मेरे कितने ही साथी ऐसे है जिन्हे सकटके अवसर पर रामनाममे बडी सान्त्वना मिली है। मैंने धाराला और अछूतोको रामनामका नुस्खा बताया। मै अपने उन पाठकोके सामने भी इसे पेश करता हूँ जिनकी श्रद्धा और दृष्टि पोथी पढ-पढकर मद न पड गई हो। विद्वत्ता हमे जीवनकी भूलभुलैयामे अनेक स्थानोसे निकाल कर ले जाती है, पर सकट और प्रलोभनकी घडीमे वह हमे कोई सहारा नही दे पाती। उस हालतमे श्रद्धा ही हमे उबारती है। रामनाम उन लोगोके लिए नही है, जो ईश्वरको जैसे-तैसे रिझानेकी इच्छा रखते है और हमेशा इसी आशामें रहा करते है कि वह हमे बचा लेगा। यह उन लोगोके ही लिए है जो ईश्वरसे डर कर चलते है, जो सयमपूर्वक जीवन बिताना चाहते है, किन्तु लाख प्रयत्न करनेपर भी उसका पालन नही कर पाते।

आदर्श पाठशालाएँ

राष्ट्रीय पाठशाला और विद्यालयकी काग्रेसकी व्याख्या सुनकर घबडानेवाले शिक्षको और विद्यार्थियोकी हिम्मत बढानेके लिए मै दो ऐसी पाठशालाओका जिक्र करना चाहता हूँ जिनके शिक्षको और विद्यार्थियोसे मै इन परिषदोके दौरान मिला था। एक सुणाव नामक ग्राम है जो आणद तहसीलमे है। और दूसरा वराड नामक ग्राम है जो बारडोली तहसीलमे है। इन दोनो पाठशालाओमे सभी विद्यार्थी बडे उत्साहसे कताई करते है। वराडमे लडके अपने लिए रुई खुद ही धुन लेते है और अपनी पूनियाँ बना लेते है। अ० भा० खादी मण्डलको वे नियमपूर्वक हर मास कुछ सूत भेजते रहते है। मैंने सुणाव ग्रामके लडकोसे बहुत देरतक बातचीत की। वे मुझे असाधारण रूपसे बुद्धिमान मालूम हुए। वे जानते थे कि वे सूत क्यो कात रहे है। उन्होने कहा हम काग्रेसको जो सूत देते है वह गरीबोके लिए देते है और उसके अलावा जो सूत कातते है वह अपने कपडोके बारेमे स्वावलम्बी बननेके लिए। जिन्हे जिज्ञासा

हो मै उन्हे इन मदरसोमे जाने और इस वातका पता खुद लगानेको आमन्त्रित करता हूँ कि वे वालक किस प्रकार कार्य कर रहे है। जब गुजरात विद्यापीठने शालाओमे अछूत लडकोको भरती करनेका आग्रह किया तव उनकी हालत वहुत विपम हो गई थी। पर शिक्षकोने तूफानका सामना हिम्मतके साथ किया। कुछ लडके वहाँसे चले भी गये, किन्तु मदरसे वहुत अच्छी तरह चल रहे है। वराडमे जिन माता-पिताओने अछूतोके लडकोके भरती हो जानेके कारण अपने लडके हटा लिये थे, उन्होने अव फिर उनको राष्ट्रीय पाठशालाओमे भेजना अगीकार किया हे। यदि राष्ट्रीय शालाओके शिक्षक और व्यवस्थापकगण नम्रता, मृदुता और सहिष्णुताका अवलम्वन करते हुए दृढतासे काम ले तो काग्रेसकी व्याख्याके कारण राष्ट्रीय सस्थाओको क्षति पहुँचनेकी आशका न रहेगी।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-१-१९२५

११. एक अपील

पाठक साप्ताहिक टिप्पणियोके स्तम्भमे भी कालीपरजके वारेमे कुछ पढेगे। गुजरातके वाहर वहुतेरे लोग शायद नही जानते कि कालीपरजके माने क्या है। 'कालीपरज' का अर्थ है 'काले लोग'। यह नाम गुजरातके कुछ लोगोको उन लोगो द्वारा दिया गया है जो अपनेको उनसे ऊँचा और श्रेष्ठ मानते है। रगकी हदतक कालीपरज जातिके लोग दूसरे लोगोसे ज्यादा काले या अलग नही है। पर आज वे दलित, असहाय, अन्धविश्वासी और कायर है। शराव पीनेकी उन्हे भीषण लत लगी हुई है। वडौदा राज्यमे उनकी आवादी वहुत ज्यादा है।

तीन वर्ष पहले इन्ही लोगोमे जबरदस्त जागृति हुई। हजारो लोगोने शराव पीना और मास खाना भी छोड दिया था। शरावके दूकानदारोको यह वात वडी खली। दूकानदारोमे ज्यादातर लोग पारसी थे। कहते है कि इन लोगोने उन्हे फिरसे शराव पीनेकी ओर प्रवृत्त करनेमे कुछ उठा नही रखा, और वहुत हदतक उन्हे सफलता भी मिली। कहते हैं कि सरकारी अधिकारी भी सुधारकोके खिलाफ इस साजिशमे शामिल हुए। और अव चाहे इन कोशिशोके फलस्वरूप हो, चाहे किसी कारणसे, इन लोगोमे एक ऐसा दल पैदा हो गया है, जो उन्हे उपदेश देता है कि शराव न पीना पाप है और जातिसे वाहर करके तथा दूसरे तरीकोसे वे उन लोगोकी हिम्मत और उमगको तोड रहे है, जो अपने-आपसे और इस बुरी आदतके खिलाफ लडनेमे लगे है जो पीढियोसे उनके बीच घर किये हुए है।

कालीपरजकी सभाका जिक्र[1] मैने अन्यत्र सविस्तार किया ही है। उसमे एक प्रस्ताव यह भी पास हुआ है कि वडौदा, धरमपुर और वासदाकी रियासतो तथा अग्रेज

१. देखिए "टिप्पणियाँ", २२-१-१९२५ का उपशीर्षक 'कालीपरज'।

सरकारसे भी शराबकी दूकानें बन्द कर देनेका अनुरोध किया जाये। शायद कोई कहे कि यह तो बड़ा जबरदस्त हुक्म दे दिया है, यह भी कहा जा सकता है कि शराबखोरी बन्द करनेकी सारे राष्ट्रकी ओरसे की गई कोशिश बुरी तरह असफल हो चुकी है, ऐसी हालतमें मुट्ठीभर असहाय लोगोंकी बेकार प्रार्थनासे क्या होगा? इसमें शक नहीं कि यह दलील काफी जोरदार है। लेकिन इन दोनों कोशिशोंका रूप जुदा-जुदा है। १९२१ की कोशिश असहयोगियों की थी और वह ब्रिटिश सरकारके खिलाफ थी। असहयोगी उनके हाथसे अधिकार छीन लेनेपर तुले हुए थे। फिर वह उन लोगोंकी ओरसे की गई कोशिश थी जो खुद शराबकी दूकानोंके शिकार नहीं थे। पर अब यह प्रार्थना उन लोगोंकी तरफसे की जा रही है जो खुद ही इन लतके चंगुलमें फँसे हुए हैं। यह निर्बल लोगोंकी सत्ताधारियोंसे प्रार्थना है। यह केवल ब्रिटिश सरकारसे ही नहीं बल्कि उनसे सम्बन्ध रखनेवाली तमाम सरकारोंसे की गई है। ये लोग असहयोगी नहीं हैं। वे सहयोग या असहयोगका फर्क नहीं जानते। वे बेमनसे लगभग अनजाने ही और कभी-कभी तो जोरो-जुल्मके डरसे औरोंके लिए काम कर-करके मरते हैं। वे नहीं जानते कि स्वराज्य क्या चीज है? उनके लिए तो स्वराज्य है—शराबखोरी छोड़ देना और उनके बीचमें शराबकी दूकानोंके रूपमें शराब पीनेका प्रलोभन हटा दिया जाना। इसीलिए उनकी यह प्रार्थना दया-धर्मपर आधारित है और इसलिए उसे न मानना मुश्किल होगा।

अध्यक्षके नाते मैं उनके उस प्रस्तावको, जो भिन्न-भिन्न सरकारोंके नाम पास किया गया है, कार्यान्वित करनेके लिए बाध्य हूँ। ब्रिटिश सरकारसे यह प्रार्थना धारासभाके सदस्योंकी मार्फत ही की जा सकती है। धारासभाके सदस्य शराबकी आमदनीको ठोकर मार सकते हैं, फिर उन्हें शिक्षा विभागके लिए धन न जुटा पानेकी जोखिम ही क्यों न उठानी पड़े। मैं उन्हें दावत देता हूँ कि वे आकर अपनी आँखों देखें कि एक समूची जाति इस लतके बदौलत किस तरह बरबाद हो रही है। अगर वे अपने इन देश-भाइयोंका उद्धार करना चाहते हों, तो उन्हें इतना साहस तो प्रदर्शित करना ही होगा।

पर बड़ौदा, धरमपुर और बांसदा राज्योंकी बात दूसरी है। यदि वे चाहें तो सहज ही शराबकी दूकानें बन्द करके अपने प्रजाजनोंको तथा खुद अपनेको विनाशसे बचा सकते हैं। 'खुद अपनेको'—इस सर्वनामका प्रयोग मैंने जानबूझकर किया है, क्योंकि छोटी रियासतोंमें लोगोंका बड़ी तादादमें तहस-नहस हो जाना खुद रियासतोंका तहस-नहस हो जाना है। क्या वे उन लोगोंकी प्रार्थनापर ध्यान न देंगे जो खुद अपनी लतसे अपनी रक्षा करनेके लिए सहायताकी याचना कर रहे हों?

और अब शराबके पारसी दूकानदारोंके विषयमें। मैं जानता हूँ कि उनके लिए यह रोटीका सवाल है। लेकिन उनकी जाति दुनियाकी एक बड़ी उद्योगशील जाति है। वे बुद्धिमान और उद्यमी हैं। वे बड़ी आसानीसे अपने निर्वाहका दूसरा अच्छा पेशा खोज ले सकते हैं। अबतक कई लोगोंने बुरे पेशोंको छोड़कर अपने समाजकी नैतिक उन्नतिके अनुकूल पेशा और काम अख्तियार किया है। मैं पारसियोंसे यह बात कहनेका हक रखता हूँ, क्योंकि मैं उन्हें जानता हूँ और उन्हें चाहता हूँ। मेरे कुछ अच्छे-

अच्छे साथी पारसी रहे है और अब भी है। उन्होने भारतके लिए बहुत-कुछ किया है। उन्होने देशको दादाभाई और फीरोजशाह मेहता दिये है। और फिर जो ज्यादा देते है उन्हीसे तो और पानेकी उम्मीद की जाती है। शराबके पारसी दूकानदारोको सुधार आन्दोलनमे दखल देकर खलल डालनेके बजाय (यदि उनपर लगाये इल्जामको सही माने तो) खुद आगे आकर इस सुधार कार्यका श्रीगणेश करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २२-१-१९२५

१२. पत्र : फूलचन्द शाहको

दिल्ली जाते हुए
पौष बदी १३ [२२ जनवरी, १९२५][1]

भाई फूलचन्द,[2]

तुम्हारा पत्र मिला। इस बार वढवानमे कुछ घटे तो अवश्य ठहरूँगा ही।

तुमने पट्टणी साहबके सम्बन्धमे जो-कुछ लिखा है, यदि वह सत्य हो तो दु:ख-जनक बात है। मैंने तो उनके सम्बन्धमे इस आशयका आक्षेप सबसे पहले भावनगरमे सुना था, किन्तु मैंने उसपर ध्यान नही दिया था। किन्तु मै तुम्हारे लिखेको उस तरह दरगुजर नही कर सकता। किन्तु मै तुमसे पूछता हूँ कि क्या तुम्हारी इस बातकी जानकारीका आधार कोई प्रत्यक्ष प्रमाण है? यदि तुमने यह बात स्वय नही देखी तो फिर किस प्रकार जानी? यह व्यभिचार किस प्रकारका है, मै यह जाननेकी जरूरत इसलिए मानता हूँ कि श्री पट्टणीके सम्बन्धमे मेरा विचार बहुत अच्छा रहा है और मुझपर उनकी छाप बहुत अच्छी पडी है।

व्यभिचारी अधिकारी या राजाके यहाँ न ठहरना चाहिए, तुम्हारा यह विचार ठीक नही है। हम ससार-भरके काजी कैसे बन सकते है? तुम जानते हो कि जिन लोगोके यहाँ ठहरना होता है, उनपर अनेक प्रकारके आक्षेप सुननेमे आते है। इनमेसे कुछ लोगोपर किये हुए आक्षेप सच्चे होते है, मै यह भी जानता हूँ। इन्ही कारणोसे लोग निर्जन वनमे जा बसते है। किन्तु हमे जबतक समाजमे रहना है तबतक जैसा तुम चाहते हो वैसा व्यवहार नही किया जा सकता।

मै यह बात व्यावहारिक दृष्टिसे नही कहता, बल्कि पारमार्थिक दृष्टिसे कहता हूँ। जो हमे ठहराये, हमे उसके यहाँ ठहरना चाहिए, यही धर्म है। किन्तु यदि हम यह देखे कि कोई हमे ठहराकर उससे अपनी अपवित्रताके लिए समर्थन प्राप्त करनेका प्रयत्न करता है तो हमे ऐसे लोगोके यहाँ नही ठहरना चाहिए।

१ यह पत्र जनवरी १९२५ में गांधीजीने अपने काठियावाड़के दौरेके तुरन्त बाद लिखा था।

२ सत्याग्रहाश्रमके सदस्य। काठियावाड़के एक राजनीतिक और रचनात्मक कार्यकर्ता।

किन्तु यह तो अपवाद हुआ। तुम या मैं मानसिक व्यभिचार करनेपर एक दूसरेके यहाँ ठहरते हैं या नहीं?

इस पापमय ससारमे ऐसा निष्पाप कौन है जो ऊँचे आसनपर बैठकर दूसरोको देख-देखकर हँसता रहे? जैसा तुम्हारा खयाल है वैसा प्रमाणपत्र मैं किसीको भी नही देता। यदि कोई प्रसिद्ध वेश्या चरखा चलाये तो मै उस हदतक उसकी भी सराहना अवश्य करूँगा। इससे कोई यह न मानेगा कि मैंने उसे पवित्रताका प्रमाण-पत्र दे दिया है।

"जड-चेतन, गुण-दोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
सन-हन गुण गहहिं पय, परिहरि वारि विकार॥"

हमारा धर्म तो गुणको देखना और सराहना है। क्या समार ऐसा है कि प्रमाण-पत्रोसे धोखा खा जाये? मैंने पट्टणी साहबको पवित्रताका प्रमाणपत्र तो कभी नही दिया। किन्तु मेरा मन उनको ऐसा प्रमाणपत्र देनेका हुआ था। त्रापजमे[1] मुझे उनकी सरलता, उनका गम्भीर ज्ञान और दृढता आदि गुणोको देखकर हर्ष और आश्चर्य हुआ था। किन्तु यदि वे फिर भी अपवित्र हो तो उनकी पवित्रताके सम्बन्धमे मेरी जो धारणा बनी है, मुझे वह बदलनी होगी। तुम्हारा पत्र मेरे लिए भविष्यमे उपयोगी होगा। जो-कुछ हुआ है उसे तो ठीक ही हुआ मानता हूँ। पट्टणी साहब व्यभिचारी हैं, यदि मैं इस बातपर विश्वास भी करने लगूँ तो भी मैं जब सार्वजनिक कार्यसे भावनगर जाऊँ और वे मुझे राज्यकी अतिथिशालामे ठहराये तो मैं वहाँ ठहरूँगा। अपने घर ठहरायें तो वहाँ भी। गोडल नरेश अपवित्र हैं इस बातपर मेरा एक हद तक विश्वास है। किन्तु यदि वे मुझे अपने यहाँ ठहराये तो मैं वहाँ अवश्य ठहरूँ और फिर भी मैं यह नहीं समझूंगा कि मैं कोई पाप कर रहा हूँ। मेरा असहयोग पापसे है, पापीसे नही। डायरशाहीसे है, डायरसे नही।

मुझे लगता है कि मैं तुमको जो बात समझाना चाहता था शायद अब भी पूरी तरह नही समझा सका हूँ। किन्तु इतना समझनेका प्रयत्न करना। दूसरी बात यहाँ आकर पूछ जाना। यदि पत्र लिखकर पूछना चाहो तो पत्र लिखना। अहिंसा धर्म बहुत कठिन है। वह खाडेकी धारसे भी तीक्ष्ण है। उसपर आचरण करनेके लिए करुणाकी आवश्यकता है। तुलसीदासजीने भी अपने आपको परम पापी माना था। भक्त सूरदासने भी कहा है, "मो सम कौन कुटिल खल कामी।"

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २८२६) से।
सौजन्य शारदाबहन शाह

१ भावनगरसे १७ या १८ मील दूरका एक गाँव।

१३. पत्र : रेवाशंकर झवेरीको

पौष वदी १३ [२२ जनवरी, १९२५][1]

आदरणीय रेवाशकरभाई,[2]

जैसा आपसे कहा था, मैंने प्रभाशकरको[3] पत्र न लिखकर कल ही तार दिया है। मैंने उनका पत्र पढनेके बाद भाई नानालालसे मिलना ठीक समझा था। वे बारडोलीमे आनेवाले थे, किन्तु नही आये। फिर भी वे कल आकर मिल गये, इसलिए प्रभाशकरको और डाक्टरको[4] भी तार दिया है। मैंने उनको यह लिख दिया है कि चि० चम्पाके नाम एक खासी रकम जमा करा दी जायेगी। मैंने प्रभाशकरको पत्र भी लिखा है।

तुलसी मेहर[5] कहता था कि रुई धुननेमे [शुरूमे] कुछ परिश्रम पडता है। किन्तु हाथ बैठ जानेपर तो बिलकुल नही पडता। धुनकी हल्की भी बनाई जा सकती है। अगर तुम आन्ध्रकी स्त्रियोकी तरह धुनो तो तनिक भी कठिनाई न होगी।

मोहनदासके प्रणाम

मूल गुजराती पत्र (जी० एन० १२६३) की फोटो-नकलसे।

१४. भाषण : सर्वदलीय सम्मेलन समितिकी बैठकमे[6]

२३ जनवरी, १९२५

श्री गाधीने कहा कि श्रीमती बेसेंटको जैसा डर[7] है मेरा समिति-सम्बन्धी प्रस्ताव उस हदतक नहीं जाता। यह सुझाव तो यह स्पष्ट करनेके लिए दिया गया

१. डाकखानेकी मुहरके अनुसार।

२. बम्बईके एक व्यवसायी और डा० प्राणजीवन मेहताके भाई।

३. इनकी बेटी चम्पाका विवाह डा० मेहताके बेटे रतिलालसे होनेवाला था।

४. डा० प्राणजीवन मेहता।

५. साबरमतीके सत्याग्रहाश्रमके एक सदस्य।

६. नवम्बर १९२४ में बम्बईमें हुई बातचीतके फलस्वरूप आयोजित सर्वदलीय सम्मेलन समितिकी बैठक २२ जनवरी शुक्रवारको शामको वेस्टर्न होस्टल, दिल्लीमें हुई थी। गाधीजीने इसकी अध्यक्षता की थी। उन्होने हिन्दुओं और मुसलमानो तथा सभी राजनीतिक दलोंके बीच समझौतेकी रूपरेखाके बारेमें सुझाव देने और स्वराज्यकी योजना बनानेके लिए एक उप-समिति नियुक्त करनेके सम्बन्धमें एक प्रस्ताव रखा था। विभिन्न सम्प्रदायो तथा दलोंके प्रतिनिधियों द्वारा भाषण देकर इस सम्बन्धमें अपनी-अपनी स्थिति स्पष्ट करनेके बाद सम्मेलन शनिवारके दोपहर तकके लिए स्थगित कर दिया गया था।

७. श्रीमती बेसेंटने प्रस्तावपर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था कि सम्मेलनका सहसा नये निश्चय करना अनुपयुक्त तो है ही, इससे बड़ी अव्यवस्था भी फैल जायेगी। क्योंकि ये निश्चय बेलगाँव कांग्रेसमें पास किये गये प्रस्तावोंके विपरीत भी जा सकते हैं और इसके फलस्वरूप श्री गाधीको अध्यक्ष पद छोड़ना पड़ सकता है।

हे कि काग्रेसजन नये मताधिकार या काग्रेसके सिद्धान्तके सिवा और किसी वातको माननेके लिए मजबूर नहीं है। इस मताधिकार सम्बन्धी निर्णय या काग्रेसके सिद्धान्त केवल प्रस्तावित समितिके कुछ सम्भाव्य निर्णयोके कारण परिवर्तित नहीं किये जा सकते। काग्रेसजन अपने हेतुको भली-भाँति समझते है, वे अपने कार्यक्रमको पूरा करेगे। किन्तु यदि गैर-काग्रेसी काग्रेसमें शामिल हो जायें और काग्रेसजनोको यह विश्वास करा दें कि उनके तरीके गलत हैं तथा मताधिकारमें या काग्रेस सिद्धान्तमें परिवर्तन करना उचित है तो काग्रेसका विशेष अधिवेशन बुलानेका वचन दिया जा सकता है। किन्तु वैयक्तिक रूपसे मैं किसी परिवर्तनकी आवश्यकता नही देखता।

श्री गाधीने श्री दालवीको प्रार्थनापर उदारदलीय सघका यह प्रस्ताव पढा, "उदारदल काग्रेसमें पुन तभी प्रविष्ट हो सकता हे जब (१) काग्रेस ओपनिवेशिक स्वराज्यके अपने घोषित लक्ष्यको प्राप्त करनेके लिए सवैधानिक तरीकोको अपनाये। (२) जब वह असहयोग तथा सविनय अवज्ञा एव साथ ही मताधिकारके लिए सूतकी शर्तको भी निश्चित रूपसे दे तथा (३) जब वह विधान-सभाओमें केवल स्वराज्य दलको ही अपने मान्य प्रतिनिधिके रूपमें स्वीकार न करे।"

श्री गाधीने यह भी कहा है कि दूसरे राजनीतिक दलोके सुझाव भी करीब-करीब इसी तरहके हैं।

[अग्रेजीमे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-१-१९२५

१५. अ० भा० गोरक्षा मंडलके सविधानका मसविदा[1]

[२४ जनवरी, १९२५][2]

अ० भा० गोरक्षा मडल

उद्देश्य

गोरक्षा हिन्दू जातिका धर्म है फिर भी चूँकि अब हिन्दू समाज गोरक्षाधर्मके पालनकी उपेक्षा कर रहा हे, और चूँकि हिन्दुस्तानमे गोवशका दिन-प्रतिदिन ह्रास होता जा रहा है, इसलिए गोरक्षा धर्मके समुचित पालनके लिए इस अखिल भारतीय गोरक्षा मडलकी स्थापना की जाती हे।

मडलका उद्देश्य सभी नैतिक उपायो द्वारा गाय और उसकी सन्ततिकी रक्षा करना हे।

१ गाधीजो द्वारा हिन्दीमें तैयार किया गया मूल मसविदा उपलब्ध नहीं है। देखिए **नवजीवन**, ८-२-१९२५ में "महादेव देसाईका दिल्लीसे पत्र"।

२ देखिए "अखिल भारतीय गोरक्षा मण्डल", १६-३-१९२५ और "गोरक्षा", ९-४-१९२५।

'गोरक्षा' का अर्थ गाय और उसके वशकी निर्दय व्यवहार और वधसे रक्षा करना है। जिन कौमोमे गोवध अधर्म नही माना जाता या गोवध जरूरी माना जाता है, उनपर किसी भी तरहकी जबरदस्ती करना इस मडलकी मूल नीतिके खिलाफ माना जायेगा।

साधन

यह मडल नीचे लिखे साधनोके जरिये अपना कार्य करनेकी कोशिश करेगा.

१ गाय, बैल आदिके प्रति निर्दय व्यवहार करनेवालोको विनयपूर्वक समझाना। इस विषयमे लेखो, पुस्तिकाओ और व्याख्यानो द्वारा प्रचार करना।

२. जहाँ गाय-बैल बीमार या अशक्त हो जाये और उनके मालिक उनके पालनमे असमर्थ हो, वहाँ ऐसे लोगोसे इन पशुओको ले लेना।

३ वर्तमान पिंजरापोलो और गोशालाओकी व्यवस्थाका निरीक्षण करना, उनके प्रबन्धको अधिक अच्छा बनानेकी दिशामे व्यवस्थापकोको मदद पहुँचाना और नये पिंजरापोल तथा गोशालाएँ कायम करना।

४. गोशालाओ, पिंजरापोलो या दूसरे साधनो द्वारा आदर्श पशु-सवर्धन करना और सुसचालित दुग्ध केन्द्रो द्वारा सस्ता और अच्छा दूध सुलभ करना।

५ मरे हुए जानवरोके चमडे वगैरहके लिए चर्मालय खोलना और इस प्रकार कमजोर ढोरोके निर्यातको रोकना या कम करना।

६. चरित्रवान गो-सेवकोको छात्रवृत्तियाँ देकर गो-सेवाके कामकी तालीम दिलवाना।

७. गोचर-भूमि आदिका जो नाश होता जा रहा है, उसके कारणोपर विचार करना और उससे होनेवाले हानि-लाभकी जाँच करना।

८. बैलको बधिया करनेकी क्रिया निर्दय क्रिया है, इसलिए पता लगाना कि इसकी आवश्यकता है या नही। और बधिया करना जरूरी और उपयोगी मालूम पड़े, तो इस क्रियाके करनेका कोई निर्दोष तरीका खोज निकालना अथवा वर्तमान पद्धतिमे उचित सशोधन करना।

९ मडलके कामोके लिए रुपया इकट्ठा करना, और

१० गोरक्षाके लिए जो अन्य साधन आवश्यक या उचित मालूम पडे उनकी योजना करना।

सदस्य

अठारह वर्षसे अधिक उम्रके जो स्त्री-पुरुष इस मडलका उद्देश्य स्वीकार करे और

(१) जो सालाना पाँच रुपया चन्दा दे, या

(२) जो हर माह इतना समय चरखा चलानेमे दे जिसके फलस्वरूप २,००० गज अच्छा सूत हर महीने इस मडलको भेज सके, या

(३) जो इस मडलके लिए प्रतिदिन एक घटा मडल द्वारा निर्धारित किया हुआ काम करे, वे इस मडलके सदस्य हो सकेगे।

टिप्पणी. जो सदस्य २,००० गज सूत कातकर देनेका जिम्मा लेगे, उन्हे पूनियाँ मडलकी तरफसे दी जायेगी।

प्रशासन

मडलके सदस्य जिसे बहुमतसे चुनेंगे, वही इस मडलका अध्यक्ष होगा। अध्यक्षका चुनाव प्रति वर्ष होगा। इस मडलके मन्त्री और खजानचीका चुनाव अध्यक्ष करेगा।

सदस्योकी साधारण बैठकमे कमसे-कम पाँच सदस्योकी एक कार्यकारिणी समिति प्रतिवर्ष चुनी जायेगी। इस साधारण सभाको प्रतिवर्ष कमसे-कम एक बार बुलाना अध्यक्षका काम होगा।

खजानची मडलके पैसेके हिसाब-किताबके लिए जिम्मेदार रहेगा। एक हजार रुपयसे ऊपर सारी रकम खजानची द्वारा स्वीकृत बैंकमे रखी जायेगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-३-१९२५

१६. भाषण : सर्वदलीय सम्मेलन समितिकी बैठकमें

दिल्ली
२४ जनवरी, १९२५

सर्वदलीय सम्मेलनकी बैठक शामको प्रारम्भ हुई। श्री जिन्ना, लाला लाजपतराय तथा एनी बेसेंट जैसे प्रतिनिधि प्रवक्ताओके महत्त्वपूर्ण भाषण समाप्त होनेपर सब दलोका प्रतिनिधित्व करनेवाली उप-समितिकी[1] नियुक्ति की गई जिसमें लगभग ५० सदस्य हैं . . .।

गाधीजीने बैठककी अध्यक्षता की। उनका खयाल था कि यदि हम इस बैठकमें हिन्दू-मुस्लिम समस्या, ब्राह्मण-अब्राह्मण समस्या और अन्य प्रश्नोका कोई सन्तोषप्रद, वास्तविक तथा सम्मानजनक हल निकाल सके तो हम स्वराज्यकी दिशामें बहुत प्रगति कर लेगे। यदि बैठकमें कोई ऐसी योजना ढूँढ निकाली गई जो कि सभी दलोके लिए स्वीकार्य हो तो वह स्वराज्यकी दिशामें बहुत बडा कदम होगा। यदि बैठकमें उपस्थित प्रतिनिधि [इन] मुख्य प्रश्नोपर एकमत हो सकेगे तो काग्रेसके मचपर दलो-को एक होनेमें तथा राष्ट्रके नामपर एक सर्वसम्मत माँग करनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी। श्री जिन्नाने कहा कि मै जल्दी निर्णय करनेपर जोर देता हूँ। मेरा अनुमान

१ उप-समितिका कार्य था "(क) वे शर्तें सुझाना जिनके आधारपर सभी दल काग्रेसमें शामिल हो सकें (ख) ऐसी योजना तैयार करना जिससे स्वराज्यके अन्तर्गत बनाई जानेवाली विधान-सभाओ तथा अन्य निर्वाचित सस्थाओमें सभी जातियों, प्रजातियों तथा उप जातियोंको प्रतिनिधित्व मिल सके तथा ऐसे अच्छेसे-अच्छे तरीके सुझाना, जिससे योग्यताका उचित ध्यान रखते हुए सभी जातियोंको सेवाओंमें न्याय-युक्त और उचित हिस्सा दिया जा सके (ग) स्वराज्यकी ऐसी योजना तैयार करना जिससे देशकी वर्तमान आवश्यकताएँ पूरी हो सकें।" समितिको हिदायतें दी गई थीं कि वह अपनी रिपोर्ट १५ फरवरीको या उससे पहले दे दे। (*बॉम्बे क्रॉनिकल*, २६-१-१९२५)

है कि सरकार शायद फरवरीमें सुधार जाँच समितिकी रिपोर्टको विधानसभामें विचारके लिए पेश करेगी। चूँकि इस समितिके कार्यके सम्बन्धमें हिन्दू-मुस्लिम मतभेदोंको बड़ा तूल दिया गया है, इसलिए जब रिपोर्टपर विचार करनेका समय आयेगा तब मैं सरकारसे कहना चाहता हूँ कि हिन्दू-मुसलमानोंके सब मतभेद समाप्त हो गये हैं और अब वे अपनी माँगपर एकमत हैं।

महात्मा गांधीने उत्तर दिया कि उप-समितिकी रिपोर्ट प्रकाशित होनेसे श्री जिन्नाका मतलब हल हो जायेगा। उप-समिति जल्दी ही बैठक बुलायेगी और वह प्रतिदिन कार्य करेगी तथा उसे तबतक जारी रखेगी जबतक उसका कार्य सम्पन्न नहीं हो जाता और वह अपनी रिपोर्ट तैयार नहीं कर लेती। . . .

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २७-१-१९२५

१७. टिप्पणियाँ

काठियावाड़

भाई भरूचा[1] जो फिलहाल काठियावाडमें काम कर रहे हैं, लिखते हैं कि वे देवचन्द भाईके साथ लोगोंमें घूम-घूमकर विभिन्न स्थानोंसे कपास इकट्ठी कर रहे हैं। १८६ कातनेवाले सभासद भी बना लिये गये हैं, और भी बनते जा रहे हैं। यदि इस उत्साहका पूरा लाभ उठाया जा सके, तो बहुत अच्छे कामके होनेकी सम्भावना है। जहाँ आवश्यक हो वहाँ पूनियों और चरखोंके भेजने तथा जिन लोगोंको कातना न आता हो, उन्हें कातना सिखानेका ठीक-ठीक प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

मैं काठियावाडके कार्यकर्त्ताओंको सावधान करना चाहता हूँ कि तारीख १५ फरवरीको मैं फिर काठियावाडमें पहुँच रहा हूँ। उस समयतक मैं काफी काम हो चुकनेकी आशा रखूँगा। मेरे मनमें अभीसे यह विचार आता रहता है कि जब मैं राजकोट पहुँचूँगा, तब वहाँका क्या दृश्य होगा। राजकोटमें खादीकी कमीके विषयमें एक कच्छी भाईने शिकायत की थी। इस सम्बन्धमें मैं कुछ महीने पहले 'नवजीवन' में लिख चुका हूँ।[2] क्या १५ फरवरीको मुझे वहाँ वैसा ही अभाव दिखाई देगा?

ठीक हिसाब

हम पैसेकी जगह कपास इकट्ठी कर रहे हैं, इसलिए हिसाब रखनेकी पद्धतिमें अन्तर तो होगा ही। यदि शुरूसे ही सोच-समझकर हिसाब रखा जाये, तो भविष्यमें उससे बड़ी सुविधा होगी। कपास इकट्ठी करना, फिर उसे ठीक तरहसे रखना और उसके बाद जिन विभिन्न क्रियाओंको करना आवश्यक हो जाता है, उनपर खर्च होने-

१. बरजोरजी भरूचा।

२. देखिए "टिप्पणियाँ", २७-४-१९२४ के अन्तर्गत उपशीर्षक "काठियावाड़की खादी"।

वाली रकम आदिका प्रबन्ध करके रखना आवश्यक होगा। इसके सिवाय कुछ ऐसे भी लोग होंगे, जो अपनी ही कपाससे सूत कातेंगे और कुछ ऐसे होंगे जो समिति द्वारा दी हुई कपाससे सूत कातेंगे। इसलिए इन दोनोका हिसाब अलग-अलग तरहसे रखना जरूरी होगा। इसके सिवाय जो कपास कातनेके काममे आ चुकेगी, उसका हिसाब भी अलग रखना होगा। इस तरह हिसाबकी अधिक बहियाँ रखना जरूरी हो सकता है और इसलिए यह काम धीरज, सोच-विचार और समझके बिना नही हो सकेगा।

१०० रुपयेके चरखे

एक सज्जनने प्रश्न किया है कि जिन जिलोने दूसरोके द्वारा २,००० गज सूत कतवाकर भेजनेकी इजाजत दे रखी है, क्या वे भी उक्त इनामके हकदार हो सकते है। उक्त बात जिस ढगसे कही गई है उसकी भाषा भले स्पष्ट न रही हो, फिर भी यह इनाम तो उसीके लिए है जो स्वय कातेगा। 'खादी प्रेमी' सज्जनका इरादा उस जिलेको यह पुरस्कार देनेका नही है, जो दूसरोके द्वारा सूत कतवाकर भेजनेवाले सदस्योकी सख्यामे सबसे बढकर हो। मै आशा करता हूँ कि इस पुरस्कारके लिए जिलोमे खासी प्रतिस्पर्धा होगी। १०० रुपयेकी कीमतकी बात नही सोचनी है। महत्त्व पुरस्कारका है, उसके मूल्यका नही। यदि बोरसद ही यह तय कर ले, तो पूरी शक्ति लगाकर ५,००० (सूत कातनेवाले) सदस्य बना ले सकता है।

किसान परिषद्[1]

सोजित्राके कार्यकर्त्ताओने पाटीदारोकी परिषद् उपर्युक्त नाम देकर बुलाई थी और इसलिए मै पाटीदारोकी जगह किसान शब्दका उपयोग करनेका साहस कर रहा हूँ। पुराने नामोको छोडकर नये नामोके पीछे घूमना और पुरानी बातोको हलका माननेका रिवाज अनुकरणीय नही है। पाटीदार कहलानेमे कुछ भी विशेष बात नही है, किसान शब्द बहुत मीठा और प्यारा है। कहा जा सकता है, सोजित्राके पाटीदार कमसे-कम दो दिनोके लिए किसान बन गये थे और यह इसलिए कि उन्होने परिषद्के लिए आवश्यक मददका बोझ अपने ऊपर ले लिया था। किसान तो हमेशा मजदूर है। शरीर-श्रममे ही उसका बडप्पन है। सोजित्राकी इस परिषद्मे छोटे-बडे सभी पाटीदार सेवा कर रहे थे और इससे उनकी शोभा हो रही थी। परिषद्का मण्डप स्वयसेवकोने अपने हाथो तैयार किया था। यह भी स्पष्ट था कि खर्च यथा-सम्भव कम किया गया है। जो अतिथि प्रतिनिधि इत्यादि आये थे, उन्हे भी परिषद्के कुछ सदस्योने व्यक्तिगत तौरपर अपने-अपने यहाँ ठहरा लिया था और इसलिए व्यवस्था भी अच्छी हो गई और स्वागत समितिपर भोजन आदिके खर्चका बोझ भी नही पडा। बडौदा सरकारकी ओरसे परिषद्को आवश्यक सुविधाएँ दे दी गई थी, इसलिए काम सरल हो गया था।

१ इस शीर्षकमें यह और इसके आगेकी टिप्पणियाँ प्रकारान्तरसे २२-१-१९२५ के **यंग इंडिया**में भी दी गई थी।

अध्यक्ष

डा० सुमन्त मेहता भी किसान ही नजर आते थे। जहाँ देखिए, वहाँ काम और सेवाके अतिरिक्त कोई दूसरा दृश्य दिखाई नही देता था। स्वागताध्यक्ष, और परिषद्के अध्यक्ष श्री डा० सुमन्त मेहता, दोनोके भाषण छोटे ही थे और वे भी उन्होने पूरे पढकर नही सुनाये, केवल कुछ अश पढकर सुनाये और परिषद्का समय बचाया।

धाराला

पाटीदारोकी इस परिषद्के साथ ही साथ तीन परिषदे और भी आयोजित की गई थी — धारालाओंकी, स्त्रियोकी और अन्त्यजोकी। ये परिषदे चूँकि एकके बाद एक हुई थी, इसलिए सभी परिषदोमे लोगोको उपस्थित रहनेकी सुविधा हो गई थी। धाराला जाति अपनेको बारिया क्षत्रिय मानने लगी है। किन्तु यदि मै उन्हे सलाह देनेवाला कोई होता हूँ, तो मै यही सलाह दूँगा कि वे अपने धाराला नामको ही अगीकार किये रहे और उसे पवित्र बनाये। नाम बदलनेसे काम नही हो जाता। नाम बदलनेसे दरजा भी ऊँचा नही होता। वह तो क्षत्रियोको शोभने योग्य काम करनेसे ही प्राप्त होगा। इतनी आलोचना करनेके बाद परिषद्के विषयमे तो मुझे प्रशसाके शब्द ही कहने है। मण्डप धारालाओसे खचाखच भरा हुआ था। सख्यामे इतने अधिक होनेके बाद भी वहाँ सम्पूर्ण शान्ति रही। प्रस्ताव भी अपने समाजके अन्तर्गत सुधार करनेकी हदतक सीमित था। इन लोगोमे मद्यपान, स्त्री-हरण और कन्याविक्रयके दोष बहुत दिनोसे चलते आ रहे है। परिषद्मे आये हुए भाइयोने इन तीनो बुराइयोको छोडनेका प्रस्ताव पास किया।

अपनी प्रतिज्ञापर अटल रहना भी क्षत्रियका धर्म है। भय बाहरसे आये या भीतरसे पैदा हो, उसकी चिन्ता न करना और किये हुए निश्चयपर दृढ रहना यह ऊँचे दरजेका 'अपलायन'[1] है। वीरत्व तलवार चलानेमे नही, दृढतामे है।

महिला परिषद्

सोजित्रा महिला परिषद्मे इतनी महिलाएँ आ गई थी कि जिसकी किसीने कल्पना नही की थी। ज्यादातर पाटीदार बहने परदा करती है। इसके बावजूद परिषद्का मण्डप बहनोसे भर गया था। इतनी बहनोका इकट्ठा होना परिषद्की सार्थकताका द्योतक था। उसमे कोई प्रस्ताव पास करनेकी आवश्यकता दिखाई नही दी। उन्होने चरखेकी बात ध्यानपूर्वक सुनी, इसे सन्तोषजनक माना जाना चाहिए। यदि प्रस्ताव तैयार किया जाता और प्रस्तुत किया जाता, तो उसके समर्थनमे हाथ भी अवश्य उठ जाते। किन्तु उससे कोई बडा अर्थ सिद्ध न होता।

अन्त्यज

अन्त्यज परिषद् भी इसी मण्डपमे हुई। कार्यकर्त्ताओने साहसपूर्वक मण्डपमे ही इस परिषद्को आयोजित होने दिया, इसलिए वे धन्यवादके पात्र है। पाटीदारोमे से

१. न दैन्य न पलायनम्।

अभीतक अस्पृश्यताके रोगका उन्मूलन नही हुआ है। फिर भी उन्होने इस परिषद्को अपने मण्डपमे आयोजित होने दिया, यह एक शुभ लक्षण है। परिषद्में वहुतसे अन्त्यज भाई-बहन भी थे। अन्त्यज परिषद्मे शराब न पीने, चरखा चलाने और खादी पहननेकी प्रतिज्ञा ली गई। प्रतिज्ञाका एक-एक शब्द भाई-वहनोको समझा दिया गया था। अन्त्यज बहनें भी काफी वडी सख्यामे आई थी। वे अपने साथ धूप ले कर आई थी। धुआं देखकर मै कुछ गलतफहमीमे पड गया था। मैने समझा कि वे बीडियाँ पी रही है। किन्तु मुझे बताया गया कि वह धुआं धूपका है। पण्डालमे उपस्थित इन स्त्रियों और पुरुषोंके चेहरोंपर प्रसन्नता छाई हुई थी।

कालीपरज

यो तो सोजित्रामे आयोजित सभी सम्मेलन अपनी-अपनी जगह अच्छे थे, किन्तु कालीपरज परिषद्ने मेरे मनपर ज्यादा गहरा असर छोडा। पहले जिन परिषदोका उल्लेख हो चुका है, उनके पीछे व्यवहार-वुद्धि, सादगी, मितव्ययिता तथा फुरती दृष्टिगोचर होती थी, किन्तु कालीपरजकी परिषद्में इन सबके साथ-साथ कला भी दिखाई दी। मै सहज ही कह उठा कि मैने वहुत-सी परिषदे देखी है, किन्तु स्वाभाविक सौन्दर्यकी दृष्टिसे ऐसी परिषद् मैने कदाचित् दूसरी नही देखी। अपने इस उद्गारमे मुझे अतिशयोक्ति नही जान पडती। ऐसा लगा मानो अदृश्य रूपमे स्वय प्रकृतिने आकर यहा सजावट की है। कुदरतसे सीख लेना और उसे किसी प्रकारका आघात न पहुँचाना मेरी समझमें यही सच्ची कला है। जिस वेडछी ग्राममे यह परिषद् आयोजित हुई थी, वहा कुछ घर और झोपडियां थी। किन्तु कालीपरज जातिके लोग न गाँवोमे रहते है, न घरोमे। वे मैदानोमे घास-फूसकी झोपडियाँ डाल कर रहते है। वेडछीकी आवादी तीन-चारसौसे ज्यादा नही होगी। किन्तु इस छोटी-सी वस्तीकी झोपडियाँ कालीपरज लोगोकी झोपडियोसे अच्छी ही कही जायेगी। शायद यही सोचकर परिषद् वेडछीमे रखी गई। साधारणत परिषदे मैदानोमे रखी जाती है। हमारे कलाकारोने आसपास घूमकर देखा और प्राकृतिक सौन्दर्यसे सम्पन्न एक टुकडा परिषद्के स्थानसे चुना। गांवके पास ही वाल्मीकि नामकी नदी वहती है। वृक्षोसे सुशोभित टेकरियोके भागके वीचमे होकर यह नदी नाचती हुई वहती चली जाती है। परिषद्के आयोजनकर्त्ताओने उसी स्थानको पसन्द किया। मुख्य मच वहते हुए पानीके ऊपर निर्मित किया गया और जिस तरह किसी वृक्षसे डाली फूट निकलती है, इसी प्रकार इस मचको आगेतक वढाकर उसे प्रतिनिधियोके वैठनेकी जगहमे वदल दिया। सर्दियोके दिन थे और पानी ठडा था। इसलिए हमारे कला-प्रवीणोने यह विचार किया कि प्रतिनिधियोको छायाकी जरूरत नही है। इतना ही नही दोपहरके वाद धूप भी उन्हे पसन्द ही आयेगी, इसलिए स्वर्णिम आकाश-मण्डपका चँदोवा और नदीकी रेत लोगोंके लिए आसन वन गई। चूंकि नदी टेकडीके एक तरफ वहती है, इसलिए सामनेकी टेकडीसे नदीके इस किनारेतक नदीका सूखा किनारा है। नदीमे कीचड नही है, रेत है। इसलिए किसी भी प्रकारकी कृत्रिम सजावट, दरी-जाजम आदिकी जरूरत नही पडी। मुख्य मचके ऊपर वाँसो और हरे पत्तोका मण्डप या वितान

वनाया गया था और वहाँतक जानेके लिए एक चौडा रास्ता छोड दिया गया था। इस चौडे रास्तेके दोनो ओर भी वॉस लगा दिये गये थे और उनपर वॉस लगाकर हरे पत्ते और लताएँ वॉंध दी गई थी। मचपर चढनेके लिए एक वोरेमे रेत भरकर रख दी गई थी और वह रेतसे भरा हुआ वोरा सीढीका काम देता था। तसवीरे भी नही थी और सजावटमे एक इच भी सूतका उपयोग नही किया गया था। यह कहनेकी आवश्यकता भी नही है कि ऐसी जगह सूतकी सजावट भी शायद ही शोभा दे। सूत मनुष्यकी कृति है और उसकी शोभा मनुष्यके घरमे है। जहॉ आकाशका वितान हो और रेतका आसन, वहॉ तो वृक्ष-पात ही शोभा दे सकते हैं। इसके सिवा सूतके प्रेमियोको सूतका दुरुपयोग भी नही करना चाहिए। उसे तो चुटकी-चुटकी रुई और इच-इच सूत भी सँभालकर रखना चाहिए।

प्रदर्शनी

परिपद्से थोडी ही दूरी पर, किन्तु नदीके ही तटपर और टेकडियोकी मालाके चरणमे चरखा-प्रदर्शनी आयोजित की गई थी। वहाँ लगभग ५० चरखे थे और उन्हे वृद्ध स्त्री-पुरुप और छ-सात से लेकर १० वर्प तकके वालक-वालिकाएँ चला रही थी। इस व्यवस्थामे भी एक सूझ थी। जातिके तरुण लोग स्वयसेवकोकी तरह काम कर रहे थे। प्रदर्शित खादीमे से कुछ तो स्वय कालीपरजके लोगो द्वारा काती, वुनी और रँगी गई खादी थी। वाकीकी मोटी खादी गुजराती खादी भण्डारकी ओरसे रखी गई थी। प्रदर्शनीके स्थानपर कालीपरजोका विशेष वाँसुरी-वादन हो रहा था। वहाँ कुछ विशिष्ट नेताओके चित्र और थोडा-वहुत साहित्य भी प्रदर्शित था। इस सारे आयोजनमे कहा जा सकता है कि खर्च तो कुछ भी नही हुआ। लाल, पीले पतले विदेशी कागजकी वनी हुई झडियाँ जो साधारणतया मण्डपोमे नजर आती रहती है, वहाँ ढूँढे भी नही मिल सकती थी। इन कागजोकी सजावट न वुद्धि जाहिर करती है, न सुरुचि। यह तो मानो नीद वेचकर अनिद्रा रोग मोल लेने जैसी वात है। जहाँ-कही मैं कागजकी सजावट देखता हूँ, कलाकी इस हत्यापर मुझे क्रोध आता है। सोजित्रा भी इस दोषसे नही वच पाया था।

सूत्र-वद्ध

कालीपरज जाति भली-भाँति सूत्र-वद्ध है। वह स्वय कपास पैदा करती है। यह जाति गरीव और सरल है। ये लोग विदेशी कपडे पहनते है — उन्हे अभी इसका शौक नही लगा है, इतनी वात जरूर है। यदि कम दामपर खादी उपलब्ध होने लगे, तो वे उसे अवश्य पहनेगे। वहनें छोटी साडी पहनती है और इसलिए उन साडियो-का वजन कम होता है। इसी कारण चरखा और खादी प्रचार इन लोगोमे फैलता जान पडता है। एक साठ सालका वूढा किसान अपने खेतकी देखभाल करते हुए भी हमेशा रातको और सवेरे कातता है। उसके कपडे अपने काते हुए सूतमे से वने हुए थे और उसीमे से वह अपने वच्चोको देनेका इरादा भी रखता है। इस तरह उद्देश्य यह है कि एकके वाद एक कुटुम्ब अपने लिए सूत कातने और वुनने लगे। जव मैंने इस आदमीसे सूत कातनेका कारण पूछा, तो उसने उत्तर दिया कि इससे पैसा

बचता है। साल-भरमे मुझे अपने कपडोपर १० रुपये खर्च करने पडते थे — सो बच जाते हैं।

मद्यपान

कालीपरज अर्थात् काले लोग। किन्तु ऐसा नही है कि अन्य लोगोमे अधिक काले होनेके कारण वे कालीपरज कहलाते हो। उनके कालीपरज कहलानेका कारण यह है कि ऊँचे कहलानेवाले लोग यह कहकर उनकी अवगणना करते हैं। इस समय उनकी स्थिति बहुत ही दयनीय है। भीरुता, अन्धविश्वास और मद्यपानका व्यसन उन्हे खोखला किये दे रहा है। बावजूद इस बातके कि वे लोग जगलोमे रहते हैं, वे हरएकसे और हरएक चीजसे डरते हैं। उनका सबसे बडा दोष मद्यपान है। ताडी और शराबसे यह जाति मिट्टीमे मिली जा रही है। सन् १९२१की जागृतिके समय वे भी आन्दोलनमे आये और इसलिए उनमे भी कुछ सुधार हुए। किन्तु अभी बहुत-कुछ होना बाकी है। शराब उनके बीचमे इस तरह घर करके बैठ गई है कि वे शराब पीनेको गुण मानने लगे है। जब मद्य-निषेध आन्दोलन प्रारम्भ हुआ, उनके एक दलने इस आन्दोलनको समाप्त करनेका इरादा किया और जो शराब पीनेकी बुराई करते थे, उन्हे तग करना प्रारम्भ कर दिया। कहा जाता है कि शराब बेचनेवाले पारसी दूकानदारोका इसमे हाथ था। उन्हे भय था कि यदि कालीपरज शराब छोड देंगे, तो उनका धन्धा लगभग बैठ जायेगा और शराबका ठेका लेनेवालोको नुकसान होगा। इस दृष्टिसे विचार करे, तो ठेकेदारोको दोष देना व्यर्थ है। फिर भी मैं मानता हूँ कि उनसे भी दो शब्द कहनेका मुझे अधिकार है। पारसी जातिपर मैं मुग्ध हूँ। बहुत-से पारसियोसे मेरा घनिष्ठ परिचय है। इस जातिके प्रति मेरे मनमे बडा आदर है। इसलिए शराबके पारसी ठेकेदार मेरी इस बातका उलटा अर्थ नही निकालेगे। ससारमें ऐसे बहुत-से लोग हुए है जिन्होने दूसरोको नुकसान पहुँचानेवाले धन्धे छोड दिये। ये लोग भी साहसी हैं और होशियार हैं। यदि ये शराबका व्यापार छोड दें, तो इन्हे दूसरा व्यापार मिल ही नही सकता, ऐसी बात नही है। इतना वे करते है या नही करते, किन्तु मैं यह आशा अवश्य करता हूँ कि वे अपने धन्धेको चालू रखनेकी दृष्टिसे दारू-प्रचारक-मण्डलका साथ नही देगे।

प्रतिज्ञा

अच्छी तरह सोच-विचार करनेके बाद इस परिषद्ने दो प्रतिज्ञाएँ ली। एक शराब छोडनेकी तथा दूसरी खादी पहनने और सूत कातनेकी। प्रतिज्ञाएँ ईश्वरको साक्षी रखकर की गई है। फिर भी प्रतिज्ञाएँ सफल तभी होगी जब स्वयसेवक निरन्तर काम करते ही रहेगे।

रामनाम

इस सबके बाद भी जब मनुष्यके प्रयत्नसे कोई बात नही बनती, तब ईश्वरकी कृपा काम आती है। इसीलिए मैंने धारालाओ, अन्त्यजो और कालीपरजोको रामनाम-का जप करनेकी सलाह दी है। सुबह सूर्योदयसे पहले उठकर मुँह-हाथ धोकर ईश्वरसे

प्रार्थना करे कि वह उन्हे प्रतिज्ञा-पालनमे सहायता पहुँचाये। रामनामका जप करे और इसी तरह सोते समय भी। रामनामपर मेरी आस्था तो वहुत वर्षोसे है। अनेक मित्रोके लिए रामनाम रामवाणकी तरह सिद्ध हुआ है। वे अनेक आन्तरिक द्वन्द्वोसे मुक्त हो गये है। जो लोग ठीक उच्चारण नही कर सकते, द्वादश-मन्त्र भी जिन्हे याद नही हो सकता और जिन लोगोके लिए ईश्वर शब्दका उच्चारण कठिन है, उनके लिए भी 'राम'का उच्चारण सहल होगा। जो श्रद्धापूर्वक 'रामनाम'का जाप करते है, मै मानता हूँ कि वे सदा सुरक्षित है। मेरी कामना है कि रामनाम इन भाई-वहनोको भी फले।

वारडोलीका कर्त्तव्य

मै वारडोली जिलेमे होकर लौट आया। वहाँ मुझे पुरानी घटनाओ और पुरानी प्रतिज्ञाओकी याद आई। मै दु खी हुआ। किन्तु आशावादी होनेके कारण मै निराश तो वेशक नही हुआ। इसलिए मै वारडोलीसे आशा लेकर ही वापस आया हूँ।

वारडोली मनमे धार ले तो वहुत-कुछ कर सकती है। वहाँके पाटीदार दूरदेश है। उनमे से वहुतसे लोग दक्षिण आफ्रिका गये है और उन्होने कष्ट उठाये है। यह जिला पैसेकी दृष्टिसे सुखी है। वहाँ उत्तम कपास उत्पन्न होती है। इस जिलेके लिए वहुत मेहनत की गई है। गुजरातके दूसरे जिलोसे जा-जा कर कार्यकर्त्ता वहाँ वसे है। वहाँ आश्रम वनाये गये है और उनमे स्वर्गीय वीर पारसी रुस्तमजीभाई की दी हुई रकम लगी है। वारडोली हिन्दुस्तान-भरमे नाम पा चुकी है।

वारडोलीके ऐसे पाटीदार क्या करेगे? वे निश्चय कर ले, तो घर-घर चरखा दाखिल करके, स्वय सूत कातकर, उसीका वुना हुआ कपडा पहनकर विदेशी कपडेका वहिष्कार कर सकते है। यह सव काम वारडोलीके लिए एक साधारण वात है।

भाई कुँवरजी तथा भाई लक्ष्मीदासने काम शुरू कर दिया है। उन दोनोके वीचमे तय हुआ है कि लोगोको जरूरत-भर कपास उपलव्ध करेगे और दूसरोका कता हुआ सूत वुनवायेगे। उन्होने इस तरह कामका वँटवारा कर लिया है। भाई कुँवरजीने २,००० मन कपास इकट्ठी करनेका वीडा उठाया है और भाई लक्ष्मीदासने उसे कतवा देनेका। यदि ऐसा हो, तो वारडोली थोडे ही समयमे कपडोके मामलेमे स्वावलम्वी हो जायेगी। ईश्वर वारडोलीको सफल करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २५-१-१९२५

१८. पत्र : एक जर्मनको

२५ जनवरी, १९२५

शान्ति एव स्वतत्रताके लिए सघर्षकी एक शर्त है, आत्मसयम प्राप्त करना। उसके लिए समारके सव सुखोका त्याग कर देना आवश्यक है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईको हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

१९. मौन-दिवसकी टिप्पणी[1]

२६ जनवरी, १९२५

गुजरातमे कुछ हदतक तो गोरक्षा होती है, किन्तु काठियावाड अपवाद है। लेकिन वहाँ भी वहुतसे लोग दुष्कालमे पशुओको निकाल देते हैं। हमारा पशुओके प्रति जो व्यवहार है उससे मुझे कदाचित् ही किसी जगह सन्तोप हुआ हो। इसके विपरीत यूरोपमे उनके प्रति व्यवहार शायद ही कही असन्तोपजनक दिखाई देगा। अरवमे घोडा लगभग पूजा जाता है। वहाँ उसकी सार-सँभाल भी ऐसी ही की जाती है। हम हिन्दुस्तानके लोग गायके प्रति मालूम नही इतने निर्दय क्यो है। यूरोपमे तो पशु ऐसे होते है कि हम देखते रह जाये।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

१ गोरक्षा परिषद्में गाधीजी द्वारा दिये गये भाषणकी महादेव देसाईने जो आलोचना की थी, यह टिप्पणी उसके उत्तरमें लिखी गई थी।

२०. पत्र : मगनलाल गांधीको

दिल्ली
माघ सुदी ३ [२७ जनवरी, १९२५][1]

चि मगनलाल,

इस पत्रमे जो माँग की गई हे वह किसी न किसीको पूरी करनी ही चाहिए। जो रुई दे वह सूत ले, यह उचित ही है। इसका मुनासिब बन्दोबस्त कर देना। रुई उस जिलेसे ही मिल सके, पहले तो यही प्रयत्न किया जाना चाहिए।

चि राधाके साथ बातचीत तो सन्तोपजनक हुई है। वह तो अपने निश्चयपर दृढ है। फिर भी उचित यही है कि हम चारो ओर निगाह रखे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

अभी दिल्लीमे दो-तीन दिन लगेगे।

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०९२)से।
सौजन्य राधावहन चौधरी

२१. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

[दिल्ली
माघ सुदी ३ [२७ जनवरी, १९२५][2]

भाईश्री घनश्यामदासजी,

आपका पत्र कई दिनोके वाद मीला।

मेरा किसीपर अत्यत विश्वास नहि है। परतु मनुष्य मात्रका विश्वास रखना हमारा कर्तव्य है। हम भी तो दूसरेके विश्वासकी आशा रखते है। जव दोनो पक्ष गलती करते है तव न्यूनाधिकताका प्रमाण खीचना वहोत मुश्केल हो जाता है। इसलीये मैने तो एक हि मार्ग सोच लीया है — दुर्जनके साथ भी सज्जनतासे वर्ताव रखना।

१. माव सुदी ३, १९२५ में २७ जनवरीको पड़ी थी। गाधीजी उस दिन सर्वदलीय सम्मेलनकी बैठकके सम्बन्धमें दिल्लीमें मौजूद थे।

२. देखिए पाद-टिप्पणी १।

मेरा दो तीन दिन और दिल्लीमें ठहरना होगा। जो कुछ हो रहा है इससे व्यवहारदृष्टिसे मुझे सतोष नहि है। पारमार्थिक दृष्टिसे तो मेरे कर्तव्य-पालनमें हि मेरा सतोष है।

आपका,
मोहनदास गाधी

[पुनश्च]

डा० अन्सारीकी बेगम बीमार होनेके कारण मैं सुलता[न] सिंगजीके यहा रहता हू।

गाधीजीके स्वाक्षरोमें मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६१०२)से।
सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

२२. भेंट समाचारपत्रोके प्रतिनिधियोसे

दिल्ली
२७ जनवरी, १९२५[1]

निकट भविष्यमें विधानसभामें बगाल अध्यादेशपर[2] होनेवाली बहसको ध्यानमें रखते हुए हमारे प्रतिनिधिने महात्मा गाधीसे पूछा — बगाल परिषद्में लॉर्ड लिटनके भाषण[3] तथा विधानसभामें वाइसरायके भाषणको[4] देखते हुए क्या आपके विचारमें

1. बॉम्बे क्रॉनिकल तथा सर्चलाइटमें प्रकाशित रिपोर्टोकी तिथिके अनुसार।

2. यह सरकारको किसी भी व्यक्तिको गिरफ्तार करके मुकदमा चलाये बिना जेलमें रखनेका अधिकार देनेके लिए जारी किया गया था।

3. बगाल विधान परिषद्में ७ जनवरीको बंगाल अध्यादेशपर भाषण देते हुए बगालके गवर्नर लॉर्ड लिटनने कहा था "इस प्रकारके विधेयकको उचित ठहरानेका यही एक कारण है कि सारे राज्यका हित खतरेमें पड़ गया है और वह खतरा किसी अन्य प्रकारसे दूर नहीं किया जा सकता। "जब आपकी स्वराज्य सरकार आयेगी तब जो लोग स्वराज्य सरकारको नापसन्द करनेके कारण उसके संस्थापकोंकी हत्याकी धमकी देंगे, यदि आप उन लोगोंके अधिकारको स्वीकार करेंगे तो आपकी सरकार कदापि सफल नही हो सकेगी। यदि आप इन लोगोंको इस बातके लिए तैयार कर सकें कि वे अपने हथियार हुगलीमें डाल दें और राजनीतिक प्रणालीके रूपमें आतंकवादको सदैवके लिए छोड़ दें तो हम आपको वचन देते हैं कि हम उनको दूसरे ज्यादा अच्छे ढगसे देशकी सेवा करनेके प्रयत्नमें हार्दिक सहयोग देंगे।" देखिए **इंडियन क्वार्टरली रजिस्टर**, १९२५, खण्ड १, जनवरी-जून।

4. लॉर्ड रीडिंगने विधान सभामें २० जनवरीको बगाल अध्यादेश संशोधन विधेयकपर बोलते हुए कहा था, "बगालमें आतंकवादी आन्दोलनको रोकने तथा व्यापक रूपसे फैली गुप्त संस्थाओंके खतरेको दूर करनेके लिए अध्यादेश जारी करना उचित है। इस आन्दोलनके व्यापक होनेका अर्थ अधिकारियों तथा निर्दोष नागरिकोंका अधिकाधिक मारा जाना है। विनियम-३ के अन्तर्गत लागू करनेपर भी सामान्य कानून इन अपराधोंको रोकनेमें प्रभावहीन सिद्ध हुआ है।" देखिए **इंडियन क्वार्टरली रजिस्टर**, १९२५ खण्ड १, जनवरी-जून।

कोई परिवर्तन हुआ है। महात्मा गांधीने उत्तर दिया कि मैंने ऐसी कोई बात नहीं देखी जिससे मेरा विचार बदलता।

उन्होंने कहा कि इसके विपरीत मेरी मान्यता यह है कि दोनों ही भाषणोंका राष्ट्रके सम्मुख उपस्थित समस्यासे कोई सरोकार नहीं है; क्योंकि मेरी रायमें अध्यादेशके अन्तर्गत जो अधिकार ग्रहण किये गये हैं वे असाधारण अवसरपर ही ग्रहण किये जाने चाहिए और जनताके नियमपूर्वक निर्वाचित प्रतिनिधियोंकी स्वीकृतिके बिना तो कदापि ग्रहण नहीं किये जाने चाहिए। ऐसे मामलोंमें जहाँ जीवन-मरणका प्रश्न हो ——और जिनका प्रजाकी स्वतन्त्रतासे सम्बन्ध हो वहाँ अधिकारियोंकी राय किसी कामकी नहीं होती, फिर चाहे वे अधिकारी कितने ही बड़े क्यों न हों।

वस्तुत. महात्मा गांधी इससे भी आगे गये। उन्होंने कहा:

भारतके लिए इस प्रकारकी आग्रहपूर्ण घोषणाएँ नई नही हैं। क्या सर माइकेल ओ'डायरने[1] और लॉर्ड चेम्सफोर्डने[2] भी लगभग पूरी सजीदगीके साथ यह नही कहा था कि पजावमे राजद्रोह तथा षड्यत्र व्यापक रूपसे फैले हैं? क्या सर माइकेल ओ'डायरने यह दावा नही किया था कि पजावमे आम विद्रोहकी स्थिति है। क्या इसे वे सिद्ध कर सकते है? अब हम जान गये हैं कि इन वक्तव्योंके समर्थनके योग्य प्रमाण लगभग नही थ।

महात्मा गांधीने इसलिए इस बातपर प्रसन्नता व्यक्त की है कि जहाँतक अध्यादेशका सम्बन्ध है भारतीय एकमतसे उसकी निन्दा करते हैं और उनको आशा है कि उसके विरुद्ध आन्दोलन दिन-प्रतिदिन जोर पकड़ेगा और इस हदतक जा पहुँचेगा कि वह एक दिन दुर्निवार हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २८-१-१९२५

२३. कुछ प्रश्नोंके उत्तर

पिछले महीने एक अंग्रेज सज्जनके साथ खुल कर मेरी बातें हुईं। उक्त सज्जनको हिन्दुस्तानकी समस्याओंमे बहुत दिलचस्पी है और वे भरसक उसकी सेवा करनेके इच्छुक हैं। उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या इस बातचीतका सार छापा जा सकेगा। मैं इसके लिए तुरन्त सहमत हो गया और उन्होंने इस चर्चामें जो प्रश्न उठाये थे मैंने उन्हें लिखकर दे देनेको कहा। उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक प्रश्न लिखकर दे दिये। मैं उनका नाम प्रकट नही कर रहा हूँ क्योंकि महत्त्व नामका नही है। ज्यादा महत्त्व विचारका है, क्योंकि इन दिनों लोगोंमे उन विचारोंके प्रति कुछ दिलचस्पी दिखाई दे रही है। यदि मैं जैसा कि मेरा दावा है, अंग्रेजोंका मित्र हूँ, तो मुझे जरूर उनके

१ पंजाबके लेफ्टिनेंट गवर्नर, १९१३-१९१९।

२. भारतके वाइसराय, १९१६-१९२१।

मनमे उठनेवाली तमाम शका-कुशकाओका उत्तर धीरजके साथ देना चाहिए। प्रश्नकर्त्ता मित्रने ये तमाम सवाल अपनी ही तरफसे नही किये थे, बल्कि ज्यादातर तो उन अग्रेजोकी तरफसे किये थे जिन्होने ये सवाल असलमे उनसे किये थे।

सवाल और जवाब नीचे दिये जा रहे है

खादी कार्यक्रमको स्वराज्यका साधन माननेके आपके आग्रहका वास्तविक हेतु क्या है?

मै स्वराज्य सिर्फ अहिसा और सत्यके द्वारा प्राप्त करना चाहता हूँ। यह तभी मुमकिन हो सकता है जब खादी-कार्यक्रमको सफल बनानेके लिए उसपर अध्यवसाय-पूर्वक अमल किया जाये। स्वराज्य शान्तिपूर्ण उपायोसे तभी मिल सकता है जब, किसी बहुत थोडी ही अवधिके लिए और बहुत सामान्य कामके लिए ही क्यो न हो, हिन्दुस्तानकी सारी जनता एक मनसे कोई रचनात्मक और उपयोगी काम करे। ऐसा प्रयत्न राष्ट्रके पूरी तरह जागरूक हो चुकनेकी अपेक्षा तो रखता ही है। यह उद्देश्य केवल चरखेके द्वारा ही साध्य हो सकता है। कोई व्यक्ति इसके जरिये ज्यादा नही कमा सकता, इसलिए जो अपनी ही सोचता है केवल ऐसे व्यक्तिको इसके प्रति कोई आकर्षण नही होगा। फिर भी इसके द्वारा समूचे राष्ट्रकी सम्पन्नतामे फौरन ही अच्छी खासी वृद्धि हो सकती है। प्रति वर्ष प्रत्येक आदमी यदि १) ज्यादा कमाने लगे तो हो सकता है इससे उस आदमीको कुछ सुविधा न हो परन्तु ५,००० आबादीवाले गाँवमे ५,०००) की सालाना आमदनीसे लगान और दूसरे कर अदा किये जा सकते है। इस तरह चरखेका अर्थ है राष्ट्रीय जागृति और देशके प्रत्येक व्यक्तिका एक निश्चित राष्ट्रीय रचनात्मक काममे योग। यदि भारत अपने आप प्रयत्न करके कार्य साधनेकी अपनी ऐसी क्षमताका परिचय दे दे तो फिर उसे राजनीतिक स्वराज्यके लिए तैयार मानना चाहिए। राष्ट्रकी ओरसे ऐसे सकल्पके साथ अन्य कोई माँग पेश किये जानेपर कौन उसकी अवहेलना कर सकेगा? मैने अभीतक चरखे तथा उससे उत्पन्न होनेवाली खादीकी जबरदस्त आर्थिक सभावनाका जिक्र तो किया ही नही है। क्योकि वह स्पष्ट है। भारतकी आर्थिक समृद्धिका असर अप्रत्यक्ष रूपसे उसके राजनीतिक इतिहासकी गतिपर पडे बिना भी नही रहेगा। हम राजनीतिक शब्दका प्रयोग सकुचित अर्थमे करे तो भी। और अतिम बात यह है कि जब चरखे द्वारा देश अपना कपडा तैयार करने योग्य हो जायेगा तो उसके फलस्वरूप लकाशायर द्वारा भारतका यह आर्थिक शोषण बन्द हो जायेगा। विदेशी कपडे और लकाशायरके कपडेका भी भारतमे आना बन्द हो जायेगा, तो भारतको हर उपायसे गुलामीके बन्धनमे बाधे रखनेकी इग्लैडकी व्याकुलता भी समाप्त हो जायेगी।

इसका तो मतलब है सारे राष्ट्रकी रुचिमें ही क्रान्ति पैदा कर देना। क्या आप उम्मीद करते है कि आपके देशवासी आपके अनुरोधपर विदेशी कपडेका इस्तेमाल छोड देंगे?

जरूर। क्योकि मै देशसे बहुत छोटीसी चीज माँग रहा हूँ। लाखो लोगोको इस बातका ध्यान भी नही है कि वे कौन-सा कपडा पहनते है, सिर्फ दाम कम होना

चाहिए। केवल मध्यम श्रेणीके लोगोकी ही रुचि बदलनेकी जरूरत है। मै नही मानता कि उनके लिए विदेशी कपडेके स्थानपर खादीको अगीकार करना असम्भव है। फिर यह वात भी याद रखनी चाहिए कि आजकल खादी वहुतसे लोगोकी रुचिके अनुकूल वनने लगी है और दिन-प्रतिदिन खादी बढिया होती जा रही है। इसलिए मेरी राय है कि यदि कोई भी रचनात्मक काम सफल हो सकता है तो वह यही खादीका कार्यक्रम है।

'स्वराज्य' से आपका क्या अभिप्राय है और उसकी क्या कोई मर्यादाएँ है, यदि है तो कौन-सी?

स्वराज्यसे मेरा अभिप्राय है जनताकी इच्छाके अनुसार भारतका वह शासन जिसका निश्चय देशके ज्यादासे-ज्यादा बालिग लोग मत देकर करेगे, चाहे वे स्त्री हो या पुरुष, इसी देशके हो या इस देशमे आकर वस गये हो। वे लोग ऐसे हो जिन्होने अपने शारीरिक श्रमके रूपमे राज्यकी कुछ सेवा की हो और जिन्होने मतदाताओकी सूचीमे अपना नाम लिखवा लिया हो। इस सरकारका ब्रिटिश राज्यसे सम्बन्ध रह सकता है किन्तु पूर्णतया सम्मानयुक्त और वराबरीकी शर्तोपर। मुझे तो अभीतक इस वातकी उम्मीद है कि मौजूदा गुलामीकी जगह हमारा सम्बन्ध वराबरीके हिस्सेदार या सहयोगीका हो सकता है। पर अगर जरूरत आ पडे अर्थात् यदि इस सम्बन्धके कारण भारतवर्षकी सर्वांगीण उन्नतिमे रुकावट पडती हो तो मै पूर्ण सम्बन्ध-विच्छेदका समर्थन करने या उसके लिए स्वय प्रयत्न करनेमे जरा भी नही हिचकूँगा।

आपने किस हदतक स्वराज्य दलके कार्यक्रम या कार्य-पद्धतिको कुबूल किया है?

मै खुद स्वराज्य दलके कार्यक्रम अथवा उसकी कार्यप्रणालीके प्रति किसी भी प्रकार वचनबद्ध नही हूँ। एक काग्रेसीकी हैसियतसे मै यह मानता हूँ कि देशपर उसका निश्चय ही प्रभाव है और इसलिए उसे काग्रेसका प्रतिनिधित्व करनेका हक है। यह हक जो उसे इस समय आपसी समझौतेके द्वारा प्राप्त है, उसे वह अपने दलके पक्षमे प्राप्त होनेवाले मतोकी सख्याके आधारपर भी प्राप्त कर सकता था।

आपके और उस दलके नेताओके सम्बन्ध कैसे है?

अत्यन्त मैत्रीपूर्ण। हम देशभक्ति और त्याग भावनाका जितना दावा अपने लिये कर सकते है उनका उतना ही श्रेय मै उन्हे भी देता हूँ।

कहा जाता है कि आप श्री दासके सामने झुक गये?

एक अर्थमे यह वात सच है। मै नही चाहता था कि काग्रेसी आपसमे झगडे परन्तु अगर इसका यह मतलव हो कि मै अपने सिद्धान्तसे रत्ती-भर भी पीछे हटा हूँ तो यह सच नही है।

साहावाले प्रस्तावके[1] प्रति आपका जो रुख था, क्या वह अव बदल नहीं गया है?

जरा भी नही। साहावाले प्रस्तावके समय मै अपने ही लोगो द्वारा की गई भूलका विरोध कर रहा था। इस समय मै गलत अनुमानोके आधारपर किये जानेवाले

१. गोपीनाथ साहासे सम्बन्धित प्रस्ताव, देखिए खण्ड २४, "अग्नि परीक्षा", १९-६-१९२४।

बाहरी दमनकी कार्रवाईका प्रतिरोध कर रहा हूँ। इसके सिवा उस समय म यह चाह रहा था कि काग्रेस कार्यकारिणीके सभी पद एक ही दलके हाथमे रहे। इस सम्बन्धमे मेरे प्रयत्नोको और साहा-प्रस्ताव सम्बन्धी मेरी कार्रवाईको एक समझनेकी भूल नही करनी चाहिए। ये दोनो बातें बिलकुल जुदा-जुदा है यहाँतक कि उनका एक दूसरेसे कोई सम्बन्ध भी नही है। ज्यो-ही मैने देखा कि एक ही दलके हाथमे नियन्त्रण रखनेकी कोशिशसे आपसमे कटुता फैल रही है, मैने कदम वापस ले लिया और पूरी तरह स्वराज्य दलकी बात मान लेनेकी घोषणा कर दी।

कहते है कि इस तरह झुक जानेसे आपकी नैतिक सत्ता समाप्त हो गई है?

चिपके रहनेसे नैतिक सत्ता सहेज कर नही रखी जा सकती। वह बिना मांगे मिलती है और बिना प्रयासके बनी रहती है। मुझे ऐसा अनुभव नही हुआ कि मेरी नैतिक सत्ता जाती रही है, क्योकि अपनी जानकारीमे मैने कोई भी ऐसा काम नही किया है कि मुझे अपने नैतिक सिद्धान्तोके अनुसार न चलनेका दोषी ठहराया जा सके। मेरे बताये हुए स्वराज्य-प्राप्तिके साधनो, जैसे चरखेके प्रचारमे इन बहुतसे व्यक्तियोका जो बौद्धिक सहयोग मुझे प्राप्त था उसे मैने अवश्य खो दिया है।

असहयोगके हरएक कार्यक्रमके विफल हो जानेके बाद भी आप असहयोगपर क्यो आग्रह रखे हुए है? उसे स्थगित करनेकी बातके पीछे आपका क्या हेतु है?

आज मै उसपर जोर नही दे रहा हूँ। पर मै इस बातको कबूल नही करता कि उस कार्यक्रमका प्रत्येक अग असफल हो गया है। बल्कि एक हदतक असहयोगका हरएक अग सफल हुआ है। मै उसे स्थगित करनेकी बात सिर्फ इसलिए करता हूँ कि मेरे लिए असहयोग जीवनका एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है और मुझे लगता है कि उसके द्वारा हिन्दुस्तानको ही नही, कहना चाहे तो सारी दुनियाको लाभ पहुँचा है, जिसका कि अभी हमको पर्याप्त अनुभव नही है। और इसलिए भी कि यदि फिर कभी मुझे देशके लोगोमें व्यापक अहिसा और परस्पर सच्चे सहयोगकी भावनाका वातावरण दिखाई दे और तबतक भी अगर हमे अपना ध्येय प्राप्त नही हो चुका होगा तो मै राष्ट्रको फिरसे सत्याग्रहके मार्गपर जानेकी सलाह देनेमें आगा-पीछा नही करूँगा।

हिन्दू-मुस्लिम समस्याको आप किस तरह हल करना चाहते है?

दोनो जातियोके सामने लगातार इस बातपर जोर देकर कि वे आपसमे आदरभाव और विश्वास पैदा करे, और हिन्दुओसे इस बातका आग्रह करके कि चूँकि वे ज्यादा बलशाली है इसलिए हर लौकिक व्यवहारमे मुसलमानोकी बात माने और यह स्पष्ट कर दें कि जो लोग अपनेको राष्ट्रवादी मानते है और जिनकी सख्या दूसरोंसे बहुत ज्यादा है वे विधान सभाओ या सरकारी पदोकी भद्दी प्रतिस्पर्धामे भाग नही लेगे। मै यह दिखला कर भी इस उद्देश्यको सिद्ध करनेकी आशा करता हूँ कि सच्चा स्वराज्य थोडे लोगो द्वारा सत्ता छीन लेनेसे नही, बल्कि सत्ताका दुरुपयोग होने पर जब कि सब लोगोमें उसका प्रतिरोध करनेकी क्षमता आ जायगी तभी प्राप्त होगा। दूसरे शब्दोमें स्वराज्य जनताको इस बातका बोध करा देनेसे प्राप्त किया जा सकता है कि उनमें शासन-सत्ताको नियमित और नियन्त्रित करनेकी क्षमता है?

अंग्रेजोके प्रति आपका सच्चा रुख क्या है? और इग्लेडसे आप क्या आशा रखते है?

अग्रेजोके प्रति मेरे मनमे पूर्ण मित्रता और आदरके भाव है। मै उनका मित्र होनेका दावा करता हूँ। क्योकि यह मेरी प्रकृतिके विरुद्ध है कि मै एक भी मानवको अविश्वासकी दृष्टिसे देखूं या यह मानूं कि दोषमोचनकी दृष्टिसे ससारकी कोई भी कौम असाध्य है। मेरे मनमे अग्रेजोके प्रति आदर है, क्योकि मै उनकी बहादुरीका, वे जिस बातको अपने लिए अच्छा समझते है उसके लिए कुरबानी करनेका, उनकी एक बने रहनेकी वृत्तिका तथा व्यापक सगठन कर सकनेकी उनकी शक्तिका कायल हूँ। उनसे मुझे यह आशा है कि वे थोडे ही समयमे पीछे हट जायेगे और अव्यवस्थित तथा अनुशासनहीन जातियोके शोषणकी अपनी नीतिको छोड़ देगे, एव इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण देगे कि भावी ब्रिटिश राष्ट्रसघमे भारत एक बरावरीका मित्र और सहयोगी बनकर रह सकेगा। ऐसा कभी होगा अथवा नही इस बातकी सम्भावना मुख्यत हमारे अपने कामपर निर्भर है। अर्थात् इग्लैडसे मेरी आशाका कारण यह है कि मै भारतसे आशा करता हूँ। हम सदा अव्यस्थित और नकलची तो नही रहेगे। वर्तमान अव्यवस्था, नैतिक पतन और नये काम उठानेकी शक्तिके अभावके पीछे मुझे व्यवस्था, नैतिक बल और कार्यारम्भकी शक्ति अपने आप सगठित होती हुई दिखाई देती है। वह जमाना आ रहा है जब इग्लैड हिन्दुस्तानकी मित्रता पाकर खुश होगा और हिन्दुस्तान भी मित्र भावसे इग्लैडके बढाये गये हाथको महज इस खयालसे अस्वीकार नही कर देगा कि कभी वह उसका शोषक रह चुका है। यो मुझे मालूम है कि इस आशाके लिए कोई प्रमाण मेरे पास नही है, इसका आधार केवल मेरी अविचल श्रद्धा ही है। जो श्रद्धा तथाकथित प्रमाणोपर ही आधारित हो वह सच्ची श्रद्धा नही है।

[अग्रेजीसे]
यंग इडिया, २९-१-१९२५

२४. टिप्पणियाँ

उलटा रास्ता

जमीयत-उल-तबलीग इस्लामने हालकी अपनी बैठकमे पास किये गये प्रस्तावका [अग्रेजी] अनुवाद मुझे भेजनेकी कृपा की है। प्रस्ताव इस प्रकार है

> **यह निश्चय किया गया कि हाल ही कोहाटमे हुए दगोके समय[1] जो शर्मनाक घटनाएँ हुई है और जिनके फलस्वरूप वहाँ लोगोके जानोमालको जो काफी नुकसान पहुँचा है, उन सबकी जिम्मेदारी उन लोगोपर है जिन्होने कोहाटमें ऐसा परचा शाया किया जो जोश और गुस्सा दिलानेवाला था और जिसमें इस्लामपर बड़े ही गन्दे आक्षेप किये गये थे तथा जिसमें मुसलमानोके**

१. सितम्बर १९२४ में।

> जजबातको गहरी चोट पहुँचाई गई थी। जिन हिन्दुओने गोलियाँ चलाईं और मुसलमानोकी जानें लीं, वे भी बादकी हालतको और नाजुक बना देनेके जिम्मेदार है। यह जमीयत कोहाटके उन तमाम वाशिन्दोके साथ, बिना जात-पाँतके भेद-भावके, हमदर्दी जाहिर करती है, जिनके जानोमाल इन दंगोके दरम्यान जाया हुए हैं। एक मजहबी जमातकी हैसियतसे यह जमीयत महात्मा गाधीको तथा दूसरे राजनीतिक नेताओको यह बताना अपना फर्ज समझती है कि जबतक मजहब और मजहबोके प्रवर्त्तको तथा मजहबी हलचलोके नेताओपर व्याख्यान और लेखोके द्वारा किये जानेवाले आक्षेप पूरी तरह बन्द नहीं किये जायेंगे तबतक हिन्दुस्तानमें हिन्दू-मुस्लिम-एकताकी स्थापना और उसे बनाये रखना कभी सम्भव नहीं होगा।

मै जमीयतको इस प्रस्तावपर बधाई देनेमे असमर्थ हूँ। अभीतक कोहाटकी घटनाओकी कोई निष्पक्ष जाँच नही हुई है। फिर भी ऐसा मालूम होता है कि दोनो पक्षके लोगोने मुख्य तथ्योपर अपनी राय स्थिर कर ली है। क्या यह बात साबित हो चुकी है कि कोहाटकी तमाम शर्मनाक घटनाओकी जिम्मेदारी उस व्यक्ति या व्यक्तियोपर ही है जिन्होने कोहाटमे उक्त जोश और गुस्सा पैदा करनेवाले परचे छापे थे? क्या यह बात भी साबित हो चुकी है कि 'जिन हिन्दुओने गोलियाँ चलाईं और मुसलमानोकी जाने ली, वे भी उसके बादकी हालतको और भी नाजुक बना देनेके लिए जिम्मेदार है?' यदि पूर्वोक्त दोनो बाते असन्दिग्ध रूपसे साबित हो गई हो तो कमसे-कम वहाँके हिन्दू तो अपनी जानोमालकी हानिके लिए जमीयतकी ओरसे प्रदर्शित की गई किसी तरहकी हमदर्दीके मुस्तहक नही है, क्योकि यह तो उनकी ही करनीका फल उन्हे मिला है। ऐसी अवस्थामे जमीयतका हिन्दुओके साथ हमदर्दी जाहिर करना असगत है। फिर मुझे और दूसरे राजनीतिक नेताओको यह दिखानेमे जमीयतका मन्शा क्या है कि 'जबतक मजहब और मजहबोके प्रवर्तको तथा मजहबी हलचलोके नेताओपर व्याख्यान या लेखोके द्वारा किये जानेवाले हमले बिलकुल बन्द न किये जायेगे तब तक हिन्दुस्तानमे हिन्दू-मुस्लिम एकताकी स्थापना और उसे बनाये रखना कभी सम्भव नही होगा।' जमीयतका यह खयाल अगर सही है तो क्या एकताकी असम्भाव्यता ऐसी बात नही जिसपर राजनीतिक नेताओके साथ-साथ खुद उसका भी ध्यान जाना चाहिए? और क्या इसीलिए कि कुछ व्यक्ति मजहबपर हमला करते है, हिन्दू-मुस्लिम एकताको जरूर ही असम्भव हो जाना चाहिए? जमीयतके कथनानुसार तो एक ही अविचारी हिन्दू या अविचारी मुसलमान हिन्दू-मुस्लिम एकताको असम्भव बना देनेके लिए काफी है। सौभाग्यसे हिन्दू-मुस्लिम एकताका अन्तिम आधार धार्मिक और राजनीतिक नेताओपर निर्भर नही है। उसका आधार है दोनो जातियोकी जनताका प्रबुद्ध निहित स्वार्थ। उन्हे कोई हमेशाके लिए गुमराह नही कर सकता। पर मैं आशा करता हूँ कि जमीयतका मूल प्रस्ताव इतना खराब न होगा जितना कि वह अनुवादमे मालूम पडता है।

मियाँ फजल-ए-हुसैन[1]

अभी मै जब लाहौर गया था, मेरी मुलाकात मियाँ फजल-ए-हुसैनके साथ हुई थी। एक सज्जन लिखते है कि उसकी जो छाप मुझपर पडी मै उसके विषयमे लिखूँ। मै यहाँ तदनुसार लिख रहा हूँ। बातचीतका समय आनन्दसे गुजरा। उनका व्यवहार मनोहारी था। उनकी बातचीत औचित्यपूर्ण और तर्कसगत थी। हिन्दुओकी तरफसे लगाये गये पक्षपातके आक्षेपका उन्होने विरोध किया। उन्होने कहा, "मै मुसलमानोके प्रति पूरा न्याय नही कर रहा हूँ और थोडा बहुत कर भी रहा हूँ वह तत्परताके साथ नही। सभी मुझसे आकर मिल सकते है और जो भी व्यक्ति इस प्रश्नको बारीकीसे समझना चाहता है उसे मै अपनी स्थिति समझानेके लिए उत्सुक रहता हूँ।" इससे अधिककी आशा रखनेका किसीको अधिकार नही है। मै यह नही जानता कि मियाँ साहबकी नीतिके खिलाफ सचमुच कुछ कहा जा सकता है या नही। मैने इस प्रश्नपर दोनो पहलुओसे विचार नही किया है। जब मै यह कर लूँगा तब मै मियाँ साहबके इस दावेपर कि उन्होने मुसलमानोके साथ पूरा-पूरा न्याय नही किया है, अपनी राय बडी खुशीसे जाहिर करूँगा। तबतक तो मेरे लिए इतना ही कहना काफी है कि मियाँ फजल-ए-हुसैन शान्त, गभीर, और प्रतिष्ठित सज्जन है तथा गलत बातपर अडनेवाले आदमी नही है।

हमारी लाचारी

साबरमती आश्रममे चरखो, तकुओ, पूनियो इत्यादिकी जगह-जगहसे माँग आ रही है। यदि हम अच्छी तरह सगठित हो गये होते तो हमारी ऐसी असहाय अवस्था न होती। एक समय था कि हरएक देहाती बढई चरखा बना लेता था। आज तो शहरका बढई भी नही जानता कि चरखा क्या है और नमूना देनेपर भी उसे तैयार करनेसे इनकार कर देता है। इसी प्रकार पहले हरएक धुनिया पूनियाँ बनाना जानता था। लेकिन आज तो उसका नाम सुनते ही वे मुँह बनाते है, या बडे पैसे माँगते है। पर हाथ-कताईकी सफलताका आधार हमारी सूझबूझ और हिन्दुस्तानके कारीगरोका सहयोग है। चरखा और उससे सम्बद्ध चीजोकी बढती हुई माँगकी पूर्ति कोई भी एक सस्था नही कर सकती। सौभाग्यसे अब हालत सुधरती जा रही है, लेकिन उतनी जल्दी नही जितनी कि चाहिए। जिन्हे जरूरत है उन्हे आश्रमसे चीजे मँगानेके पहले अपने शहरमे या जिलेमे उन्हे बनवा लेनेका पूरा प्रयत्न कर लेना चाहिए। बेशक, उसके लिए अनिश्चित समयतक राह देखनेसे तो आश्रमसे मँगा लेना ही बेहतर है। जहाँतक पूनियोका सम्बन्ध है मेरा श्री सन्तानम्की रायसे इत्तिफाक है, जिन्होने अपने उत्तम निबन्धमे दिखाया है कि हरएक कातनेवालेको खुद अपने लिए पूनियाँ बनाना चाहिए। छोटी ताँतपर धुनना इतना सीधा और आसान काम है कि किसीको विश्वास ही नही होगा। कताईकी अपेक्षा धुनाई बहुत जल्दी सीखी जा सकती है। अच्छा धुनना आ जानेपर अधिक गतिसे कातने और एकसा

१. एक मुसलमान नेता, वाइसरायकी कार्यकारिणी परिषद्के सदस्य।

सूत निकालनेमें मदद मिलती है। जो लोग मजदूरीकी दृष्टिसे कातते हैं, वे यदि धुन भी लें तो इससे उनकी आमदनी बढ़ जायेगी। देश-भरमें ऐसे धुननेवाले मौजूद हैं जो धुनाईसे ही अपनी पूरी जीविका कमा लेते हैं। अच्छा धुननेवाला दिनमें बारह आने कमा सकता है। अच्छा कातनेवाला उतना नहीं कमा सकता है। हर सुसंचालित कांग्रेस कमेटीके अन्तर्गत चरखे और उससे सम्बद्ध दूसरी चीजें बनाने और देनेके लिए एक भण्डार होना चाहिए।

गबन होनेपर

आन्ध्र देशसे एक सज्जन लिखते हैं

> बहुतसे लोग यह समझकर कि कांग्रेसवाले अदालतोंमें नालिश तो करते ही नहीं, कांग्रेस कमेटियों और खादी-बोर्डोंका बकाया रुपया नहीं देते। यह और कुछ नहीं तो गबन और धोखेबाजी अवश्य है। आप गबनके बारेमें लिख चुके हैं; और अब अदालतोंमें जानेके बारेमें प्रतिबन्ध भी नहीं रहा; इसलिए मुझे यकीन है कि कांग्रेस कमेटियाँ ऐसी हालतमें अदालतोंमें दावे दायर कर सकती हैं।

मैं ऐसे मामलोंके बारेमें अपनी राय पहले ही दे चुका हूँ। मुझे इस बातमें कोई सन्देह नहीं कि उन दिनोंमें भी जब कि अदालतोंका बहिष्कार चालू था कांग्रेसवालोंका कर्त्तव्य था कि वे दगाबाजों और पावना देनेसे इनकार करनेवालोंपर दावे करें। बहिष्कार इसलिए नहीं शुरू किया गया था कि कांग्रेस अपना सर्वनाश कर ले। उसके मूलमें यह भाव गृहीत ही था कि कांग्रेससे लेन-देन करनेवाले लोग ईमानदारी बरतेंगे।

अ० भा० खादीबोर्डके प्रस्ताव

कांग्रेस मताधिकार योजनाको कार्यान्वित करनेके बारेमें अ० भा० खादी बोर्डके नीचे दिये हुए प्रस्तावोंकी ओर मैं सभी सम्बन्धित व्यक्तियोंका ध्यान आकर्षित करता हूँ

> कांग्रेसने हाथ-कताईको मताधिकारका अंग मान लिया है, इसलिए और इस मामलेमें प्रान्तीय समितियोंको सुविधा पहुँचानेकी दृष्टिसे अ० भा० खादी बोर्ड प्रस्ताव करता है कि वह प्रान्तीय खादी बोर्डके जरिए, या सीधे ही, नीचे लिखी सहायता करनेको तैयार है।
>
> (१) किसी भी प्रान्तको जहाँ आसानीसे कपास नहीं मिल सकती, कपास देनेके लिए बोर्ड तैयार है।
>
> (२) उधार माँगनेके लिए जो अर्जियाँ आयेंगी उनपर विचार करनेके लिए बोर्ड तैयार रहेगा। इसकी शर्तें उसी वक्त तय की जायेंगी।
>
> (३) यह बोर्ड प्रान्तीय खादी-बोर्डोंको यह सलाह देता है कि वे सदस्योंको अच्छे चरखे और धुनकी और सम्बन्धित सामग्रीके नमूने प्राप्त

करनेमें हर तरहसे मदद करें और जबतक सदस्य अपनी पूनियाँ बनानेकी व्यवस्था स्वयं न कर लें तबतक तैयार पूनी प्राप्त करनेमें भी उन्हें सहायता पहुँचायें।

(४) जहाँतक मुमकिन होगा बोर्ड धुनना, कातना इत्यादि कामोंमें शिक्षा देनेके लिए विशेषज्ञोंका इन्तजाम करेगा। इसके लिए बोर्डके साथ व्यवस्था करनी होगी।

(५) बोर्ड किसी भी प्रान्तीय समितिसे बाजार भावपर सूत खरीदनेके लिए तैयार रहेगा या समितियोंकी तरफसे उसे बुनवा देगा।

(६) यदि जरूरत लगे तो बोर्ड उचित दरपर मताधिकारके लिए आवश्यक हाथ-कता सूत देनेके लिए तैयार है।

(७) बोर्ड व्यक्तियोंको और समितियोंको आगाह करता है कि वे मताधिकारके लिए बाजारसे हाथ-कता सूत न खरीदें, क्योंकि मुमकिन है बाजारका सूत मिलका सूत हो या मिलकी पूनीका कता हो और एक-सा तथा बटदार भी न हो। (केवल कुशल कातनेवाले ही हाथ-कते और मिलके कते सूतका फर्क समझ सकते हैं और बता सकते हैं कि सूत अच्छा कता है या बुरा। जब मिलकी पूनीका सूत हाथसे काता गया हो, तो कुशल कातनेवाले भी उसे नहीं पहचान सकते)।

(८) अन्तमें, बोर्ड व्यक्तियोंको और समितियोंको जो-कुछ भी जानकारी और मदद दरकार हो, यदि बोर्डके वशकी बात हुई तो, वह सब देनेके लिए तैयार रहेगा।

समय बहुत कम रह गया है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि नये मताधिकारके अनुसार प्रान्तीय समितियाँ अपनी व्यवस्था कर रही होंगी। यदि ठीक-ठीक काम किया गया तो बड़े अच्छे नतीजे निकल सकते हैं। लेकिन इसके लिए छोटी-छोटी बातोंपर ही ध्यान देना होगा। एक मर्तबा कार्य करने योग्य संगठन बन जानेपर वह दिन दूनी, रात चौगुनी गतिसे बढ़े बिना न रहेगा, और इससे कांग्रेस स्वावलम्बी और धनोत्पादन करनेवाली संस्था बन जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २९-१-१९२५

२५. पत्र : कृष्णदासको

दिल्ली
२९ जनवरी, १९२५

प्रिय कृष्णदास,[1]

सलग्न पत्र प्यारेलालके[2] लिए है। आशा हे तुम मेरे लिए चिन्तित नही होओगे। मेरी जितनी सार-सभाल जरूरी है सो सब की जा रही हे। महादेवपर कामका भार ज्यादा नही हे। दीनदयाल मेरे पास फिर आ गया हे। उसने मेरी व्यक्तिगत सेवाका भार अपने ऊपर ले लिया हे और खुद महादेवको प्राय सारा समय व्यक्तिगत पत्र-व्यवहारमे[3] लगानेके लिए मुक्त कर दिया हे। हिन्दू-मुस्लिम समस्याको हल करनेके लिए निजी तौरपर वातचीत चल रही है। नतीजेके बारेमे अभी कुछ कहना वहुत कठिन है। हम यहाँ कमसे-कम ३१ तारीखतक तो है ही। आशा है तुम दिन-प्रतिदिन शक्ति लाभ कर रहे हो। यहाँ बहुत ठड है इसलिए तुम्हारे यहाँ न होनेकी मुझे खुशी है। श्री एन्ड्रयूज यही है और अभी दो दिन रहेगे। कीकीबहनसे कहे कि मै इस बातसे खुश हूँ कि वह आश्रममे नियमित रूपसे सिलाई सिखा रही है। इससे उसका ध्यान बँटेगा और यदि वह शक्तिसे अधिक काम न करेगी तो इससे उसको लाभ होगा।

तुम्हारा,
बापू

अग्रेजी पत्र (जी० एन० ५५९८) की फोटो-नकलसे।

२६. तार : डा० प्राणजीवन मेहताको

३१ जनवरी, १९२५

डा० मेहता
गोल्डगॉड
रगून

आठ मार्च मेरा मौन-दिवस होगा। मै उस सप्ताह काठियावाडमे रहूँगा। क्या २६ फरवरी ठीक रहेगी? २२ फरवरीतक लगभग अनुपस्थित रहूँगा।

गाधी

अग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६)से।

१ गाधीजीके सचिव, **सेवन मंथ्स विद महात्मा गांधीके** लेखक।
२ प्यारेलाल नैयर।
३. साधन सूत्रमें 'व्यक्तिगत सेवा' है।

२७. एक अनर्थ

एक सज्जन टागानीकासे लिखते है [१]

इस वर्णनके विलकुल सच होनेकी सम्भावना है। पुर्तगाली राज्यमे, अर्थात् डेलागोआ वेमे, ऐसा मैने स्वय देखा है। वहाँ मुसलमानोने अपने वच्चोके लिए एक यतीमखाना खोल रखा है। हिन्दू अपनी सन्ततिको मुसलमानोके हाथ सौप देते है और फिर इनका लालन-पालन मुसलमानोकी तरह होता है। एक रास्ता तो यह है, किन्तु मै इसे पसन्द नही कर सकता। मेरी दृष्टिमे दोनो निन्दनीय है। पहले तो ऐसे सम्वन्धको शादी मानना ही गलत है। मै इसे महज विषय-लालसाकी तृप्ति कहता हूँ। विदेशमे वहुतेरे नीति-बन्धन शिथिल हो जाते है, क्योकि वहाँ लोक-लाज नही रहती। किन्तु हिन्दुओ और मुसलमानोके दोषोमे थोडा अन्तर तो है ही। मुसलमान ऐसे विषय-भोगसे उत्पन्न सन्ततिका पालन करते है और उनकी अपने धर्ममे परवरिश करते है। यदि मुसलमानो द्वारा दी जानेवाली सुविधा न हो तो हिन्दुओकी सन्तति भूखो मर जायेगी। यह सन्तति केवल विषय-भोगके परिणामस्वरूप है। इससे हिन्दू-पिताको तो उसके धर्मकी कोई चिन्ता ही नही होती। मेरी दृष्टिमे तो ऐसा विषयान्ध पुरुष धर्मका त्याग कर ही चुका होता है। नीति और सदाचारके नियमोका विलकुल पालन न करनेवालेको धार्मिक मानना मेरे लिए तो मुश्किल बात है। अमुक धर्ममे जन्म पानेवालेको, सख्याकी खातिर भले ही उस धर्मका अनुयायी मान ले, पर सच पूछिए तो वह धर्मच्युत ही है। आचरणसे भिन्न ऐसी कोई वस्तु नही है जिसे धर्म कह सके। वह वेद-धर्मी नही जो गायत्री जपता हो या 'वेद' पढता हो, वल्कि वेद-धर्मी वह है जो वेदवाक्यके अनुसार व्यवहार करता है। कितने ही ईसाई वेदादिका वहुत गहरा अध्ययन कर लेते है किन्तु इससे वे वेद-धर्मी नही हो जाते। और न वही शख्स वेद-धर्मी है जो ढोग या वहमके वशीभूत होकर गायत्री आदिका पाठ करता है। उसका उस धर्मके अनुयायी होनेका दावा उसी अवस्थामे मान्य किया जा सकता है जव उसे उस धर्मके आदेशोका वोध हो और वह यथाशक्ति उनका पालन करता हो। इस दृष्टिसे कह सकते है कि टागानीकाके हिन्दुओने हिन्दु धर्मको छोड दिया है।

यह तो एक स्वतत्र बात हुई। व्यवहारमे ऐसे हिन्दू या मुसलमान पिता हिन्दू या मुसलमान ही माने जायेगे। इसलिए हमे व्यवहार-दृष्टिसे इसका कुछ निराकरण करना चाहिए। हिन्दू-पिताको चाहिए कि वह ऐसे सम्बन्धको विवाहका रूप दे दे और वच्चोका प्रेमपूवक लालन-पालन करे तथा उनके लिए पढाने आदिकी तमाम सुविधाओकी व्यवस्था करे। यह उपाय तो हुआ उन वच्चोके लिए जो उत्पन्न हो चुके है। भविष्यके

१. पत्र यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है। इसमें पत्र-लेखकने टागानीकाके हिन्दुओ द्वारा हब्शी स्त्रियोंके साथ छिपकर किये गये विवाहों और बादमें छोड़ दी गई इन अभागी औरतोंके बच्चोंकी दयनीय दशाका वर्णन किया था।

लिए तो हरएक विदेशगमन करनेवालेको अपने बाल-बच्चोको साथ ले जाना चाहिए। जहाँ बाप बिलकुल ही हृदयहीन हो, वहाँ अनाथालय खोले बिना दूसरी गति नही। इन अनाथालयोको उन देशोमें खोलना ही उचित होगा। यह मान सकते है कि अनाथालयोमे माँ अपने बच्चो समेत रहेगी। माता अपनी आजीविकाके लिए पुरुषका शिकार बनती है। वह विषय-भोगकी दृष्टिसे सम्बन्ध नही बनाती। हब्शियोमे शादीका रिवाज तो है। फिर भी औरते पैसेके लिए अपना शरीर पुरुषोको बेचती हैं और इसमे नीतिभग नही माना जाता। फिर भी मातृप्रेम तो रहता ही है। इस प्रेमका पोषण करके माताओसे उनके धर्मका पालन कराना उचित है। ऐसी दु खद घटनाओमें बालकोकी मातृभाषा और पितृ-भाषा जुदी-जुदी होती है। फिर बालकोको कौनसी भाषा पढाई जाये? साधारण तौरपर बापको इस तरह उत्पन्न हुई सन्ततिके साथ प्रेम कम ही होता है। इसलिए बालक माताकी ही भाषा सीखता है। इसलिए अनाथालयोके सचालकोको चाहिए कि वे ऐसे बालकोको उनकी मातृभाषा ही सिखावे। अगर दोनो भाषाएँ सिखाई जाये तो बालकोको भविष्यमे रोजी कमानेका एक अतिरिक्त साधन मिल जायेगा।

धर्मका सवाल बहुत गूढ है। मुसलमान बापके विषयमे तो हम देख ही चुके है कि कोई सवाल नही उठता। हिन्दू-पितासे उत्पन्न सन्तति हिन्दू मानी जाये, यह नियम है। इसलिए हिन्दू-पिताके बालकोको हिन्दू धर्मकी शिक्षा दी जानी चाहिए, इस विषयमे मुझे जरा भी शक नहीं है। बालक बेचारा लाचार है। जिस अनाथालयमें वह रखा जायेगा वहीके वायुमण्डलको वह ग्रहण करेगा। यदि उसका कारोबार धर्मप्रेमी सचालकोके हाथमे होगा तो बालकोमे धर्म-भावना उपजेगी।

मै आशा करता हूँ कि टागानीका तथा उसके जैसे देशोमें रहनेवाले हिन्दू अपने कर्त्तव्यका विचार करके उसका पालन करेगे। विषय-वृत्तिको छोडना प्रथम धर्म है। किन्तु यह तो भविष्यकी बात हुई। उत्पन्न सन्ततिका पालन करना, उसके लिए धार्मिक शिक्षाका प्रबन्ध करना और उससे हर तरहसे पिताके धर्मका आचरण कराना, ये नियम हर स्थितिमे लागू होते हैं। जो ले जा सकते हो वे अपनी पत्नीको साथ ले जाये। पुरुषोकी तरह स्त्रीकी भी स्थिति समझनी चाहिए। पुरुष जिस प्रकार बहुत कालतक वियोग सहन नही कर सकता उसी तरह स्त्रियोके बारेमे भी समझना चाहिए। उचित उम्रमें शादी होनेके बाद स्त्री-पुरुषको अधिक समयतक जुदा नही रहना चाहिए। यह बात स्वयसिद्ध है। इसीसे दोनोके चरित्रकी रक्षा हो सकती है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १-२-१९२५

२८. टिप्पणियाँ

अनुकरणीय

पालितानाके एक भाईने मुझे पत्र लिखा है। मै उसका एक आवश्यक अश यहाँ देता हूँ[१]

यदि अन्य कर्मचारी भी ऐसा ही करे तो कितना वडा सुधार किया जा सकता है। इसमे राजा और प्रजा दोनोकी सेवा आ जाती है और साथ ही अपना लाभ भी होता है। ये दम्पती धीरे-धीरे इतना सूत और ऊन स्वय कातने लगेगे कि उसके वुने कपडेसे उनका काम चल जाये। हम जान चुके है कि कालीपरज जातिमे प्रति व्यक्ति कपडेका खर्च दस रुपये वार्षिक आता है। उक्त भाईके कुटुम्वमे तो खर्च इससे अधिक ही होना चाहिए। इसलिए वे अधिक वचा लेगे और साथ-ही-साथ एक हुनर भी सीख लेगे। वे गरीवकी असीस लेगे और रुई और ऊनकी किस्मे जान लेगे और उनमे सुधार कैसे किया जाये यह भी समझ जायेगे। इस समय काठियावाडमे सूत कातने आदिकी प्रवृत्ति अच्छी चल रही है। ऐसे समय मै चाहता हूँ कि छोटे और वडे सभी राज्य अधिकारी, जिन्हे लोगोसे वहुत काम रहता है, उक्त भाईकी तरह लोगोको चरखा चलानेकी शिक्षा दे। यह भाई ऐसा चरखा चाहता है जो यात्रामे घोडेपर लाया और ले जाया जा सके। ऐसी इच्छा दूसरोकी भी होनी सम्भव है। किन्तु ठीक उपाय तो यही है कि अधिकारी हर गाँवमे चरखा रखे। काठियावाडमे अथवा अन्यत्र अव ऐसे गाँव नही वचे होगे जिनमे चरखा विलकुल मिले ही नही। किन्तु यदि कही न भी पहुँचा हो तो वहाँ उसे पहुँचा दिया जाना चाहिए। तव अधिकारीगण लोगोसे चरखा माँगकर सूत कात ले सकते है। यदि इस प्रवृत्तिको सभी लोग अपना ले तो हर गाँवकी चौपालमे दो या तीन चरखे रखे जा सकते है जिनका उपयोग गाँवकी गरीव-अमीर प्रजा और जव गाँवमे अधिकारी आये तव वे भी करे। किन्तु जवतक ऐसा सम्भव न हो तवतक ऐसा छोटा चरखा, जो घोडेपर भी लाया और ले जाया जा सके, रखनेका विचार सुन्दर ही है।

खादी-भण्डार

गुजरात प्रान्तीय काग्रेस कमेटी जिस खादी भण्डारको चलाती है उसे वन्द करनेके विरुद्ध मेरे पास प्राय पत्र आते रहते है। ऐसा एक पत्र इस समय मेरे सम्मुख रखा है। इससे पता चलता है कि इस सम्वन्धमे लोगोमे कुछ भ्रम है। प्रान्तीय काग्रेस खादी भण्डार न चलाये, यह सलाह मैने नही दी है। किन्तु मेरी सलाह यह

१. यहाँ नहीं दिया गया है। पत्रका प्रेषक पालिताना राज्यका एक कर्मचारी था। उसने लिखा था कि मैं अपना वचा हुआ समय रुई और ऊन कातनेमें लगाता हूँ और राज्यके अधिकारी मेरे कार्यपर आपत्ति करना तो दूर, मुझे प्रोत्साहन देते हैं।

है कि जिन खादी भण्डारमें बहुत घाटा रहता हो अथवा जिसमें घाटा कम होनेके बजाय बढ़ता ही जा रहा हो उसे बन्द कर दिया जाये। इसके अतिरिक्त गुजरातमें बाहरसे खादी लाना भी बन्द किया जाये। इस सलाहका कारण अर्थशास्त्रीय ही है। मैं हिन्दुस्तानके अन्य प्रान्तोंकी हानि करके गुजरातका भला चाहूँ यह बात तो हो ही नहीं सकती। किन्तु स्वदेशीका सिद्धान्त ही यह है कि हमें अपने पड़ोसीकी सेवा पहले करनी चाहिए। गुजरातका गेहूँ छोड़कर दक्षिणका गेहूँ खाना पसन्द करना स्वदेशीकी नीतिका भंग करना है। उससे गुजरात, दक्षिण और समस्त हिन्दुस्तानकी हानि होती है। खादीकी भावना इसी सिद्धान्तसे उत्पन्न है।

अब हम खादीका उद्देश्य देखें। खादीका एक उद्देश्य तो यह है कि खादीके द्वारा हिन्दुस्तानके गाँवोंमें जीवन-सचार किया जाये। यह बात तो तभी सम्भव है जब प्रत्येक गाँवके लोग अपनी खादी स्वयं तैयार करने लगें और यह काम तभी हो सकता है जब प्रत्येक प्रान्त अपनी खादी स्वयं बनाये, और जैसी बनाये वैसी पहने।

खादीका दूसरा उद्देश्य यह है कि खादी-प्रचारके द्वारा विदेशी कपड़ेका बहिष्कार किया जाये। यह बहिष्कार तभी सम्भव है जब हिन्दुस्तानमें जितना कपड़ा चाहिए उतना यहीं बने। अब यदि हिन्दुस्तानको विलायतके जैसा ही कपड़ा चाहिए तो वह वैसी खादी तो पूरी-पूरी नहीं बना सकता। इसीलिए हिन्दुस्तानियोंको हिन्दुस्तान-में जैसा कपड़ा मिले वैसा प्रेमपूर्वक पहननेकी आदत डालनी चाहिए। यदि सभीको आन्ध्रकी खादीकी ही आदत पड़ेगी तो आन्ध्र इतनी खादी न दे सकेगा और विदेशी कपड़ेका बहिष्कार कभी न होगा। इसलिए प्रत्येक प्रान्तको बारीक खादी बनानेका प्रयत्न करना चाहिए। इस कारण भी प्रत्येक प्रान्तको अपनी-अपनी ही खादी तैयार करनी चाहिए। सामान्य नियम यह दिखाई देता है कि जबतक किसी वस्तु विशेषकी आवश्यकता नहीं होती तबतक उसको उत्पन्न करनेका प्रयत्न भी नहीं होता।

इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि कोई आन्ध्रकी खादी पहने ही नहीं या मँगाये ही नहीं। मेरा मतलब तो इतना ही है कि कमसे-कम कांग्रेसको तो उत्तम प्रकारका प्रयत्न ही करना चाहिए। इस सम्बन्धमें मध्यम प्रकारका प्रयत्न लोग करेंगे। यदि उत्तम प्रकारके प्रयत्नको कठिन होनेके कारण कांग्रेस भी न करेगी तो सम्भव है कि उसे कोई भी न करे और इस प्रकारके प्रयत्नके बिना सफलता असम्भव होती है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १-२-१९२५

२९. टिप्पणियाँ

चरखोकी कमी

इन दिनो चरखेका प्रचार वढ गया है, इस कारण आश्रममे चरखोकी माँगसे सम्वन्वित पत्र वहुत आने लगे हैं। चरखोकी जितनी माँग की जा रही है उसे पूरा करनेमे आश्रम विलकुल असमर्थ है। इस तरहसे प्रचार-कार्य आगे नही वढ सकता। प्रत्येक प्रान्तमे, प्रत्येक जिलेमे, प्रत्येक ताल्लुकेमे और प्रत्येक ग्राममे चरखा वना सकनेवाले कारीगर होने चाहिए। चमरखे तो अव नारियलकी सुतली या मूँजकी वनाई जाती है। चरखेकी प्रवृत्ति चरखा चलानेवालोको ही लाभ पहुँचाती हो सो वात नही, यह प्रवृत्ति वढइयो और लुहारोके लिए भी उत्साहवर्धिनी है। उसके लाभोसे समाजका कोई भी वर्ग वचित नही रह सकता।

स्वयंसेवकोंकी आवश्यकता

महागुजरातमे खादीका काम तेजीसे चलाया जा रहा है, इसलिए वहाँ वडी सख्यामे स्वयसेवकोकी जरूरत महसूस होना एक स्वाभाविक वात है। अपना पूरा समय देनेवाले स्वयसेंवकोकी आवश्यकता है, साथ ही थोडा समय दे सकनेवाले स्वयसेवक भी चाहिए। प्रत्येक स्वयसेवकको कातना आना चाहिए और तत्सम्बन्धी सभी वातोकी पूरी-पूरी जानकारी होनी चाहिए। स्वयसेवकोकी हैसियतसे सेवा करनेके इच्छुक व्यक्ति अपने नाम मेरे पास भेज दे। ताकि जरूरी मालूम होनेपर उनकी सेवाका उपयोग किया जा सके। जो स्वयसेवक कही काम कर ही रहे हैं वे अपने नाम न भेजे। शक्ति और इच्छाके रहते हुए भी जिन्हे सेवाका अवसर प्राप्त नही हो पाया है, नाम भेजनेका निवेदन उन्हीके प्रति है। नाम भेजनेवालोको चाहिए कि वे अपनी अर्जीमे अपनी उम्र, योग्यता, इत्यादिका भी उल्लेख करे।

[गुजरातीसे]
नवजीवन, १-२-१९२५

३०. तार : गोकलदास ठाकरको

१ फरवरी, १९२५

ठाकर गोकलदास
मोरवी

पहलेकी कोई और तारीख दे। जिससे जोशी और अमृतलालको रुकना न पडे।

मोहनदास

अग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

३१. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

दिल्ली

माघ सुदी ८ [रविवार १ फरवरी, १९२५][1]

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मीला है। मैं आपको अच्छा चरखा भेजनेकी कोशीष कर रहा हुं। चरखेके साथ साथ रामनाम खूब चल सकता है। दो ऐसे विद्वान सखस हैं जिन्होंने चरखेके साथ रामनाम जपा और दीवानपनमें से बचे। आखरमें तो जैसी जिनकी भावना वैसा तिनको होय।

आपका,

मोहनदास गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६१०३) से।

सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

३२. कुछ उचित प्रश्न

कुछ दिन हुए मैंने अस्पृश्यताके बारेमें बंगालसे प्राप्त एक विचारपूर्ण पत्र[2] छापा था। उसके लेखक आज भी उस विषयमें बड़ी लगनसे खोज कर रहे हैं। अब मद्रासमें भी एक सज्जनने वैसी ही जानकारी प्राप्त करनेके लिए कुछ प्रश्न पूछे हैं। इस जटिल प्रश्नका हल निकालनेके लिए कट्टर हिन्दू लोग भी प्रवृत्त हुए हैं। यह बड़ा शुभ चिह्न है। इसमें कोई शक नहीं कि प्रश्न पूछनेवालेकी सच्ची उत्कंठा है। प्रश्न वैसे ही हैं जैसे कि इस सिलसिलेमें आमतौरपर लोग पूछते हैं, इतनी बड़ी सूचीमें एक भी प्रश्न ऐसा नहीं है जो देशके मेरे विभिन्न दौरोंके समय मुझसे पूछा न गया हो। इन सज्जनके प्रश्नोंको हल करनेका प्रयत्न इसी आशासे करता हूँ कि मेरे जवाबसे पत्र लिखनेवाले सज्जनको, जो एक कार्यकर्त्ता और सच्चे शोधक होनेका दावा करते हैं, और दूसरे कार्यकर्त्ताओं और शोधकोंको रास्ता दिखाई देने लगे।

१. छुआछूतको दूर करनेके लिए क्या-क्या अमली उपाय करने चाहिए?

(क) अस्पृश्योंके लिए भी सार्वजनिक शालाएँ, मन्दिर, रास्ते, — जो अब्राह्मणोंके लिए खुले हैं और जो किसी खास जातिके लिए नहीं होते — खोल दिये जायें।

१. चरखेके उल्लेखसे लगता है कि यह पत्र १९२५ में ही लिखा गया होगा। देखिए "पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको", २८-२-१९२५। गांधीजी १ फरवरी, १९२५ को दिल्लीमें थे।

२. देखिए खण्ड २५, पृष्ठ ४२३-२४।

(ख) ऊँची जातिवाले हिन्दुओको चाहिए कि उनके बच्चोके लिए मदरसे खोले, जहाँ जरूरत हो वहाँ उनके लिए कुँआ खोदे और उन्हे सब प्रकार आवश्यक मदद पहुँचाये — जैसे उनकी नशेकी आदत छुडाने और उनमे सफाईके नियम पालन करनेका रिवाज डालना और उन्हे दवाई आदिकी मदद पहुँचाना।

२. जब छुआछूत बिलकुल दूर हो जायेगी तब अछूतोका धार्मिक दर्जा क्या होगा?

उनकी धार्मिक स्थिति वैसी ही मानी जायेगी जैसी कि उच्च हिन्दुओकी मानी जाती है। और इसलिए वे शूद्र कहे जायेंगे अतिशूद्र नही।

३. जब छुआछूत दूर कर दी जायेगी तब अछूतो और ऊँचे दर्जेके कट्टर ब्राह्मणोका क्या सम्बन्ध रहेगा?

जैसा कि उनका अब्राह्मण हिन्दुओके साथ है।

४. क्या आप अन्तर्जातीय सम्बन्धोका प्रतिपादन करते है?

मै सब जातियोको खतम करके सिर्फ चार ही वर्ण रखना चाहूँगा।

५. अछूत लोग मौजूदा देव-मन्दिरोमे हस्तक्षेप न करके अपने लिए नये मन्दिर क्यो न बना ले?

'ऊँची' कहलानेवाली जातियोने ऐसे साहसके लिए उनमे अधिक शक्ति ही नही रहने दी है। यह कहना कि वे हमारे मन्दिरोमे दखल देते है, इस सवालपर गलत तौरपर विचार करना है। हम कथित ऊँची जातिवालोको हिन्दुओके सर्वसाधारण मन्दिरोमे उन्हे आने देना चाहिए और इस तरह अपने इस कर्त्तव्यका पालन करना चाहिए।

६. क्या आप जातिगत प्रतिनिधित्वके पक्षपाती है, और क्या आपका यह भी मत है कि अछूतोंको तमाम शासन-तन्त्रमें प्रतिनिधि भेजनेका हक होना चाहिए?

नही, मै यह नही कहता। लेकिन यदि प्रभावशाली जातियोकी तरफसे जानबूझकर अस्पृश्योको अलग रखा जाये, तो इस तरह उन्हे अलग रखना अनुचित होगा और इससे स्वराज्यके रास्तेमे रुकावट पडेगी। अलग-अलग जातियोके प्रतिनिधित्वको मै स्वीकार नही करता। इसका मतलब यह नही है कि किसी एक जातिको प्रतिनिधित्व न मिले, लेकिन इससे तो उलटा प्रतिनिधित्व रखनेवाली जातियोपर यह भार डाला जाता है कि वे उन जातियोके प्रतिनिधित्वकी ठीक-ठीक रक्षा करे, जिनके प्रतिनिधि न हो या जिनके प्रतिनिधि अपर्याप्त हो।

७. क्या आप वर्णाश्रम-धर्मकी उपयोगिताको मानते है?

हाँ, लेकिन आज तो वर्णोका स्वाँग-भर बच गया है, आश्रमोका ठिकाना नही रहा और धर्म विपर्यय हो रहा है। सारी ही व्यवस्थाका पुनर्गठन होना चाहिए और धर्मके सम्बन्धमे हुई नई-नई खोजोके साथ उसका सामजस्य स्थापित किया जाना चाहिए।

८. क्या आप यह नही मानते कि भारत कर्म-भूमि है और इसमें जन्म लेनेवाले हर शख्सको अपने भले-बुरे पूर्वकर्मानुसार ही विद्या-बुद्धि, धन और प्रतिष्ठा प्राप्त है?

पत्र-लेखक जिस अर्थमे मानते है, उस अर्थमे नही। क्योकि यो तो जो बोओ सो काटो। किन्तु खास करके भारतवर्ष भोगभूमि न होकर कर्म-भूमि है, कर्त्तव्यभूमि है।

९ छुआछूतके दूर करनेकी बात करनेके पहले क्या अछूतोमें शिक्षा-प्रचार और सुधार होना एक लाजिमी शर्त नहीं है?

अस्पृश्यता दूर किये बिना अस्पृश्योमे सुधार या प्रचार नही हो सकता।

१० क्या यह बात स्वाभाविक नहीं है, होनी तो चाहिए कि शराब न पीनेवाले शराब पीनेवालेसे और शाकाहारी मासाहारीसे परहेज रखें?

यह आवश्यक नही है। शराब न पीनेवाला अपने शराब पीनेवाले भाईको उस बुरी आदतसे बचानेके लिए उसके पास जाकर अपना कर्त्तव्य करेगा। और इसी प्रकार शाकाहारी भी इसी उद्देश्यसे मासाहारी भाईके पास जायेगा।

११ क्या यह सच नहीं है कि एक शुद्ध आदमी (इस अर्थमें कि वह मद्यप नहीं है और शाकाहारी है) आसानीसे अशुद्ध हो जाता है (इस अर्थमें कि वह शराब पीने लगता है और मासाहार करने लगता है) जब वह उन लोगोसे मिलता-जुलता है जो शराब पीते हैं, पशुओको मारते हैं और मास खाते हैं?

बुराईको बुराई न माननेवाला व्यक्ति यदि मद्यपान करे या मास खाये तो वह अनिवार्यत अशुद्ध या अपवित्र नही होता लेकिन मै यह समझ सकता हूँ कि भ्रष्ट आदमीकी सगत करनेसे बुराईमे पड जाना सम्भव है। इस मामलेमे तो किसीको अस्पृश्योकी सगतके लिए बाध्य करनेकी कोई बात नही कही गई है।

१२ कुछ कट्टर ब्राह्मण जो दूसरी जातियोसे (जिनमें अछूत भी शामिल हैं) नहीं मिलते-जुलते और अपनी एक अलहदा जाति बनाकर अपनी आध्यात्मिक उन्नति करते रहते हैं, उसका कारण क्या उपरोक्त नहीं है?

वह आध्यात्मिक स्थिति जिसकी रक्षाके लिए चारो तरफसे अपनेको बन्द करके रखना पडे, बडी दुर्बल होती होगी। और इसके अलावा वे दिन भी गये जब मनुष्य सदा एकान्तमें रहकर अपने गुणोकी रक्षा करता था।

१३ छुआछूतको दूर करनेका प्रतिपादन करके क्या आप भारतके धर्म और वर्ण-व्यवस्था (वर्णाश्रम-धर्म)में दखल नहीं देते — फिर वह धर्म और व्यवस्था अच्छी चीज हो या बुरी?

एक सुधारकी हिमायत करना ही किसी चीज या सस्थामे दखल देना नही कहला सकता? दखल देना तो तभी कहा जाता जबकि मैं, जो लोग अस्पृश्यतापर कायम रहते हैं, उनपर जोरो-जुल्म करके अस्पृश्यता-निवारणके प्रश्नकी हिमायत करता।

१४ कट्टर ब्राह्मणोको इसका विश्वास कराये बिना ही उनके धर्ममें दखल देनेसे क्या आप उनके प्रति हिंसाके दोषी न होगे?

मै कट्टर ब्राह्मणोके प्रति हिंसाका दोषी नही हो सकता, क्योकि मै उनमे बिना विश्वास उत्पन्न किये उनके धर्ममे कोई दखल नही देता।

१५ ब्राह्मण लोग जो अछूतोके अलावा और दूसरी जातियोको भी स्पर्श नहीं करते, उनके साथ खाना नहीं खाते, शादी नहीं करते, अस्पृश्यता दोषके दोषी हैं या नही?

दूसरी जातिके लोगोको 'स्पर्श' करनेसे यदि वे इनकार करते है, तो वे अवश्य दोषी हैं।

१६. मनुष्यत्वके हकका अमल करनेके लिए अस्पृश्य लोग ब्राह्मणोंके खास मार्गोंपर आयें-जायें तो इससे क्या उनकी लालसा पूरी हो जायेगी?

मनुष्य सिर्फ रोटी खाकर ही नही जीता। बहुतसे लोग भोजन छोड सकते है, लेकिन आत्मसम्मानको नही छोड सकते।

१७. अस्पृश्य लोग इतने शिक्षित नहीं है कि वे अहिंसात्मक असहयोगके सिद्धान्तको पूरी तरह समझ सके। ब्राह्मण लोग राजनीतिकी बनिस्बत धर्मकी ज्यादा चिन्ता करते हैं, इसलिए क्या इस विषयमें सत्याग्रह करनेसे हिसा नही भड़क उठेगी?

यदि इसमे वाइकोमके प्रति इशारा हो तो अनुभवसे यह वात मालूम हो चुकी है कि 'अस्पृश्यो' ने आश्चर्यजनक आत्मसयम दिखाया है। सवालका वादवाला भाग यह सूचित करता है कि ब्राह्मण लोग, जिनका इससे सम्बन्ध है, सम्भव है हिंसा कर बैठे। यदि वे ऐसा करे, तो मुझे वडा अफसोस होगा। मेरी रायमे तो तव वे धर्मके प्रति सम्मान प्रकट करनेके वदले धर्मका अज्ञान और उसके प्रति नफरत ही जाहिर करेगे।

१८. क्या आपका कहना यह है कि जात-पॉत, धर्म और विश्वासके किसी प्रकारके भेदभावके बिना सबको समान हो जाना चाहिए?

जिस तरह जात-पॉत, वर्ण और धर्मका लिहाज रखे बिना हम लोगोमे भूख-प्यास इत्यादि सर्वसामान्य है उसी प्रकार मनुष्यत्वके प्राथमिक हकोके बारेमे कानूनकी नजरोमे तो सबको समान ही होना चाहिए।

१९. केवल महान् आत्माएँ ही, जिनके कर्म निःशेष हो चुके है, इस सर्वोच्च दार्शनिक सिद्धान्तको पहचान सकी है, और उसका पालन कर सकी है; मामूली गृहस्थ नहीं। मामूली गृहस्थ तो ऋषियोंके बताये गये मार्गका अनुसरण करते है और ऐसा करते-करते जन्म-मरणके फेरसे छुटकारा पा जाते है। ऐसी दशामें क्या इस सिद्धान्तका अनुसरण एक मामूली गृहस्थके लिए किसी भी प्रकार उपयोगी हो सकता है?

इस सीधे-सादे सत्यको माननेमे कि केवल जन्मके कारण कोई मनुष्य अछूत नही माना जा सकता, किसी भी उच्च दार्शनिक सिद्धान्तकी दरकार नही। यह इतनी सीधी वात है कि केवल कट्टर हिन्दुओको छोडकर सारी दुनिया उसकी कायल है। और मैंने इस कथनपर शका उठायी है कि हम जैसी अस्पृश्यताका पालन करते है, वैसी अस्पृश्यताका सिद्धान्त ऋषियोने वताया था।

[अग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-२-१९२५

३३. दूसरेकी जमीनपर

एक महाशय कहते है

> आप हर वार हमसे कहते है, मुसलमानोके सामने झुक जाओ। आप कहते है, उनके खिलाफ अदालतोमें भी कदापि न जाओ। आपने कभी इस वातपर भी पूरी तौरसे विचार किया है कि आप जो-कुछ कहते है उसका नतीजा क्या होगा? आपने मानव-स्वभावका भी कोई ख्याल रखा है? अच्छा, वताइए, जव हमारी जमीनपर कोई हमसे विना पूछे मस्जिद खडी करने लगे तो हम क्या करे? यदि वेईमान लोग हमपर रुपये लेनेका झूठा दावा करे और हमारी मिल्कियत जवरदस्ती हमसे छीनें, तो हम क्या करें? अपना जवाव देते समय आपको हम गरीवोका भी ध्यान रखना चाहिए। आप यह तो कभी नहीं कह सकते कि आप हमारी हालतको नहीं जानते। अगर फिर भी आप हमारा कुछ भी खयाल न रखते हुए अपना फतवा दें और फिर हम आपके सदुपदेशोकी अवहेलना करे तो आप हमें दोष न दें। मै यह कहना चाहता हूँ कि आप कई वार अन्धेर कर जाते है।

जो सज्जन मुझसे इस लहजेमे वातचीत करते है मुझे उनसे हमदर्दी है। मनुष्य-स्वभावकी कमजोरियोको तसलीम करनेके लिए मै तैयार हूँ और इसका सीधा-सा कारण यही है कि मै अपनी कमजोरियाँ भी जानता हूँ। लेकिन ठीक जिस तरह मै अपनी सीमाका कायल हूँ, इसी तरह "मुझे क्या करना चाहिए और मै क्या नही कर पाता हूँ," इसके भेदको भुलाकर मै अपने आपको धोखा भी नही देता। इसी तरह यदि मै इस भेदको भुलाकर दूसरोसे यह कहूँ कि आप जो-कुछ कहना चाहते है वह केवल ठीक ही नही शायद उचित भी है, तो यह उन्हे धोखा देना होगा—और मुझे ऐसा नही करना चाहिए। कितनी ही चीजे असम्भव होती है, पर फिर भी वही ठीक होती है। सुधारकका तो काम ही यह है कि वह असम्भवको अपने आचरणके द्वारा प्रत्यक्ष करके सम्भव वना दे। एडिसनके आविष्कारके पहले सैकडो मीलपर वैठे हुए वाते करनेको कौन सम्भव मानता? मारकोनी और एक कदम आगे वढा और उसने वेतारको सम्भव वना दिया। हम रोज ही इस चमत्कारको देख रहे है कि कल जो चीज असम्भव थी आज वही सम्भव हो गई है। जो वात भौतिक-शास्त्रमे चरितार्थ होती है वही मानस-शास्त्रपर भी घटित होती है।

अव व्यावहारिक सवालोको लीजिए। दूसरेकी जमीनमे विना इजाजतके मस्जिद खडी करनेका सवाल हलके लिहाजसे निहायत ही आसान सवाल है। अगर 'अ' का कब्जा अपनी जमीनपर है और कोई शख्स उसपर कोई इमारत वनाता है, चाहे वह मस्जिद ही हो, तो 'अ' को यह अख्तियार है कि वह उसे गिरा दे। मस्जिदकी शकलमे खडी की गई हरएक इमारत मस्जिद नही हो सकती। वह मस्जिद तभी कही

जायेगी जब उसके मस्जिद होनेका धर्म-सस्कार कर लिया जाये। बिना पूछे किसीकी जमीनपर इमारत खडी करना सरासर डाकेजनी है। डाकेजनी पवित्र नही हो सकती। अगर उस इमारतको जिसका नाम झूठ-मूठ मस्जिद रख दिया गया हो, उखाड डालनेकी इच्छा या ताकत 'अ' मे न हो, तो उसे यह हक बराबर है कि वह अदालतमे जाये और उसे अदालत द्वारा गिरवा दे। अदालतोमे जाना उन असहयोगियो-के लिए मना है जो उसके कायल हो चुके है, उन लोगोके लिए नही जो कायल नही है। फिर पूरा असहयोग तो हम अभी अमलमे लाये ही नही है। यदि किसी सिद्धान्तके अनुसार अमल करना केवल असुविधाजनक ही नही बल्कि हमारे असली उद्देश्यपर ही स्पष्टतया आघात करनेवाला बन जाय तो ऐसा हरएक सिद्धान्त दूषित कहलायेगा। जबतक मेरे कब्जेमे कोई मिल्कियत है तबतक मुझे उसकी हिफाजत जरूर करनी होगी — वह चाहे अदालतके बल द्वारा हो या अपने भुजबल द्वारा। असलमे बात एक ही है।

सारे राष्ट्रकी तरफसे किया गया असहयोग एक प्रणालीके खिलाफ है या था। उसके मूलमे यह बात गृहीत कर ली गई थी कि आम तौरपर हमारे अन्दर एक-दूसरेमे सहयोग रहेगा। पर जब हम आपसमे ही एक दूसरेसे असहयोग करने लगे है तब राष्ट्रकी तरफसे असहयोग करना एक धोखेकी टट्टी हो जाता है। व्यक्तिगत असहयोग तभी मुमकिन है जब हमारे पास एक टुकडा भी जमीन न हो, और यह बात सिर्फ सन्यासीके लिए ही मुमकिन है। इसीलिए धार्मिकताकी पराकाष्ठापर पहुँचनेके लिए हर तरहकी सम्पत्तिका त्याग आवश्यक माना जाता है। इस प्रकार अपने जीवन धर्मका निश्चय हो जानेपर अब हमे अपनी शक्ति-भर उसका पालन करना चाहिए, उससे अधिक नही। यह मध्यम-मार्ग है। यदि कोई डाकू 'अ'की मिल्कियत छीनने आये तो वह उसे तभी सब-कुछ देगा जब वह उसे अपना सगा भाई मानता हो। अगर ऐसा भाव उसके दिलमे पैदा न हो पाया हो, अगर वह उससे डरता हो और चाहता हो कि कोई आकर इसे मार-भगाये तो अच्छा है तो उसे चाहिए कि वह स्वय उसको पछाड देनेकी कोशिश करे और उसका नतीजा भोगनेके लिए तैयार रहे। अगर वह डाकूसे लडना तो चाहता हो पर ताकत न हो, तो उसे डाकूको अपना काम करने देना चाहिए और फिर अदालतमे जाकर अपनी मिल्कियतको पानेकी कोशिश करना चाहिए। दोनो हालतोमे उसके चले जाने और मिल जानेकी पूरी-पूरी सम्भावना है। अगर वह मेरी तरह विचारशील पुरुष हो, तो वह मेरी तरह इसी नतीजेपर पहुँचेगा कि यदि हम दरअसल सुखी रहना चाहे तो किसी किस्मकी मिल्कियत न रखे, या तभी तक रखे जबतक हमारे पडोसी उसे रखने दे। इस आखिरी स्थितिमे हम अपने शरीरबलके द्वारा नही बल्कि कष्ट-सहन द्वारा अपना अस्तित्व रख पाते है। इसीलिए हद दरजेतक नम्रता और ईश्वरपर भरोसा रखनेकी जरूरत है। इसीको कहते है आत्मबलपर निर्भर रहना। यही श्रेष्ठतम आत्माभिव्यक्ति है।

आइए, हम इस सिद्धान्तको अपने हृदयमे स्थान दे — यह समझ कर नही कि कागजपर लिख रखनेकी दृष्टिसे यह एक अच्छा बौद्धिक और चित्तार्पक मन्तव्य है, बल्कि यह समझकर कि यह हमारे जीवनका एक नियम है, जीवन-धर्म है और हमे

निरन्तर इसकी प्रतीति रखना है। और आइए, हम इस धर्मके अनुसार और इस आदर्शतक पहुँचनेके उद्देश्यसे अपनी शक्ति-भर इसका पालन करें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-२-१९२५

३४. शावाश

कारवारकी हलियाल ताल्लुका कांग्रेस कमेटीके मन्त्री लिखते हैं

> हमारी नगरपालिकामें कांग्रेसका बहुमत है। इसलिए हम उसकी मार्फत कांग्रेसके कार्यक्रमको कार्यान्वित करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। नगरपालिकाके स्कूलोंमें सूत कातना अनिवार्य कर दिया गया है। नगरपालिकाके कर्मचारियोंको खादीकी पोशाकें दी गई हैं। दलित वर्गोंके बच्चोंके लिए शिक्षा निःशुल्क और अनिवार्य कर दी गई है। उनके बच्चे अन्य वर्गोंके बच्चोंके साथ-साथ बैठते हैं। वे सार्वजनिक तालाबका उपयोग कर सकते हैं। हमारे यहाँ हिन्दू-मुस्लिम या ब्राह्मण-अब्राह्मणका कोई भेदभाव नहीं है। हम मद्य-निषेध आन्दोलन भी शुरू कर रहे हैं।

यह सारा काम बड़ा अच्छा और ठोस है। मैं हलियाल ताल्लुका कांग्रेस कमेटीको इस ठोस रचनात्मक कार्यके लिए बधाई देता हूँ और चाहता हूँ कि दूसरी नगरपालिकाएँ भी ऐसा ही करें।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-२-१९२५

३५. टिप्पणियाँ

एकताकी ओर

सर्वदलीय सम्मेलनके द्वारा सौंपे गये प्रश्नोंपर[1] विचार करनेके लिए समितिकी बैठक हुई। एकताके प्रश्नपर विचार करनेके लिए समितिने कोई ५० लोगोंकी एक उप-समिति नियुक्त की। उप-समितिने एक और छोटी समिति बनाई और उसके जिम्मे यह काम सौंपा गया कि वह स्वराज्यकी जितनी योजनाएँ हो सकती हैं उन सबपर विचार करे और अपने निर्णयोंको उक्त उप-समितिके सामने पेश करे। डा० बेसेंट इस छोटी समितिमें सदाकी तरह ऐसी तत्परता और स्फूर्तिके साथ काम कर रही हैं, जिसे देखकर युवकों और युवतियोंको शर्म आ जाये। परन्तु बातचीत ज्यादातर हिन्दू-मुस्लिम सवालपर ही हुई। और यही स्वाभाविक था। इसलिए

१ देखिए "भाषण सर्वदलीय सम्मेलन समितिकी बैठकमें", २४-१-१९२५ की पादटिप्पणी १।

नही कि वह मुझ-जैसे व्यक्तियोके नजदीक अपने-आपमें ज्यादा महत्त्वपूर्ण है, वल्कि इसलिए कि उसकी वहजसे स्वराज्यका रास्ता ही वन्द हो गया है। इस समितिमे औपचारिकताकी ओर इतना ध्यान दे दिया गया कि काम पूरा होना कठिन हो गया। जरूरत इस वातकी थी कि समितिके इस प्रकारके पचडेमे पडनेके वजाय विलकुल अनौपचारिक रूपसे वात हो और इस समितिका आकार घटा दिया जाये। ऐसा ही किया गया। हकीम साहबके मकानमे हर सम्प्रदायके कुछ सज्जन मिले। जो नतीजा निकला सो पण्डित मोतीलालजी नेहरूने सक्षेपमे प्रकाशित किया ही है। मैं भी मानता हूँ कि चिन्ता या निराशाका कोई कारण नही है, क्योकि सव लोग इस सवालको हल करनेके इच्छुक हैं। कुछ लोग आज ही इसका फैसला कर लेना चाहते हैं। कुछ कहते हैं अभी वक्त नही आया है। कुछ तो इसे हल करनेके लिए सब कुछ छोड देनेको तैयार हैं। कुछ होशियारीसे कदम रखना चाहते हैं और जवतक उन्हे उनकी कमसे-कम और अपरिहार्य वाते न मजूर हो जाये तवतक इन्तजार करना चाहते हैं। पर इस वातपर सभी लोग सहमत हैं कि इसका हल हो जाना स्वराज्यके लिए परम आवश्यक है। और स्वराज्य तो सभीको दरकार है, इसीलिए जो व्यक्ति इसका उपाय खोजनेमे लगे हैं यह वात उनके वशके वाहरकी नही होनी चाहिए। जिस दिन हम लोग २८ फरवरीको इकट्ठा होनेका निश्चय करके बिदा हुए, उस दिन इस एकताकी सम्भावना जितनी थी, उतनी पहले कभी नही थी। अब इस वीच सभी लोगोको समझौतेके नये सूत्रोकी खोज करनी है।

जातिगत प्रतिनिधित्वके विषयमे लोग मेरा मत जानना चाहेगे। मैं इसके बिलकुल खिलाफ हूँ। परन्तु मैं ऐसी किसी भी वातको मान लेनेके लिए तैयार हूँ जिससे शान्ति वने रहनेका भरोसा हो जाये और जो दोनो जातियोके लिए सम्मानपूर्ण हो। पर अगर दोनो जातियोकी ओरसे पेश की हुई तजवीजपर समझौता न हो तो मेरा सुझाया गया उपाय काम दे सकता है। पर अभी मुझे उसकी चर्चा करनेकी जरूरत नही है। मैं आशा करता हूँ कि दोनो जातियोके जिम्मेवार लोग चाहे खानगी तौरपर वाते करके अथवा सर्वसाधारणमे अपनी राये जाहिर करके एकताको साधनेकी दिशामे कोई वात उठा न रखेगे। मै यह भी आशा रखता हूँ कि अखबारवाले भी ऐसी कोई वात नही लिखेगे जिससे दल-विशेषको नाराजी हो, वे जहाँ ठीक समर्थन न कर पाये वहाँ समझदारीके साथ चुप रहे।

दक्षिण आफ्रिकाके हिन्दुस्तानी

दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोके शिष्टमण्डलको जो उत्तर वाइसरायने दिया है उसमे सहानुभूति तो है परन्तु उसमे उन्होने किसी वातका वादा नही किया है। उससे प्रकट होता है कि उन्होने सघ सरकारकी कठिनाइयोका जरूरतसे ज्यादा खयाल रखा है। एक सरकारका दूसरी सरकारकी कठिनाइयोका खयाल रखना ठीक ही है, परन्तु यह खयाल रखना सहज ही जरूरतसे ज्यादा हो जा सकता है। जव सघ सरकारके सामने ऐसा मौका था तव उसने कोई खयाल न किया। भारत सरकारके सामने ऐसे अनेक अवसर आये, पर एक दफाको छोडकर, हर वार वह सघ सरकारके सामने

झुक गई। सिर्फ लॉर्ड हार्डिंग[1] इसमे अपवाद रहे। उन्होने द० आफ्रिकाकी सरकारकी वात नही मानी और द० आफ्रिकावासी भारतीयोका पक्ष लिया। इसके कारण थे। भारतवासी एक सीधा सघर्ष शुरू कर चुके थे। तरीका नया था। उन्होंने प्रतिकार और कष्टसहनकी अपनी क्षमताको सिद्ध कर दिखाया था। तिसपर भी वे पूर्णतया और प्रत्यक्ष रूपसे अहिसात्मक बने रहे। पर इस समय द० आफ्रिकाके हिन्दुस्तानी नेता-विहीन है। सोरावजी,[2] काछलिया,[3] पी० के० नायडू और अब पारसी रुस्तमजीकी मृत्यु हो जानेके कारण उनकी समझमे नही आ रहा है कि क्या करना चाहिए और क्या किया जा सकता है। अहिसात्मक सघर्षके लिए तो काफी गुजाइश है, परन्तु इसके लिए खूब विचार करने और विचारके अनुसार डट कर कार्य करनेकी आवश्यकता है। लेकिन फिलहाल यह शायद ही मुमकिन हो। फिर भी मुझे एक-दो नवयुवकोसे, जो कि द० आफ्रिकामे रहते है, बडी-बडी आशाएँ है। इनमे से एक सोरावजी है। सोरावजी वहादुर पारसी रुस्तमजीके वहादुर वेटे हैं। युवक सोरावजी खुद सत्याग्रहके मँजे हुए सिपाही हैं। वे जेल जा चुके हैं। सरोजिनी देवीका[4] जो भारी स्वागत नेटालमे किया गया, उसका प्रवन्ध उन्होने ही किया था। द० आफ्रिकाके हमारे देशभाइयोको जान लेना चाहिए कि उन्हे अपनी मुक्तिकी कोशिश खुद ही करनी होगी। ईश्वर भी उन्हीकी मदद करता है जो खुद अपनी मदद करते हैं। अगर उन्होने अपनी उसी दृढता, जोश और त्यागका परिचय दिया, तो वे देखेगे कि भारतके लोग और भारत सरकार भी, उनकी मदद करेगे और उनकी तरफसे लडेगे।

वाइसरायके भापणमे एक अश ऐसा है जिसके वारेमे कुछ पूर्ति करनेकी आवश्यकता हे। वाइसरायने कहा है

> **आपके प्रार्थनापत्रमें यह कहा गया है कि नेटाल सरकारने १८९६में जब भारतवासी ससदके मताधिकारसे वचित रखे गये, तब उन्हे सजीदगीके साथ यह आश्वासन दिया था कि उनका नगरपालिका-मताधिकार सुरक्षित रहेगा। परन्तु आपने इस आश्वासनके स्वरूप या उसके ठीक-ठीक सूत्रका दिग्दर्शन नही किया। मेरी सरकार हकीकत जाननेके लिए पूछताछ कर रही है।**

शिष्ट-मण्डलने जो बात पेश की है, वह मोटे तौरपर ठीक है, पर यह आश्वासन १८९६ मे नही, शायद १८९४ मे दिया गया था। मै यह याददाश्तसे लिख रहा हूँ। तथ्य इस प्रकार है १८९४ मे नेटाल विधानसभामे मताधिकार छीन लेनेवाला पहला विधेयक पास हुआ था। जिन दिनो वह उस विधानसभामे पेश था हिन्दुस्तानियोकी तरफसे एक दरख्वास्त[5] दी गई थी जिसमे कहा गया था कि हिन्दुस्तानियोको भारतमे नगरपालिका-मताधिकार और अप्रत्यक्ष रूपसे राजनीतिक मताधिकार भी प्राप्त है। और उसमें यह अदेशा भी प्रकट किया गया था कि राजनीतिक मताधिकारका

१ भारतके वाइसराय, १९१०-१६।
२ सोरावजी शापुरजी अडाजानिया।
३ अहमद मुहम्मद काछलिया।
४ सरोजिनी नायडू।
५ देखिए खण्ड १, पृष्ठ १७९-१८१।

छीना जाना कही नगरपालिका-मताधिकारके छीने जानेकी भूमिका न हो। इस दरख्वास्तके जवाबमे नेटालके प्रधान मन्त्री स्वर्गीय सर जॉन रॉविन्सनने या महान्यायवादी स्व० श्री एस्कम्वने यह आश्वासन दिया था कि इससे आगे वढनेका हमारा कोई इरादा नही है और भविष्यमे नगरपालिका-मताधिकार हिन्दुस्तानियोसे नही छीना जायेगा। वह मताधिकारको छीन लेनेवाला विधेयक तो वडी सरकार द्वारा नामजूर कर दिया गया, पर उसकी जगह एक दूसरा विधेयक पास किया गया जो कि जातिगत भेदभावसे रहित था। पूर्वोक्त आश्वासन श्री एस्कम्व द्वारा वार-बार दुहराया गया था। विधेयकोका सभी काम उनके ही अधीन था और वे वस्तुत जवतक पदारूढ रहे नेटालकी राजनीतिके एकमात्र सूत्रधार वने रहे।

क्या स्वराज्यवादी काग्रेसी है?

मेरे सामने एक अजीव-सा खत पडा हुआ है, जिसमे लेखक लिखते है कि सिधमे स्वराज्यवादियो और काग्रेसियोको एक दूसरेसे जुदा माना जा रहा है और यह भी कि काग्रेसी स्वराज्यवादियोके काममे बाधा डाल रहे है। मैने तो यह आशा की थी कि वेलगॉव काग्रेस अधिवेशनके वाद, जिसने कि स्वराज्य दलको काग्रेसका एक अभिन्न अग मान लिया है और असहयोग कार्यक्रमको मुल्तवी कर दिया है, ऐसी वाते नामुमकिन हो जायेगी। हर स्वराज्यवादी जिसने काग्रेसके ध्येय-पत्रपर दस्तखत किये है और जो नये मताधिकारको मानता है उतना ही काग्रेसी है जितना कि वह व्यक्ति जो स्वराज्यवादी नही है और जो विधानसभा-प्रवेशको ठीक नही मानता। और यह वात भी याद रखनी चाहिए कि स्वराज्यवादी दलने अपना विधान वदल कर हरएक सदस्यके लिए नये मताधिकारको मानना लाजिमी कर दिया है। ऐसी अवस्थामे हम परस्पर एक दूसरेका विरोध न करे, केवल यह नही बल्कि जहॉ-जहॉ मुमकिन हो और जहॉ अन्तरात्माके विरुद्ध न वैठता हो वहॉ-वहॉ एक दूसरेको मदद भी पहुँचाये।

वाइकोमसे

वाइकोमके सत्याग्रह आश्रमसे प्राप्त पत्रका निम्न उद्धृत अश निश्चय ही सवको दिलचस्प लगेगा

> मुझे आशा है कि कताईकी प्रतियोगितावाला हमारा तार आपको मिल गया होगा। दो स्वयसेवकोंने ८ नम्वरका — एकने ५७८ गज, दूसरेने ५०८ गज सूत — काता था। हमारा बुनाईका काम अभी जैसा चाहिए वैसा नहीं हो रहा है, क्योंकि कुछ लडके जो बुनाईका काम जानते थे छुट्टीपर चले गये हैं। विनोवाजीकी[1] हिदायतके अनुसार हम लोगोंने अपनी सख्या घटाकर सिर्फ ५० कर ली है। लेकिन इससे वडी तकलीफ होती है क्योंकि आवहवा खराव है और इसलिए यहॉ रहनेवाले स्वयंसेवकोंमें से वहुतेरे ६ घटेतक लगातार सत्याग्रह करनेके लायक नहीं रह जाते। इसलिए हमें दस या पन्द्रह स्वयसेवक

१. विनोवा भावे।

और रखना जरूरी हो गया है। अत सब मिला कर हमें ६० स्वयसेवक स्थायी रूपसे रखने पड रहे हैं। मुझे आशा है आप इसकी आवश्यकता स्वीकार करेंगे।

२४ घटेमें ८ घटे सोनेमें, ६ घटे सत्याग्रहमें, २ घटे कातनेमें, एक घटा हिन्दीके लिए, २ घटे आश्रमके काममें (झाडना, बुहारना इत्यादि), २ घटे अपने नहाने-धोने, खाने-पीने इत्यादिमें, एक घटा वाचनालयमें और २ घटे दैनिक प्रार्थना तथा सभामें व्यतीत होते हैं। इन सभाओमें आमतौरपर व्याख्यानोके लिए अच्छे-अच्छे विषय रखे जाते हैं। भाषण या तो मै देता हूँ या विशिष्ट मेहमान लोग देते हैं। मेहमान आश्रममें प्राय आते रहते हैं।

नारायण गुरुके[1] आदेशानुसार हमारे कोषाध्यक्ष सत्याग्रह आन्दोलनके स्मारकके रूपमें एक शाला बनानेका प्रयत्न कर रहे हैं। हम सब आपके पधारने-की बाट उत्सुकतासे जोह रहे हैं। हममें से ज्यादातर लोगोको मानो धुन ही लगी हुई है कि आपको किस तरह जल्दीसे-जल्दी बुलाया जा सकता है। मै कामना करता हूँ कि ईश्वर आपको यहाँ जल्दी ही आने योग्य समय और स्वास्थ्य प्रदान करे।

वाइकोमके सत्याग्रही जिस जागरूकताके साथ आन्दोलनका सचालन कर रहे है उससे पूरा-पूरा यकीन हो जाता है कि वह सफल अवश्य होगा। इसमे समय अधिक लगनेका आभास हो सकता है, किन्तु मैंने अच्छी तरह जान लिया है कि जल्दीसे-जल्दी पहुँचनेका रास्ता यही है। एकमात्र सच्चा रास्ता भी यही है। छुआछूतके खिलाफ लडाई एक धार्मिक युद्ध है। इसका उद्देश्य मानव-प्रतिष्ठाको स्वीकार कराना है। यह युद्ध हिन्दूधर्ममे एक बडा सुधार लानेके लिए है। यह धर्मान्ध लोगोके मज-बूत किलेपर धावा है। विजय तो अवश्यभावी है, निष्ठावान हिन्दू नवयुवकोकी यह टोली जिस धैर्य और त्यागका परिचय दे रही है, वह व्यर्थ नही जायेगा। प्रतीक्षामे बीतनेवाली, अवधिमे उन्हे आत्मशुद्धिका लाभ होगा। यदि वे इसमे डटे रहे, तो उनकी गणना भावी भारतवर्षके निर्माताओमे होगी।

जो सत्याग्रही इस बातके लिए उत्सुक है कि मै वाइकोम पहुँचूँ, मै भी उन्हे यकीन दिलाना चाहता हूँ कि वहाँ पहुँचनेकी मेरी भी बडी इच्छा है। मै अवसरकी प्रतीक्षामे हूँ। जब इतनी जगहोसे निमन्त्रण मिल रहे हो, तब चुनाव करना मुश्किल हो जाता है। मेरा हृदय और मेरी शुभकामनाएँ उनके साथ हैं। कौन कह सकता है कि यह मेरी शारीरिक उपस्थितिसे कम है।

सावधान

गजाम जिला-काग्रेस कमेटीने एक व्यापारीका लिखा एक पोस्टकार्ड मेरे पास भेजा है। उसमे बाजारमे बेचनेके लिए २,००० गजकी आँटियोका भाव पूछा गया है। ऐसे खुले व्यापारपर एतराज करना मुमकिन नही। लेकिन उन लोगोको जो कातना नही चाहते और सूत खरीद कर अपना चन्दा देना चाहते है, बाजारसे सूत खरीदते समय सावधान रहना चाहिए। उन्हे अपना हिस्सा अपने परिवारोंमे कतवा

१ अछूतोंके एक आध्यात्मिक नेता।

लेना चाहिए। यदि यह मुमकिन न हो तो उन्हे एक विश्वासपात्र कातनेवाला रख लेना चाहिए और उससे सूत कतवा लेना चाहिए। अकोलाके जो कांग्रेसी कातना नही चाहते थे उन्होंने इस श्री मशरूवालाको[1], जो हाथ-कताईमे बड़ा विश्वास रखते है, जितना सूत चाहिए उतना देनेपर राजी करके मुश्किलको हल कर लिया है। इससे सूतकी तादाद और किस्म दोनोके सम्बन्धमे इतमीनान रहेगा। किसी भी प्रान्तको दूसरे प्रान्तसे हाथ-कता सूत नही मँगाना चाहिए।

सूतकी बरबादी

कुम्भकोणम्से एक सज्जन लिखते हैं

> आप जानते ही होंगे कि देशमें आजकल नेताओंका सत्कार सूतकी माला पहनाकर करनेका रिवाज पड़ गया है। हरएक राजनीतिक समारोहोंके अवसर-पर सूतकी मालाएँ पहनाई जाती हैं। पर कोई उनकी सम्भाल नहीं रखता; और इसलिए बहुतेरा हाथ-कता सूत यों ही बरबाद हो जाता है। नमूनेके तौरपर मैंने सूतका एक पार्सल आपकी सेवामें भेजा है। कुम्भकोणम्में हाल ही तमिलनाडकी जो खिलाफत परिषद् हुई थी, और जिसके सभापति मौ० शौकत अली थे, यह सूत वहींसे उठाया गया है। यदि मैं इस सूतको न सम्भालता तो यह ९६० गज सूत यों ही बरबाद हो जाता। मुझे यकीन है कि इस बार भी परिषदोंमें इससे कहीं ज्यादा सूत खराब गया होगा। इसलिए निवेदन है कि आप 'यंग इंडिया' द्वारा यह हिदायत दें कि जो मालाएँ बनाई जायें उनकी एक निश्चित तादाद — जैसे, २,००० गज — हो, जिससे कि ये २,००० गजकी मालाएँ बटोर ली जायें और उनका सदुपयोग पहननेवाले नेताकी सलाहके अनुसार किया जाये।

सूतकी बरबादीके बारेमे ऊपर जो कुछ लिखा गया है, उसे मै ठीक मानता हूँ। नेताओको सूतकी मालाएँ पहनानेका रिवाज अच्छा है, पर मालाएँ सुन्दर होनी चाहिए और उनमे सूत बहुत नही लगाया जाना चाहिए। यदि मशा नेताओको सूत भेट करनेका हो, माला पहनानेका नही, तो पत्रलेखकके सुझावका पालन अवश्य किया जाना चाहिए और एक ही आकारकी लच्छियाँ भेट की जानी चाहिए। क्योकि यदि सूतकी मालाएँ भेट करनेका रिवाज देशव्यापी हो जाये और उनकी सम्भाल न रखी जाये तो बहुतेरा अच्छा सूत नष्ट हो जाया करेगा, जो यदि बच रहे तो गरीबोके लिए सस्ती खादी बनानेमे काम आ सकता है।

खादीका आदी होना

बगालके एक अध्यापक लिखते है .

> मैं एक राष्ट्रीय पाठशालामें अध्यापक हूँ। बेलगाँवमें राष्ट्रीय पाठशालाओंके सम्बन्धमें जो प्रस्ताव पास हुआ है उसने राष्ट्रीय पाठशालाओंके अध्यापकों और

१. किशोरलाल घ० मशरूवाला।

विद्यार्थियोमें वडी खलवली मचा दी है। कुछ लोग अपने ही हितको दृष्टिमें रखकर उसका अर्थ तदनुसार लगानेकी कोशिश करते है। 'विद्यार्थी खादी पहननेके आदी हो'--इसका अर्थ कुछ लोग ऐसा लगाते है कि इसके द्वारा खादी पहनना अनिवार्य नहीं किया गया हे और इसलिए वे कहते है कि जो लोग विना खादी पहने पाठशालाओमें आते है, वे रोके न जायें। अध्यापकोको सिर्फ इतना ही करना चाहिए कि वे लडकोसे कहे कि खादी पहनें और धीरे-धीरे खादीकी आदत डाल लें। वे कहते है कि अगर हमें अनिश्चित समयतक लडके खादी पहने दिखाई न दें, तो भी हम अपनी सस्थाओको बेलगाँवके प्रस्तावकी मर्यादाका उल्लघन किये विना 'राष्ट्रीय' कह सकेगे। वे तो कहते हे कि यदि साठ फी-सदी लडके भी मिलके कपडे पहन कर आयें तो भी हम अपनी पाठशालाओको 'राष्ट्रीय' कहते रहेगे, बशर्ते कि पाठशालाओके शिक्षक खादी पहननेके औचित्य और उसके उपयोगी होनेके विषयमें उन्हे समझाते रहे और यह आशा करे कि वे धीरे-धीरे उसे पहनने लगेंगे, चाहे छ महीनेमें, चाहे एक सालमें, और चाहे इससे भी ज्यादा वक्तमें।

हमारी रायमें उस प्रस्तावका यह अर्थ नहीं हो सकता। उसका अर्थ तो यह है कि विद्यार्थी विना खादी पहने पाठशालाओमें आ ही नहीं सकते। हाँ, आपत्कालमें या लाचारीकी अवस्थामें विद्यार्थी कभी-कभी विना खादी पहने भी आ सकते है। हम समझते है कि इस प्रस्तावके द्वारा उन सबपर प्रतिबन्ध लग जाता हे जो लगातार नियमपूर्वक विना खादी पहने पाठशालाओमें आते है। अपने क्षेत्रोमें हम इसी तरीकेपर अपनी सस्थाओके चलानेकी कोशिश कर रहे है।

इसलिए मै आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझे, या जरूरत समझें तो 'यग इडिया'में, उस प्रस्तावका असली अर्थ स्पष्ट और असदिग्ध भाषामें लिखें जिससे कि इस प्रश्नपर आपके विचार सब लोगोको मालूम हो जायें।

मुझे 'आदी होने'के अर्थके सम्बन्धमे जरा भी सशय नही है। पत्र-प्रेषक महाशयने उसका जो अर्थ किया है उसका वही अर्थ हो सकता है। काग्रेसके प्रस्तावके अनुसार वह पाठशाला राष्ट्रीय नही कहला सकती जिसके विद्यार्थी आदतन खादी न पहनते हो। लेकिन शब्दोका अर्थ ढूँढनेके लिए तो सबसे अच्छा मार्ग हे कोश देखना। ऑक्सफर्ड डिक्शनरीमें 'हेबिच्युअल' (आदी होना) का अर्थ है 'रायज,' 'निरन्तर' 'क्रमबद्ध'।

क्या वे सरकारसे सम्बद्ध हो?

तब यह सवाल पैदा होता है कि क्या वे पाठशालाएँ जो इस शर्तको पूरा नही करती, सरकारी सस्थाओसे सम्बद्ध हो जाये? निश्चय ही, जिस पाठशालाने असहयोग किया है उसका यह रास्ता नही हो सकता। देशमे काग्रेस तथा सरकार दोनो ही से स्वतन्त्र रहकर चलनेवाली पाठशालाओके लिए काफी जगह है। ऐसी

पाठशालाएँ हो सकती है जिनके सचालकोका विश्वास सरकारके आश्रय, नियन्त्रण या हस्तक्षेपमे न हो और वे खादी या देशी भाषा या हिन्दुस्तानी पढानेकी भी कायल न हो। अगर ऐसी पाठशालाएँ सर्वसाधारणसे सहायता पाती हो या सचालक स्वय ही इतने धनी हो कि वे उनको चला सके तो वे जारी क्यो न रहे? काग्रेसने जो-कुछ किया है वह सिर्फ यही है कि उसने एक सीमा बॉंध दी है जिसके अन्दर ही वह शिक्षा-सस्थाओको सहायता दे सकती है। काग्रेसके लिए सिवा इसके दूसरी कौनसी बात स्वाभाविक हो सकती है कि वह अपनी सस्थाओपर वही शर्त लगाय जो उसकी रायमे देशका हित साधन करती हो।

तिलक महाराष्ट्र विश्वविद्यालय

श्री घारपुरे, रजिस्ट्रार, तिलक महाराष्ट्र विश्वविद्यालय, लिखते है

मेरे कई मित्रो और साथियोने मेरा ध्यान आपके अध्यक्षीय भाषणके २५वें पृष्ठपर छपे एक वाक्यकी ओर खींचा है जो उसकी अन्तिम दो पक्ति-योमें आता है। 'कई प्रान्तोमें अपने-अपने राष्ट्रीय विद्यालय और महाविद्यालय हैं। अकेले गुजरातमें ही एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय चल रहा है, जिसपर १,००,००० रुपया वार्षिक व्यय किया जाता है और उसके नियन्त्रणमें ३ महाविद्यालय और ७० विद्यालय है जिनमें ९,००० छात्र पढते हैं।'

इससे एक भ्रम उत्पन्न होता है। यदि आपका आशय यह हो कि किसी दूसरे प्रान्तमें ऐसा विश्वविद्यालय नहीं चल रहा है जिसपर १,००,००० रुपये वार्षिक व्यय होते हो, तो आपका कहना ठीक है। लेकिन लोग इसका अर्थ दूसरी तरहसे कर सकते हैं, अर्थात् वे इसका अर्थ यह लगा सकते है कि किसी भी दूसरे प्रान्तमें विश्वविद्यालय नहीं है। खर्चकी बात तो केवल एक विशेषतासूचक वाक्यांश समझी जाती है।

यदि आप अपने पत्र 'यग इंडिया' के पृष्ठोमें यथासम्भव शीघ्र इस भ्रमका निराकरण करनेकी कृपा करे, तो मुझे प्रसन्नता होगी।

तिलक महाराष्ट्र विश्वविद्यालयपर प्रतिवर्ष ६,००० रुपये खर्च किये जाते है, ३ महाविद्यालय और ३० विद्यालय उसके अन्तर्गत आते हैं, जिनमें २,००० छात्र हैं। वार्षिक व्यय केवल इसलिए कम है कि प्रत्येक महाविद्यालय और विद्यालय अपनी व्यवस्था स्वयं करता है और उसका कोई भार महा-विद्यालयपर नहीं पड़ता।

राष्ट्रीय चिकित्सा महाविद्यालयको अभी मान्यता नहीं मिली है; हाँ, इसका प्रयत्न किया जा रहा है। अभी तिलक महाविद्यालयमें ७५ छात्र पढते हैं जिनपर १५,००० रुपये प्रतिवर्ष व्यय आता है।

मै समझता था कि मुझे अग्रेजी काफी अच्छी आती है। श्री घारपुरेने जिस वाक्यकी ओर सकेत किया है वे उसको ठीक सन्दर्भका ध्यान रख कर पढे, तो उसका अर्थ केवल एक ही निकल सकता है और वह यह कि यदि दूसरे प्रान्तोकी बात छोड भी दें, तो अकेले गुजरातमे ही इतना रुपया खर्च किया जाता है और इतने छात्रोको

शिक्षा दी जाती है। किन्तु मै देखता हूँ कि ऐसे मित्रोने जो कमसे-कम मेरे वरावर अग्रेजी जानते है इस वाक्यका दूसरा अर्थ किया है। मेरे लिए सान्त्वनाकी वात केवल इतनी ही है कि वे और मै दोनो ही एक ऐसी भापामे लिखे वाक्यके अर्थका निर्णय कर रहे है जो हम दोनोके लिए विदेशी हे। इसलिए यह सोचकर मुझे वहुत ही कम सन्तोष मिलता है कि जैसे मै अपने अर्थमे भूल कर सकता हूँ वैसे उनके अर्थमे भी भूल होनी सम्भव है। किन्तु मै उनको यह आश्वासन दे सकता हूँ कि मैने गुजरातका उल्लेख केवल एक उदाहरणके रूपमे किया है और किसी दूसरे प्रान्तको छोडकर गुजरातका उल्लेख इसलिए किया कि मेरे पास गुजरातके सम्वन्धमे आँकडे थे। वाक्यमे मेरा जोर विश्वविद्यालयपर रहा हो ओर विद्यालयो और महाविद्यालयो पर न रहा हो, ऐसी वात नही हे। मुझे भापण लिखते समय भी यह मालूम था कि राष्ट्रीय विश्वविद्यालय गुजरातमे ही नही वल्कि अन्यत्र भी है। तिलक महाराष्ट्र विश्वविद्यालयके अतिरिक्त, अलीगढमे मुस्लिम राष्ट्रीय विश्वविद्यालय, लाहोरमे पजाव विश्वविद्यालय, पटनामे विहार विश्वविद्यालय और वनारसमे काशी विद्यापीठ हे। मुझे पजाव और विहार विश्वविद्यालयो और काशी विद्यापीठके खर्चका पता नही हे। लेकिन मै जानता हूँ कि मुस्लिम विश्वविद्यालयपर पिछले साल लगभग ७५,००० रुपये खर्च हुए थे।

स्वयसेवक

काग्रेस सप्ताहमे वेलगाँवमे स्वयसेवकोने जो काम किया था, उसके सम्वन्धमे मेरे विचार पूछे गये है। मैने समझा था कि मै अपने वेलगाँवके अनुभवोमे उसका उल्लेख कर ही चुका हूँ। फिर भी मै उनकी इच्छानुसार उस विषयमे अपनी राय व्यक्त करता हूँ। उनके कामपर अधिक विस्तृत रूपसे और अलगसे लिखूँगा। मेरी रायमे स्वयसेवकोने वेलगाँवमे जो कार्यदक्षता दिखाई, वह मेरी देखी हुई पिछली तीन काग्रेसोकी अपेक्षा कही अधिक थी। स्वयमेवक कठोर परिश्रमी, कार्यकुशल और मनसे काम करनेवाले थे। उनके सम्वन्धमे प्रतिनिधियोसे कोई शिकायत नही सुनी गई। मुझे उनका स्वास्थ्य भी अच्छा लगा। डाक्टर हार्डीकरने[1] मुझे उनका शिविर दिखानेकी कृपा की थी। वहाँ मुझे सारा वातावरण कामकाजी और काफी स्वच्छ और व्यवस्थित दिखाई दिया। काफी स्वच्छ और व्यवस्थित इसलिए कहता हूँ कि मेरी रायमे शिविर इस मामलेमे आदर्श होना चाहिए। कोई भी चीज इधर-उधर पडी हुई नही होनी चाहिए और हर चीज अपनी जगह ही नही, वल्कि वहाँ साफ-सुथरे ढगसे रखी होनी चाहिए। उदाहरणार्थ, एक स्वयसेवकका विस्तर जहाँ चाहिए वहाँ रखा हुआ तो हो सकता है, लेकिन वह ठीक तरह और सफाईसे लपेटकर रखनेके वजाय एक ढेरकी शक्लमे भी पडा हो सकता है। सफाईकी दृष्टिसे भी स्वयसेवक-शिविरमे कोई कमी नही होनी चाहिए। उसमे कही कागजकी एक चिन्दी या धूल पडी नही मिलनी चाहिए। मुझे मालूम हुआ हे कि डा० हार्डीकरने स्वयसेवकोकी

१ हिन्दुस्तानी सेवादलके सगठनकर्त्ता। वादमें यह दल काग्रेसका एक महत्त्वपूर्ण स्वयसेवक सगठन वन गया था।

सख्या जानबूझकर सीमित रखी थी। इसलिए उनके पास वहुत ज्यादा काम था। जबतक काग्रेसका अधिवेशन चला, तवतक उनको प्रतिदिन १६ घटेसे अधिक काम करना पडा। इस दौरानमे वे प्राय खडे ही रहते थे। मुझे स्वयसेविकाओके कामका उल्लेख करना भी नही भूलना चाहिए। उन्होने अत्यधिक सहायता दी और ध्यानपूर्वक काम किया। उनको भी पहले प्रशिक्षण दिया गया था। यद्यपि हम स्वयसेवकोकी सुयोग्य सहायताके विना काग्रेसके अधिवेशनकी व्यवस्था नही कर सकते, फिर भी मै कहना चाहता हूँ कि वह काम तो स्वयसेवकके प्रशिक्षणका वहुत ही छोटा अश है। स्वराज्यकी प्राप्तिमे स्वयसेवकोको हमारे लिए सवसे वडे भरोसेकी चीज होना चाहिए। इस कामको वे तभी पूरा कर सकते है जव उनका चरित्र निष्कलक हो और कवायद एव सफाई करने और घायलोको प्राथमिक सहायता देनेका आवश्यक प्रशिक्षण प्राप्त कर चुकनेके अलावा वे स्वराज्यके लिए राष्ट्रका सगठन करना भी जानते हो। इसलिए इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए प्रत्येक स्वयसेवकको रुई धुनने और सूत कातनेमे दक्षता प्राप्त करनी चाहिए और अपने हिस्सेका सूत कातनेके अतिरिक्त, जो मताधिकारके लिए आवश्यक है, उनमे अपने-अपने जिलेमे रुई धुनने और सूत कातनेके कामका सगठन करनेकी क्षमता होनी चाहिए। हमे याद रखना चाहिए कि हाथसे सूत कातना सन् १९२१ से ही स्वयसेवकोके प्रशिक्षणका एक अग है।

सच हो तो फिर क्या पूछना

एक सज्जन अपने पत्रमे मुसलमानोकी इस शिकायतकी कि मुसलमानोमे शिक्षाकी बुरी हालत है, सख्त आलोचना करते हुए लिखते है कि इस मामलेमे आपको धोखा दिया जा रहा है। मेरी जानकारीके लिए उन्होने कुछ वडे मार्केके आँकडे भी एकत्र करके भेजे है जिनसे दोनो सम्प्रदायोकी साक्षरताके अनुपातका पता चलता है। उन्हे मै नीचे उद्धृत करता हूँ .

पुरुष

प्रान्त	मुसलमान फी हजार	हिन्दू फी हजार
वर्मा	३०२	२८८
म० प्रां० और वरार	२२५	८९
मद्रास	२०१	१७०
संयुक्त प्रान्त	७३	७१
वड़ौदा	३०९	२३४
म० प्रां०	१६९	५९
मैसूर	२३८	१३३
सिक्किम	८३३	९१
ग्वालियर	१४२	६०
हैदरावाद	१४०	४७
राजपूताना	६६	५७

विभिन्न प्रान्तोंके धर्मानुयायियोंकी अनुपातिक सख्या दी गई है। यह आँकडे १९२१ की जनगणनापर आधारित हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-२-१९२५

३६. तार: सुरेन्द्रनाथ बिश्वासको

५ फरवरी, १९२५

सुरेन्द्रनाथ विश्वास[1]
१६ ए० गोविन्द घोषाल लेन
कलकत्ता

आगामी मासके आरम्भसे पहले तारीख निश्चित करना असम्भव। मेरा सुझाव आप मुझे ध्यानमें न रखकर तारीख[2] निश्चित करें।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

३७. भाषण: रावलपिंडीमें[3]

५ फरवरी, १९२५

मैं पिछले दिसम्बरमें यहाँ था। उस समय मेरी आपकी कुछ बातें हुई थीं।[4] तब मैंने कहा था कि यदि आप सब लोग कोहाट नहीं चले गये तो मैं यहाँ दुबारा आऊँगा और आपसे बात करूँगा। और यदि तबतक कोहाटसे कुछ मुसलमान भाई आ जायेंगे तो मैं कुछ पूछताछ भी करूँगा।

कोहाटसे कुछ मुसलमान भाई आये हैं। मैं उनसे बातचीत भी कर रहा हूँ। मैं आपको उसके परिणामस्वरूप [फिलहाल] ऐसी सलाह कदापि नहीं दे सकता कि आप कोहाट वापस जायें। मैं ऐसी आशा करता था कि उनसे बातचीत करनेका कोई अच्छा परिणाम निकलेगा। मैं निराश तो नहीं हुआ हूँ, किन्तु आज तो कोई

१. बंगाल प्रान्तीय सम्मेलनकी स्वागत समितिके अध्यक्ष।

२. अनुमानत बंगाल प्रान्तीय सम्मेलनके अधिवेशनकी तारीख, देखिए खण्ड २५, पृष्ठ ६२१।

३. यह भाषण सितम्बर १९२४ के दंगोंके कारण कोहाटसे आये हुए हिन्दुओंके सम्मुख दिया गया था।

४. देखिए खण्ड २५, पृष्ठ ४४२-४४४।

ऐसी बात नही है कि मै आपको कोहाट वापस जानेकी सलाह दे सकूँ, बल्कि मेरी इच्छा इससे उलटी सलाह देनेकी ही होती है। सम्भव है कि इन मुसलमान भाइयोसे मेरी जो बातचीत चल रही है वह सफल न हो। फिर कोहाटमे जिन मुसलमानोका प्रभाव है, वे यहाँ नही आये है। उन्होने तो तार भेजा है और उसमे कहा है कि यहाँ समझौता हो गया है, हिन्दू कोहाट वापस आ रहे हैं। फिर आप हमे क्यो बुलाते है और इस तरह लोगोके दिलोमे घबराहट पैदा क्यो करते है? इसका मतलब यह है कि मुझे और शौकत अलीको इस मामलेमे दखल न देना चाहिए, किन्तु जो मुसलमान यहाँ आये है उनसे बातचीतके दौरान जब मैंने यह पूछा कि क्या वे हिन्दुओको कोहाट ले जानेकी जिम्मेदारी लेते है तब उनमे से एक साहबने साफ कहा, "यदि हिन्दू फिर वापस कोहाट जाना चाहते हो तो जाये, किन्तु हम कोई जिम्मेदारी नही ले सकते। हम तो उनको बुलावा भी नही दे सकते, क्योकि वहाँ आज जो हिन्दू है उनसे ही घृणा की जाती है।" इसलिए मै आपको कोहाट वापस जानेकी सलाह नही दे सकता।

एक दूसरी बात भी है। यदि आप वहाँ सरकारकी शक्तिसे जाना चाहते हो और आपने सरकारसे जो बातचीत की है उससे आपमे कुछ विश्वास उत्पन्न होता हो तो यह आपकी मर्जीकी बात है। किन्तु मैं तो अब भी निश्चित रूपसे यही मानता हूँ कि हम इस सरकारसे मिलकर काम करनेसे या इसकी मार्फत काम करानेसे कोई फायदा नही उठा सकेगे। मै इसीलिए यह सलाह नही देता कि आप सरकारके संरक्षणमे कोहाट जाये। आप जहाँ भी रहे वहाँ अपनी शक्तिके आधारपर रहे।

यदि कोहाट जानेके सम्बन्धमे किसीके साथ बातचीत करनेकी जरूरत है तो वह है मुसलमानोके साथ करनेकी। एक तो उनकी सख्या बहुत है। यदि उनकी सख्या बराबरकी भी होती तो भी चूंकि आप उनके डरसे भाग कर यहाँ आये है, इसलिए आपका उनसे बातचीत किये बिना वापस जाना ठीक नही है। यदि कोई मनुष्य पैसेकी खातिर या अपनी जानकी खातिर अपनी इज्जत आबरू खोकर वहाँ जाये तो अलग बात है, मेरे विचारसे इस तरह जीना, जीना नही है, वह तो मरनेके बराबर है।

कल मैंने एक अत्यन्त खेदजनक बात सुनी और वह यह है कि आपमे से बहुतोने अपनी जान बचानेके लिए पहले इस्लाम स्वीकार कर लिया और तब आप यहाँ आये। मेरी दृष्टिसे तो ऐसे लोग वास्तवमे मुसलमान नही हुए है, अपनी जान बचानेके लिए डरके मारे मुसलमान हुए है। यदि ऐसी बात न होती तो वे यह क्यो कहते कि "हमारी चोटी काटो और हमे कलमा पढवाओ।" यदि हम ऐसा करे तो गायत्रीका कोई अर्थ ही न रहे और हिन्दू धर्म भी निकम्मा माना जाये। यही बात आर्यसमाजियो और सिखोपर भी लागू होगी। मेरे कहनेका अर्थ यह है कि चाहे हमारा अस्तित्व मिट जाये, किन्तु हमे अपना धर्म परिवर्तन नही करना चाहिए। हमारा सच्चा धन रुपया-पैसा नही है, जर और जमीन नही है। ये तो ऐसी चीजे है जो लूटी जा सकती है। किन्तु हमारा सच्चा धन हमारा धर्म है। जब हम इसे गँवा देगे तब कहना चाहिए कि हमने अपन घर खुद ही लूट लिये है। जबसे

मैंने यह वात सुनी है तवसे मैं यह अनुभव करने लगा हूँ कि आपको वहाँ जानेमे और रहनेमे कोई फायदा नही है। धन और जानके लालचमे पड़कर आप बहुत-कुछ खो रहे हैं।

मुसलमान कभी किसी स्त्रीको भगा ले जाते है और उसको मुसलमान वना लेते है। मेरी समझमे नही आता कि इस तरह वह हिन्दू स्त्री मुसलमान कैसे हो गई। वह 'कुरान' नही जानती, कलमा नही पढ सकती। दु खकी वात है कि वह अपने धर्मके विषयमे भी बहुत कम जानती है। ऐसी स्त्री मुसलमान वन सकती है, यह वात मेरी समझमे ही नही आती। कोई मेरी स्त्रीको भगा ले जाये और वह कलमा पढ ले तो मेरा इस ससारमे जीना ही अशक्य हो जाये। तव या तो मैं आपसे आकर यह कहूँगा कि आप [उसकी रक्षा करनेमे] मेरी सहायता करे या आपसे प्रार्थना करूँगा कि आप उसे फिर हिन्दू धर्ममे ले ले। यदि मैं ऐसा न करूँ तो मैं कापुरुष कहलाऊँगा। मैं उसका पति होनेका दावा नही कर सकता। यदि आप इन्सान हो और इन्सान रहना चाहते हो तो आप प्रतिज्ञा करे कि जवतक यह स्थिति नही वदलेगी तबतक आप कोहाट वापस नही जायेगे।

मुझे यह कहा गया है कि यदि कोहाटी हिन्दू वापस कोहाट नही जायेगे, तो यह भी सम्भव है कि सरहदी सूबेसे दूसरे हिन्दू भी भाग आये। मुझे लगता है कि यदि ऐसा हो तो यह ठीक ही होगा। मैं तो कहता हूँ कि आप वहाँ अपनी शक्तिसे रहे अथवा मुसलमानोसे मित्रता करके रहे, मैं यह नही चाहता कि हिन्दू वहाँ कायर वनकर जिन्दगी बिताये। मैं चाहता हूँ कि हिन्दू और मुसलमान दोनो बहादुर वने। मैं चाहता हूँ कि दोनोकी शक्ति साथ-साथ बढे। मैं यह नही सह सकता कि हिन्दुओकी शक्ति मुसलमानोका नाश करके बढे अथवा मुसलमानोकी शक्ति हिन्दुओका नाश करके बढे। हिन्दू धर्ममे दूसरेके धर्मका नाश करनेकी शिक्षा नही दी गई है।

कल यह तर्क दिया गया था कि हिन्दू स्त्री मुसलमान बनाई जा सकती है, किन्तु यह वात मेरे गले तो नही उतरी। मैं इस बातको मुसलमान भाइयोसे अधिक अच्छी तरह समझना चाहता हूँ। क्या इस्लाममे यह शिक्षा दी गई है कि कोई भी मुसलमान मेरी स्त्रीको भगा ले जा सकता है? मेरी स्त्री यह भी नही जानती कि इस्लाम या ईसाई धर्म क्या है। वह हिन्दू घरमे जन्मी है, रामनाम लेती है, 'रामायण' और 'भागवत' पढ लेती है। उसने मुसलमान बननेकी वात कभी सोचीतक नही है। वह अपने धर्मपर दृढ रहती है और वह भी पूरी श्रद्धासे। यदि ऐसी स्त्रीके सम्बन्धमे यह कहा जाये कि उसने इस्लाम स्वीकार कर लिया है तो इसका क्या अर्थ मानना चाहिए? उसने सोच-समझकर इस्लाम स्वीकार नही किया है, इसलिए वह अपने-आपको मुसलमान माननेके लिए तैयार नही है। मैं मुसलमान भाइयोसे वात करना चाहता हूँ कि क्या उनके धर्ममे किसीकी स्त्रीको भगानेकी और मुसलमान वनानेकी शिक्षा दी गई है? मेरे लिए यह असह्य है कि सरहदी सूबेमें रहनेवाली किसी हिन्दू स्त्रीसे जोर-जवरदस्ती की जाये। यदि यह कहा जाये कि उसने इस्लाम स्वीकार कर लिया हे तो मैं यह वात माननेके लिए तैयार नही हूँ। इसलिए

मै आपसे कहना चाहता हूँ कि यदि आप अपने धर्मको प्यारा मानते हो तो आप वापस कोहाट न जाये। जवतक वहाँके मुसलमान यह न कहे कि आप इज्जतके साथ आये, तवतक आप वहाँ न जाये। आप वहाँ जाकर रुपया कमा ले, किन्तु अपना धर्म खोकर रहे तो मेरी दृष्टिमे आपका कमाया हुआ रुपया मिट्टी ही है।

आप अवतक भूखो नही मर गये है। मैंने दिसम्वरमे आपसे यह भी कहा था कि जिनके हाथ-पैर चल सकते है वे भीख अर्थात् दूसरोसे माँगे हुए अन्नपर जीवित रहे, मै यह वात वर्दाश्त नही कर सकता। यदि मै आपको इस प्रकार जीवित रहनेकी सलाह दूँ तो मै गुनहगार वनूँगा। मै आज भी इसी वातपर दृढ हूँ। मैंने इसीलिए कोहाटके शरणार्थियोके लिए एक पैसा भी नही माँगा है। मै तभी धन सग्रह करूँगा जव मुझे यह मालूम हो जाये कि पैसा किसलिए चाहिए। मैंने देनेवालोकी कोई सूची नही वनाई है। फिर भी यह सच हे कि यदि कोई कुछ रुपया देता है तो मै उसे यहाँ भेज देता हूँ। किन्तु यदि आप लोग मेरी सलाहके अनुसार चले और जिनके हाथ-पैर है वे उनसे कमाकर खाये तो मै आपको पूरी सहायता देनेका वचन देता हूँ।

मै आपको सावरमती भी ले जानेके लिए तैयार हूँ। मै वहाँ आपके रहने और खाने-पीनेकी पूरी व्यवस्था कर दूँगा। मै पहले आपको खिलाऊँगा तव स्वय खाऊँगा। किन्तु मै आपसे नित्य आठ घटे काम लूँगा। यदि आप श्रम करना चाहते हो तो मै आपकी सहायता हर तरह करनेके लिए तैयार हूँ। यदि आपमे से कुछ लोग यह कहे कि "हम तो वकील है, अत हमे तो वकीलका धन्धा ही दो" तो मुझसे यह व्यवस्था नही हो सकेगी। दो पक्षोमे लडाई करवाके मै आपको मुकदमे नही दिला सकता। इसी प्रकार यदि व्यापारी दस-बीस लाख या दस-बीस हजार रुपये माँगे तो मै नही दे सकूँगा। मै इतना जरूर कर सकता हूँ कि आपको कोई-न-कोई काम दे दूँ। मै इसी दृष्टिसे हिन्दुस्तानके लोगोसे कह रहा हूँ कि प्रत्येक मनुष्य आधा घटा चरखा चलाये। चरखा श्रमका प्रतीक है। जो चरखा चलाता हे वह दूसरा श्रम भी कर लेगा। मेरे पास जमीनका कोई काम नही है, किन्तु धुनने, कातने और वुननेका काम पर्याप्त हे। इन कामोसे लाखो लोगोको रोजी मिल सकती है। मैंने अखवारोमे पढा है कि मैसूरके महाराजाने भी चरखा चलाना शुरू किया है। आपमे से जो लोग कारीगर हो और जिन्हे अपना काम शुरू करनेके लिए आवश्यक साधनोकी जरूरत हो, जैसे सुनारीके ओजारोकी, तो उनको जुटाना मेरा कर्त्तव्य हे। जिसका जो धन्धा हो, उसको चलवानेकी व्यवस्था करना भी मेरा कर्त्तव्य हे। मै इसके लिए भीख माँगनेके लिए तैयार हूँ। इसलिए मै आपसे फिर कहता हूँ कि आप इस प्रकारकी सूचियाँ वनाये जिनसे यह मालूम हो कि कितने आदमी किस-किस कामको कर सकते है और प्रत्येकके परिवारमे कितने लोग इस प्रकार काम कर सकते है और क्या काम कर सकते है। वीमार या कमजोर आदमी भी कोई-न-कोई काम कर सकता है। मै अपनी विधवा वहनसे भी काम लेता हूँ और उसके वाद ही उसका भोजन उसे देता हूँ। वह कहती है कि "हम तो दीवानके वेटे-वेटियाँ है।" किन्तु मै तो यह मानता नही। हम तो हिन्दुस्तानके मजदूर है, इसलिए मै

इससे भिन्न आचरण नही कर सकता। एक ही मार्ग है — मै जिसे खानेके लिए दूँ, उससे काम लूँ। मै अपनी वहन और पत्नीसे भी ठीक निवट लेता हूँ, इसलिए विधवा वहनोसे भी निवट लूँगा।

कुछ वाते सुनकर मुझे वहुत शर्म मालूम हुई। मैने सुना है कि कुछ कोहाटी हिन्दू जुआ खेलते है, कुछ एक वार रोटियाँ लेकर दुवारा फिर रोटियाँ माँगते है और नही मिलती तो झगडा करते है, यदि अपने पास रजाई होती है तो भी दूसरी माँगते है और उसे वेच देते है। इससे मुझे वहुत दु ख होता है। जो-कुछ कोहाटमे हुआ, मै उसे वर्दाश्त कर सकता हूँ, किन्तु यदि ये सव वाते सच हो तो ये मुझसे वर्दाश्त नही हो सकती। यदि आप ऐसे ही रहना चाहते हो तव तो आप कोहाट लौट जा सकते है और अपना धर्म डुवा सकते है। मेरे विचारसे धर्मका अर्थ यह नही है। कोई गायत्री पढने-मात्रसे हिन्दू नही हो सकता है। मेरी दृष्टिमे केवल वही हिन्दू है जिसके हृदयमे गायत्री सतत अकित रहती है। कोई 'ग्रन्थसाहव' का पाठ कर लेनेसे सिख नही हो जाता। सिख वही है जो 'ग्रन्थसाहव'को सच्चे भावसे हृदयमे धारण करता है। वेद-मन्त्रोका भलीभाँति गान करनेसे ही कोई आर्यसमाजी नही हो जाता। किन्तु जो उन मन्त्रोको जीवनमे उतारता है, वही सच्चा आर्यसमाजी वनता है। मै मुसलमानोसे भी कहता हूँ कि क्या मै कलमा पढ लेनेसे मुसलमान हो सकता हूँ? इसलिए जवसे मैने आपके विषयमे यह वात सुनी है तवसे मै वहुत क्षुब्ध हूँ।

यह कलियुग है और ऐसे ही कारणोसे हमारा अध पतन हुआ है। आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप इस प्रकारका आचरण करके मुझे न लजाये। यदि आपको ऐसा ही करना हो तो आप मुझे तो अलग ही रहने दे, क्योकि तव मै आपकी सेवाके योग्य नही रहता।

इन स्थितियोमे आप कोहाट न जाये, इस सम्वन्वमे मालवीयजी महाराज मुझसे सहमत है। मैने उनको यहाँ आनेका कष्ट नही दिया है, क्योकि केन्द्रीय विधानसभामे वगाल अध्यादेशके सम्वन्वमे निर्णय किया जा रहा है और वे इस सम्वन्धमे वहाँ व्यस्त है। वे आनेके लिए तैयार थे, किन्तु मैने उनसे कहा कि मै उनको इस वार कष्ट नही देना चाहता। लालाजी भी आज यहाँ आ गये है। उन्होने लाहौरसे फोन किया था। मैने उनको यहाँ वुला लिया है, किन्तु वे दुर्भाग्यसे वीमार है और आज यहाँ नही आ सके है। मैने उनको यहाँ रावलपिंडी आनेका कष्ट इसलिए दिया कि यदि हम दोनो एकमत न हो तो आप लोग भ्रमित होगे। हम तीनोकी राय एक ही है। इस्लामके सम्वन्वमे मैने आपसे जो-कुछ कहा है वह उनको नही मालूम है। किन्तु जो-कुछ कोहाटमे हुआ है उसके सम्वन्वमे उनकी राय यही वनी है कि वर्तमान स्थितिमे आपके लिए कोहाट जाना अधर्म है। मैने स्वय इतना ही और कहा है कि जवतक मुसलमानोसे कोई समझौता नही होता तवतक आपका वहाँ जाना अधर्म है।

मै यह भी नही चाहता कि आपको इस समय जिस प्रकार मुफ्त खाना दिया जाता है, वह जारी रखा जाये। 'गीता' कहती है कि जो मनुष्य यज्ञ नही करता

फिर भी खाता है, वह चोरी करता है। यज्ञके अर्थ कई होते हैं, किन्तु उसका एक अर्थ शरीर-श्रम भी होता है। मैं आप लोगोंसे बात करनेके लिए आया हूँ। आप मुझसे कोई दूसरी बात पूछना चाहते हों तो पूछ सकते हैं। मैं तो यही चाहता हूँ कि जो लोग यहाँ काम कर रहे हैं आप उनसे यहाँ खाना खानेवाले लोगोंके नाम दर्ज कर लेनेको कह दें और यह भी कह दें कि हम लोग यहाँसे जो-कुछ लेंगे उसका दाम श्रम करके चुकायेंगे। आप सब लोगोंको काम ढूँढ लेना चाहिए। यदि आप मेरे साथ साबरमती चलें तो मैं आपको वहाँ काम देनेके लिए तैयार हूँ। मेरे मनमें तो यह आता है कि मैं आपके साथ रहकर मेहनत-मजदूरी करूँ। किन्तु आज तो मेरे सम्मुख दूसरा काम पड़ा है। इसलिए मैं आपके साथ नहीं रह सकता। आप सब इकट्ठे बैठकर सलाह कर लें और यदि आपको मेरी बात स्वीकार हो तो आप एक घर किरायेपर ले लें, उसमें चर्खे लगाकर उनपर काम करें। मैं आप लोगोंको उसके लिए पैसा दिलानेके लिए तैयार हूँ। मुझे ऐसे कामके लिए पैसा माँगनेमें तनिक भी लज्जा नहीं आती।

मैं आपसे प्रार्थना करना चाहता था वह कर चुका हूँ। अन्तमें आप जो-कुछ पूछना चाहें मैं उसका उत्तर देनेके लिए तैयार हूँ। मैंने आपके सम्बन्धमें जो बात सुनी है वह यदि झूठी हो तो आप मुझे यह भी बतायें। आपको जिन्होंने आश्रय दिया है उनके प्रति भी आपका कर्त्तव्य यही है कि आप कोई-न-कोई काम अपने हाथमें उठा लें।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

३८. कोहाटके दगोंके बारेमें कमाल जिलानीसे जिरह[1]

[साबरमती]

६ फरवरी, १९२५

प्रश्न क्या आप कोहाटके नजदीक रहते हैं?

उत्तर बिलकुल नजदीक रहता हूँ।

प्रश्न क्या आप जमींदार हैं?

उत्तर मैं जमींदार हूँ। मेरे   मे बहुतसे गाँव हैं। इनके अलावा हमारे पूर्वजोंको वहाँ करीब-करीब सभी गाँवोंमें जमीनें दी गई थीं।

[1] कमाल [illegible]

प्रश्न: क्या हिन्दुओसे आपके ताल्लुकात अच्छे है?

उत्तर: मै भरोसेके साथ कह सकता हूँ कि हिन्दुओके साथ मेरे ताल्लुकात बहुत अच्छे है।

प्रश्न. क्या आप कभी कोहाटमे रहते है?

उत्तर: मै वहाँ रोज जाता-आता हूँ, क्योकि वहाँसे मेरे रहनेका स्थान सिर्फ ५०० गज दूर है।

प्रश्न. आपके खयालमे हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच फसादका कारण क्या है?

उत्तर: मेरे खयालमें इसके कई कारण है जो पहलेसे मौजूद थे। पुस्तिकाका[1] छापना उसका अन्तिम कारण था। इससे फसाद शुरू जरूर हुआ, लेकिन दोनो फिरको-के दिलोंमें जहर पहले ही पैदा किया जा चुका था।

प्रश्न: क्या आप सक्षेपमे इस मुद्देको स्पष्ट करेगे?

उत्तर: पिछले कुछ बरसोसे हिन्दू ऐसे लोगोंको जो मुसलमान बन गये थे, अदालतोमें मुकदमे चलाकर तंग कर रहे थे और इस प्रकार अपनी नाराजगी जाहिर कर रहे थे।

प्रश्न. कबसे?

उत्तर: उनका यह रवैया चार या पाँच साल पहले शुरू हुआ था और हाल ही की कुछ घटनाएँ ये है: (१) कोहाटमें एक फोटोग्राफरकी औरत, तालमें एक हिन्दू औरत . . . तथा भागोमें एक हिन्दू, मुसलमान बनाये गये थे (२) इसके बाद एक हिन्दू मुसलमान या शेख बना और उसने एक मुसलमान औरतसे शादी की। वह फिर हिन्दू बन गया और उसपर औरतके बारेमें मुकदमा दायर किया गया। (३) मुसलमानोने एक मुसलमान लड़कीके बारेमें मुकदमा दायर किया; किन्तु वे अपराधीको वाँछित सजा दिलानेमें असफल हुए। इसके बाद (एक दूसरेके खिलाफ) मुकदमेबाजी चलती रही (४) मुसलमानोको सामाजिक और राजनीतिक जीवनमें अपने उचित भागसे ज्यादा प्रतिनिधित्व मिला और हिन्दू नौजवानोने कुछ हिन्दू संस्थाएँ स्थापित कीं। ये कुछ अन्य कारण है।

प्रश्न: क्या यह आखिरी बात भी चार या पाँच साल पुरानी है?

उत्तर: यह चार या पाँच सालके अन्दर ही हुई है।

प्रश्न: खिलाफत आन्दोलनके पहले या बाद?

उत्तर: यह खिलाफत आन्दोलनके शुरू होनेसे एक साल बाद हुई।

प्रश्न. क्या कोहाट जिलेमे लोग अक्सर मुसलमान बनाये जाते है?

उत्तर: हाँ, जिलेमें मुसलमान बननेवालोकी बहुत बड़ी संख्या है।

१. कोहाटकी सनातन धर्म सभाके मन्त्री जीवनदास द्वारा प्रकाशित। इसमें एक ऐसी कविता थी जिसमें इस्लामके बारेमें आपत्तिजनक बातें थीं।

प्रश्न उनकी सख्या लगभग कितनी होगी?

उत्तर जुम्मा मस्जिदमें कोई न कोई आदमी मुसलमान वनाया ही जाता है। इन मुसलमान वनाये जानेवालोकी सख्या हर साल सौ या डेढ सौ हो जाती है, किन्तु यह जरूरी नहीं है कि ये सब लोग खास कोहाट ही के हो। हरेक जुम्मेको एक या दो लोग मुसलमान वनाये जाते है।

प्रश्न क्या सभी लोग जो मुसलमान वनाये जाते है, हिन्दू होते है?

उत्तर हाँ, वे सभी हिन्दू होते है, किन्तु कभी-कभी सिख भी होते है।

प्रश्न क्या इससे पहले पुस्तिकाकी घटनाके अलावा कोई और घटना भी हुई है?

उत्तर तालावो आदिसे ताल्लुक रखनेवाली कुछ छुटपुट घटनाएँ हुई है, लेकिन इन घटनाओके अलावा, जिनका जिक्र पहले ही हो चुका है, ऐसी कोई घटना नहीं हुई जिसका असर लोगोकी वहुत वड़ी तादादपर पडा हो। यद्यपि तालावो आदिके मामले वहुत सीमित प्रकारके थे, फिर भी उन्होने जोर पकडा और वाहरी लोगोमें फैल गये।

प्रश्न क्या मुसलमान वनाये जानेके मामलोमें हिन्दुओके हस्तक्षेपसे मुसलमानोमे कोई नाराजगी पैदा हुई थी?

उत्तर हाँ, इससे जरूर नाराजगी पैदा हुई थी। हिन्दुओको मुसलमान हमेशा ही वनाया जाता रहा है, लेकिन हिन्दुओने उधर कभी ध्यान नहीं दिया। लेकिन खुदा जाने अव क्या हो गया। इसपर वे तूफान खडा कर रहे है। आखिर ये लोग अपनी स्वतन्त्र इच्छासे और इस्लामके प्रति प्रेमके कारण ही मुसलमान वनते है।

प्रश्न क्या ये सभी लोग जो मुसलमान वनाये जाते है, वालिग होते है।

उत्तर जव माँ-वापोके साथ होते है तव वच्चे भी मुसलमान वनाये जाते है। वाकी सव तो वालिग ही होते है।

प्रश्न क्या कभी मुसलमानोने हिन्दुओसे ऐसा कहा कि उन्हे इस तरहका वरताव नही करना चाहिए?

उत्तर हाँ, उनसे (हिन्दुओसे) ऐसा कहा गया। मैंने खुद उनसे ऐसा कहा। लेकिन जिनसे मैंने कहा उनमें से कोई विशिष्ट व्यक्ति नहीं था और न उनमें से कोई सार्वजनिक कामोमें दिलचस्पी ही लेता था।

प्रश्न यह वात शुद्धि-आन्दोलनके पहले शुरू हुई या उसके वाद?

उत्तर यह शुद्धि-आन्दोलनके वाद शुरू हुई। ये सभी घटनाएँ जिनका मैंने जिक्र किया है, शुद्धि और सगठन आन्दोलनके वाद हुई है।

प्रश्न क्या आपका विश्वास है कि इसका दगोपर कोई असर पडा है?

उत्तर दिलोमें पहलेसे ही दुर्भावनाएँ मौजूद थीं। यह एक और कारण वन गया।

प्रश्न क्या यह वही मुसलमान लडकी है जिसका जिक्र सरदार माखनसिंहके लड़केकी घटनाके सम्वन्धमें किया गया है?

उत्तर: हाँ, यह वही है।

प्रश्न . आपका पुस्तिकाके बारेमे क्या खयाल है? उसमे आम हिन्दू जनताका क्या भाग था?

उत्तर: पुस्तिका यहाँ भेजी गई और सनातन धर्म सभाके सदस्योंकी जानकारीमें बेची गई।

प्रश्न क्या बहुत हिन्दू सनातन धर्म सभाके सदस्य है?

उत्तर: मै उनकी ठीक-ठीक संख्या नहीं जानता।

प्रश्न क्या आम हिन्दू इसके सदस्य है?

उत्तर: जहाँतक मै खयाल कर सकता हूँ, बहुतसे (गैर सनातनी) हिन्दू उसके सदस्य होंगे। करीब १५ या १६ सदस्य जिनका जिक्र उनके धर्मोन्मादके कारण किया जाता है, इस [सनातनी] वर्गसे ताल्लुक रखते हैं।

प्रश्न: क्या आपने यह सारी पुस्तिका पढी है?

उत्तर: मैंने यह सारी ही पढी है।

प्रश्न क्या इसमे सभी कविताएँ बुरी है?

उत्तर: जो कविता आपत्तिजनक कवितासे पहले दी गई है वह बहुत अच्छी है। बाकी धार्मिक कविताएँ भी अच्छी हैं; लेकिन ग्यारहवी कविता अत्यन्त आपत्तिजनक है और उसका उद्देश्य मुसलमानोंकी भावनाको आघात पहुँचाना है।

प्रश्न क्या इस कविताकी बहुत प्रतियाँ बेची गई थी?

उत्तर: पुस्तिकाकी प्रतियाँ बहुतसे लोगोके हाथोमे देखी गई थीं। जिनमें हिन्दू और मुसलमान दोनो थे। मैंने इसकी पहली प्रति मौलवी अहमद गुलके[1] हाथमें देखी थी। उसकी दूसरी प्रति एक दूसरे मुसलमानके पास थी।

प्रश्न . हिन्दू कहते है कि ३० या ३५से अधिक प्रतियाँ नही बेची गईं, क्या यह सच है?

उत्तर: हो सकता है कि यह सब सच हो; लेकिन मै ठीक-ठीक नहीं कह सकता।

प्रश्न . सनातन धर्म सभाके सदस्योने उस छपी हुई आपत्तिजनक कविताके लिए माफी माँगी थी। क्या यह काफी नही था?

उत्तर: शिष्टमण्डलके[2] पेशावरसे लौटनेतक मुझे इस माफीके बारेमें कुछ भी पता नहीं था। मैंने अभीतक माफीनामेका मजमून नहीं देखा है। मैंने सुना है कि मुसलमानोके खयालसे माफीनामा काफी था।

प्रश्न क्या आप जानते है कि उसमे कमी क्या थी?

उत्तर: उसमें क्या लिखा है यह मैंने नहीं देखा। इसलिए मै इस बारेमें कुछ नहीं कह सकता।

१. खिलाफत समितिके मन्त्री।

२ पेशावरका खिलाफत शिष्टमण्डल। उसने दोनो दलोंको शान्त करनेकी कोशिश की थी, लेकिन उसे इसमें सफलता नहीं मिली।

प्रश्न क्या आप जानते है कि वह पृष्ठ जिसमे वह कविता थी सभी प्रतियोमे से फाडकर निकाल दिया गया था ?

उत्तर मुझे इसकी कोई जानकारी नहीं।

प्रश्न क्या आप जानते है कि सनातन धर्म सभाने वाकी प्रतियोको डिप्टी कमिश्नरके पास भेज दिया था और वे वहाँ जला दी गई थी ?

उत्तर हाँ, वाकी प्रतियाँ अदालतमें भेज दी गई थीं और वे वहाँ जला दी गई थीं।

प्रश्न क्या उस पुस्तिकाका प्रकाशक जीवनदास गिरफ्तार कर लिया गया था ?

उत्तर हाँ, साहव!

प्रश्न क्या जीवनदासकी गिरफ्तारी काफी नही थी ?

उत्तर जहाँतक मेरा ताल्लुक है, यह काफी थी। जव जीवनदास हवालातमें भेजा गया था तव उसपर मुकदमा चलानेका वादा किया गया था और पुस्तिकाकी वाकी प्रतियाँ जला दी गई थीं।

प्रश्न क्या ऐसा करनेपर मुसलमानोकी कोई शिकायत वाकी रह गई थी ?

उत्तर शिकायतकी कोई गुजाइश रहनी तो नहीं चाहिए।

प्रश्न क्या आप जानते है कि ये प्रतियाँ कव जलाई गई थी ?

उत्तर ३ सितम्वर, १९२४ को।

प्रश्न क्या आप यह भी जानते है कि जीवनदास जमानतपर रिहा कर दिया गया था ?

उत्तर मैंने सुना था कि जीवनदास रिहा कर दिया गया है। वह जमानत-पर रिहा किया गया था या किसी और तरह रिहा किया गया था, यह मै नहीं जानता।

प्रश्न क्या वह कोहाटसे वाहर भेज दिया गया था। और वादमे छोड दिया गया था ?

उत्तर हाँ।

प्रश्न क्या इससे मुसलमान नाराज हुए थे ?

उत्तर हाँ, मुसलमान डिप्टी कमिश्नरने यह वादा किया था कि जीवनदास-पर मुकदमा चलाया जायेगा, वह फिर भी छोड दिया गया। इससे मुसलमान आग ववूला हो गये थे।

प्रश्न क्या इसपर मुसलमानोका कोई जलसा हुआ था ?

उत्तर मैंने सुना था कि इसपर ८ सितम्वरकी रातको मुसलमानोका एक जलसा हुआ था।

प्रश्न क्या मुसलमान वहाँ वडी सख्यामे इकट्ठे हुए थे और ९ सितम्वरकी रातको डिप्टी कमिश्नरके पास गये थे ?

उत्तर हाँ, साहव!

प्रश्न. क्या आप उस जलसेमे मौजूद थे?

उत्तर: मुझे उसकी कोई इत्तिला नहीं मिली थी।

प्रश्न· क्या आपको उसके तथ्योकी जानकारी केवल सुनी-सुनाई बातोसे मिली?

उत्तर: हाँ, साहब; मैंने भीड़ बाजारसे गुजरती हुई देखी थी। उसमें से कुछ लोग डिप्टी कमिश्नरके पास जा रहे थे और कुछ उनके पाससे आ रहे थे। मैंने बाजार जाते समय भीड़ टाउन हालके पास देखी थी।

प्रश्न भीडमे कितने आदमी थे?

उत्तर: भीड़में करीब १५०० आदमी होंगे। ९ सितम्बरको बाजारमें हड़ताल थी। हिन्दुओं और मुसलमानों, दोनोंकी दूकानें बन्द थी; जहाँ-तहाँ कुछ सिख अपनी दूकानोके सामने खड़े थे। उनको दूकानें खोलनेके लिए मजबूर किया गया था।

प्रश्न यह किस समयकी बात है?

उत्तर: मै शहरमें ९ बजे गया था। जब मै ११.३० बजे लौटा तब सभी दूकानें बन्द हो गई थीं।

प्रश्न क्या आपने भीडको, जब वह डिप्टी कमिश्नरके पास जा रही थी और जब वह वहाँसे लौट रही थी, दोनो बार देखा था?

उत्तर: मैंने दोनों ही वक्त उसे देखा था। जब यह लौट रही थी तब मै छावनी दरवाजेके अन्दर था और जब जा रही थी तब टाउन हालके पास था।

प्रश्न भीड किस ओर जा रही थी?

उत्तर: ९ बजे टाउन हालकी ओर जा रही थी।

प्रश्न. क्या आपने भीडके किसी आदमीसे बातचीत की थी?

उत्तर: मैंने शहरसे लौटते समय कुछ लोगोसे बातचीत की थी।

प्रश्न. आपने किस तरहकी बातचीत की थी और आपको क्या जवाब मिला था?

उत्तर: मैंने पूछा कि मामला क्या है और लोग कहाँ जा रहे हैं? उन्होने कहा कि वे यह पूछनेके लिए डिप्टी कमिश्नरके पास जा रहे हैं कि जीवनदासको क्यो छोड़ दिया गया और ११ तारीख मामलेकी सुनवाईके लिए निश्चित करनेपर भी उनको दिया गया वादा क्यो तोड़ दिया।

प्रश्न· क्या आपने सिर्फ यही बातचीत की थी?

उत्तर: कुछ और भी बातचीत की थी। लेकिन वह लगभग इसी तरहकी थी।

प्रश्न क्या आपने उन्हे ऐसा करनेसे रोकनेकी कोशिश की थी और उनपर आपकी कोशिशोका कोई असर पडा था?

उत्तर: मैंने उन्हें कहा था कि कमसे-कम हमें (हिन्दुओं और मुसलमानोको) इस तरहका व्यवहार नहीं करना चाहिए। आपसमें झगड़नेसे हम तीसरे पक्षको (सरकारको) अपने कामोमें हस्तक्षेप करनेका मौका देते हैं। लेकिन मेरे कहनेका उनपर कोई असर नहीं पड़ा।

प्रश्न क्या आपको ९ तारीखकी घटनाओकी कोई जानकारी है?

उत्तर उस दिन मैं अपने घरमें था। मैंने सुना था कि बाजारमें गोली चली है जिसके फलस्वरूप एक मुसलमान मारा गया है और अब वहाँ आगजनी की जा रही है।

प्रश्न आपने यह सब अफवाहोसे जाना या ये घटनाएँ खुद जाकर देखी?

उत्तर मैंने सिर्फ इसकी चर्चा ही सुनी, लेकिन लपटें और धुआँ देखे जा सकते थे और गोलियोकी आवाजें सुनी जा सकती थीं।

प्रश्न जब आप लगभग साढे ग्यारह बजे कोहाटमे थे और आपने भीड देखी तब क्या गाँवोके कुछ लोग भी वहाँ मौजूद थे?

उत्तर· गाँवका कोई बाहरी आदमी शहरमें मौजूद नही था।

प्रश्न क्या टाउन हालके पास भीडमे गाँवोके लोग थे?

उत्तर भीडमें गाँवोके करीब एक तिहाई लोग थे।

प्रश्न क्या आप १० सितम्बरको कोहाट गये थे?

उत्तर मैंने ९ तारीखकी शामको अपना आदमी अपने दोस्तो और रिश्तेदारोके लिए कुछ चीजें लेने शहर भेजा था। उसने आकर यह खबर दी कि शहरमें अमन कायम कर दिया गया है, हिन्दुओके मुकाबले मुसलमान ज्यादा मारे गये है और बाजारमें आग अब भी पहलेकी तरह जल रही है।

मैं दस तारीखको अपनी कारमें स्कूलके दरवाजेसे अन्दर गया। फौजने शहरकी दीवारके चारो ओर दुहरा घेरा डाल रखा था। मैंने वहाँ तैनात यूरोपीय अधिकारी (इन्चार्ज)से शहरमें जानेकी इजाजत ली। मैंने वहाँ पहुँचनेपर देखा कि वहाँ पूरी तरहसे अमन कायम है। मैंने शहरकी दीवारमें बहुत-सी दरारे देखीं। मैं जैसे ही कारमें तहसीलके दरवाजेपर पहुँचा, मैंने गोलियाँ चलनेकी आवाजें सुनीं। वह दिन कयामतके दिनका नमूना था। यह हालत १० बजेसे लेकर १ बजेतक बनी रही।

प्रश्न कयामतके नमूनेसे आपका क्या मतलब है?

उत्तर मेरा मतलब है कि अगर कोई व्यक्ति भीडके हाथोमें पडता तो वह लूट लिया जाता और कत्ल कर दिया जाता। लोगोके घरोमें आग लगाई जा रही थी। हिन्दुओ और मुसलमानो — दोनोके ही घर जलाये जा रहे थे। पुरानी दुश्मनी निकालनेके लिए मौकेका फायदा उठाया गया था। सभी शरीफ लोगोने अपनी जानके डरसे अपने घरोमें पीछे पनाह ले ली थी और किवाड बन्द कर लिये थे।

प्रश्न क्या आप एक बजे वापस आ गये थे?

उत्तर· मैं १०.३० बजे वापस आ गया था। लेकिन मैं अपने गाँवके पासकी एक टेकरीपर चढकर यह नजारा देख रहा था।

प्रश्न आपने कहा कि आपने ९ तारीखको कुछ खौफनाक नजारे देखे थे?

उत्तर हाँ, ९ तारीखको मैंने एक या दो निहत्थे हिन्दुओको कत्ल किये जाते देखा था।

प्रश्न ये कत्ल कहाँ किये गये थे?

उत्तर: इनमें से एक तो शाही रोड, अर्थात् भागी कोहाट रोडपर किया गया था और दूसरा चरौदाकी तरफ।

प्रश्न क्या ये लोग पैदल राहगीर थे?

उत्तर: मुझे बादको मालूम हुआ कि उनमें से एक मोटरमे पेशावरकी ओर जा रहा था और वह मोटरसे बाहर निकाल कर कत्ल किया गया था। मैंने उसकी लाश वहाँ पडी देखी थी।

प्रश्न उसे किसने कत्ल किया था?

उत्तर: मेरे खयालमे कातिल बाहरके गाँवोके लोग थे और कोहाटके आसपास नहीं रहते थे। क्योंकि उसी मोटरमें हिन्दू सज्जनके अलावा दो मुसलमान भी थे। उनमे से एक तो खान बहादुर गुल्ली खाँका भतीजा था जो ई० ए० के तौरपर कोहाटमें सालों रहा था। अगर ये लोग कोहाट या उसके आसपासके गाँवोके होते तो वे खानबहादुरके भतीजेको पहचान जाते या खान बहादुरका भतीजा ही उन्हे पहचान लेता।

प्रश्न खान बहादुरके भतीजेके अलावा दूसरा मुसलमान कौन था?

उत्तर: दूसरा मुसलमान इस्लामिया कालेजका एक प्राध्यापक था। उसके अलावा एक ड्राइवर भी था। कहनेका मतलब यह है कि मोटरमे ड्राइवरके अलावा तीन आदमी और थे। हिन्दू उनमें से एक ही था जो मारा गया।

प्रश्न क्या ये तीन मुसलमान जो उस हिन्दूके साथ मोटरमे थे उसे नही बचा सकते थे?

उत्तर: ये तीनो उसे नहीं बचा सकते थे, क्योंकि हमलावर बहुत ज्यादा थे।

प्रश्न आपने एक दूसरे हिन्दूके कत्ल किये जानेका जिक्र किया। क्या आप उसके बारेमे कुछ बता सकते है?

उत्तर: मैंने सिर्फ उसकी लाश खेतमें पडी देखी थी। मै उसे पहचान नहीं सका।

प्रश्न क्या आपने पहले कत्ल किये गये दूसरे हिन्दूको पहचान लिया था?

उत्तर: मैंने जब उसकी लाश सडकपर पडी देखी तब जाते वक्त उसके बारेमें सारी बातें पूछी थीं। मै नही जानता कि मेरे वहाँसे गुजरनेके कितने घंटों पहलेसे उसकी लाश वहाँ पड़ी थी।

प्रश्न क्या आपने कोई ऐसे मन्दिर भी देखे जो जला दिये गये थे?

उत्तर: हिन्दुओके रावलपिण्डी चले जानेके बाद मैंने देखा था कि कुछ मन्दिरोंके कुछ हिस्से जला दिये गये है। उनमें से एक था मण्डीका मन्दिर। उसके पासकी इमारत भी जिसमें बैठकर हमने अमनकी बातचीत की, जला दी गई थी।

प्रश्न क्या आपने कोई जला हुआ गुरुद्वारा भी देखा?

उत्तर: हमने झरनोंके सामनेका गुरुद्वारा जला हुआ देखा था। कुछ महीने पहले इस गुरुद्वारेके बारेमें हिन्दुओं और सिखोंमें झगड़ा हुआ था। हिन्दुओका दावा

था कि यह उनका मन्दिर है और सिख कहते थे कि यह उनका गुरुद्वारा है। कुछ हिन्दू साधु इस गुरुद्वारेमें वैठते और चरस पीते थे, इसपर सिखोने घोर आपत्ति की। इसके वाद सिख वडी सख्यामें वहाँ आये और उन्होंने साधुओको गुरुद्वारेसे निकाल दिया और उसपर कब्जा कर लिया। इसके कारण पुलिसका एक थानेदार कुछ सार्जेन्टो और पुलिस सिपाहियोके पूरे दलके साथ कई हफ्तो वहाँ पडा रहा ताकि झगडा न हो, क्योकि गुरुद्वारा शहरसे वाहर था।

दोनो कौमोके सम्माननीय नेताओसे अमन और नेकचलनीकी जमानतें जमा कराई गई थीं और मुचलके लिये गये थे। मैंने खुद कब्रिस्तानके सामनेका अपना एक जमीनका टुकडा उस साधुको दिया था। इस साधुने एलान किया था कि मैं जवतक उस गुरुद्वारेको नहीं जला दूँगा, तवतक वहाँसे नही जाऊँगा। दगोके दौरान वह साधु दो सम्मानित हिन्दू नेताओके साथ, जिन्होने उसके पास पनाह ली थी, दो दिनतक वहाँ रहा और उसने अपने जीवनको खतरेमें डाल कर दूसरे दो हिन्दुओके जीवनकी रक्षा की। मैंने वादमें सुना कि कुछ सिख सज्जनोने पुलिसमें रिपोर्ट की है कि लोगोने उस साधुके उभाडनेसे गुरुद्वारा जलाया हे, इसलिए पुलिसने उस साधुको वहाँसे हटा दिया और जिलेसे वाहर भेज दिया।

प्रश्न क्या आपने इस गुरुद्वारेके अलावा कोई और मन्दिर या गुरुद्वारा ऐसा देखा है जो जला दिया गया हो?

उत्तर मैंने नहीं देखा। (याद दिलानेपर गवाहने स्वीकार किया कि थान जोगरान भी जो लगभग लकडीका वना हुआ था, जलाया गया है।)

प्रश्न क्या आप जानते है कि ९ और १० तारीखको कितने हिन्दू और कितने मुसलमान मारे गये थे?

उत्तर मै ऐसे किसी हिन्दूको नही जानता जो उस रात शहरमें मारा गया हो। (मुसलमानोमें से) ३ लोग मारे गये थे और ३ या ४ घायल हुए थे। इनमें वे लडके भी शामिल हैं।

प्रश्न क्या आप लडकोकी उम्र जानते हैं?

उत्तर मैंने सुना है कि एक लड़केकी उम्र १० या ११ सालकी थी।

प्रश्न उनमे से एक वच्चा था या दोनो वच्चे थे?

उत्तर दोनो वच्चे थे—एककी उम्र १० या ११ सालकी थी और दूसरा उससे कुछ वडा था।

प्रश्न क्या आपको १० सितम्वरके हताहतोके वारेमे कोई जानकारी है?

उत्तर वाकी सभी हताहत १० सितम्वरके है। आठ मुसलमान मारे गये थे। घायलोकी सख्या इससे ज्यादा थी। लेकिन हिन्दुओमें हताहतोकी सख्या मुसलमानोसे ज्यादा थी।

प्रश्न हिन्दू कोहाटसे रावलपिंडी कब पहुँचे?

उत्तर: ग्यारह तारीखको रायबहादुर मथुरादास और रायबहादुर ईश्वरदासने मुझे खबर भेजी थी कि वे कर्मशियल हाउसमें रह रहे हैं और मैं उन्हें रेलवे स्टेशन पहुँचा दूं। मै वहाँ दो मोटरे लेकर गया और सात फेरोमें उनको और उनके रिश्तेदारोंको रेलवे स्टेशनपर पहुँचा आया। कर्मशियल हाउसमें और सड़कोपर पड़े हिन्दुओंकी हालत बहुत खराब थी। उनकी औरतें भी सड़कोके किनारे बुरी हालतमें बैठी थीं। सरकारने न तो उनके रहनेका इन्तजाम किया था और न उन्हे रेलवे स्टेशन पहुँचानेका।

प्रश्न 'वे कर्मशियल हाउसमे कब गये थे?

उत्तर: मुझे उनसे मालूम हुआ कि वे कर्मशियल हाउसमें १० सितम्बरको गये थे।

प्रश्न हिन्दू कहते है कि ९ और १० सितम्बरके बीच बहुतसे हिन्दुओको जबरदस्ती मुसलमान बनाया गया। क्या आप इस बारेमें कुछ जानते है?

उत्तर: मेरे खयालमें कोई भी हिन्दू जबरदस्ती मुसलमान नहीं बनाया गया था, लेकिन कुछ हिन्दुओंने मुसलमानोके यहाँ पनाह ली थी। उन्हे यह महसूस हुआ कि उनकी जिन्दगी खतरेमें है इसलिए उन्होंने खुद दरखास्त की थी कि उनकी चोटी काट दी जाये और हिन्दुत्वके अन्य चिह्न हटा दिये जायें। उनको पनाह देनेवालोने यह महसूस किया कि हिन्दुओंकी जिन्दगी सचमुच खतरेमें है इसलिए उन्होंने उनकी चोटियाँ काट दीं और यह जाहिर कर दिया कि वे मुसलमान हो गये हैं।

प्रश्न. आपने एक और तरीकेका भी जिक्र किया था?

उत्तर: उस तरहकी कोई घटना शायद हुई, हो किन्तु किसी ऐसी घटनाकी मुझे जानकारी नहीं है जब किसी मुसलमानने किसी हिन्दूकी जान बचानेके लिए उसे मुसलमान हो जानेकी सलाह दी हो और उसकी चोटी काटी हो। फिर भी मैं विश्वास कर सकता हूँ कि ऐसी घटना हुई होगी।

प्रश्न आप ऐसा विश्वास क्यो करते है कि कुछ मुसलमानोने हिन्दुओको शायद सलाह दी हो कि वे अपनी जान बचानेके लिए मुसलमान बन जाये?

उत्तर: सिर्फ इसलिए कि गाँवोंके लोग अशिक्षित थे और उनसे हिन्दुओकी जानें बचाना एक मुश्किल बात थी।

प्रश्न क्या आप इस तरह मुसलमान बनाये गये आदमीको मुसलमान समझते है?

उत्तर: जबतक इस तरहका आदमी शान्तिके वातावरणमें अपनी स्वतन्त्र इच्छासे एलानिया यह नहीं कहता कि वह मुसलमान है तबतक वह मुसलमान नहीं समझा जा सकता।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०५३०) से।

३९. कोहाटके दंगोके बारेमे अहमद गुलसे जिरह[1]

[रावलपिंडी]
६ फरवरी, १९२५

प्रश्न. मौलवी साहब, आपका नाम?

उत्तर. मेरा नाम अहमद गुल है।

प्रश्न आप क्या काम करते है?

उत्तर मै दॉतोका डाक्टर हूँ।

प्रश्न आप खिलाफत समितिके मन्त्री कबसे है?

उत्तर. १९२२ से।

प्रश्न आप कोहाटमे कबसे रहते है?

उत्तर. मै वहीं पैदा हुआ था।

प्रश्न आपके विचारमे कोहाटके दगोका क्या कारण है?

उत्तर मै कुछ बातोमें तो पीर कमाल साहबसे सहमत हूँ, लेकिन कुछमें मेरा उनसे मतभेद है। मेरे विचारमें दगोका कारण वह पुस्तिका थी।

प्रश्न पुस्तिकाको छोडकर कोई और कारण भी था या नही?

उत्तर. एक और घटना भी हुई थी। मेरे जीवनमें इस प्रकारके दो ही अवसर आये है जबकि मुसलमान बडी सख्यामें सरकारके पास गये है। एक अवसर तो सरदार माखनसिंहके बेटेके मामलेमें आया था और दूसरा पुस्तिकाके मामलेमें आया। इन अवसरोके अलावा किसी भी अन्य अवसरपर इस प्रकारकी उत्तेजना नहीं फैली, न तो कभी मुसलमान इकट्ठे हुए और न कभी ऐसा कोई दगा हुआ।

प्रश्न क्या आप केवल इन दो घटनाओको ही दगोका कारण मानते है?

उत्तर कुछ आपसी मतभेद भी थे।

प्रश्न सरदार माखनसिहके बेटेका मामला क्या था?

उत्तर. लोगोमें एक आम अफवाह थी कि सरदार माखनसिंहके बेटेका अपने मालीकी औरतसे अनुचित सम्बन्ध है। वह लाहौर चला गया और उसके साथ ही वह मालिन भी चली गई। इससे लोगोमें बहुत सनसनी फैली। पठान जाति इस तरहके कामको नफरतकी निगाहसे देखती है, चाहे वह किसी मुसलमानने ही क्यो न किया हो। इसीलिए सरकार भी अपराधीको सख्त सजा देती है और चाहे वह मामला दो मुसलमानोका ही क्यो न हो, लोग उससे उत्तेजित हो जाते है। सरदार माखनसिंहके बेटेके मामलेमें सरकारने कोई ध्यान नहीं दिया, यद्यपि इस बारेमें

१ इसकी उपलब्ध प्रति दोषपूर्ण है अत आवश्यकतानुसार कहीं-कही सशोधन करके उसका अनुवाद किया गया है।

उसके पास एक शिष्टमण्डल भेजा भी गया था। मेरे कहनेका मतलब यह है कि सरदारके लड़केको दण्ड नही दिया गया और मालीको न्याय नही मिला। जब कोई हिन्दू या सिख ऐसा करनेका दुस्साहस करता है तब मुसलमानोको बहुत आघात लगता है। यह भी अफवाह थी कि सरदार माखनसिहने मालीको कुछ रुपये देकर चुप कर दिया है। यह बात भी फैलाई गई थी कि सरदार माखनसिहने दूसरे अवसरोपर भी रुपये देकर अपना बचाव किया है।

प्रश्न यह वाकया कब हुआ था?

उत्तर: लगभग एक साल पहले अर्थात् पुस्तिकाकी घटनासे पूरे एक साल पहले जब जीवनदास गिरफ्तार करके हवालातमे रखा गया था तब सरदार माखनसिह गैर-सरकारी निरीक्षकके रूपमे जेलमे गये थे। जेलके सुपरिटेंडेंटने निरीक्षकके रूपमे उनके व्यवहारकी शिकायत की थी, क्योंकि उन्होने जेलकी व्यवस्थामे हस्तक्षेप किया था। सुपरिटेंडेंटने जीवनदासको काल कोठरीमे रखा था, लेकिन सरदार साहबने कहा कि उसे वहाँसे निकाल लिया जाये। चूँकि जीवनदासकी लडकीकी सगाई सरदार माखनसिहके लड़केसे हुई थी, इसलिए यह अफवाह भी फैल रही थी कि सरदार साहब जीवनदासको कुछ ही घटोमें रिहा करा देगे। इसके बाद जब पहली बार गोली चली तब सबसे पहली बात यह सुनी गई कि सरदार साहबके मकानके सामने लड़के मारे गये हैं। पिछली बाते तो थी ही, फिर जीवनदासकी रिहाई और सरदार साहबके मकानके सामने गोली चलनेसे मुसलमान उत्तेजित हो गये। और मेरे विचारमें दगेका कारण यही है।

प्रश्न यह अफवाह फैलाई किसने कि सरदार साहब और उनके लडकेने गोली चलाई?

उत्तर: जब मैं अदालतमें था औरलो गोको यह आश्वासन दिया जा रहा था कि जीवनदासपर मुकदमा चलाया जायेगा तब दूसरे हिन्दुओके खिलाफ हमारी कोई शिकायत नहीं थी। जब अदालतने अपराधीके खिलाफ कार्रवाई करनेका फैसला किया, तब मुसलमान सन्तुष्ट हो गये। अभी आरोपका आधार तैयार किया जा रहा था कि इतनेमें ही खबर मिली कि बाजारमें गोली चल गई है। अहमद खाँने मुझे खबर दी और मुझे साथ लेकर कारमें घटना-स्थलकी ओर रवाना हो गये। कारमें हमारे अलावा तीन मुसलमान और थे। हम छावनी दरवाजेसे शहरमें घुसे और अभी हम सरदार साहबके घरसे पचास कदम इधर ही थे कि हमे पचास साठ आदमियोकी एक भीड़ मिली। ये लोग हमें रोकनेके लिए आये थे। उन्होने हमसे कहा कि हमें आगे नहीं जाना चाहिए, क्योकि गोली चल रही है। एक लडका सरदार माखनसिहके बालाखानेके पास मरा पडा है और एक आदमी घायल हो गया है। इसपर कार पीछे-ही-पीछे कोतवाली ले जाई गई। वह घुमाई नहीं जा सकी क्योकि वहाँ इतनी जगह नहीं थी। कोतवाली वहाँसे करीब सौ कदम होगी।

प्रश्न क्या आप वहां गये थे, जहां गोली चली थी?

उत्तर नहीं, वहां मैं नही गया। मेरा साथी और मैं कारसे उतर गये और अहमद खां वापस चले गये। जब मैं कोतवालीसे अपने घर जा रहा था, तब सब ओरसे गोलियां चल रही थीं और कुछ लोग शहरमें भी घुसने लगे थे। मैं इस भयानक स्थितिमें घर चला गया, मेरी तबीयत भी ठीक नहीं थी, किन्तु मैंने बादमें सुना कि बाजार जलाया जा रहा है और तीन मुसलमान मारे गये हैं, तीन घायल हो गये हैं।

प्रश्न क्या आपने उस वक्त किसी हिन्दूके मारे जाने या घायल होनेकी बात भी सुनी थी?

उत्तर मैंने हिन्दुओंके बारेमें भी पूछताछ की थी, किन्तु मुझे किसी हिन्दूके मारे जाने या घायल होनेकी खबर नहीं मिली। वह रात शान्तिसे बीती।

प्रश्न यह घटना कब हुई थी?

उत्तर यह ९ सितम्बरको हुई थी।

प्रश्न जब आप मोटरमें थे और आपको गोली चलनेकी खबर मिली थी तब क्या अहमद खां भी वहां गये थे?

उत्तर अहमद खां गोली चलनेकी जगहपर नहीं गये थे। वे वापस चले गये थे।

प्रश्न आप बाजार कब गये थे?

उत्तर जब मैं अहमद खांके साथ बाजार गया था, तब करीब डेढ बजा था।

प्रश्न इसके अलावा आप किसी दूसरी घटनाका जिक्र भी कर रहे थे जो सरदार साहबके मामलेमे पूर्व घटी थी।

उत्तर वे मामूली बातें हैं। और यहांपर जिक्र करने लायक नहीं हैं।

प्रश्न पीर साहबने कहा है कि हिन्दू लोग चार-पाँच सालसे मुसलमान बनाये गये हिन्दुओंके मामलेमे अदालती कार्रवाई कर रहे हैं। इससे मुसलमानोको बहुत सदमा पहुँचा है। क्या आप भी उस बातसे सहमत हैं?

उत्तर चूंकि पीर साहबका ताल्लुक अन्दरूनी भागके लोगोसे है, इसलिए हो सकता है कि देहाती लोगोंका ऐसा खयाल हो। पीर साहबकी राय चाहे जो हो, लेकिन मेरे खयालमें ऐसी बात नहीं हो सकती।

प्रश्न पीर साहबने कहा है कि चार साल पहले हिन्दू, मुसलमान बनाये जाने-वाले हिन्दुओंकी कोई परवाह नही करते थे। किन्तु वे अब चार सालसे अदालतोका सहारा लेने लगे है, इस मामलेमे आपका क्या खयाल है?

उत्तर इस बारेमें उनकी रायसे मेरी राय अलग है। ऐसा सिर्फ मुसलमान बनाई गई औरतोके बारेमें हुआ है, मर्दोंके बारेमें नहीं। जब कोई हिन्दू मुसलमान बनता है और हिन्दू उसे वापस लेनेकी कोशिश करते हैं, तब मामला-ही दूसरा हो जाता है। सभीको मजहबी आजादी है। चूंकि सरहदमें मुसलमानोकी सख्या ज्यादा है, इसलिए सरकार मुसलमानोकी भावनाओका खास खयाल रखती है। उदाहरणके लिए

अन्य जिलोंमें मुसलमानोंके लिए जो मांस वर्जित है वह बाजारमें बिकता है या लोग उसे लेकर खुलेआम बाजारमें आते-जाते है, लेकिन कोहाटमें अबतक ऐसा कभी नहीं हुआ। लेकिन इसके विपरीत जो मांस हिन्दुओके लिए वर्जित है वह सरहदमें और खासकर कोहाटमें खुले आम बिकता है और काममें लाया जाता है।

प्रश्न आपने पुस्तिकाकी बात कब सुनी थी?

उत्तर: मुझे इसकी बात २९ अगस्त शुक्रवारको मस्जिदमें मालूम हुई थी।

प्रश्न आपको वह किसने बताई थी?

उत्तर: यह पुस्तिका मुझे गुलाम अयूब नामके स्वयसेवकने मस्जिदमें दी थी। वहाँ वह एक बड़ी भीड़को साथ ले कर आया था। भीड़में उसके साथ ऐसे लोग भी थे जिनके कपड़े मस्जिदमें आनेके लिए उपयुक्त नहीं थे। ये लोग इसीलिए मस्जिदके बाहर ही ठहर गये थे।

प्रश्न. स्वयसेवकने क्या किया?

उत्तर: उसने मुझे बताया कि इस पुस्तिकाके कारण बाजारमें बहुत हंगामा है और ये लोग आम मुसलमान जनतासे इस बारेमे सलाह लेना चाहते है और ऐसा कदम उठाना चाहते है, जिससे लोग शान्त किये जा सके।

प्रश्न आपने फिर क्या किया?

उत्तर: मैंने उस पुस्तिकाको हाथमें ले लिया। लोग सब ओरसे मुझसे कह रहे थे कि मै उस कविताको, जिसे वे पहले भी सुन चुके थे, पश्तोमें पढ़ कर सुना दूं, क्योंकि वे यह मालूम करना चाहते थे कि आखिर उसमें क्या बात कही गई है। मैंने मजमेके सामने उसका उल्था पश्तोमें किया। साथ ही उनके जोश और इरादेको देखते हुए, जिसका मुझे अन्दाज हो रहा था, मैंने उन्हे किसी तरहका फसाद करनेसे रोका और मलाबार, मुल्तान, सहारनपुर और अन्य जगहोमे हुए दगोका जो बुरा नतीजा निकला है उसकी याद दिलाई। मैंने उन्हे यह सलाह दी कि अगर वे अपने-को बसमें नहीं रख सकते तो वे इस मामलेमें भी उसी तरह सरकारके पास जायें, जिस तरह वे दूसरे मामलोमें जाते है।

प्रश्न आपका कहना है कि लोग पहले सुनी बातको फिर सुनना चाहते थे। जब वे उसे पहले ही सुन चुके थे तब वे उसे फिर क्यो सुनना चाहते थे?

उत्तर: मस्जिदमें भीड़ने ऐसा इसलिए कहा था कि उसमें से कुछ लोग तो इसकी बात जानते थे और कुछ नहीं जानते थे।

प्रश्न लेकिन क्या भीडने इसकी बात पहले पहल मस्जिदमे ही सुनी थी?

उत्तर: हाँ।

प्रश्न इसके बाद क्या हुआ?

उत्तर: इसके बाद वे लोग आपसमें कानाफूसी करते खिलाफत कमेटीके विरुद्ध षड्यन्त्र और साथ ही यह शिकायत करते देखे गये कि खिलाफती लोग धार्मिक मामलोमें भी पिछड़ रहे है। उन्होने हमसे चन्देमें हजारो रुपये लिये है, लेकिन जब

इस्लामकी सेवाका अवसर आया है तब सकोच कर रहे हैं। उन्होने यह भी कहा कि एक बार पहले भी पीर कमाल साहब और मने सरदार माखनसिंहसे रिश्वत लेकर मुसलमानोकी इज्जत में बट्टा लगाया है।

प्रश्न इसके बाद पुस्तिकाके बारेमे क्या हुआ ?

उत्तर इसके बाद २ सितम्बरको मुझे इशाकी नमाजके बाद, अर्थात् ९-३० बजे रातको सनातन धर्म सभाका एक पत्र मिला उसमें सभाके हिन्दुओने पुस्तिकाको छापनेपर हिन्दू समाजकी ओरसे माफी माँगी थी। ३ सितम्बरको मैं वह पत्र पर-चगन मुहल्लेमें ले गया जहाँ मैं मातमपुरसीके लिए गया था और जहाँ विभिन्न जातियोके लोग इकट्ठे हुए थे। मैंने उस पत्रको उनके सामने पढकर कहा कि सनातन धर्म सभाने इन लफ्जोमें माफी माँगी है। जब मैंने उनके सामने पत्र पढा तब उन्होने इससे सन्तुष्ट होनेके बजाय, यह महसूस किया कि पत्रका लहजा और लिखनेका तरीका [1] उनमेंसे एकने पत्रपर इस तरहकी टिप्पणी की कि जब महायुद्धमें सिपाही मारे गये तब बादशाहने शोक प्रकट किया था। यह पत्र इसी प्रकारका है। इसमें न तो माफीका कोई लफ्ज है और न इस तरहका कोई मजमून। इसके बाद सारा मजमा पुलिस सुपरिटेंडेंट और असिस्टेंट कमिश्नरके पास गया, ताकि अपराधीके खिलाफ मुकदमा चलाया जा सके। उस समय डिप्टी कमिश्नर उस्मानामें थे। असि-स्टेंट कमिश्नरने हमें अदालतमें चलनेको कहा और खुद भी अदालत गया। पुलिसके सिपाही जीवनदासको लानेके लिए भेजे गये और वह हमारे सामने कमरेमें लाया गया। इसके बाद पुस्तिकाएँ भी मँगा ली गईं और वहीं असिस्टेंट कमिश्नरके सामने जला दी गईं। जीवनदास हवालातमें बन्द कर दिया गया।

प्रश्न आपने कहा कि आप मातमपुरसीके लिए गये थे और वहाँ आपने पत्र पढकर सुनाया और उसे लोगोने पसन्द नही किया। क्या हिन्दुओने भी कुछ किया था ?

उत्तर मुझे मालूम हुआ था कि कुछ लोगोने मेरी जानकारीके बिना हिन्दु-ओके साथ मिलकर यह तय किया है कि इस जगहके रिवाजके मुताबिक सनातन धर्म सभाके सदस्योको इसी निमित्त जिरगेके रूपमें बुलाई गई सभामें आना चाहिए ताकि उलेमाओकी सलाहसे मामलेका फैसला किया जा सके।

प्रश्न लोगोने कहा कि पत्र सन्तोषजनक नही है। क्या आप इस बारेमें उनसे सहमत हो गये थे ?

उत्तर उस समय उनके रुखको देखकर मैंने यही ठीक समझा कि मैं अपनी कोई राय न दूँ। इसलिए मैंने कोई हस्तक्षेप नहीं किया।

प्रश्न लेकिन आपकी राय क्या थी ?

उत्तर मेरी राय भी वैसी ही थी। पत्रमें माफीकी कोई गन्ध नहीं थी।

१ मूलमें यहाँ खाली जगह है।

प्रश्न. जब जीवनदास गिरफ्तार किया गया और पुस्तिकाएँ जलाई गईं तब उनकी सख्या कितनी थी?

उत्तर: यह मै नहीं कह सकता। वे शायद ५०० से ज्यादा होंगी।

प्रश्न क्या आपको यह बात बताई गई थी कि आपत्तिजनक कविता इसमे से निकाल दी गई है?

उत्तर: इस तरहकी कुछ बात कही तो गई थी।

प्रश्न जो प्रतियाँ अदालतमे भेजी गई थी उनमे वह पृष्ठ नही था?

उत्तर: कुछ पन्ने अलग दिखाये गये थे।

प्रश्न क्या उस पुस्तकके ऊपर कृष्णजीकी तस्वीर थी?

उत्तर: हाँ साहब।

प्रश्न क्या किसी हिन्दूने इसपर आपत्ति की थी?

उत्तर: नहीं।

प्रश्न क्या किसीने ऐसा कहा था?

उत्तर: सबसे पहले तो मै ही उस पन्नेको बाहर निकालनेकी कोशिश करता क्योंकि उसपर कोई कविता नहीं थी।

प्रश्न. आप पेशावरके शिष्टमण्डलके बारेमे क्या कहते है?

उत्तर: पेशावरका एक शिष्टमण्डल मुझसे ४ सितम्बरको मिला था। उसके बाद खुशकिस्मतीसे सैयद सिकन्दरशाह वहाँ आ गये। हम पीर कमाल साहबके पास जा रहे थे। वे हमें रास्तेमें ही मिल गये और हम एक स्थानपर गये जो मेरे घरके पास ही था। वहाँ हमने इस मामलेपर बातचीत की। पेशावरके शिष्टमण्डल तथा इन दोनों सज्जनोंने यथासम्भव मामलेको रफादफा करनेकी कोशिश की। लेकिन लोगोमें बड़ी उत्तेजना थी, इसलिए इस मामलेमें जो हलकी शर्तें रखता या नरम रुख अपनाता, लोग उसी पर शक करते थे।

प्रश्न क्या आपकी बातचीत लोगोके सामने हुई थी?

उत्तर: उस समय लोग वहाँ आ गये थे और उन्होने मुझे इतना तंग किया था कि मुझे शिष्टमण्डलसे खानगी बातचीतका मौका ही नहीं मिला। अगर मै उनकी रायके खिलाफ कुछ करता तो वसी ही स्थिति उत्पन्न हो जाती जैसी लोगोने दूसरे राष्ट्रीय नेताओंके विरुद्ध उत्पन्न कर दी थी। मुझे मजबूरन उनका साथ देना पडा; क्योकि अगर मै भी उनसे अलग हो जाता तो स्थिति गम्भीर होनेका बहुत भय था। लेकिन मै इतना कह सकता हूँ कि मै उनके साथ रहा इस कारण मुसलमानोने मेरी सलाह सुनी और उपद्रवोंमें पहल नहीं की।

प्रश्न क्या उस मजमेमे उस समय हिन्दू भी थे?

उत्तर: नहीं, हिन्दू कोई नहीं था। यह अलग बात है कि वहाँ कोई सिख खड़ा रहा हो क्योकि जलूस आदिके समय सिख मुसलमानोका साथ देते थे, इसलिए सिखोके बारेमें उनका खयाल अच्छा था। वे विना किसी रुकावटके मुसलमानोके किसी भी जलसेमें शामिल हो सकते थे।

प्रश्न लोग क्या चाहते थे और पेशावर शिष्टमण्डलने क्या किया था?

उत्तर· लोग यह चाहते थे कि सरकार अपराधीको ऐसी सजा दे कि भविष्यमें कोई भी हिन्दू इस प्रकारकी [1] पुस्तिका छापनेका साहस न करे। किन्तु शिष्ट-मण्डल चाहता था कि हम इस मामलेको आपसमें ही तय कर ले, क्योंकि हम असह-योगी होनेसे इसे सरकारके पास ले जाना पसन्द नहीं करते थे। शिष्टमण्डलसे जो शर्ते तय हुई थीं वे ये है (१) मामलेका फैसला या तो इस्लामी शर्अ (धार्मिक कानून)के मुताविक तय किया जाये या देशकी प्रथाके अनुसार किया जाये। सनातन धर्मके सदस्य एक जिरगेमें मुसलमानोके पास आयें। शिष्टमण्डलने, जिसमें सैयद पीर कमाल भी शामिल थे, हिन्दुओसे वातचीत की लेकिन बादको जब ये सज्जन मुझसे मिले तव उन्होंने वताया कि हिन्दुओके रुखके कारण उनका प्रयत्न सफल नहीं हुआ है।

प्रश्न क्या उस समय पण्डित अमीरचन्द[2] भी वहाँ थे?

उत्तर हाँ, साहव, वे भी वहाँ थे। जव शिष्टमण्डल जनताके सामने इस मामलेके वारेमें मुझसे वातचीत कर रहा था तव लोग उनका वहुत तिरस्कार कर रहे थे और खिलाफतियोको भी गालियाँ दे रहे थे। उनके वारेमें वह अफवाह फैलाई गई थी कि उन्हे कोहाटके हिन्दुओने घूसके तौरपर दस हजार रुपये दिये है; इसलिए वे लोग हमारी धार्मिक भावनाओकी परवाह नहीं कर रहे है। और हमें ऐसे महत्त्वपूर्ण मामलेमें भी चुप रहनेकी सलाह दे रहे हैं।

प्रश्न पीर साहवका कहना है कि जिरगेका मामला उनके सामने नही लाया गया।

(उनको मौलवी अहमद गुलका पिछला वक्तव्य पढ़कर सुनाया गया और सैयद पीर कमाल और दूसरे लोगोने भी यह बात समझाई।)

प्रश्न जव शिष्टमण्डल, सैयद साहव और पीर साहवने आपसमे वातचीत की तव उन्होने हिन्दुओके सामने रखनेके लिए क्या शर्तें तय की थी?

उत्तर हमने हिन्दुओसे वात करना भी छोड दिया था, क्योकि ऐसा करनेसे मुसलमान चिढते थे। मैंने शिष्टमण्डलसे अनुरोध किया था कि वह लोगोको, जो उस समय धर्मके गहरे रगमें डूवे हुए थे, उनकी वात मानकर शान्त करे।

प्रश्न आप सवने इस मामलेके वारेमे क्या सोचा था?

उत्तर हम उस घरमें लगभग डेढ़ घटेतक रहे। यह ५ सितम्वरकी वात है, ४ सितम्वरकी नहीं। मैं ४ सितम्वरको सिर्फ पेशावर शिष्टमण्डलसे मिला था जिसके सदस्य मेरे मेहमान थे।

प्रश्न जव आप लोग ५ सितम्वरको इकट्ठा हुए तव आपने हिन्दुओको सलाह देनेके वारेमे क्या फैसला किया था?

उत्तर मैंने फैसला किया था कि मामला सरकारको सौंप दिया जाये, किन्तु शिष्टमण्डल यह नहीं चाहता था। जव शिष्टमण्डल और इन दो सज्जनोने आपसमें वातचीत की तव कुछ भी निर्णय नही हुआ।

१ मूलमें यहाँ जगह खाली है।

२ पेशावरके खिलाफत शिष्टमण्डलके एक सदस्य।

प्रश्न लोग क्या चाहते थे?

उत्तर: लोग चाहते थे कि मामला सरकारको सौंप दिया जाये। शरहके मामलेपर भी लोगोसे बातचीत हुई। अगर हिन्दू इसे मंजूर कर लेते तो उन्हे बड़ी खुशी होती।

प्रश्न अगर लोग दोनो विकल्पोके लिए तैयार थे तो फिर उनकी बात मानकर उन्हे शान्त करानेकी क्या जरूरत थी?

उत्तर: उन्हे शान्त करानेकी जरूरत इसलिए पड़ी कि वे खुद ही बदला लेना चाहते थे। मैंने उन्हे समझाया कि वे कानूनको तोड़कर मनमानी न करें।

प्रश्न ..वहाँ लोगोको कौन लाया था?

उत्तर: वहाँ लोग खुद ही आ गये थे और उनको शिष्टमण्डलपर शक था। जब जिरगेके मामलेपर विचार किया गया तब पीर साहब वहाँ मौजूद नहीं थे।

प्रश्न क्या हिन्दुओको शरह और जिरगेकी बात बताई गई थी?

उत्तर: मै वहाँ मौजूद नहीं था। सिर्फ शिष्टमण्डलने हिन्दुओसे बातचीत की थी और वह यह उत्तर ले कर वापस आया था कि हिन्दू दोनोमें से किसी भी शर्तको माननेके लिए तैयार नहीं है। शिष्टमण्डलने यह एक तीसरी शर्त भी सुझाई थी कि यह मामला खिलाफत कमेटीको सौंप दिया जाये। इसपर मैंने कहा कि खिलाफत कमेटी इस मामलेका फैसला नहीं कर सकती क्योकि अब यह आम जनताके हाथमें चला गया है।

प्रश्न. ५ सितम्बरके बाद क्या हुआ था?

उत्तर: शिष्टमण्डल ६ सितम्बरको पेशावर वापस चला गया था। हम सब इस खयालमें थे कि जीवनदास हवालातमें है और उसपर मुकदमा चलाया जायेगा।

प्रश्न क्या ६ और ७ सितम्बरको कोहाटमे किसी तरहकी उत्तेजना थी?

उत्तर: उन दोनों दिनोके दौरान कोहाटमें इस तरहकी कोई बात नहीं थी। सामान्य कामकाज साधारण रूपसे चल रहा था।

प्रश्न जीवनदास ८ सितम्बरको किस वक्त रिहा किया गया था?

उत्तर: उस दिन मै चुरकोटा चला गया था और वहाँ नहीं था। मै वहाँ ४ बजे शामको गया था। उस वक्त मियाँ फजलशाह और मियाँ रहमतुल्ला मेरे यहाँ थे। मै चुरकोटासे मगरिबकी नमाज पढकर लौटा था। कोहाट आते समय मुझे कुछ गांवके लोग मिले जो अपनी जरूरी चीजें ले कर आ रहे थे। उन्होने मुझसे कहा "आप यहाँ हैं। जीवनदास रिहा कर दिया गया है, इसलिए शहरमें बडी उत्तेजना फैली हुई है। लोग हजरत हाजी बहादुरकी मस्जिदमें इकट्ठा हो रहे हैं।" इसपर मैं मस्जिदमें गया। उस समय रातके ८-४५ बजे थे। मैंने देखा कि मस्जिदके बाहर और भीतर लोगोका एक मजमा है और वह डिप्टी कमिश्नर द्वारा जीवनदासकी ११ सितम्बरकी निश्चित तारीखसे पहले रिहा करनेकी कार्रवाईपर एतराज जाहिर कर रहा है। मै मस्जिदके भीतर गया और मैंने लोगोसे पूछा, "आप क्या चाहते हैं।"

उन्होंने उत्तर दिया, "सरकार हमारी धार्मिक भावनाका खयाल नहीं करती। हम उन लोगोंकी भी खिलाफत करते हैं जिन्होंने जीवनदासको रिहा करनेकी सलाह दी है।" यह आरोप मेरे कुछ दोस्तोंके खिलाफ भी लगाया गया था। मैंने इसका प्रतिवाद किया और मजमेको सलाह दी कि हम ९ सितम्बरको डिप्टी कमिश्नरके पास जायें और उनसे पूछें कि उन्होंने जीवनदासको समयसे पहले रिहा करनेमें क्या फायदा समझा। इसके बाद मैंने लोगोंको अपने-अपने घर जानेके लिए कहा और वे चले गये। जब वे गये तब साढे दस या ग्यारह बजे थे। हमने कुछ समय नमाज पढनेमें भी लगाया।

प्रश्न क्या मजमेमें बहुत अधिक उत्तेजना थी?

उत्तर हां।

प्रश्न आपने कहा है कि लोग इतने गुस्सेमें थे कि उन्होंने आपकी बात नही सुनी और इसके बाद आपने फिर कहा है कि आपने उनके साथ जिरह की और उन्हें समझा दिया कि उनके साथ न्याय किया जायेगा। आपने यह भी कहा कि "अगर हम नाकामयाब रहे तो आप जो चाहे कर सकते हैं।"

उत्तर हां। एक बार हिन्दुओंने मुसलमानोंका बहिष्कार किया था और उनसे साग और मांस खरीदना बन्द कर दिया था। इसपर मैंने हिन्दुओंकी दुकानोंपर धरनेदार बैठा दिये थे और दो दिनतक धरना दिलाया था, जिसका नतीजा यह निकला था कि हिन्दू हलवाइयोंकी मिठाइयां बिना बिकी रह गई थीं। यह बात दो साल पहलेकी है। तब मैंने वस्तुत हिन्दुओंका बहिष्कार किया था। अगर हिन्दू अपना यह रुख न बदलते तो मैं मुसलमानोंसे यही तरीका अपनानेकी सिफारिश करता।

प्रश्न क्या मुसलमानोंने जलसेमें बहिष्कार करनेकी शपथ ली थी?

उत्तर यह सरासर गलत है।

प्रश्न क्या वहां आग लगाने और लूटमार करनेके बारेमें बात नही चली थी?

उत्तर बिलकुल नहीं।

प्रश्न ९ सितम्बरको क्या हुआ था?

उत्तर मैं टाउन हालके पासके मैदानमें लोगोंके साथ डिप्टी कमिश्नरके पास गया था।

प्रश्न आपके साथ जानेवाले लोगोंकी सख्या क्या थी?

उत्तर करीब २,०००।

प्रश्न क्या भीडमें गांवोंके लोग भी थे?

उत्तर नगरपालिकाकी हदके अन्दरके गाँवके लोग थे।

प्रश्न क्या दूरकी जगहोंके लोग नही थे?

उत्तर उसमें बहुत दूरकी जगहके लोग नहीं थे।

प्रश्न आपने फिर क्या किया?

उत्तर: हम खुले मैदानमें इकट्ठे हो गये और डिप्टी कमिश्नर टाउन हालमें चला गया। अधिकारी और दूसरे लोग भी मौजूद थे। उन्होंने मुझे अन्दर बुलाया; लेकिन भीड़के लोगोंने कहा कि वे खुले मैदानमें बातचीत सुनना चाहते है।

प्रश्न क्या आप शिष्टमण्डलके नेता थे?

उत्तर: हाँ, मै नेता था। और उनकी मर्जीके मुताबिक मैने भी कहा कि हमें खुलेमें ही बातचीत करनी चाहिए। आखिर डिप्टी कमिश्नर दूसरे अधिकारियोके साथ बाहर आया और उसने लोगोको सम्बोधित करके पूछा, 'मुझसे कौन बातचीत करेगा?' सबने मिलकर मेरा नाम पेश किया। मैंने डिप्टी कमिश्नरसे बातचीत की और पूछा, "आपने जीवनदासको समयसे पहले क्यो रिहा कर दिया। इससे लोग उत्तेजित हो गये है, इसलिए आप उनसे बातचीत करके उनकी उत्तेजनाको दूर करे।" उन्होने जवाब दिया कि मैने उसे इस खयालसे जमानतपर रिहा कर दिया है कि निश्चित तारीखको बहुत ज्यादा लोग आयेंगे और अपराधी शायद संकटमें पड़ जाये। मैने कहा, "आपको जो करना था वह आपने किया, लेकिन अब लोगोकी माँग है कि पुस्तिकाके प्रकाशक-अपराधीको जेल भेजा जाये और ऐसा तभी हो सकता है जब हमारी मौजूदगीमें हमें सन्तुष्ट करनेके लिए कोई कार्रवाई शुरू की जाये।" डिप्टी कमिश्नरने इसे मंजूर कर लिया और असिस्टेंट कमिश्नरसे कहा कि वह जीवनदासके मामलेको अपने हाथमे ले और कार्रवाई शुरू कर दे। इसके बाद, जैसा मैने पहले बताया, सारी भीड़ अदालतके भीतर पहुँच गई।

प्रश्न. क्या डिप्टी कमिश्नरका हुक्म भीडको बता दिया गया था?

उत्तर: मेरी बातचीतके उत्तरमें डिप्टी कमिश्नरका जो भी जवाब होता था मै उसी वक्त उसे भीड़को बता देता था। अन्तमें मैने भीड़से कहा, "डिप्टी कमिश्नरने आपकी माँग मंजूर कर ली है। इसके बाद कुछ लोग तो तितर-बितर हो गये, और जो बाहरसे आये थे वे अपने घरोको चले गये। बाहरसे मेरा मतलब नगरपालिकाके क्षेत्रमें बसे गाँवोंसे है। कुछ लोग अदालत चले गये।

प्रश्न क्या इन लोगोके हाथोमे लाठियाँ और कुल्हाडियाँ भी थी?

उत्तर: कुछ लोगोके पास छड़ियाँ थीं और कुछके पास बाँसकी लाठियाँ। एक या दोके पास उस जगहके रिवाजके मुताबिक कुल्हाड़ियाँ भी थीं। सरहदी इलाकेमें लोग शौकिया कुल्हाड़ियाँ लिये रहते हैं।

प्रश्न क्या किसीके पास बन्दूक नही थी?

उत्तर: बन्दूक किसीके पास नहीं थी। अगर बन्दूक होती तो डिप्टी कमिश्नर भीड़में न आता।

प्रश्न यह कार्रवाई कब समाप्त हुई थी?

उत्तर: यह १२ बजे दोपहरको समाप्त हुई।

प्रश्न आप डेढ वजे मोटरमे गये थे?

उत्तर हाँ।

प्रश्न क्या सरदार माखनसिंहका वाग शहरसे वाहर है?

उत्तर वह अदालतके नजदीक है।

प्रश्न क्या वह उस दिन जला दिया गया था?

उत्तर मुझे पीछे मालूम हुआ था कि पहले दिन वच्चोने वागके फल तोडे थे और फलदार दरख्तोको ज्यादातर खराव कर डाला था। उन्होंने उसके छोटे पौधे भी उखाड फेंके थे। इसके वाद दूसरे या तीसरे दिन मैंने यह भी सुना कि उनका वागमें वना घर जला दिया गया है।

प्रश्न हिन्दू लोग कहते हैं कि यह घर ९ तारीखको जलाया गया था।

उत्तर मेरी जानकारीके मुताविक यह ९ तारीखको नहीं जलाया गया इसका मुझे पूरा विश्वास है।

प्रश्न क्या कोहाटमे लूटमार और आगजनी ९ तारीखको शुरू हुई थी?

उत्तर वाजारमें शुरू हुई थी। जब मैं वहाँसे रवाना हुआ था तव तो सव-कुछ ठीक था। हिन्दुओं और मुसलमानोंके घर जलाये और लूटे गये थे।

प्रश्न क्या आप ९ तारीखको अपने घरके अन्दर रहे?

उत्तर मैं वाहर नहीं निकला। लोग मेरे पास आ रहे थे और मुझे खवर दे रहे थे।

प्रश्न ९ तारीखको किस वक्ततक लूटमार और आगजनी जारी रही?

उत्तर मेरा खयाल है कि ९ तारीखको वाजार दो घंटेके अन्दर जला दिया गया। राततक लपटें उठ रही थीं। दूसरे दिन भी धुआँ निकल रहा था। उसी वक्त मैंने सुना कि लूटमार हो रही है।

प्रश्न आगजनी कव शुरू हुई?

उत्तर: मुझे वताया गया था कि ढाई वजे आगकी लपटें देखी गई थीं।[1]

प्रश्न आपने कहा कि आपने गोली चलनेकी खवर ९ तारीखको अदालतमे सुनी थी और उसे सुनकर आप मोटरमे आये थे। गोलियाँ कहाँसे आती है, यह आपने खुद देखा था या किसीसे सुना था?

उत्तर यह मैंने नहीं देखा था। मरे वच्चे भी मैंने नहीं देखे थे। सरदार साहवके मकानकी ऊपरी मंजिलसे गोली चली है और इसके फलस्वरूप एक लडका मर गया है, एक आदमी घायल हुआ है, यह वात मुझे तभी वताई गई थी।

प्रश्न क्या आपने इसके वारेमे कोई पूछताछ की थी?

उत्तर नहीं।

१. जिरह यहाँ, दोपहरके साढ़े वारह वजे वन्द करके फिर साढ़े छ वजे शामको शुरू की गई थी।

प्रश्न क्या आप अब भी विश्वास करते है कि सरदार साहबने गोली चलाई थी ?

उत्तर: लोगोंने मुझसे ऐसा कहा था कि सरदार साहबने गोली चलाई है। कुछ लोग कहते थे कि एक आदमी तहसीलके पास मारा गया है। कुछ दूसरे लोगोंका कहना था कि सबसे पहले मरनेवाला यही आदमी था।

प्रश्न क्या वह सरदार माखनसिंहकी गोलीसे मरा था ?

उत्तर: मैंने यह बात सुनी थी।

प्रश्न. यह इतनी वडी वात थी और आपने फिर भी पूछताछ नही की ?

उत्तर: मैंने किसी भी बातके बारेमें पूछताछ नहीं की। मैं कुछ भी सोच नहीं सका। उस वक्त मेरे दिमागकी हालत ऐसी थी कि मैं कोई राय कायम नही कर सकता था।

प्रश्न: आपके और सरदार साहवके सम्वन्ध कैसे है ?

उत्तर: मेरे हिन्दुओंके साथ और सरदार साहबके साथ भी दोस्ताना ताल्लुकात रहे हैं।

प्रश्न क्या आपका यह कर्त्तव्य नही था कि आप सरदार साहवसे पूछताछ करते ?

उत्तर: हालत ऐसी थी कि मैं उनके पास नहीं पहुँच सका। मैं न तो अपनी राय ही कायम कर सका और न पूछताछ ही कर सका।

प्रश्न. जव हिन्दुओसे आपके सम्बन्ध अच्छे थे तव क्या आपने यह वात सोची है कि मैंने जिन हिन्दुओसे भेट की है, वे सभी इन सारे फसादोकी जड आपको ही क्यो समझते हैं ?

उत्तर: मैं खुद इस रहस्यको नहीं समझ सका हूँ कि उन्होंने मेरे बारेमें ऐसी राय कैसे बनाई है। कुछ ऐसे लोग हैं जिनके पास मैं गया था और जिनकी मैंने रक्षा-का प्रबन्ध किया था और अमन कायम करनेकी कोशिश की थी। तब भी मैं इसका कारण नहीं समझ सका था और अब भी नहीं समझ सकता हूँ कि यह दोष मुझपर क्यों मढ़ा जा रहा है।

प्रश्न क्या आपने उनकी औरतोका वचाव किया था ?

उत्तर: बहुत-सी हिन्दू औरतें एक अहातेमें आ गई थीं। उनमें एक भिखारिन भी थी। मैंने उनके लिए परदेका बन्दोबस्त किया था। मर्द हुजरा पहुँचा दिये गये थे और औरतें कुछ मर्दोंके साथ एक बड़े मकानमें भेज दी गई थीं। यह सब-कुछ १० सितम्बरको ३ बजे हुआ था। मेरे मुहल्लेके मुसलमानोंने उन हिन्दुओसे प्रमाणपत्र ले लिये हैं जिनकी उन्होने रक्षा की थी। मैंने तो यह भी नहीं किया।

प्रश्न क्या आप उन हिन्दुओको जिनकी आपने मदद की थी, पहचान सकते है ?

उत्तर: मैंने बहुतसे लोगोकी, जिनमें औरतें भी शामिल थीं, मदद की थी, मैं लाला रामजीमलको पहचानता हूँ। एक लड्ढाराम हैं और थानके पीर साहब भी हैं।

प्रश्न (लाला रामजीमलने) क्या आप वहाँ थे?

उन्होंने उत्तर दिया कि वो० अहमद खाँ मेरे पिताके दोस्त थे। और भी मुसलमान थे जिनके साथ हमारे अच्छे ताल्लुकात थे। मैंने मौलवी अहमद गुलसे प्रार्थना की थी कि क्या वे कोई बन्दोबस्त कर सकते हैं। वे चुप हो गये। लेकिन दूसरे मुसलमानोंने उनसे कहा, "मौलवी, जो हो गया सो हो गया, अब मामला यहाँ खतम करो।" दूसरे मुसलमानोंने हमसे पूछा कि हम क्या चाहते हैं। वे हमारे बच्चोंको निकाल लाये और हम वो० अहमदके घरमें रहे। लौटनेपर मैंने मौलवी अहमद गुलसे कहा था, "मुसलमान हमारे घरोंको लूट रहे हैं, क्योंकि वे अब सूने हैं।" इसपर उन्होंने यह जवाब दिया था, "तुम डिप्टी कमिश्नर या असिस्टेंट कमिश्नरके पास जाओ, वे बन्दोबस्त कर देंगे।"

प्रश्न आप कहते हैं कि दूसरे मुसलमान भाइयोंने १० तारीखको शरण दी थी?

उत्तर हाँ, जंगलखेल, गडी मुवाजखाँ, मुहल्ला मियाँ बादशी मियाँ खेलान तथा मुहल्ला पीर सायत-उल्ल-अममें दी गई और डा० गुलाम सादिकने भी शरण दी थी।

प्रश्न (यह सरदार गुरदित्तसिंहने पूछा था।) जब मौलाना साहब १० तारीखको कोतवालीमें आये थे तब मैंने उनसे कहा था कि बड़ी बरबादी हुई है। इसपर उन्होंने जवाब दिया था कि यह हालत विष्णुके मन्दिरकी हुई है। क्या वह ठीक है?

उत्तर हाँ, यह ठीक है।

प्रश्न क्या १० तारीखको सभी हिन्दू छावनी चले गये थे?

उत्तर. कुछ चले गये थे, क्योंकि मैं खुद तीन-चार जत्थोंके साथ गया था। सभी स्थानोंमें सुरक्षाके लिए स्वयंसेवक भेजे गये थे। हो सकता है कि एक-दो हिन्दुओंको नुकसान पहुँचा हो। मैं नहीं कह सकता। हिन्दुओंको उनके घरोंसे निकलवा कर थानेमें पहुँचा दिया गया था और सरकारको सौंप दिया गया था।

प्रश्न सरकारको सौंप देनेसे आपका मतलब क्या है?

उत्तर. अधिकारियोंने हुक्म दिया था कि जो हिन्दू यहाँ रह गये हैं और सुरक्षित हैं, वे थानेमें इकट्ठे कर लिये जायें। डिप्टी कमिश्नरने मुझसे और पुलिससे भी यह बात कही थी। मैंने कहा था कि कुछ हिन्दू मेरे घरमें हैं।

प्रश्न क्या डिप्टी कमिश्नरने यह बन्दोबस्त आपको सौंपा था?

उत्तर उन्होंने मुझे ऐसा कोई खास बन्दोबस्त नहीं सौंपा था, जिसे अधिकारी कर सकते थे। सिर्फ मैं उन्हें आदमी देता था कि जो लोग बाहरसे शहरमें घुसें वे पहचाने जा सकें या कोई आदमी बाहर जाये तो यह जाना जा सके कि वह कोई सन्दिग्ध व्यक्ति तो नहीं है। सीमापर स्वयंसेवकोंके साथ पुलिस और सीमाकी पुलिस भी थी।

प्रश्न क्या आप डिप्टी कमिश्नर या सरकारके साथ काम कर रहे थे?

उत्तर: मैंने उनसे उतना ही सहयोग किया था जितना यदि न किया जाता तो लोग ज्यादा मुसीबतमें पडते।

प्रश्न क्या आप कार्यकारिणी समितिके सदस्य है?

उत्तर: हाँ।

प्रश्न क्या खिलाफती लोग कार्यकारिणी समितिमे है?

उत्तर: उसमें चार-पाँच खिलाफती कार्यकर्त्ता है।

प्रश्न कार्यकारिणी समितिका अध्यक्ष कौन है?

उत्तर: टीरीके रईस नवावजादा वाग मुहम्मद खाँ।

प्रश्न यहाँ आपके साथ मौजूद लोगोमे कोई कार्यकारिणी समितिके सदस्य है?

उत्तर. कार्यकारिणी समितिके दो हिस्से है। एक दल शहरके कोहाट तहसीलके 'खान लोगोंका है। उसे शहरके लोगोंका दूसरा दल मंजूर नहीं करता। मेरा एक साथी कार्यकारिणी समितिका सदस्य है। मेरा ताल्लुक शहरके लोगोंसे है।

प्रश्न. कार्यकारिणी समितिका सरकारसे क्या ताल्लुक है?

उत्तर: उसका सरकारसे कोई खास ताल्लुक नहीं है। सिर्फ मुसीवतमें पडे मुसलमानोंको राहत दिलानेके लिए और मुकदमे चलानेका वन्दोवस्त करनेके लिए इसकी स्थापना की गई है। दर हकीकत इसकी स्थापना इसलिए की गई है कि यह हिन्दुओंसे मेल-मिलाप करे, लेकिन अगर मेल-मिलाप न हो सके, तो मुसलमानोंको उनके मामलोंमें मदद करे।

प्रश्न क्या जो समझौता अव हुआ है वह कार्यकारिणी समितिने किया है?

उत्तर: इसके सदस्य कई वार पेशावर गये थे; लेकिन कोई समझौता नहीं हुआ। जव हिन्दू कोहाट आये तव खुलकर वातचीत हुई, समझौतेकी शर्ते तैयार की गईं और दोनों दलोने उनपर दस्तखत किये। वाहरके लोगोने अर्थात् जिन्होने कार्यकारिणी समिति छोड़ दी थी, उन्होंने भी दस्तखत किये हैं।

प्रश्न जव पेशावरमे वातचीत चल रही थी तव क्या आप भी वहाँ थे?

उत्तर: मै कार्यकारिणी समितिके साथ पेशावर हमेशा जाता था।

प्रश्न पेशावरमे शिष्टमण्डलके कितने सदस्य मौजूद रहते थे?

उत्तर: कभी ६ और कभी-कभी तो १२ या १५ भी मौजूद रहते थे।

प्रश्न क्या आप वहाँ प्रवक्ता थे?

उत्तर: जैसा भी मौका होता, प्रवक्ताका काम या तो नवाव साहव करते थे या पीर साहव, और कभी-कभी मै भी वात करता था। चूँकि मै अंग्रेजी नहीं जानता इसलिए मै उसमें ज्यादा हिस्सा नहीं ले सकता था।

प्रश्न कार्यकारिणी समितिका मन्त्री कौन है?

उत्तर: अव शेख अब्दुल रहमान मन्त्री है।

प्रश्न क्या आप इस नये समझौतेको जबरदस्ती लादा गया समझौता समझते हैं, जिसको माननेके अलावा हिन्दुओंके लिए कोई दूसरा रास्ता न था?

उत्तर मैं ऐसा नहीं कह सकता कि वह इस तरहका है। अधिकारियोंने इसके बारेमें कहा है कि यह हिन्दू और मुसलमान दोनोंके लिए लाभदायक है।

प्रश्न क्या आप इसे बिना दबावके किया गया समझौता समझते है?

उत्तर अगर इसमें किसी सरकारी आदमीका हाथ न होता तो मैं इसे दबावसे मुक्त समझता, लेकिन, यह समझौता डरके मारे किया गया है।

प्रश्न क्या समझौतेपर हस्ताक्षर करानेसे पहले मुसलमान भी जेलमे बन्द किये गये थे?

उत्तर नहीं, लेकिन हिन्दू शिष्टमण्डलके सदस्य जेलमें बन्द किये गये थे और तब उनसे समझौतेपर दस्तखत कराये गये थे। मेरे विचारमें, हिन्दुओ और मुसलमानोंके समझौतेको कोई भी क्यों न करता शर्तें इससे अच्छी नहीं हो सकती थीं, क्योंकि ये शर्तें पूरी तरह बातचीत करनेके बाद तय की गई हैं। बातचीत हिन्दू और मुस्लिम शिष्टमण्डलोंके सदस्योंके बीच हुई और शर्तें एक मतसे मंजूर की गईं।

प्रश्न आप ऐसा क्यों कहते हैं कि इससे अच्छी शर्तें नही हो सकती थी?

उत्तर क्योंकि हालात इस तरहके थे। जीवनदास छोड दिया गया था और हम अपनेको मजबूर महसूस कर रहे थे। क्योंकि उसने लोगोसे जिस तरीकेसे बर्ताव किया था उसके कारण हम उसके पक्षमें कुछ नहीं कह सकते थे। वह खुदाके सामने कसूरवार था। जब उसने शरीयतको नहीं माना तब वह अदालतको सौंप दिया गया, क्योंकि हमारे पास इसके अलावा दूसरा कोई चारा नहीं था। हमें उलेमाका भय था।

प्रश्न अगर सारे मुसलमान जीवनदासकी रिहाईकी माँग करते तो क्या सरकार फिर भी उसे हवालातमें रखती?

उत्तर सरकारने कहा था कि वह उसपर मुकदमा चलायेगी। मैं नहीं कह सकता कि अगर मुसलमान सहमत हो जाते तो सरकार उसे रिहा करती या नहीं।

प्रश्न गुरुद्वारेके बारेमें इस तरहकी पाबन्दी क्यो लगाई गई? क्या सिख मुसलमानोंसे इससे अच्छे बर्तावकी उम्मीद नही कर सकते?

उत्तर वे उससे अच्छे बर्तावकी उम्मीद नहीं कर सकते, क्योंकि आसपास बहुतसी मस्जिदें हैं। पुराने दस्तावेजोंके मुताबिक सिख वहाँ गुरुद्वारा नहीं बना सकते। बनाते तो वह खुद-ब-खुद गिर जाता। जैसे एक मस्जिद उसके पास बनाई गई थी। वह खुद-ब-खुद गिर गई। मैं उनकी तरफसे इस बातपर सहमत हो गया था कि सिखोंको वही दरजा मिलना चाहिए जो उनको ९ तारीखसे पहले प्राप्त था। कच्ची दीवारकी शर्त इसलिए लगाई गई थी कि लोग पहली शर्तको माननेके लिए तैयार नहीं थे।

प्रश्न. १० तारीखके बाद लूटमार और आगजनीका क्या हुआ?

उत्तर: १० तारीखको गोली चल ही रही थी लेकिन लूटमार या आगजनीकी कोई घटना उसके बाद नहीं हुई।

प्रश्न हिन्दुओकी हानिका अनुपात या प्रतिशत क्या था, क्या आप इसके कोई अनुमानित आँकडे दे सकते है?

उत्तर: मै नहीं दे सकता।

प्रश्न क्या हिन्दुओकी हानि अधिक हुई थी?

उत्तर: अवश्य ही, हिन्दुओंकी हानि अधिक हुई थी।

प्रश्न लूटका माल गाँवोमे मिल सकता है या कोहाटमे?

उत्तर: मै इस बारेमें कुछ नहीं कह सकता। कुछ माल जैसे कपड़ा मिला था और वह अधिकारियोने तहसीलमें जमा कर दिया है। कह नहीं सकता कि लूटका माल कोहाटमें है। वह जरूर गाँवोमें पहुँच गया होगा।

प्रश्न क्या आप धर्म-परिवर्तनके बारेमे पीर साहबसे सहमत है? क्या इस तरहकी कोई घटना ९ और १० तारीखको हुई थी?

उत्तर: मै उनसे सहमत हूँ। जैसा कि पीर साहबने कहा है कि ऐसी घटना उन्हीं दिनोमें हुई थी।

प्रश्न क्या आपका भी यह खयाल है कि हर साल १०० से लेकर १५० तक हिन्दू मुसलमान बनाये जाते है?

उत्तर: मै संख्याके सम्बन्धमें उनसे सहमत नहीं हूँ। जहाँतक मै जानता हूँ कि एक सालकी औसत संख्या ४० है। इसमें बाहरसे आये हुए लोग भी शामिल है।

प्रश्न. क्या औरतोको मुसलमान बनानेके बारेमे आपका खयाल भी वैसा ही है, जैसा पीर साहबने जाहिर किया है?

उत्तर: अगर औरतको मुसलमान बनाते वक्त दबाव डाला गया हो और अगर वह दबावके कारण मुसलमान बनी हो तो मुसलमान उसे उसके हिन्दू शौहरके पास जाने देनेके लिए बाध्य है।

प्रश्न अगर अदालत हिन्दू शौहरके पक्षमे फैसला देती है तो क्या मुसलमान फिर भी औरतको नही लौटाते?

उत्तर: मुसलमान उसे नहीं मानते और हिन्दू शौहरके साथ उसके सम्बन्धको अनुचित समझते है।

प्रश्न मुसलमान औरतको छिपा सकते है या इसके लिए कोई दूसरा तरीका अपना सकते है?

उत्तर: यह मुसलमानोका कर्त्तव्य हो जायेगा कि वे औरतको उसके हिन्दू शौहरके पास न जाने दें, क्योकि मुसलमान बनते ही अपने हिन्दू शौहरसे उसका ताल्लुक खतम हो जाता है।

प्रश्न हिन्दू वापस कोहाट कैसे जा सकते हैं?

उत्तर जब वे दो शर्तें मजूर करे। पहली शर्त यह है कि वे आगे इस तरह-की पुस्तिका प्रकाशित नहीं करेंगे और दूसरी यह है कि वे इस तरह गोलियाँ नहीं चलायेंगे। अगर वे ये शर्तें मजूर कर ले तो वे जब भी चाहे वहाँ आ सकते हैं। उनके लिए वहाँ कोई खतरा नहीं है। अगर वे इस तरहके नुकसानदेह तरीकोको छोड़ देंगे तो मेरी समझमें वहाँ भविष्यमें फसाद होनेका कोई कारण नजर नहीं आता। अगर वे लोग होशियारीसे काम ले तो मुसलमानोका रुख ठीक हो जायेगा।

प्रश्न क्या उन्हे इन दोनो शर्तोको स्वीकार कर लेना चाहिए?

उत्तर हमने पहले भी कोई शर्त नहीं लगाई और अब भी कोई शर्त नहीं लगाते।

प्रश्न इसलिए मैं आपसे पूछना चाहता हूँ कि उन्हे क्या करना चाहिए।

उत्तर मैं कोई शर्त निश्चित नही करता। वे बिना किसी शर्तके आ सकते हैं।

प्रश्न यदि मैं आपकी सलाह लूँ तो आप क्या सलाह देंगे?

उत्तर. मैं उन्हे अपने घरोको वापस जानेकी सलाह दूँगा लेकिन उन्हे यह देखना चाहिए कि यह सरहद है और साथ ही वे पठानोके स्वभावका भी खयाल रखें।

प्रश्न क्या कोहाटका वातावरण ऐसा है कि वहाँ हिन्दू इज्जतके साथ नही रह सकते?

उत्तर मैंने वहाँ न तो ऐसे हालात देखे हैं और न इस बारेमें कुछ सुना ही है कि उनका वहाँ इज्जतके साथ रहना मुश्किल है।

(इस जगह सरदार माखनसिहने कहा कि हिन्दुओके साथ जो बरताव किया गया वह पहले-जैसा नहीं है।)

प्रश्न (हिन्दुओसे) मौलवी साहबके खिलाफ इतनी बाते क्यो कही गई हैं?

उत्तर व्यक्तिगत रूपसे उनके खिलाफ कोई शिकायत नहीं है।

प्रश्न. (यह सरदार गुरदित्तसिहने पूछा था) जब सनातन धर्म सभाने २ सितम्बरको माफीकी बात सोची थी तब क्या उसने उनपर आपके सामने ही विचार किया था? क्या आप उस समय वहाँ मौजूद थे?

उत्तर तब मैं वहाँ नहीं था। मुझे तो खत मिलनेपर ही उसका पता चला। उसमें क्षमाका कोई जिक्र नहीं था।

प्रश्न (यह मौलाना शौकत अलीने पूछा था) क्या आपको यह मालूम हो पाया था या आपने यह मालूम करनेकी कोशिश की थी कि शहरके या बाहरके मुसलमान ८ तारीखको या उससे पहले लूट करनेके लिए बुलाये गये हैं?

उत्तर नहीं।

प्रश्न यदि इस तरहकी कोई हलचल हुई होती, या दूसरे लोगोने ऐसा किया होता तो क्या ऐसा हो सकता है कि यह मामला आपके ध्यानमे न आता?

उत्तर: अगर ऐसी कोई साजिश या हलचल होती तो मुझे किसी-न-किसी तरह उसकी खबर मिल जाती।

प्रश्न　९ तारीखकी घटना पूर्व नियोजित थी या अचानक हो गई थी?

उत्तर: मुसलमानोंने कोई ऐसी योजना नहीं बनाई थी। कमसे-कम मुझे उसकी कोई सूचना नहीं थी।

प्रश्न　क्या आप यह जानते हैं कि खिलाफतके किसी कार्यकर्त्ता या स्वयंसेवकने हिन्दुओंके घरोंको लूटने या जलानेमें हिस्सा लिया था?

उत्तर: नहीं।

प्रश्न　क्या उन्होंने किसी बाजारको जलानेमें या लूटनेमें अथवा लोगोंको उत्तेजना देनेमें भाग लिया था?

उत्तर: नहीं, मेरा खयाल ऐसा नहीं है।

प्रश्न　कोहाटमें स्वयंसेवक कितने हैं?

उत्तर: आजकल कोहाटमें १४ या १५ स्वयंसेवक हैं।

प्रश्न　क्या उनमें से किसीने इसमें भाग लिया था?

उत्तर: मेरे कानोंमें यह बात आई तो थी, लेकिन मैं नहीं कह सकता कि उन्होंने वैसा किया है।

प्रश्न　जब खिलाफतने असहयोगका एलान किया था तब आपने असहयोग किया था। फिर आपने सहयोग कब शुरू किया?

उत्तर: मैंने अपने स्वयंसेवकोंके साथ सिर्फ उन्हीं कार्योंमें हिस्सा लिया जिनमें सरकार हिस्सा लेती थी ताकि लोग मुसीबतमें न पड़ें।

प्रश्न　क्या आप इससे पहले डिप्टी कमिश्नरके पास गये थे और आपने सहायता माँगी थी?

उत्तर: एक साल पहले जब मैं अंजुमनमें शामिल हुआ था तब मुझे अंजुमनके स्कूलके लिये डिप्टी कमिश्नरके पास जाना पड़ा था। जबसे खिलाफत शुरू हुई तबसे इसके सिवा मैं कभी डिप्टी कमिश्नरके पास नहीं गया हूँ।

प्रश्न　फिर ऐसी कौन-सी मुसीबतें आईं जिनसे आपको अपना सिद्धान्त छोड़ना पड़ा?

उत्तर: लोग कार्यकर्त्ताओंपर शक कर रहे थे कि वे किसीकी बात नहीं सुनते। वे सिर्फ मुझपर विश्वास करते थे। अगर इस वक्त मैं मैदानसे हट गया होता तो इस तरहके लोग मैदानमें आते और तब और भी ज्यादा मुसीबतें आतीं।

प्रश्न　आप सरकारी अधिकारियोंसे कबसे मिलने-जुलने लगे?

उत्तर: मैं उनसे पुस्तिकाके मामलेके वक्तसे मिलने-जुलने लगा था और मैंने ऐसा किसी संस्थाकी ओरसे नहीं किया था। मैं जबसे खिलाफत आन्दोलनमें शामिल हुआ, मैंने तभीसे सहयोग छोड़ दिया था।

प्रश्न　क्या आपने अपनी तसल्लीके लिए यह पूछताछ की थी कि गोलीमें सबसे पहले मुसलमान लड़का मरा है?

उत्तर: हाँ, गोलीकी बात सुनकर ही मैं बाजार गया था।

प्रश्न अगर ऐसी घटना नही होती तो फसाद भी नही होते। क्या आप ऐसा विश्वास करते है?

उत्तर निश्चय ही न होते।

प्रश्न (मौलाना शौकत अली द्वारा) क्या स्वयसेवकोने लूटमें भाग लिया था?

उत्तर मैं ऐसा कसम खाकर नहीं कह सकता कि किसी भी स्वयसेवकने इसमें भाग नहीं लिया था।

प्रश्न क्या आपने इस बारेमे कुछ सुना है?

उत्तर मैने इस वारेमें बहुत-कुछ सुना है। मैं नहीं समझता कि किसी मुसलमानने लूटमारमें हिस्सा लिया है।

प्रश्न क्या खिलाफतके लोगोने दूकानोको लूटने और जलानेमे तथा हिन्दुओको सतानेमे हिस्सा लिया था?

उत्तर मैं इसके बारेमें कसम नहीं खा सकता। मैने शिकायतें सुनी है कि मुसलमानोने इनमें हिस्सा लिया है।

(पीर साहबने कहा है कि कोई भी मुसलमान इससे अलग नहीं था। खिलाफती स्वयसेवक भी इसमें शामिल थे।)

प्रश्न क्या आपने सुना था कि खिलाफती स्वयसेवकोने भी लूटमारमें भाग लिया है?

उत्तर हाँ, मैने सुना था।

प्रश्न क्या खिलाफती स्वयसेवक, लूटके लिए बाहरी लोगोको बुलानेके लिए बाहर भेजे गये थे?

उत्तर मुझे इसकी कोई जानकारी नहीं है।

रातको ८.३० बजे समाप्त

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०५३१) से।

४०. तार: मदनमोहन मालवीयको[1]

७ फरवरी, १९२५

पंडित मालवीयजी
बिड़ला हाउस
दिल्ली

भटिण्डा मेलसे कल सुबह दिल्ली पहुँच रहा हूँ।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१ यही तार उसी दिन मोतीलाल नेहरू और अलीगढके ख्वाजा अब्दुल मजीदको भी भेजा गया था।

४१. काठियावाड़ियोंसे

मै कुछ ही दिनोमे काठियावाड फिर जाऊँगा, और इस बार राजकोट जाऊँगा। भाई भरूचापर तो काठियावाडका ऐसा प्रभाव पडा है कि उन्होने वहाँ अधिक समय तक टिकने और खादी तथा चरखेका प्रचार करनेकी अनुमति माँगी है। हम लोग आरम्भ-शूर होते है, आशा है यह आरोप इस मामलेमे तो सत्य सिद्ध नही होगा। राजकोटके राजनीतिक कार्यकर्त्ता निश्चय करे तो वे राजकोटमे और काठियावाडके अन्य भागोमे भी नवजीवनका सचार, कर सकते है। "अन्य भागोमे" इसलिए कि राजकोट केन्द्र है और एजेन्सीका सदर मुकाम होनेसे वहाँ सभी राजनीतिक कार्यकर्त्ता भी इकट्ठे होते रहते है। राजनीतिक कार्यकर्त्ताओको समयकी तगी रहती है, ऐसा तो कोई नही कह सकता। फिर उनका जन-साधारणपर प्रभाव भी है ही। वे काठियावाडको खादीमय वनाकर उसे पुन शक्ति दे सकते है और जो लोग काठिया-वाडमे से कुछ सेर वाजरेकी खातिर अन्यत्र जाते है उनको वही रोक रख सकते है। चरखेसे एक व्यक्ति कितना कमा सकता है, ऐसा प्रश्न करनेसे ठीक उत्तर नही मिल सकता। किन्तु इससे काठियावाडकी सामान्य जनतामे कितना धन रह जायेगा, यह हिसाव लगानेसे प्रश्नका उत्तर अवश्य समाधानकारक मिलेगा। नमकके करमे रुपयेमे एक पाई वढनेसे प्रत्येक मनुष्यको कितना वोझ उठाना पडता है, यह सोचे तो हम परेशान नही होते, किन्तु उससे कितने अधिक करकी वसूली हो जाती है, यह जानकर हैरानी होती है। इस प्रकारकी हानि "रापीके घाव[1]"के समान होती है। जन-समूहपर उसका सामूहिक प्रभाव होता है। इस आधारपर हिसाव लगानेसे मालूम हो सकता है कि उसका प्रत्येक मनुष्यपर क्या प्रभाव होता है।

चरखेके सम्वन्धमे भी यही वात है। मान ले कि सूत कातनेसे प्रत्येक मनुष्यके घरमे प्रतिदिन आवा आना आता है। इस हिसावसे उसके घरमे वर्षमे वारह रुपये आयेगे। यदि हम प्रत्येक घरमे पॉच मनुष्य माने तो २६,००,००० – ५ = ५२,००,०० घर × १२ रु० = ६२,४०,००० रुपये काठियावाडमे वर्पभरमे वचेगे। अव दूसरी तरहसे हिसाव लगाये। यदि छव्वीस लाखकी आवादीमे प्रति मनुष्य औसतन पॉच रुपयेका कपडा लिया जाता हो तो इस हिसावसे काठियावाडमे १,३०,००,००० रुपयेका कपडा काममे आता है। यदि हम इसमे से रुईके मूल्यके रूपमे तिहाई रकम कम कर दे तो काठियावाड ९०,००,००० रुपये वचायेगा।

मान ले कि काठियावाडके लोगोको वम्वई सरकारको प्रति वर्प नव्वे लाख रुपये करके रूपमे देने पडते हो और उसका यह कर माफ कर दिया जाये तो उससे काठियावाडके लोगोमे कितनी चेतनता आ जायेगी। यदि हम प्रति व्यक्ति हिसाव

१. चमार उस औजारसे चमड़ेमें छेद करके जव उसे हटाता है तो छेद फिर मुँद-सा जाता है। मगर वह वास्तवमें मुँदता नही है।

लगाना छोड दें तो हमे अप्रत्यक्ष रूपसे होनेवाला यह हानि-लाभ मालूम हो जायेगा। मै काठियावाडके लोगोसे ऐसे सामूहिक हानि-लाभका ही हिसाव लगानेकी आशा करता हूँ। यदि आज काठियावाड ऐसा हिसाव लगाने लगे तो कल समस्त भारत ऐसा ही करेगा। मुझे क्या लाभ है, यदि हम इस प्रकार हिसाव लगायेगे तो परिणाम वुरा और विनाशकारी होगा। जव हमें 'लोगोको क्या लाभ होगा?' इसी दृष्टिसे सामूहिक हिसाव लगानेकी टेव पडेगी, तभी हमारे देशमे लोकहितके कार्य होगे। यदि सभी लोग अपना व्यक्तिगत लाभ चाहेगे तो सभीका नाश होगा, किन्तु यदि सभी सवका अर्थात् सामूहिक लाभ देखेगे तो उससे प्रत्येक व्यक्तिका और समस्त लोक-समुदायका लाभ होगा।

यदि काठियावाडके लोग इस पद्धतिसे विचार करे तो वे चरखेका चमत्कार तुरन्त समझ जाये और मै इसी दृष्टिसे एक मासमे किये गये उनके कार्यका हिसाव प्राप्त करनेकी आशा करता हूँ। जिन्होने सूत कातनेकी प्रतिज्ञा की थी, क्या उन्होने नित्य सूत काता है? जिनको सूत कातना नही आता था, क्या उन्होने सूत कातना सीख लिया है? लोगोसे भिक्षाके रूपमे जो कपास देनेकी प्रार्थना की गई थी, क्या वह कपास इकट्ठी कर ली गई है? यदि वह इकट्ठी कर ली गई हो तो क्या उसका कोई उपयोग सोच लिया गया है? इस प्रकार अभी कार्यवाहक समितियो और सभी कार्यकर्त्ताओको ऐसी कई वातोका हिसाव देना है।

मै राजकोटसे भी किये हुए कामका ऐसा ही हिसाव पानेकी आशा करता हूँ। राजकोटमें मुझे मानपत्र देनेकी तैयारियाँ की जा रही है। मुझे क्यो मान देना है? किन्तु यदि मान देना उचित ही लगे तो लोग मेरे सम्मुख सूतका ढेर लगाकर और स्वय खादीसे सज्जित होकर मुझे मान दे सकते है। मेरा परितोष शब्दाडम्वरसे तो नही हो सकता। मै काठियावाडमें यह जो दूसरी वार प्रवेश करूँगा, वह केवल खादी और चरखेके प्रचारकी आशासे, अस्पृश्योकी सेवाके निमित्त और राजा और प्रजाकी सेवाके उद्देश्यसे ही करूँगा।

मुझे राजकोटमें एक राष्ट्रीय शाला खोलनी है। मेरा विश्वास हे कि इस शालामें शुद्ध राष्ट्रीय सेवक काम कर रहे होगे। इस शालाके निमित्त गुजरात प्रान्तीय समितिने खासी वडी रकम दी है। इसके लिए माननीय ठाकुर साहवने सस्ते भावमे जमीन दी है। मै चाहता हूँ कि राजकोटके नागरिक इस शालाके कार्यमे रस ले। वे इस शालाको देखें-भाले, यदि उसके कार्यमे भूले हो तो उनको सुधारे और यदि उसमे चरित्रवान् अध्यापक कार्य करते हो तो उसमे अपने वालकोको भेजकर सहायता दे। उचित तो यही है कि इसका खर्च राजकोटके लोग ही उठाये।

इस वारकी काठियावाडकी यात्रामें वढवान भी सम्मिलित है। मै वहाँकी राष्ट्रीय शालाके निमित्त कुछ घटे दूंगा। इस शालाके निमित्त वहुत त्याग किया गया है। मैंने इसकी आलोचना भी वहुत सुनी है। कई वार उसपर सकटोके वादल आये है, और विखर भी गये है। वढवानमें खादीका कार्य किया गया है। वढवान मोतीलालकी भूमि है। उसको भाई शिवलालके साहस और धनका लाभ मिला है। मै वढवानसे वहुत आशा रखता हूँ। मेरा विश्वास है कि इसमे वढवान मुझे निराश न करेगा।

मैं यह चाहता हूँ कि सभी स्थानोमे मेरे मान-सम्मानमे समय नष्ट करनेकी अपेक्षा मुझसे सेवा लेनेका ही विशेष ध्यान रखा जाये। व्यवस्थापकोसे मेरी विनती है कि वे ऐसी व्यवस्था करे जिससे मेरा और लोगोका समय व्यर्थके भाषणोमे नष्ट न हो। क्या मुझे यह माँगनेका अधिकार नही है कि सभा जहाँ अनिवार्य हो वही की जाये और उसमे सब भाई-बहन खादी पहनकर ही आये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-२-१९२५

४२. मैसूरके महाराजा

मसूरके महाराजा साहब चरखा चलाने लगे है। जिन लोगोने कताईको धर्म मान लिया है उन्हे इस समाचारसे प्रसन्नता हुए बिना न रहेगी। सवाददाता यह भी सूचित करते है कि यह सर प्रभाशकर पट्टणीके कातना शुरू करनेका परिणाम है। इन सब उदाहरणोसे हमे फूल नही जाना चाहिए। लेकिन इनसे यह तो सूचित होता ही है कि चरखा चलानेमे कितना और कैसा आकर्षण है। फिर बडे आदमियोकी मिसालका असर सर्वसाधारणपर भी पडता है। मै मैसूरके महाराजाको धन्यवाद देता हूँ और आशा रखता हूँ कि वे अपने आरम्भ किये कार्यको आजन्म नही छोडेगे। यह प्रारम्भ उनके और प्रजाजन दोनोके लिए कल्याणकारी है। इसका परिणाम आज भले ही कम दिखाई दे, परन्तु मुझे इस विषयमे जरा भी सन्देह नही कि अन्तमे वह एक विशाल वृक्षके रूपमे सुशोभित हो जायेगा। सूत-कताई महाराजा और प्रजा दोनोको जोडनेवाली सुनहली जजीर बन जायेगी। इससे इस नियमका पुनरुद्धार होगा कि राजाओको उपयोगी और प्रजा-पोषक उद्यम करना चाहिए। और यह जानकारी कि गरीबसे-गरीब प्रजाके उद्यमके लिए भी महाराजाके महलमे स्थान है, हमेशा प्रजाजनोको प्रोत्साहित करती रहेगी एव इससे यह बात सिद्ध होगी कि राजा और रकके दरम्यान वस्तुत 'जाति भेद' नही है। पर ऐसे नतीजे थोडे दिनो उद्यम करनेसे नही निकल आया करते। उसके लिए निरन्तर, नियमित और श्रद्धामय उद्यमकी आवश्यकता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-२-१९२५

विद्यापीठको भी विद्यार्थियोके लिए समाज-सेवाका कार्य करनेकी दृष्टिसे ऐसे क्षेत्र चुनने होगे जो उन्हे सेवाके साथ आजीविका प्राप्त करनेके साधन भी दे सके। आजीविका, विद्याका लक्ष्य न हो लेकिन उससे आजीविका प्राप्त करनेकी सामर्थ्य तो मिलनी ही चाहिए। विद्याका लक्ष्य है आत्मविकास। जहाँ आत्मविकास हुआ वहाँ आजीविका तो हस्तगत हो ही गई।

यह भी देखा गया है कि अग्रेजी जाने बिना विद्यार्थियोको तृप्ति नही होती। वे साहित्यके ज्ञानकी भी अपेक्षा रखते है। इसमे नुकसान कुछ नही है। हमे सिर्फ यही देखना है कि वे इसके अन्ध-पुजारी न बने, वही एकमात्र ध्येय न बन जाये, वह एक प्रकारका बुद्धिविलास न बन जाये। अपने उचित स्थानपर वह अवश्य ही एक सुन्दर वस्तु है और उसके लिए स्थान भी नि सन्देह है।

यह नही कहा जा सकता कि सरकारी विद्यापीठोका पाठ्यक्रम केवल हानिकारक ही है। मुझे कभी ऐसा आभास नही हुआ कि उनकी सब बाते त्याज्य है। उसकी तोतारटत, मातृभाषाका अनादर, अग्रेजीका आडम्बर, इतिहासका एकपक्षीय ज्ञान, प्राचीन सस्कृतिकी अवहेलना, सयमका अभाव — यह और ऐसी सब बाते अवश्य ही त्याज्य है।

यही सबब है कि मै यह मानता हूँ कि विद्यापीठके पाठ्यक्रममे सुधारकी बहुत-कुछ गुजाइश है। लेकिन ऐसा कहना आसान है। यह सुधार लागू कौन करे? अनुभव तो किसीको भी नही है। जिन लोगोके हाथमे पाठ्यक्रमके सूत्र है वे सब सरकारी विद्यालयोकी छापवाले है। उनमे से किसी-किसीके मनमे इन विद्यालयोके प्रति विरक्ति हुई है, किन्तु नया ज्ञान और नया अनुभव वे लावे कहाँसे? इसलिए राष्ट्रीय पाठ्यक्रममे त्रुटियाँ दिखाई देती है। आचार्योने प्रत्येक स्थलमे उचित रद्दोबदल करनेका यथाशक्ति प्रयास किया है और उसे घटाने-बढानेमे वे सफल भी हुए है।

अब डा० सुमन्त मेहताकी योजनाके बारेमे दो शब्द कहता हूँ। मै मानता हूँ कि उनकी योजनाके अनुसार कार्यक्रम बनाया जाना चाहिए। उसमे कितने ही विषय ऐसे है कि जो महाविद्यालयके पाठ्यक्रमके प्रारम्भिक कालमे ही पढाये जा सकते है। कितने तो उसके भी पहले सिखाये जा सकते है और कुछ सामान्य अध्ययन पूरा होनेपर सिखाये जानेके लायक मालूम होते है। मै डा० सुमन्त मेहताको अपनी योजना तैयार करनेका निमन्त्रण देता हूँ। इतना तो मै उन्हीको पत्र लिखकर कर सकता था। लेकिन इस विषयपर यहाँ चर्चा करनेका कारण तो यह है कि उसपर शिक्षक और शिक्षित लोग विचार करे, उसकी चर्चा करे और डा० सुमन्त मेहताकी मदद करे। हम लोगोके पास विचारक बहुत कम है और जो है वे अपने-अपने क्षेत्रमे बधे पडे है। दिन-प्रतिदिन यह स्थिति दृढ होती जा रही है और उसमे कोई हानि भी नही है। यदि हर आदमी प्रत्येक विषयमे टाँग अडाने लगे तो वह न अपने साथ और न उन विषयोके साथ, अच्छी तरह न्याय कर सकता है। क्षेत्र चुनकर उसकी साधना किये बिना हम लोग इष्ट फल नही प्राप्त कर सकते। इसलिए योजनाको सफल बनानेका भार तो डा० साहबको ही उठाना होगा। विचारशील शिक्षक और विद्या-प्रिय समाज-सेवक उन्हे मदद करेगे। मेरा कार्य तो इन दोनोको पास लाना और साथ ही

कुछ अपना अभिप्राय जाहिर करना था। डाक्टर साहब स्वय एक वर्षका क्षेत्र-सन्यास लेकर पेटलादमें बैठ गये है। वहाँ उन्हे अपनी योजनाका प्रयोग करनेका अच्छा अवसर प्राप्त हुआ है। इनने उन्हे अपनी योजनाका विकास करनेमे कुछ आसानी होगी।

योजना परिपक्व हो जानेपर उसके अनुसार कार्य करनेवाले शिक्षकोकी जरूरत होगी। किन्तु यह एक दूसरा सवाल है और मेरा विश्वास हे कि प्रसग आनेपर वे भी मिल जायेगे।

[गुजरातीमे]

नवजीवन, ८-२-१९२५

४४. कोहाटके हिन्दू

[९ फरवरी, १९२५][1]

मै जानता हूँ कि पाठक इस सप्ताहके 'यग इडिया'के पन्नोमे, कोहाटकी पिछले सितम्बरकी शोकमय घटनाके विपयमें मौ० शौकत अलीके और मेरे निर्णयोको खोजेगे। पर खेद है कि उन्हे निराश होना पडेगा। क्योकि मौ० शौकत अली मेरे साथ नही है और उन्हे दिखाये विना इस विपयमें कोई वात प्रकाशित करना कदापि उचित न होगा। फिर भी मै पाठकोसे इतना तो कहे देता हूँ कि मैने जो राय कायम की है उनपर प० मोतीलालजी, प० मालवीयजी और हकीम अजमलखाँ सा०, डा० अन्सारी और अली भाइयोंसे भी चर्चा कर ली गई है। सावरमती आते हुए रास्तेमे मैंने अपने विचारोको अभी लिखकर खतम किया है। तुरन्त ही वे मौ० शौकत अलीको भेजी जायेगी और उन्हे मौ० शौकत अलीकी पुष्टि अथवा सशोधनके साथ प्रकाशित करनेकी आशा रखता हूँ। परन्तु हमारे निर्णयोको छोडकर, मै हिन्दुओको फिर यही सलाह देता हूँ कि यदि मै उनकी जगह होता तो जवतक सरकारके दखल दिये विना मुसलमानोसे इज्जतके साथ सुलह न हो जाती, मै वहाँ न लौटता। यह इस मौकेपर मुमकिन नही है, क्योंकि वदकिस्मतीसे मुस्लिम कमेटीके लोग, जो कि कोहाटके मुसलमानोकी रहनुमाई कर रहे है, न तो हमसे मिलने आये और न उन्होने इसे जरूरी समझा। मै देखता हूँ कि हिन्दुओकी हालत नाजुक है। वे अपनी मिल्कियतको गँवाना नही चाहते। मौलाना साहव और मै दोनो ही सुलह करानेमे कामयाव न हुए। हम तो कोहाटके खास-खास मुसलमानोको वातचीतके लिए भी वुलानेमें समर्थ न हो सके। और न मै यही कह सकता हूँ कि आगे भी हो सकेगे। ऐसी हालतमे हिन्दू लोग जो मुनासिव समझे करे। हमारे नाकामयाव होते हुए भी मै तो उन्हे सिर्फ एक ही रास्ता वता सकता हूँ — जवतक मुसलमान आपको इज्जत और गौरवके साथ ले न जायें, कोहाट न लौटें, पर मै जानता हूँ कि यह सलाह, सिवा उन लोगोके जो अपने पैरोपर खडे रह सकते है और जिन्हे किसीकी सलाहकी जरूरत नही हे, औरोके लिए कष्ट निवारण करनेकी

१ यह लेख गाधीजीने ९ फरवरीको सावरमती लौटते समय लिखा था।

दृष्टिसे बहुत कामकी नही है। और कोहाटके शरणार्थी दूसरी श्रेणीमे आते है। मैंने अपने विचार पण्डित मालवीयजीतक पहुँचा दिये है। वही प्रारम्भसे उनके पथ-प्रदर्शक रहे है और उन्हे उन्हीकी सलाहके अनुसार चलना चाहिए। लालाजी[1] पिण्डी आये थे, पर बदकिस्मतीसे वे बीमार हो गये। मेरी अपनी राय जो बहुत विचारके बाद मैंने कायम की है, मौ० शौकतअलीके पास भेजे गये मेरे वक्तव्यमे व्यक्त है। मगर यह बात तो मै पहले ही से कबूल कर लेता हूँ कि उससे उन लोगोको कुछ भी तसल्ली न मिलेगी। मुझ तो अब एक टूटी नाव ही समझिए। वह भरोसा करने लायक नही है।

परन्तु इस बारेमे कि वे जबतक कोहाटके बाहर है, क्या करे, मै उन्हे नि सकोच सलाह दे सकता हूँ। मै यह कहे बिना नही रह सकता कि हट्टे-कट्टे और मजबूत हाथ-पैर रखनेवाले लोगोका दानकी रकमोपर बसर करना अपने सत्वको गँवाना है। उन्हे चाहिए कि वे खुद अथवा वहाँके लोगोकी मददसे कुछ-न-कुछ काम अपने लिए ढूँढ ले। मैंने उन्हे धुनने, कातने और बुननेतक का काम सुझाया है। पर वे कोई भी अपनी पसन्दका अथवा जो उन्हे दिया जाये ऐसा काम ले सकते है। मेरे कहनेका भाव यह है कि किसी भी स्त्री-पुरुषको, जो काम करनेकी ताकत रखता है, दानके सहारे पेट नही भरना चाहिए। एक सुव्यवस्थित राज्यमे काम करनेकी इच्छा रखनेवाले हरएक शख्सके लिए काफी काम हमेशा होना चाहिए। आश्रित लोगोको, जबतक कि राष्ट्र उनका भरण-पोषण कर रहा है, अपने एक-एक मिनटका ठीक हिसाब देना चाहिए। "निठल्ले आदमीको शैतानी तो सूझेगी ही" यह महज किसी स्कूली किताबकी कडी नही है। इसमे एक बडा सत्य है और हर शख्स उसका अनुभव कर सकता है। गरीब, अमीर, उच्च-नीच सबपर एक-सी मुसीबत छाई है—सब मुसीबतके मारे हुए एक दूसरेके सगाती हो गये है। धनी और खुशहाल लोगोको चाहिए कि वे खुद आगे बढकर अच्छी तरह मेहनत करके दूसरोके लिए मिसाल पेश करे, फिर चाहे वे मुफ्त राशन न लेते हो। यदि किसी राष्ट्रके लोग कोई ऐसा हुनर या धन्धा जानते हो जो गाढे वक्त उन्हे सहारा दे तो इससे देशको कितना बडा लाभ होगा? यदि ये शरणार्थी भाई धुनना, बुनना या कातना जानते होते तो इनके दिन कही बेहतर और इज्जतके साथ कटते। उस हालतमे शरणार्थियोका वह शिविर मधुमक्खीके छत्तेकी तरह चहल-पहलका केन्द्र बन गया होता और उसे अरसेतक चलाना आसान होता। यदि वे लोग तत्काल न लौटनेका निश्चय करे, तो अब भी वक्त निकल नही गया है। अनाज बाँटना गलती है। व्यवस्थापक लोगोके लिए ऐसा करनेमे आसानी है, पर इससे शरणार्थियोमे बडी बेतरतीबी फैलती है और इसमे अन्न भी ज्यादा बरबाद होता है। उन्हे चाहिए कि वे अपनेको सिपाहियोकी तरह अनुशासित करे—नियमसे उठे, नियमसे नहाये, धोये, नियमसे ईश्वर-भजन करे, नियमसे भोजन करे, नियमसे काम करे और नियमसे सोये। कोई वजह नही मालूम होती कि उनके बीच 'रामायण' का अथवा और किसी धर्म-पुस्तकका पाठ आदि क्यो न हो। इन सबके

१. लाला लाजपत राय।

लिए विचार करने, सावधानी रखने, ध्यान रखने और श्रम करनेकी बडी जरूरत है। ऐसा करे तो यह मुसीबत, मुसीबत न रहकर, एक सुख बन जाये।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-२-१९२५

४५. तार: मदनमोहन मालवीयको

९ फरवरी, १९२५

पण्डित मालवीय
बिडला भवन
दिल्ली

गोरक्षा संविधानकी क्या स्थिति है? आशा है आप आज रावलपिण्डी जा रहे हैं।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

४६. तार: जयरामदास दौलतरामको[1]

९ फरवरी, १९२५

जयरामदास
द्वारा रामप्यारेलाल वकील
रावलपिण्डी

तार द्वारा लालाजीके स्वास्थ्यकी सूचना दीजिए। ९ सितम्बरको कोहाटके पास जिन दो व्यक्तियोंकी हत्या की गई उनके नाम तथा अन्य विवरण भेजिए।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१ जयरामदास दौलतराम कोहाटके दंगोंके सिलसिलेमें गांधीजीके साथ रावलपिंडी गये थे।

४७. पत्र : चमनलाल वैष्णवको

माघ वदी १ [९ फरवरी, १९२५][1]

भाई चमनलाल,[2]

मैं यह पत्र गाडीमें लिख रहा हूँ। तुम्हारा कार्ड मिल गया है। वहाँ १६ तारीखसे पहले आना नामुमकिन है। मुझे लगता है कि मैं २० या २१ तारीखके आसपास आ सकूँगा, या फिर आनेका कार्यक्रम ही रद कर दिया जाये।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २८६९) से।

सौजन्य : शारदाबहन शाह

४८. पत्र : देवचन्द पारेखको

माघ वदी १ [९ फरवरी, १९२५][3]

भाई देवचन्दभाई,

यह पत्र गाडीमें लिख रहा हूँ। तार भेजनेका खर्च बचा रहा हूँ। तुम्हारा पत्र मिल गया है। वाकानेर १४ तारीखको पहुँचना सम्भव नहीं है। सब वक्त बोरसदमें लग जायेगा। किन्तु यदि सब राजकोट आ जाये तो १५ तारीखको एक घंटा वाकानेरको दिया जा सकता है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजराती पत्र (जी० एन० ५७१२) की फोटो-नकलसे।

१ गांधीजी वढवान २१ फरवरी, १९२५ को गये थे और वहाँ उन्होंने एक बाल-पाठशालाका उद्घाटन किया था।

२ वढवानके एक राजनीतिक कार्यकर्ता।

३ पत्रपर डाकखानेकी ११ फरवरी, १९२५ की मुहर है।

५१. तार : प्रभाशंकर पट्टणीको

साबरमती
१० फरवरी, १९२५

सर प्रभाशकर पट्टणी
भावनगर

आपका पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। धन्यवाद। आशा है आप अब स्वस्थ हो गये होगे।

गाधी

अग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ३१९१) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य महेश पट्टणी

५२. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

माघ वदी २ [१० फरवरी, १९२५][1]

सुज्ञ भाईश्री,

मै कल रात रावलपिण्डीसे वापस आया हूँ। आपका पत्र मुझे आज मिला। मै इसकी राह ही देख रहा था। तार द्वारा कृतज्ञता व्यक्त किये बिना जी नही माना। पत्र-लेखकपर रोष न करे। मै आपको उसका नाम आदि भी बतानेके विषयमे सोचूँगा। आप किसी भी पत्रको गोपनीय नही समझते यह पढकर तो मुझे मानव-जातिपर और भी अधिक अभिमान हुआ है। मेरा गर्व घटा है। मै तो यही समझता था कि ऐसा तो एक मै ही होऊँगा। आप तो मुझसे ऊँचे उठ गये है, क्योकि आप ऐसे वातावरणमे रहते है जिसमे व्यक्तिगत जीवनको प्रकट करना कठिन होता है। यदि लेखक कोई षड्यन्त्री या दुर्जन होता तो मै आपको उसके पत्रमे से कुछ भी न लिखता और अपने मनपर भी कतई कोई असर न पडने देता। किन्तु लेखक सज्जन है, विवेकी है, सयमी है और विद्वान् है। उसे आपसे कोई द्वेष कदापि नही हो सकता; किन्तु उससे यह भूल कैसे हो गई यह बात मैं समझ सकता हूँ। मैं उसको आपके पत्रकी प्रतिलिपि भेज रहा हूँ।[2] इससे उसका उपकार ही होगा। वह ऐसे निर्मल मनका मनुष्य है कि यदि वह आपके पास आकर आपसे क्षमा याचना भी कर ले तो मुझे आश्चर्य न होगा। मैंने अच्छा किया जो आपको पत्र लिख

१. गाधीजी रावलपिंडीसे साबरमती ९ फरवरी, १९२५ को लौटे थे।
२ देखिए अगला शीर्षक और उसकी पाद-टिप्पणी भी ।

उपरोक्त बात कह चुकनेपर गांधीजीने कोहाटमें मुसलमान बनाये गये हिन्दुओकी[1] संख्याका उल्लेख किया और कहा :

सम्भव है यह सख्या अन्यत्र छोटी समझी जाये; किन्तु जिस क्षेत्रमे मुसलमानोकी सख्या मुश्किलसे १५,००० है उसमे यह भयकर मानी जायेगी। यहाँ हिन्दुओमे जागृति फैली। उनकी जागृतिको मुसलमान सहन न कर सके और जो लोग वैर निकालनेका मौका ढूँढ रहे थे उन्हे उक्त पुस्तिकाके रूपमे वहाना मिल गया। यदि यही एक कारण होता तो वे इस पुस्तिकाके प्रकाशकको गिरफ्तार करा सकते थे। वे उसे स्वय कुचल देते और चाहते तो पुस्तिकासे सम्बन्धित अन्य लोगोको भी कुचल देते। किन्तु वहाँ तो पूरी जातिपर ही अत्याचार किया गया। इसका कारण गहरा होना चाहिए। यह कारण अचानक ही मेरे हाथ लग गया। धर्म-परिवर्तनके सम्वन्धमे मुसलमानोने सब बाते साफ-साफ कह सुनाई। किन्तु उनकी इस प्रवृत्तिसे मुझे बहुत चोट पहुँची। यदि ३० करोड हिन्दू धर्म-पुस्तकोके अध्ययन और सोच-विचारके वाद मुसलमान हो जाये तो मुझे कुछ भी दु ख न होगा। तब मै अकेला ही हिन्दू वना रहूँगा। और इस प्रकार हिन्दुत्वके गौरवको वढाऊँगा अथवा यह कहे कि हिन्दुत्वके अमरत्वका साक्षी बनकर रहूँगा और कहूँगा कि ये सब हिन्दू हिन्दुत्वके तेजको सहन न कर सकनेके कारण मुसलमान हो गये है। किन्तु वहाँ तो यह हुआ कि हिन्दू लोभ या भयके कारण मुसलमान वन गये। यह स्थिति सहन नही की जा सकती। मै यह बात आपको दृढ वनानेके लिए कह रहा हूँ जिससे आप अपने धर्मपर आरूढ रहे। इसके वावजूद मेरी अहिंसावृत्तिमे, प्रेम भावनामे और मुसलमानोके प्रति मेरे सद्‌भावमे कोई अन्तर नही आयेगा। मै तो उनमे जितनी अधिक कमजोरियाँ देखूँगा उनकी उतनी ही अधिक सेवा करूँगा। मेरा प्रेमभाव तो अवश्य ही कायम रहेगा। किन्तु प्रेमकी भाषा वदल जायेगी। वह पहलेसे कठोर हो गई है और अभी अधिक कठोर होगी — ऐसे ही जैसे अग्रेजोके प्रति मेरी भाषा कठोर होती जा रही है। केवल इतना ही अन्तर होगा। आज आपको जाग्रत और सावधान करना ही मेरा हेतु है। मै आपको जाग्रत इसलिए करता हूँ कि किसी अवसरपर आपके ऊपर भी ऐसा सकट आ सकता है। यदि आश्रममे से किसी वालक या वालिकाका अपहरण किया जाये तो आप मेरे सिद्धान्तोका स्थूल अर्थ करके खडे-खडे देखते न रह जाये। आत्मशुद्धिका निश्चय अपने-आपमे वलदायक है। जिसका हृदय शुद्ध और पवित्र है उसको शरीर-वल वढानेकी आवश्यकता नही है। उसका शरीर तो अपने आप सशक्त हो जाता है। और तव केवल निश्चय ही पर्याप्त होता है। सोनेसे पूर्व राम-नाम लेना चाहिए, यह मेरा निश्चय है, इसलिए राम-नाम लिये विना मुझे कभी नीद ही नही आती। यदि आ जाती है तो मै नीदमे करवट वदलते समय राम-नाम लेता हूँ और मेरे राम मुझे अपने पास खडे दिखाई देते है। यही वात सभी निश्चयोपर लागू होती है।

आश्रममे तो सकट आनेपर एक वालकको भी डरना नही है। उसके पास आत्मवल नही है तो नख तो है। [इसके वाद उन्होने कहा,] हम नखोको इसलिए

१. देखिए "कोहाटके दगोंके वारेमें कमाल जिलानीसे जिरह", ६ फरवरी, १९२५।

काट देते हैं कि वे जब बढ़ जाते हैं तब उनमें मैल भर जाता है और उससे हानि पहुँचती है। इसलिए उन्हें हम काट देते हैं। इसी प्रकार हमें शरीरके उन तत्त्वोंको भी, जो हानिकारक हो जाते हैं एक-एक करके दूर करते रहना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

५५. पत्र : माणिकलाल अमृतलाल गांधीको

गाड़ीमें

मंगलवार [१० फरवरी, १९२५][1]

चि० माणिकलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने बाबूके सम्बन्धमें जो लिखा वह मैं समझ गया। तुमने उसे भेज दिया, यह ठीक किया। यदि उसे अनुकूल पड़े और वह रह सके तो अच्छा ही है।

प्रभुदासका स्वास्थ्य तो वहाँके जलवायुसे बहुत सुधरा है। यदि मणिका स्वास्थ्य भी ऐसे ही सुधरे तो कैसा अच्छा हो? किन्तु वह चिन्ता बहुत करती है। और चिन्ता तो मनुष्यको मार ही देती है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

आशा है मैं पोरबन्दर १९ तारीखको पहुँचूँगा। यदि महामारीका जोर बढ़ जाये तो क्या किया जा सकता है। इस बातपर तो देवचन्दभाई अवश्य ही विचार कर रहे होंगे।

चि० माणिकलाल अमृतलाल गांधी
राणावाव
काठियावाड़

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ८९०) से।
सौजन्य : माणिकलाल अ० गांधी

1. डाककी मुहरसे।

५६. पत्र : रामेश्वरदास बिड़लाको

साबरमती
माघ कृष्ण ४ [११ फरवरी, १९२५][१]

भाई रामेश्वरदासजी,

आपका पत्र मीला। जमनालालजी[२] आजकल यहा है। उन्होने मुझे खबर दी है कि रु० १०,००० उनकी पेढी पर मील गये है। उसका व्यय अत्यज सेवामे करूगा।

आपका,
मोहनदास गाधी

[पुनश्च]

आपका स्वास्थ्य अच्छा है जानकर आनन्द हुआ।

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६१०४) से।
सौजन्य घनश्यामदास बिडला

५७. भाषण : अंकलावमें

११ फरवरी, १९२५

स्वराज्य वही कहा जा सकता है जिसमे हमारे गरीबसे-गरीब भाई भी सुखसे रह सके। अगर लोगोको भूखसे मरनेकी नौबत आती है तो उसके लिए हम लोग, जिन्हे कभी अन्नका अभाव नही हुआ, उत्तरदायी है। इस गाँवमे सो साल पहले जो बहने रहती थी, वे सूत कातती थी और भाई सूत कातते या कपडा बुनते थे।

धारालाओमे दुर्व्यसन है। वे शराब पीते है और चोरी करते है। जबतक यह सब होता है तबतक धर्मकी रक्षा नही हो सकती। दुर्भाग्यसे यहाँके हिन्दू और मुसलमानोमें भी अनबन है। हमे अपना धर्म प्रिय होना चाहिए, किन्तु यदि अस्पृश्यता हिन्दू धर्मका अग हो तो मेरे लिए यह धर्म निकम्मा है। जो मनुष्य मैलसे अपवित्र हो गया हो वह स्नान करके शुद्ध हो जाता है किन्तु यदि हम उसे फिर भी अस्पृश्य माने तो यह पाप है। हिन्दुस्तानके लोग ससारके लिए ढेढ और भगी है। मनुष्य जैसा

१. पत्रपर डाकखानेकी मुहर ११ फरवरी, १९२५ की है पर १९२५में माघ कृष्ण चतुर्थी १२ फरवरीको पड़ी थी। पत्र सम्भवत. माघ कृष्ण ३ को लिखा गया होगा।

२. जमनालाल बजाज।

करता है, वैसा भरता है। हमारी दासताके लिए अंग्रेज दोषी नही हैं। हमारी ही अस्पृश्यताके पापरूपी वीजमे से दासताका वृक्ष उगा है।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

५८. भाषण : वोरसदमे

११ फरवरी, १९२५

वोरसद सत्याग्रह सघर्षके कारण तीर्थस्थान ही वन गया है। किन्तु जैसे हिन्दुस्तानके तीर्थ स्थान अव तीर्थ क्षेत्र नही रह गये हैं, कही वैसी ही हालत वोरसदकी भी तो नही हो गई? आप लोगोने वहाँ सघर्ष करके जो विजय प्राप्त की, वह कोई मामूली वात नही थी। किन्तु सघर्ष करना एक वात है और उसे समेट कर उसके वाद रचनात्मक कार्य करना दूसरी वात है। सघर्षका अच्छा परिणाम निकालना अति कठिन हो जाता है, वहुधा ऐसा प्रतीत होता है कि सघर्ष व्यर्थ ही किया। जैसे लम्वा उपवास करनेके वाद — उसकी ठीक समाप्ति कठिन हो जाती हे, वैसे ही लडाई करनेके वाद उसका ठीक अन्त करना भी कठिन हो जाता है। यह वात हमने खेडाके सत्याग्रहके वाद भी देखी और इस लडाईके वाद भी यही दिखाई दे रहा है। वहुत वडे क्षेत्रमे, यूरोपमे भी यही देखा गया था। वहाँ इग्लैड और जर्मनीके वीच वहुत वडा युद्ध हुआ था। इसमे वहुत वडा वलिदान किया गया और हमने यह आशा प्रकट की थी कि इसके फलस्वरूप यूरोपकी स्थिति वदल जायेगी। इसके परिणामस्वरूप यूरोपके लोग अधिक नीतिमान, पवित्र, सावधान और ईश्वरसे डरनेवाले वन जायेंगे। किन्तु वहाँ जो ढोग पहले चलता था वह आज भी चलता है और जिन लोगोने वलिदान किया था उनकी स्थिति दयनीय है। हमे आशा करनी चाहिए कि इस लडाई और उस लडाईमे जो अन्तर है, वह अन्तर उनके परिणामोमे भी होगा। वह लडाई विनाशकारी थी। सत्याग्रहकी लडाईमे एक भी पक्षका नाश नही होता, दोनोका भला ही होता है। फिर भी सत्याग्रह-जैसी शुद्ध लडाईमे अन्तमे जो परिणाम देखना चाहते हैं वह क्यो नही निकलता? इसका कारण यही है कि आवेश दोनो ही प्रकारकी लडाईमे पाया जाता है। हमे जितनी शान्ति और धीरता दिखानी चाहिए उतनी हम नही दिखा पाते, इसलिए ऐसा लगता हे मानो हमारे सव करे-धरेपर पानी फिर गया हो। किन्तु यहाँ तो मुझे दरवार साहवने[1] पहले ही चेतावनी दे दी थी कि वे हमे खादी-नगर वनाकर नही दिखा सकेंगे, क्योकि लोग इस लडाईके वावजूद खादीके महत्त्वको पूरी तरह नही समझे हैं। इसलिए मै यहाँ कोई वडी आशा लेकर नही आया हूँ और इसी कारण मुझे वहुत अधिक असन्तोष भी नही होता।

१ दरवार साहव गोपालदास।

एक शालाको चलानेके लिए भी बहुत शक्तिकी जरूरत होती है। जैसा पिण्डमे, वैसा ही ब्रह्माण्डमे, यह उक्ति सर्वत्र ही सत्य है। यदि मुझे सत्याग्रह आश्रमको चलाना ठीक तरहसे आता हो तो मै लॉर्ड रीडिंगकी गद्दी भी सहज ही सम्भाल सकता हूँ। मुझे सत्याग्रह आश्रमको चलानेमे जो कठिनाइयाँ होती है, उसके लिए मुझे जितना सोचना पडता है और जितनी समस्याओको सुलझाना पडता है, उतना तो हमे लडाईको चलानेमे भी नही करना पडता। लडाईको चलानेमे करना ही क्या पडता है? मै एक निश्चित कार्यक्रम बनाकर आपसे कहता हूँ कि यह कार्य करो। मै इसमे केवल अपनी जीभ हिला देता हूँ। किन्तु आश्रमको चलाना तो इससे बहुत अधिक कठिन काम है। मुझे इस जन्ममे वाइसराय बननेकी इच्छा नही है, इच्छा है तो केवल हिन्दुस्तानका सच्चा और शुद्ध सेवक बननेकी है। किन्तु मै इतना सहज कहना चाहता हूँ कि वाइसरायका काम करते हुए जितना श्रम करना पडता है, उससे अधिक आश्रमको चलानेमे करना पडता है। मै चाहता हूँ कि आप भी इस विनय-मन्दिरको चलानेमे जी-जानसे जुट जाये। यह काम आप जितनी निष्ठासे करेगे, आपकी आत्मा उतनी ही अधिक शुद्ध बनती चली जायेगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-२-१९२५

५९. भाषण: भादरनमे[1]

११ फरवरी, १९२५

आपने जो प्रेम दिखाया और अभिनन्दन-पत्र दिया उसके लिए आभार प्रकट करनेके पहले मै एक प्रार्थना करना चाहता हूँ। आप जो इतनी रात गये इतनी ज्यादा तादादमे यहाँ एकत्र हुए है यह देखकर मुझे बहुत आनन्द होता है, यदि मै यह बात न कहूँ तो मानो आपके प्रति अपराध ही होगा। परन्तु साथ ही मुझे दुःख भी हुआ है। इस सभाके व्यवस्थापकोने जो व्यवस्था की है वह जानबूझकर की है या अनजानमे, सो मै नही जानता। पर अबतक सभाओमे जानेवाले लोग मेरी खासियते जान गये है। इसमे एक यह है कि यदि किसी भी जलसेमे मै अन्त्यजोके लिए अलग विभाग देखूँ तो मुझे भारी चोट पहुँचती है और कुछ भी बोलना मेरे लिए असम्भव हो जाता है। आपने कहा है और दूसरे लोग भी कहते है कि अहिंसा मेरे जीवनका परम सूत्र है। अहिंसाको मै अपने जीवनमे गूँथ रहा हूँ। यदि यह बात सच हो तो मुझसे यह नही हो सकता कि मै आपके दिलको चोट पहुँचाना चाहता हूँ। मै यह भी नही चाहता कि आप बिना सोचे-समझे कुछ करे। रोषमे भी मै आपसे कुछ नही कराना चाहता। मै जो-कुछ आपसे करा सकता हूँ, वह आपके बुद्धि और हृदयको द्रवित करके ही। अतएव मेरी प्रार्थना है कि यदि आप

१. गुजरातके खेडा जिलेका एक गाँव।

अस्पृश्यताको हिन्दू धर्मका कलक मानते हो तो आप इस विषयमे मेरा समर्थन करे कि जो वाड हमे अन्त्यज भाइयोमे जुदा कर रही है, निर्मूल हो जाये।[1]

मै यह नही कहता कि आप वाडको अभी तोड डाले या सभाके काममे व्यवधान करके कुछ करे। मै तो आपकी सम्मति लेना चाहता हूँ। क्या आप चाहते है कि यह वाड न रहे और अन्त्यज भाई-बहन हमारे साथ आकर बैठे?[2] आपने मुझे अभिनन्दन-पत्र दिया है। आपने जिस चौकठेमें मढवाकर जिस कागजपर अथवा खादीपर छापकर अभिनन्दन-पत्र दिया उसका मेरे लिए कोई मूल्य नही है, अथवा उतना ही है जितना आप खुद अपने आचरणमे साबित करेंगे। पर अभी आपने इस वाडको तोडकर मेरा जो अभिनन्दन किया है, वह मेरे हृदयमे हमेशा अकित रहेगा। ऐसा ही अभिनन्दन-पत्र मै अपने हिन्दू भाई-बहनोमे चाहता हूँ। आप यदि मुझे थोडा-बहुत सूत लाकर दे देंगे, मेरे सामने तरह तरहके फल-फूल और मेवे लाकर रख देंगे, या अन्त्यज बालिकाके हाथसे कुकुम-तिलक करायेंगे (जैसा कि यहाँ कराया गया) तो इससे मुझे खुशी नही हो सकती। ये चीजे तो मुझे चाहे जहाँ मिल जायेगी, पर अभी आपने जो चीज दी है उसके लिए तो प्रेमकी जजीर दरकार है। और मैं इस प्रेमकी जजीरके सिवा आपसे कुछ नही चाहता। क्योकि प्रेम अहिंसाका अग है। प्रेममे अहिंसाका समावेश हो जाता है।

सनातनी भाइयोंसे मेरा यह कहना है कि वे यह न माने कि मै हिन्दू-समाज-को आघात पहुँचाना चाहता हूँ। मै खुद अपनेको सनातनी गिनता हूँ। मै जानता हूँ कि मेरा दावा बहुत कम भाई-बहन कुबूल करते होगें—पर मेरा यह दावा है और रहेगा। मै तो कई बार कह चुका हूँ कि आज नही तो मेरी मृत्युके बाद समाज इस बातको जरूर कुबूल करेगा कि गाधी सनातनी हिन्दू था। 'सनातनी' के मानी है 'प्राचीन'। मेरे भाव प्राचीन है—अर्थात् ये भाव मुझे प्राचीनसे-प्राचीन ग्रथोमें दिखाई देते है और उन्हे मै अपने जीवनमे उतारनेकी कोशिश कर रहा हूँ। इसी कारण मै मानता हूँ कि मेरा सनातनी होनेका दावा बिलकुल ठीक है। शास्त्रोकी कथाको रोचक बना-बनाकर प्रस्तुत करनेवालोको मै सनातनी नही कहता। सनातनी तो वही है जिसकी रग-रगमे हिन्दू धर्म व्याप्त हो। इस हिन्दू धर्मका वर्णन भगवान् शकरने[3] एक ही वाक्यमें कर दिया है—'ब्रह्म सत्य जगन्मिथ्या'। दूसरे ऋषियोने कहा है 'सत्यसे बढकर दूसरा धर्म नही।' और अन्योने कहा है कि अहिसा ही हिन्दू धर्म है। इन तीनमें से आप चाहे किसी सूत्रको ले लीजिए, उसमे आपको हिन्दू धर्मका रहस्य मिल जायेगा। ये तीन सूत्र क्या है, मानो हिन्दू धर्मशास्त्रोको मथकर निकाला उनका नवनीत ही है। धर्मका अनुयायी, सनातनधर्मका दावा करनेवाला मैं किसी भी शख्सके दिलको कदापि चोट नही पहुँचाना चाहूँगा। मै तो सिर्फ इतना ही

१ ये शब्द मुँहसे निकले ही थे कि कुछ लोग सभासे उठकर शान्तिके साथ बासकी टट्टियोंके बन्द छोड़ने लगे।

२ बहुतेरे हाथ ऊपर उठे, सिर्फ एक हाथ खिलाफ उठा, और अन्त्यजोको सबके साथ बैठा दिया गया।

३ आद्य शकराचार्य।

चाहता हूँ कि आप अन्त्यजोको छूनेमे परहेज न करे। अन्त्यज मनुष्य है। मै चाहता हूँ कि उनकी सेवा हो, क्योकि वे सेवाके लायक है। जैसी सेवा माता बालककी करती है वैसी ही वे समाजकी सेवा करते है। उनको अछूत मानना, उनका तिरस्कार करना मानो अपना मनुष्यत्व गँवाना है। हिन्दुस्तान आज ससारमे अछूत बन गया है। इसका कारण यह है कि उसने अनेक कोटि अर्थात् असख्य लोगोको अस्पृश्य मान रखा है। और इसका फल यह हुआ है कि हमारे साथ रहनेवाले मुसलमान भी दुनियामे अस्पृश्य माने जाने लगे है। यह उलटा परिणाम क्यो हुआ? इसका एक ही जवाब है। 'जैसा करोगे वैसा पाओगे' यह ईश्वरका न्याय है। ससारके द्वारा ईश्वर हमे इस न्यायकी शिक्षा दे रहा है। इसे समझना कठिन नही है, यह तो सीधा-सा न्याय है। "ये यथा मा प्रपद्यन्ते तास्तथैव भजाम्यहम्" भगवान् कृष्णने कहा है कि तुम जिस तरह मुझे भजोगे उसी तरह मै तुम्हे भजूँगा। इसलिए मैं आपसे जो-कुछ चाहता हूँ यदि आप उसे समझ लेगे तो आपको कष्ट नही उठाना पडेगा। मै आपको कष्ट नही पहुँचाना चाहता। मै आपसे जरूरतसे ज्यादा आशा नही करता। मै यह भी नही चाहता कि आप अन्त्यजोके साथ रोटी-बेटीका व्यवहार करे। यह तो आपकी इच्छाकी बात है। परन्तु अन्त्यजको अस्पृश्य मानना इच्छाका विषय नही है। जिसका स्पर्श करना चाहिए, उसे अस्पृश्य मानना और जो अस्पृश्य है, उनका स्पर्श करना, इच्छाका विषय नही है। यदि आप अन्त्यज भाइयोके दु खोको महसूस न कर सके, तो फिर आप 'सर्वं खल्विद ब्रह्म' किस तरह कह सकते है? उपनिषदोके रचयिताओमे पाखण्डी कोई भी न था। उन्होने जगतको ब्रह्ममय कहा है। अतएव हम यदि अन्त्यजके दु खसे दु खी न होगे तो हम अपनेको जानवरसे भी बदतर साबित करेगे। हमारा धर्म पुकार-पुकार कर कह रहा है कि जो जीव पशुमे है वही हम सब लोगोमे भी है। किन्तु हमने तो उस धर्मका गला ही घोट दिया है। अखा भगतने अस्पृश्य भावनाको धर्मका अधिकाग कहा है। मै तो दयाभावसे, प्रेमभावसे, भ्रातृभावसे इस अधिकागकी शल्यक्रिया करनेको कहता हूँ। यदि ऐसा करेगे तो हिन्दू धर्मकी शोभा बढ जायेगी। इसमे हिन्दू धर्मकी रक्षा भी आ जाती है। हेतु यह नही है कि अन्त्यजोका मुसलमान या ईसाई बनना रुकेगा। किसी भी धर्मका आधार उसके अनुयायियोकी सख्यापर अवलम्बित नही रहता। सख्याको धर्म-बलका आधार माननेसे बढकर भ्रान्त कोई भी धारणा नही है। यदि एक भी व्यक्ति सच्चा हिन्दू रहे तो हिन्दू धर्मका नाश नही हो सकता, और यदि पाखण्डी हिन्दू करोडो भी हो तो उनसे हिन्दू धर्मकी रक्षा नही होती, ऐसी अवस्थामे तो उसका विनाश ही निश्चित समझिए। मैंने जो यह कहा कि हिन्दू धर्म सुरक्षित रहेगा, उसका भाव यह है कि जब हम प्रायश्चित्त कर चुकेगे, अनेक युगोका ऋण अदा कर देगे, तभी हमें इस दारिद्र्यसे छुटकारा मिलेगा।

अस्पृश्यतामे घृणाभाव स्पष्ट है। कोई यदि कहे कि अस्पृश्य भावना रहते हुए भी मै अछूतोसे प्रेम करता हूँ, तो मै इस बातको कभी नही मान सकता। मुझे तो इसमे प्रेमभाव कही प्रतीत नही होता। यदि प्रेम हो तो हम उन्हे न तो दुरदुरा सकते है और न जूठन ही खिला सकते है। प्रेम हो तो हम उसी तरह उन्हे पूजेगे

जिस तरह माता-पिताको पूजते हैं। प्रेम हो तो हम उनके लिए अपनेसे भी अच्छे कुएँ, अच्छे मदरसे बनवा देगे, उन्हे मदिरोमे आने देगे। ये सब प्रेमके चिह्न है। प्रेम अगणित सूर्योसे मिल कर बना है। जब एक सूर्यका प्रकाश ही फैले बिना नही रहता तब भला प्रेम क्यो कर छिपा रह सकता हे? किसी माताको कही यह कहना पडता है कि मै अपने बच्चेको चाहती हूँ? जिस बच्चेको बोलना नही आता वह माताको आंखके सामने देखता है और जब आँख मिल जाती हे तब हम देखते है कि वे अलौकिक भावसे आप्लावित हैं।

मेरे कहनेमे कोई यह भी न मान बैठे कि दक्षिण आफ्रिकासे आया हुआ नई रोशनीवाला यह हिन्दू अपने विचार हिन्दू धर्ममे प्रविष्ट कर देना चाहता हे। मै कह सकता हूँ कि सुधार करनेकी मुझे अभिलाषा नही हे। मै तो स्वार्थी आदमी हूँ और खुद अपने ही मनमे मगन रहता हूँ। मै तो अपनी आत्माका कल्याण करना चाहता हूँ। इसलिए मै तटस्थ और निश्चिन्त बना बैठा हूँ। पर मै चाहता हूँ कि जिस आनन्दका अनुभव मै कर रहा हू उसका उपभोग आप भी करे। इसीलिए मै आपसे कहता हूँ कि अन्त्यजोका स्पर्श करके, उनकी सेवा करके जो आनन्द प्राप्त होता हे आप उसका उपभोग कीजिए।

वर और वधूको हम तो माला ही अर्पित कर सकते है। यदि वे प्रेमके बन्धनमे बँध जाये तो फिर हमे और चाहिए ही क्या? यदि वे परस्पर जीवनसगी बन जाये तो शेष क्या रह जाता हे? अगर इसमे अधिककी इच्छा किसीको हो तो फिर उसे विवाह करनेका अधिकार नही है। विवाहको अनिवार्य माननेकी बेढगी प्रथाके अन्तर्गत कोई विवाह न करे, मै तो यही चाहता हूँ। ऐसे कठिन सयोगमे पडी हुई कन्या यदि आजीवन कौमार्यका पालनकरे, तपश्चर्या करे, और उमाकी तरह व्रत लेकर बैठ जाये कि शिवके अतिरिक्त किसीसे विवाह नही करूँगी तो उसे इस जीवनमे नही तो अगले जीवनमे शिव अवश्य मिलेगे। ऐसी बालिका सारी जातिका मुख उज्ज्वल करेगी। मै चाहता हूँ कि सब लोग यह बात समझ जाये कि विवाह भोगका साधन नही है, सयमका साधन हे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-२-१९२५

६०. एक डायरीके पृष्ठ[1]

कुमारी ऐंगस और कुमारी हिडस्लेको अडचारसे डाक्टर बेसेटने पिंजाई, कताई आदि सीखनेके लिए आश्रममे भेजा था जिससे वे अडचार लौटकर दूसरे लोगोको उनकी शिक्षा दे सके। वे आश्रममे एक महीना रही और उन्होने अपने दैनिक अनुभव अपनी डायरीमे लिखे। जब वे वापस जाने लगी तो वे 'यग इडिया' मे प्रकाशनकी दृष्टिसे अपनी-अपनी डायरीके सम्बन्धित अश दे गई। उन्हे पहली बार पढनेपर मैने सोचा कि उन्हे न छापना ही ठीक होगा, क्योकि वे मुझे बहुत अधिक व्यक्तिगत जान पडे। सोचनेपर यह खयाल आया कि उनमे जहाँ-जहाँ व्यक्तिगत बाते है उन्हे काट दिया जाये और तब टिप्पणियाँ प्रकाशित कर दी जाये। लेकिन उन्हे फिर पढनेपर मैने यही निश्चय किया है कि वे टिप्पणियाँ बिना किसी फेरफारके ही दे दी जाये। मै अबतक व्यक्तिगत बातोके उल्लेखका भार सहता रहा हूँ। इतना अतिरिक्त भार बहुत अच्छी तरह सह सकता हूँ। इन टिप्पणियोमे एक विशेष गुण है, जिसके कारण मै उन्हे प्रकाशित करनेके लिए विवश हूँ। उनमे आश्रमका जो वर्णन है वह पूराका-पूरा सत्य नही है। इन मित्रोको यहाँकी बाते जितनी सुन्दर लगी है वे उतनी सुन्दर नही है। आश्रममे विसगतियाँ है, उसके कष्ट और कठिनाइयाँ है, उसकी बहुत-सी बाधाओको दूर करना है। लेकिन आश्रममे उसके नामके अनुरूप जीवन बितानेका प्रयत्न किया जाता है। आश्रममे निश्चय ही कुछ बाते है जिनका अनुकरण बिना कोई जोखिम उठाये किया जा सकता है। किन्तु मुझे पाठकोको यह चेतावनी दे देनी चाहिए कि वे इस सुखद वर्णनकी कुछ बातोसे भ्रमित होकर आश्रममे प्रवेशकी प्रार्थना न करे। व्यवस्थापकने मुझे यह स्थायी सूचना दे रखी है कि वे जितने सदस्योकी देखभाल कर सकते है, आश्रममे उनसे ज्यादा सदस्य है और उन्हे अपने सामर्थ्यसे अधिक काम करना पडता है। कुमारी ऐंगस और हिंडस्लेने जिस जीवन पद्धतिका वर्णन किया है, उसे पसन्द करनेवाले लोग जहाँ भी रहते हो, वही उसका अनुकरण करे।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-२-१९२५

१. यह डायरी **यंग इंडियाके** १२ फरवरीसे ५ मार्चके अंकोंमें प्रकाशित हुई है। यहाँ केवल गांधीजीकी प्रस्तावनाका अनुवाद दिया जा रहा है।

भी है और काता हुआ सूत उनसे माँग लेते है। वे लोग चरखा माँगते है और सूत भेजनेका वादा करते है। ऐसे-ऐसे लोग भी जो चरखेका मजाक उडाते थे उसके कायल होते जा रहे है।

मैने पत्रको सक्षिप्त कर लिया है और उसकी अग्रेजी भी सुधार दी है। मै सभी कार्यकर्त्ताओका ध्यान इसकी ओर दिलाता हूँ। इसमे कोई सन्देह नही कि कोरी बातोकी अपेक्षा काम करके दिखा देना कही ज्यादा अच्छा है।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १२-२-१९२५

६२. एक क्रान्तिकारीका बचाव

एक सज्जनने, जिन्होने अपना नाम दिया है लेकिन पता नही दिया, एक पत्र भेजा है, जिसे वह 'खुली चिट्ठी' कहते है। मैने बेलगाँव काग्रेसके अपने भाषणमे[1] क्रान्तिकारी आन्दोलनके सम्बन्धमे जो बाते कही थी, इस पत्रमे उन्हीका उत्तर दिया गया है। पत्र देश-प्रेम, उत्साह और आत्मत्यागके भावसे ओत-प्रोत है। इसके अलावा यह उस अन्यायकी अनुभूतिसे लिखा गया है जो कहा जाता है, मैने क्रान्तिकारियोके प्रति किया है। इसलिए मै इस गुमनाम पत्रको प्रसन्नतापूर्वक छापता हूँ। लेखकका पता नही दिया गया है। पत्रका पूरा पाठ ज्योका-त्यो नीचे देता हूँ[2]

मै देशके राजनीतिक जीवनसे कब और कैसे निवृत्त होऊँगा, इस सम्बन्धमे मैने किसीको कोई वचन नही दिया है।[3] लेकिन मैने यह अवश्य कहा है और अब भी कहता हूँ कि यदि मै यह देखूँगा कि भारत मेरे सन्देशको ग्रहण नही करता और रक्तमय क्रान्ति चाहता है तो मै निश्चय ही हट जाऊँगा। उस आन्दोलनमे मै कोई भाग नही लूँगा, क्योकि मै भारतके लिए या ससारके लिए, जो एक ही चीज है, उसे उपयोगी नही मानता।

मै अवश्य ही यह विश्वास करता हूँ कि देशने असहयोगके आह्वानका आश्चर्य-जनक उत्तर दिया, लेकिन मै यह भी मानता हूँ कि असहयोग जिस हदतक किया गया उसकी तुलनामे सफलता अधिक मिली है। जन-समुदायमे जो आश्चर्यजनक जागृति हुई है वह इस तथ्यका जीता-जागता प्रमाण है।

मै यह भी विश्वास करता हूँ कि देशने बहुत अधिक आत्मसयम बरता है, लेकिन मुझे अपना यह मत भी दोहरा देना चाहिए कि देशमे जिस स्तरकी अहिंसा-का पालन किया गया वह अपेक्षित स्तरसे बहुत नीचे दर्जेकी थी।

मेरा विश्वास यह नही है कि 'मेरा तत्त्वज्ञान' टॉल्स्टॉय और बुद्धके विचारोका बेतुका मिश्रण है। वह क्या है यह मै नही जानता, हाँ, इतना कह सकता हूँ

१. देखिए खण्ड २५, पृष्ठ ५०४-२५।

२. यहाँ नहीं दिया गया है। गाधीजीके उत्तरसे पत्रके विषयका अनुमान हो जाता है।

३. देखिए खण्ड २१, पृष्ठ ५८५-८८।

कि वह वही है जिसे मै सच समझता हूँ। उससे मुझे सहारा मिलता है। मै टॉल्स्टॉय और बुद्धका बहुत ऋणी हूँ। किसी-न-किसी तरह अब भी मेरा खयाल है कि 'मेरे तत्त्वज्ञान' मे 'गीता' की शिक्षाओका सच्चा भाव आ जाता है। सम्भव है मेरा खयाल बिलकुल गलत हो, किन्तु उसके गलत होनेसे मेरी या किसी अन्य व्यक्तिकी कोई हानि नही होती। यदि मै विशुद्ध सत्यका समर्थक हूँ तो मेरी प्रेरणाका स्रोत क्या है, यह विचार व्यर्थ है।

जो तत्त्वज्ञान मेरा कहा जाता है उसकी कसौटी उसके गुणावगुणके आधारपर होनी चाहिए। मै मानता हूँ कि ससार सशस्त्र विद्रोहोसे त्रस्त हो गया है। मै यह भी मानता हूँ कि दूसरे देशोमे चाहे जो-कुछ हुआ हो, रक्तमय क्रान्ति भारतमे कभी सफल न होगी। जन-समुदाय उसका साथ नही देगा। जिस आन्दोलनमे जन-समुदाय कोई सक्रिय भाग नही लेता उससे कोई लाभ नही पहुँच सकता। सफल रक्तमय क्रान्तिसे जन-समुदायके कष्ट बढ ही सकते है। क्योकि जनताके नजदीक तो इसके बाद भी शासन विदेशी शासन जैसा ही होगा। मै जिस अहिंसाकी शिक्षा देता हूँ वह अत्यन्त शक्तिशाली लोगोकी सक्रिय अहिंसा है। लेकिन अत्यन्त कमजोर लोग भी उसमे हिस्सा ले सकते है, उससे वे अधिक कमजोर नही बनेगे। वे उसमे हिस्सा लेनेसे अधिक शक्तिशाली ही हो सकते है। जन-समुदाय जितना साहसी आज है उतना पहले कभी न था। अहिंसात्मक आन्दोलनमे यह आवश्यक होता है कि उसका सगठन सामूहिक पैमानेपर किया जाये। इसलिए उससे तामसिकता या अन्धकार या गतिहीनता उत्पन्न नही हो सकती। उससे राष्ट्रीय जीवनकी गति तेज होती है। वह आन्दोलन खामोशी-के साथ, करीब-करीब अदृश्य रूपमे अब भी जारी है, किन्तु वह जारी है, इसमे सन्देह नही।

क्रान्तिकारियोने वीरता दिखाई है और त्याग किया है इससे मै इनकार नही करता। लेकिन किसी बुरे उद्देश्यसे वीरता दिखाना और त्याग करना अत्यन्त उपयोगी शक्तिको बरबाद करना और एक बुरे उद्देश्यके निमित्त गलत ढगसे किये गये त्याग और वीरताकी चमक दिखाकर लोगोका ध्यान एक अच्छे उद्देश्यकी ओरसे हटाकर उसे नुकसान पहुँचाना है।

मुझे वीर और आत्मत्यागी क्रान्तिकारीके सामने गर्वके साथ खडे होनेमे कोई हिचकिचाहट नही होती, क्योकि मै अहिंसक लोगोका उतना ही वीरत्व और त्याग मुकाबलेमें खडा कर दे सकता हूँ, जिसमे खासियत यह होगी कि किसी निर्दोष व्यक्ति-के रक्तका एक धब्बा भी उसपर नही होगा। एक ही निर्दोष मनुष्यका आत्मबलिदान उन लाखो लोगोके बलिदानसे लाखो गुना शक्तिशाली होता है, जो दूसरोको मारते हुए मरते है। ससारमे जिस उद्दण्डतापूर्ण अत्याचारकी आजतक कल्पना हो पाई है, ऐसे किसी अत्याचारका मुँहतोड जवाब है — निर्दोष लोगोका स्वेच्छा-प्रेरित बलिदान।

स्वराज्यके मार्गमे तीन बडी बाधाएँ है — चरखेका अपर्याप्त प्रचार, हिन्दुओ और मुसलमानोमे फूट तथा दलित वर्गोपर अमानुषिक सामाजिक प्रतिबन्ध। मै इन तीनोकी ओर क्रान्तिकारियोका ध्यान आकर्षित करता हूँ। यह काम बडे धीरजसे करनेका है, मै उनसे कहता हूँ कि वे इसे पूरा करनेमे धैर्यपूर्वक उचित सहयोग

दे। सम्भव है इसमे उन्हे कोई तडक-भडक दिखाई न दे। लेकिन इस कारण तो उसमे और भी अधिक धैर्य और शौर्यके साथ खामोशीसे निरन्तर उद्योग करनेकी आवश्यकता है, और आवश्यकता है उस आत्मोत्सर्गकी जो वडेसे-वडा क्रान्तिकारी ही कर सकता है। अधीर होनेसे क्रान्तिकारियोकी दृष्टि धूमिल हो जायेगी और वे भटक जायेगे। झूठे गौरवमे आकर फाँसीके तख्तेपर झूल जानेकी अपेक्षा जन-समुदायके वीच स्वेच्छापूर्वक और यशकी आशाको त्यागकर नित्य आधापेट खाकर सेवा करते हुए शरीरको गलाना निस्सन्देह अधिक वीरताका काम है।

आलोचना-मात्र असहिष्णुता नही है। चूँकि मुझे क्रान्तिकारियोसे प्रेम और सहानुभूति है, इसलिए मैंने उनकी आलोचना की है। मुझे गलत माननेका उन्हे उतना ही अधिकार है, जितना मुझे उनकी गलती माननेका है।

'खुली चिट्ठी'मे दूसरे मुद्दे भी है। लेकिन मैंने उनका उल्लेख नही किया है। मेरा खयाल है कि उनका उत्तर पाठक आसानीसे दे सकते है और इनका सम्बन्ध किसी महत्त्वपूर्ण विषयसे तो कदापि नही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-२-१९२५

६३. भाषण: भादरनमें ब्रह्मचर्यपर[1]

१२ फरवरी, १९२५

आप चाहते है कि ब्रह्मचर्यके विषयपर मै कुछ कहूँ। कितने ही विषय ऐसे है, जिनपर मै 'नवजीवन' में प्रसगोपात्त लिखता हूँ। ब्रह्मचर्य भी एक ऐसा ही विषय है। इसपर भाषण तो मै शायद ही कभी देता हूँ, क्योकि यह एक ऐसा विषय है जिसे बोलकर नही समझाया जा सकता। फिर मै यह भी जानता हूँ कि यह एक वडी गहन वस्तु है। आप तो सामान्य ब्रह्मचर्यके विषयमे सुनना चाहते है, जिस ब्रह्मचर्यकी विस्तृत व्याख्या समस्त इन्द्रियोका सयम है, उसके विषयमे नही। साधारण ब्रह्मचर्यको भी शास्त्रकारोने वडी कठिन वस्तु वताया है। यह वात ९९ फीसदी सच है; इसमे १ फीसदीकी कसर है। इसका पालन इसलिए कठिन मालूम होता है कि हम दूसरी इन्द्रियोको सयममे नही रखते। इनमे मुख्य है रसनेन्द्रिय। जो अपनी जिह्वाको कब्जेमे रख सकता है उसके लिए ब्रह्मचर्य सुगम हो जाता है। प्राणिशास्त्रके ज्ञाताओका कथन है कि पशु जिस दरजे तक ब्रह्मचर्यका पालन करता है, उस दरजे तक मनुष्य नही करता। यह सच है। इसका कारण देखनेपर मालूम होगा कि पशु अपनी जिह्वेन्द्रियपर पूरा-पूरा निग्रह रखते है — इच्छापूर्वक नही, स्वभावमे ही। वे केवल घासचारे आदि पर अपनी गुजर करते है — और महज पेट भरने लायक ही खाते है। वे जीनेके लिए खाते है, खानेके लिए जीते नही है। पर हम तो इसके विलकुल विपरीत करते है। माँ वच्चेको तरह-तरहके सुस्वादु भोजन कराती है। वह

1. सेनामण्डल द्वारा किये गये अभिनन्दनके उत्तरमें।

मानती है कि बालकके साथ प्रेम दिखानेका यही सर्वोत्तम रास्ता है। ऐसा करके हम उन चीजोमें स्वाद बढाते नही बल्कि कम कर देते है। स्वाद तो रहता है भूखमे। भूखके वक्त सूखी रोटी भी सुस्वादु लगती हे और बिना भूखके लड्डू भी स्वादरहित मालूम होगे। पर हम तो अनेक चीजोको खा-खाकर पेटको ठसाठस भरते हैं और फिर कहते है कि ब्रह्मचर्यका पालन नही हो पाता। जो आँखे हमे ईश्वरने देखनेके लिए दी है उनको हम मलिन करते रहते है। देखनेकी वस्तुओको देखना नही सीखते। 'माता गायत्री क्यो न पढे और वह बालकको गायत्री क्यो न सिखाये', इसकी छानबीन करनेकी अपेक्षा उसके तत्त्वको समझकर सूर्योपासना कराये तो कितना अच्छा हो। सूर्यकी उपासना तो सनातनी और आर्य-समाजी दोनो कर सकते है। यह तो मैंने स्थूल अर्थ आपके सामने उपस्थित किया। इस उपासनाके मानी क्या है? अपना सिर ऊँचा रखकर, सूर्यनारायणके दर्शन करके, दृष्टिको शुद्ध करना। गायत्रीके रचयिता ऋषि थे, दृष्टा थे। उन्होने कहा कि सूर्योदयमे जो नाटक है, जो सौन्दर्य हे, जो लीला है, वह और कही दिखाई नही दे सकती। ईश्वरके जैसा सुन्दर सूत्रधार अन्यत्र नही मिल सकता और आकाशसे बढकर भव्य रगभूमि कही नही मिल सकती। पर कौन माता आज बालककी आँखे धोकर उसे आकाश-दर्शन कराती है? किन्तु माताके मनमे तो अनेक विचार उठते रहते है। बडे-बडे घरोमे जो शिक्षा मिलती हे उसके फलस्वरूप लडका शायद बडा अधिकारी हो जायेगा, पर इस बातका कौन विचार करता है कि घरमे जाने-अनजाने जो शिक्षा बच्चोको मिलती है, उससे वह कितनी बाते ग्रहण कर लेता है। माँ-बाप हमारे शरीरको ढकते है, सजाते है, पर इससे कही शोभा बढ सकती है? कपडे बदनको ढकनेके लिए है, सर्दी-गर्मीसे रक्षा करनेके लिए है, सजानेके लिए नही। जाडेसे ठिठुरते हुए लडकेको जब हम अँगीठीके पास ढकेलेगे, अथवा मुहल्लेमे खेलने-कूदने भेज देगे, अथवा खेतमे कामपर छोड देंगे, तभी उसका शरीर वज्रकी तरह होगा। जिसने ब्रह्मचर्यका पालन किया है, उसका शरीर वज्रकी तरह जरूर होना चाहिए। हम बच्चोको चौबीसो घटे घरमें रखकर उन्हे ठड आदिसे बचाये रखना चाहते है। इससे तो उनकी त्वचामे कृत्रिम ऊष्मा आ जाती हे और उन्हे चर्म रोग हो जाते है। हमने शरीरको दुलराकर उसे बिगाड डाला है। यह तो आगसे खेलना है।

यह तो हुई कपडेकी बात। फिर घरमे तरह-तरहकी बाते करके हम बच्चेके मनपर बुरा प्रभाव डालते है। उसकी शादीकी बाते किया करते है और इसी किस्मकी चीजे और दृश्य भी उसे दिखाये जाते है। मुझे तो आश्चर्य होता है कि इस सबके बाद हम पूरे जगली ही क्यो नही हो गये? मर्यादा तोडनेके अनेक साधनोके होते हुए भी मर्यादाकी रक्षा होती रहती है। ईश्वरने मनुष्यकी रचना इस तरहसे की है कि पतनके अनेक अवसर आते हुए भी वह बच जाता है। ऐसी उसकी अलौकिक लीला है। यदि हम ब्रह्मचर्यके रास्तेसे ये सारे विघ्न हटा दे तो उसका पालन बहुत आसान हो जाये।

ऐसी हालतमे भी हम शारीरिक शक्तिमे दुनियाके मुकाबिले खडे होना चाहते है। इसके दो रास्ते है। एक आसुरी और दूसरा दैवी। आसुरी मार्ग है—शरीरबल

प्राप्त करनेके लिए हर किस्मके उपायोसे काम लेना -- हर तरहकी चीजे खाना, कुश्ती आदि लडना, गोमास खाना, इत्यादि। मेरे लडकपनमे मेरा एक मित्र मुझसे कहा करता था कि मासाहार हमे अवश्य करना चाहिए, नही तो हम अग्रेजोकी तरह हट्टे-कट्टे नही हो सकेगे। कवि नर्मदाशकरने भी अपनी एक कवितामे[1] ऐसी ही बात कही है। 'अग्रेज राज्य कर रहे है और भारतीय उनकी गुलामी कर रहे है', 'वह तो पूरे पाँच हाथ ऊँचा है' आदि पक्तियोमे यही भाव है। कवि नर्मदाशकर-ने गुजरातपर बहुत उपकार किया है। किन्तु इनका जीवनकाल दो पर्वोमे विभाजित था। एक स्वेच्छाचारका काल और दूसरा सयमका। यह कविता स्वेच्छाचार-कालकी है। जापानको भी जब दूसरे देशके साथ मुकाबला करनेका अवसर आया तब वहाँ गोमास भक्षणको स्थान मिला। सो यदि आसुरी प्रकारसे शरीरको तैयार करनेकी इच्छा हो तो इन चीजोका सेवन करना होगा।

परन्तु यदि दैवी साधनसे शरीर तैयार करना हो तो ब्रह्मचर्य ही उसका एक उपाय है। जब मुझे कोई नैष्ठिक ब्रह्मचारी कहता है तब मुझे अपनेपर दया आती है। इस अभिनन्दनपत्रमे मुझे नैष्ठिक ब्रह्मचारी कहा गया है। सो मुझे कहना चाहिए कि जिन्होने इस अभिनन्दनपत्रका मजमून तैयार किया है उन्हे नही मालूम कि नैष्ठिक ब्रह्मचर्य किसे कहते है। जिसके बाल-बच्चे हुए है उसे नैष्ठिक ब्रह्मचारी कैसे कह सकते है? नैष्ठिक ब्रह्मचारीको न तो कभी बुखार आता है, न कभी सिर-दर्द होता है, न कभी खाँसी होती है, न अपेडिसाइटिस होता है। डाक्टर लोग कहते है कि नारगीका बीज आतमे रह जानेसे भी अपेडिसाइटिस होता है। परन्तु जिसका शरीर स्वच्छ और निरोगी होता है उसमे ये बीज टिक ही नही सकते। जब आँते शिथिल पड जाती है, तब वे ऐसी चीजोको अपने-आप बाहर नही निकाल पाती है। मेरी भी आँते शिथिल हो गई होगी। इसीसे मै ऐसी कोई चीज हजम नही कर सका होऊँगा। बच्चे ऐसी अनेक चीजे खा जाते है। माता इसका कहाँ ध्यान रखती है? पर उसकी आँतमे ही इतनी स्वाभाविक शक्ति होती है। इसीलिए मै चाहता हूँ कि मुझपर नैष्ठिक ब्रह्मचर्यके पालनका आरोप करके कोई मिथ्याचारी न बने। नैष्ठिक ब्रह्मचर्यका तेज तो मुझसे अनेक गुना अधिक होना चाहिए। मै आदर्श ब्रह्मचारी नही हूँ। हाँ, यह सच है कि मै वैसा बनना चाहता हूँ। मैने तो आपके सामने अपने कुछ अनुभवमात्र ही पेश किये है, और इनसे ब्रह्मचर्यकी मर्यादा प्रकट होती है। ब्रह्मचारी रहनेका अर्थ यह नही कि मै किसी स्त्रीको स्पर्श न करूँ, अपनी बहनका स्पर्श न करूँ। पर ब्रह्मचारी होनेका अर्थ यह है कि स्त्रीका स्पर्श करनेसे किसी प्रकारका विकार उसी तरह उत्पन्न न हो जिस तरह कागजको स्पर्श करनेमे नही होता। मेरी बहन बीमार हो और उसकी सेवा करते हुए, उसका स्पर्श करते हुए ब्रह्मचर्यके कारण मुझे हिचकना पडे तो वह ब्रह्मचर्य तीन कौडीका है। जिस निर्विकार दशाका अनुभव

१. अग्रेजो राज्य करे, देशी रहे दबाई
देशी रहे दबाई, जोने बेना शरीर भाई
पेलो पांच हाथ पूरो, पूरो पांचसेंने।

हम मृत शरीरको स्पर्श करके कर सकते हैं उसीका अनुभव जब हम किसी सुन्दर युवतीका स्पर्श करके कर सकें तभी हम ब्रह्मचारी हैं। यदि आप यह चाहते हों कि बालक ऐसे ब्रह्मचर्यको प्राप्त करें, तो इसका अभ्यासक्रम आप नहीं बना सकते, पर मुझ-जैसा ब्रह्मचारी, फिर वह अधूरा ही क्यों न हो, ही बना सकता है।

ब्रह्मचारी स्वाभाविक संन्यासी होता है। ब्रह्मचार्याश्रम संन्यासाश्रमसे भी बढ़कर है। पर उसे हमने गिरा दिया है। इससे हमारा गृहस्थाश्रम भी बिगड़ा और वान-प्रस्थाश्रम भी। संन्यासका तो नाम भी नहीं रह गया। ऐसी दीन हो गई है हमारी अवस्था।

ऊपर जो आसुरी मार्ग बताया गया है उसका अनुकरण करके तो आप पाँच सौ वर्षोंतक भी पठानोंका मुकाबला नहीं कर सकेंगे। दैवी मार्गका अनुसरण किया जाये तो आज ही उनका मुकाबला हो सकता है। क्योंकि दैवी साधनमें आवश्यक मानसिक परिवर्तन एक क्षणमें हो सकता है। पर शारीरिक परिवर्तनमें युग बीत जाते हैं। इस दैवी मार्गका अनुसरण तभी सम्भव होगा जब हमारे पल्ले पूर्वजन्मका पुण्य होगा, और माता-पिता हमारे लिए उचित वातावरण पैदा करेंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १-३-१९२५

६४. भाषण : बोरसदमें

१२ फरवरी, १९२५

ईश्वरीय संयोग तो देखिए। मुझे किसलिए आना था और मैं किस लिए आया हूँ? काशीभाईने[1] निर्णय किया है कि वे डाह्याभाई और यशोदाके विवाहमें कोई अनावश्यक खर्च नहीं करेंगे। इससे सम्बन्धीगण रुष्ट हो गये हैं। मैं धनी लोगोंको चेतावनी देता हूँ कि जिनके पास पैसा फालतू पड़ा हो और जो उसे विवाहमें खर्च करने जा रहे हों वे उसे मेरे पास भेज दें। मैं उसका सदुपयोग करूँगा। आडम्बरमें किया गया व्यय उचित नहीं कहा जा सकता। हम उलटे रास्ते चल रहे हैं। इसका फल यह हुआ है कि पाटीदार जातिमें लड़कीका बाप होना असह्य रूपमें कष्टप्रद हो गया है। जब काशीभाईने कहा कि उन्हें किसी तरहका खर्च नहीं करना है तो हम सब उनसे सहमत हो गये। मैं इस बारेमें आपकी सम्मति भी चाहता हूँ। आप भी अपने मनमें प्रभुसे प्रार्थना करें कि वह आपको इस प्रकारका संस्कार, ऐसी ही सादगीसे और धर्मविधिसे करनेकी शक्ति दे।

आपने जो मानपत्र दिया है उसके लिए आभार माननेकी आवश्यकता तो है नहीं। इसके लिए आभार माननेका प्रश्न ही नहीं उठता। आपने मानपत्रमें खादी और चरखेकी बात कही है। यदि खादीमें दैवी शक्ति भरी है और चरखेमें स्वराज्य

१ डाह्याभाईके श्वसुर।

दिलानेकी शक्ति है और वह सच्चा सुदर्शन चक्र है तो आप सबको खादी अपना लेनी थी, अन्यथा इस प्रकार मानपत्र देना और उसमे खादी और चरखेकी प्रशसा लिखना और लड़कियोसे उसके गीत गवाना व्यर्थ है।

इस सभामे अन्त्यज पीछे क्यो बैठे है? मै तो इनकी पूजा करता हूँ। मै अपने आपको अन्त्यज कहलानेमे गर्वका अनुभव करता हूँ। मै अनेक बार कह चुका हूँ कि यदि मुझे दूसरा जन्म लेना पडे तो मै अन्त्यजके घरमे लूँ। मै इस समय अन्त्यजोकी सेवा नही कर रहा हूँ, अपने पापका प्रायश्चित्त कर रहा हूँ, आत्मशुद्धि कर रहा हूँ। मै हिन्दू समाजसे पूछता हूँ कि क्या आप अन्त्यजोकी भाँति मुझे भी त्यागना चाहते है? मै इस समय अन्त्यजेतर होनेपर भी यह नही कह सकता कि मै नीति-सम्बन्धी समस्त नियमोका पालन मन, वाणी और कायासे करता हूँ, किन्तु प्रभुसे मेरी प्रार्थना है कि यदि मेरा दूसरा जन्म हो तो मै पूर्णपुरुषके रूपमे जन्म लूँ और सो भी अन्त्यज परिवारमे। इनको पीछे बिठाना क्षात्रधर्म नही है। पाटीदार जाति तो वीर है। इसमे गुण बहुत है। किन्तु कुछ दोष भी है। किन्तु ससारमे ऐसा कोई मनुष्य नही है जो सर्वथा गुणरहित अथवा सर्वथा दोषरहित हो। हममे से कोई भी पूर्ण पुरुषोत्तम नही है। इस कलि-कालमे यह असम्भव है। इसलिए अन्त्यज नीचे है, यह बात मेरा मन स्वीकार नही करता। इसलिए इनके साथ रहकर अस्पृश्य बनना आपके साथ रहकर स्पृश्य बननेसे बहुत अच्छा है। मुझे तो प्रभुके दरबारमे माफी माँगनी है। ईश्वर मुझे कहेगा, "यदि तूने इन लोगोको अस्पृश्य माना हो तो ये लोग तुझे थप्पड मारेगे, क्योकि तूने अपने भाइयोको पशु मानकर पाप किया है।" क्षत्रिय पीछे पाँव नही हटाते। अन्त्यजोको पीछे रखना पीछे पाँव हटाना है। मै आपसे कहता हूँ कि इनको पीछे बिठाकर आप अधर्म न करे। मै ऐसा इसलिए कहता हूँ कि इस अधर्मको छिपानेका प्रयत्न किया गया है।

पाटीदार निम्न जातियोपर अत्याचार करते है, उनको मारते-पीटते है और उनसे बगार कराते है। मै जानता हूँ कि यह बात सच है। आप ऐसे कामसे डरे। यदि आप ऐसे कामोसे नही डरेगे तो आपकी वीरताका लोप हो जायेगा। जो सुखी है, उसे सबको सुखी करनेका प्रयत्न करना चाहिए। स्वय दु ख सहकर दूसरोको सुखी बनाना ही धर्म है। स्वय सुखी रहकर हम दूसरोको दु खी करे यह तो आसुरी वृत्ति हुई। मुझे आपका मानपत्र नही चाहिए। मै तो यह चाहता हूँ कि आप अन्त्यज भाइयोको सुखी करे और स्वय भी सुखी हो।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

६५. तार : प्रभाशंकर पट्टणीको

पेटलाद
१३ फरवरी, १९२५

नर प्रभाशकर
भावनगर

आपका पत्र मिला। राजकोटमे इतवारसे बुधवारतक। वादका कार्यक्रम राजकोटमे पहुँचकर तय होगा। आज रात आश्रम पहुँच रहा हूँ।

गाधी

अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ३१९२) की फोटो-नकलसे।
सौजन्य महेश पट्टणी

६६. भाषण : पालेजमें

१३ फरवरी, १९२५

लडाईके अन्तमे हममे निडरता आनी चाहिए और रचनात्मक कार्यके अन्तमे योजना-शक्ति और कार्य-शक्ति। यदि हममें योजना-शक्ति और कार्य-शक्ति न आये तो हम राज्य नही चला सकते। यदि हम अहिंसासे राज्य प्राप्त करे तो वह सेवा-वृत्तिमे ही कायम रखा जा सकता है। किन्तु यदि हम सत्ता प्राप्त करनेके उद्देश्यसे राज्य लेगे तो वह केवल हिंसासे ही टिकेगा। उचित यह है कि हम अहिंसाकी शक्तिको पुष्ट करे और सत्ताके वलको त्यागे। जबतक हममे मिलकर रहनेकी शक्ति नही आती तबतक अहिंसासे स्वराज्य प्राप्त करना असम्भव है। मैंने इसीलिए लोगोके सम्मुख त्रिविध कार्यक्रम रखा है।

धर्मके नामपर हम किसी भी कार्यमे मनचाही कर सकते है, किन्तु जब हमे यह मालूम हो जाये कि यह तो अधर्म है, तब हम वैसा करते नही रह सकते। मेरी दृष्टिमें तो अस्पृश्यता दासताकी अपेक्षा भी बडा अधर्म है। जब यहाँ अस्पृश्यता निवारणका आन्दोलन चला था तब उसमें ईसाइयो आदिके भाग लेनेका सुझाव भी आया था। किन्तु मैंने उसपर आपत्ति की थी। वाइकोममें अस्पृश्यता निवारणके कार्यमे जॉर्ज जोजेफ-जैसे शुद्ध-हृदय मनुष्य भाग लेना चाहते थे, किन्तु मैंने उनको अनुमति नही दी।[1] यदि हम दुनिया-भरसे मदद लेने जाये तो हमारी जिम्मेदारी बढ जाती है।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

१ देखिए खण्ड २३, पृष्ठ ४१६-१७।

६७. विद्यार्थियोंके बारेमे

एक भाई लिखते है :[1]

> गुजरात महाविद्यालयके और आपके दूसरे भाषणोको पढ़नेपर भी जो बात सच है उसका खयाल दूर नहीं होता . . . यह तो आप मानते है कि आजीविका विद्याका फल होना चाहिए लेकिन आज तो उसमे भी बडी मुश्किले है। . . . असहयोग मुल्तवी होनेपर अन्य लोग अपना मूल धन्धा फिरसे शुरू कर सकते है, लेकिन विद्यार्थी इच्छा होनेपर भी ऐसा नही कर सकते। . . .
>
> असहयोग करनेसे, उन वकीलोकी जिन्हे पहले मुकदमे नही मिलते थे, प्रसिद्धि हो जानेके कारण अब अच्छी कमाई हो रही है।
>
> आप १५ तारीखको राजकोट पधारेगे। क्या आप देशी राज्योको यह सलाह नही दे सकते कि विद्यापीठके स्नातकोंको भी वे अपने यहाँ रखे?

विद्यार्थियोके त्यागका उल्लेख तो मैने अनेक बार किया है। यह नियम है, और इसका कुछ अपवाद भी नही है कि जो स्वय अपने त्यागका उल्लेख करता है उसके त्यागका उल्लेख दुनिया नही करती। जिस त्यागका उल्लेख त्याग करनेवालेको स्वय ही करना पडता है, वह त्याग नही है। आत्मत्याग तो स्वयप्रकाशी होता है। अपने त्यागकी कीमत आँकनेके बजाय, उन्होने जो-कुछ पाया है उसीका मूल्य विद्यार्थी क्यो न आँके?

जो यह नही जानता कि राष्ट्रीय शिक्षा प्राप्त करनेमे ही उसकी कीमत आ जाती है, वह कुछ भी नही जानता। राष्ट्रीय विद्यापीठके स्नातकको यह माननेकी कोई आवश्यकता नही कि उनका भाव घट गया है। इस प्रकार स्नातक अपना भाव क्यो घटाते है? मै राष्ट्रीय विद्यापीठके स्नातकोसे आत्मविश्वास रखनेकी आशा रखता हूँ। वे दीन, याचक न बने, ईश्वरपर विश्वास रखे। स्नातक क्यो चाहते है कि मै उनके लिए देशी राज्योके आगे हाथ पसारूँ? स्नातक अपने ज्ञान और चरित्रबल-पर ही बहुमूल्य क्यो न ठहरे? ऐसा समय आ सकता है जब राष्ट्रीय स्नातकोकी ही माँग हो। ऐसा समय लाना स्नातकोपर निर्भर है। काँचके ढेरमे पडे हुए हीरेकी पहचान हुए बिना नही रहती। राष्ट्रीय स्नातकोके बारेमे भी यही बात हो सकती है। मै तो काठियावाडमे, अपने व्याख्यानोमे स्नातकोके बारेमे एक शब्द भी नही बोलना चाहता। मै तो काठियावाडमे खादी और चरखेके प्रचारके लालचसे जा रहा हूँ, राज्याधिकारियोको खादी-प्रेमी बनाने जा रहा हूँ, नरेशोसे यह विनय करनेके लिए जा रहा हूँ कि आप अपने धर्मपर ध्यान दे। यदि खादीकी और चरखेकी प्रतिष्ठा बढी तो स्नातकोकी भी प्रतिष्ठा बढी समझिए। क्योकि जो चरखा-शास्त्रको घोलकर पी नही

[1] अशत उद्धृत।

गया है या राष्ट्रीय स्नातक नहीं है। जैसे अधिकारी वर्गको अंग्रेजी जाननेवाले कुशल मन्त्रियोंकी आवश्यकता होती थी, उसी प्रकार उन्हें कुशल चरखाशास्त्रीकी आवश्यकता हो, ऐसा ही वायुमण्डल पैदा करनेके लालचसे मैं काठियावाड़ जा रहा हूँ।

अब स्नातकोंकी दो तीन भूलें सुधारनेकी इजाजत चाहता हूँ। असहयोगी विद्यार्थी दूसरोंकी तरह असहयोग मुल्तवी नहीं रख सकते, यह मानना गलत है। शर्म और दुःखकी बात तो यह है कि हजारों विद्यार्थी असहयोग करनेके बाद फिरसे सहयोगी बन गये हैं। और यह क्रम अब भी चल रहा है। कितने ही असहयोगी कहलानेवाले विद्यार्थियोंने राष्ट्रीय प्रमाणपत्र प्राप्त कर लेनेपर भी फिरसे सरकारी परीक्षाएँ दी हैं। इसके विपरीत अदालतोंने कितने ही वकीलोंकी सनदें छीन ली हैं और वे सचमुच अपराधी-जैसे बन गये हैं। और नौकरी छोड़ देनेवाले कितने ही सरकारी नौकरोंकी दशा दयनीय कही जा सकती है। लेकिन उनमें से कितने ही लोग ऐसा नहीं मानते, वे तो इसमें शान और गौरवका अनुभव करते हैं। क्योंकि सरकारी नौकर रहनेतक वे पराधीन थे और अब नौकरी छूट जानेपर स्वाधीन हैं, स्वतन्त्र हैं और इसलिए अपनेको बड़भागी मानते हैं।

इसलिए जो विद्यार्थी हतोत्साह हो गये हैं, उन्हें मैं कहता हूँ कि उन्हें हतोत्साह होनेका कोई कारण नहीं है। इतना ही नहीं, इससे तो वे आगे ही बढेंगे। हाँ, उसमें एक शर्त है। असहयोगी विद्यार्थीके बारेमें यह माना जाता है कि वह प्रामाणिक, निर्भय, संयमी, उद्यमी और देशसेवक होता है। ऐसे विद्यार्थीको कभी निराश होनेका कारण नहीं होता। उन्हींपर देशका उद्धार निर्भर है। स्वतन्त्रता देवीके स्वर्ण मन्दिरकी बुनियाद उन्हींपर होगी।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-२-१९२५

६८. टिप्पणियाँ

एक सुधार

मैंने पिछले अंकमें लिखा है कि मैं राजकोटकी राष्ट्रीय शालाका उद्घाटन करूँगा। किन्तु अब यह शुभ काम माननीय ठाकुर साहबके हाथोंसे सम्पन्न होगा। व्यवस्थापकोंका खयाल पहले भी तो यही था। किन्तु यदि माननीय ठाकुर साहब उसका उद्घाटन न कर सकते तो मैं तो था ही। मुझे कोई निश्चित तार या समाचार नहीं मिला था, इसलिए मैंने यह मान लिया था कि यह विधि मुझको ही सम्पन्न करनी होगी। मैं तो दिल्लीकी ओर प्रवासमें था और मैंने वहींसे यह टिप्पणी लिख कर भेजी थी। जब मैंने यहाँ आकर यह देखा कि उद्घाटनकी विधि तो माननीय ठाकुर साहब ही सम्पन्न करेंगे तो मुझे प्रसन्नता हुई। और यही व्यवस्था अभीष्ट भी है।

ऐसा ही चाहिए

हल्याल कर्नाटकका एक कस्वा है। वहाँकी ताल्लुका कमेटीके मन्त्रीने मुझे यह पत्र लिखा है.[1]

यह नगरपालिका धन्यवादकी पात्री है। यदि वह पत्रमे उल्लिखित कार्योके अतिरिक्त नगरकी सफाई भली-भाँति करवाती हो, वहाँ तालाव साफ रखा जाता हो, उसमे पशु पानी पीते और लोटते न हो और उसमे स्त्री-पुरुप नहाते-धोते न हो, और वच्चोको अच्छा और सस्ता दूध दिया जाता हो तो यह नगरपालिका आदर्श समझी जायेगी। यदि अन्य सब नगरपालिकाएँ इस नगरपालिकाका अनुकरण करे तो यह स्पष्ट है कि हमारी वहुतसी समस्याएँ हल हो जाये और हमारा जन-जीवन वहुत उन्नत हो जाये।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-२-१९२५

६९. भाषण : राजकोटमें[2]

[१५ फरवरी, १९२५][3]

आज सुवह दरवारगढमे प्रवेश करते समय मुझे बचपनकी एक पावन घटनाका स्मरण हो आया। लीलाधरभाईसे उसके वारेमे वात कर ही रहा था कि हमारी मोटर इस स्थानपर आकर रुक गई। यह पावन स्मरण मैं आपको सुना देना चाहता हूँ। भूतपूर्व ठाकुर साहवके यहाँसे कुछ लोग कानपुर और धरमपुर जा रहे थे। मेरे पिताजी ऐसे मौकोपर अपने वच्चोको आगे-आगे नही करते थे। आज सोचता हूँ तो लगता है, वह ठीक ही था। इससे हम दोनो भाइयोने कुछ भी नही खोया। मेरी मॉकी प्रवृत्ति दूसरी थी। वह चाहती थी कि हम लोग जाये। उसके मनमे धनका लोभ था और कीर्ति तो स्त्री ही है, वह नारीका वरण नही कर सकती तिसपर भी वह कीर्तिकी लोभी थी। इस अवसरपर उसने हम दोनोको वुलाकर कहा भी कि ठाकुर साहव सज्जन पुरुष है, उनके पास जाकर रो पडोगे तो वे तुम्हे भी भेज देगे। दल तो चला गया था। मेरी माँ चाहती थी कि हम लोग धरमपुर जाये क्योकि वहाँसे विदाईमे ज्यादा पैसा मिल सकता था। इसलिए हम दोनो माँकी सीख मानकर ठाकुर साहवके पास गये। इस दरवारगढको देखकर मुझे पिछली वातें याद हो आईं। यह भी याद हो आया कि मैं कहाँ उनके पास जाकर खडा हुआ था। हम दोनो ठाकुर साहवके पास जाकर रोने लगे। उन्होने मेरे पिताजीसे पूछा, "गांधीजी, वच्चे

१. पत्र यहाँ उद्धृत नही किया गया है। इसमें मन्त्रीने विस्तारसे वताया था कि वहांकी नगरपालिकाने, जिसमें राष्ट्रवादियोंका वहुमत था, रचनात्मक कार्यके सम्बन्धमें क्या-कुछ किया है।

२. प्रजा प्रतिनिधि मण्डलकी ओरसे दिये गये अभिनन्दन पत्रके उत्तरमें।

३. २२-२-१९२५ के **नवजीवन**के अनुसार भाषण इस तारीखको दिया गया था।

क्यों रो रहे है?" पिताजीने हम दोनोकी ओर आँखें तरेरी। उनमें विनय तो थी पर कभी-कभी ठाकुर साहबकी भूल देखते तो उनपर ही आँखे तरेर देते। हम डर गये। इनपर ठाकुर साहब बोले, "तुम्हे जो कहना हो वेधडक कहो।" हमने कहा कि हम धरमपुर जाना चाहते है। ठाकुर साहबने कहा, "लोग तो चले गये है, अब तो तुम कानपुर ही जा सकते हो।" हम दोनो भाइयोने रोते-रोते अपना कहना करवा लिया। मै आज भी रोकर अपनी बात मनवा लेना चाहता हूँ। यहाँ अभी शास्त्री-जीने मुझे श्लोकबद्ध आशीर्वाद देते हुए यह कहा कि कीर्ति तो कुँवारी है। उसे अभी तक योग्य वर मिला ही नही। और उन्होने कामना की कि वह मुझे वरण करे। कीर्ति कुँवारी है तो वह वैसी ही बनी रहे। मुझे कीर्तिकी चाह नही है। मै तो दूसरी ही दो बातें चाहता हूँ और उनके लिए मुझे रोना ही पडेगा। अभिनन्दनपत्रमें मेरी बहुत स्तुति की गई है। श्रीमान् ठाकुर साहबने भी बहुत-कुछ कहा है। पर इनसे मै धोखेमें नही आ सकता। मै यह नही मान लूँगा कि मै इन सबके लायक हूँ। ठाकुर साहबने मुझे अपनी दाहिनी तरफ बैठाया और मानपत्र दिया—पर इससे मै यह नही मान सकता कि मै राजा हो गया। मै राजा नही होना चाहता। मै तो रैयत हूँ और रैयत ही रहना चाहता हूँ। हाँ, ठाकुर साहबने जो विनय प्रदर्शित की है उसे मै भी अपनाऊँगा। मैं अपनी मर्यादा नही छोडूँगा और मूर्ख नही बनूँगा। मै इन प्रकारके मानपत्रमे गर्व न मानकर यथासम्भव विनयशील ही बना रहूँगा।

अभिनन्दनपत्रके लिए आभार मानते हुए भी मुझे यह कहना चाहिए कि इसमें दो बाते छूट गई है। जानकर या अनजाने, सो मै नही जानता। इसमें मेरी सेवाओका जिक्र तो है तथा अहिंसा और सत्यको जो मेरा जीवन-मन्त्र कहा गया है वह भी बिलकुल ठीक है। यदि ये दोनो मेरे जीवनसे निकल जायें तो मै मुर्दे जैसा जाऊँ और शेष जीवन व्यतीत करना मेरे लिए मुश्किल हो जाये। पर जिन दो साधनो—खादी और अस्पृश्यता-निवारण—के द्वारा मै सत्य और अहिंसाका पालन करना चाहता हूँ, उनका उल्लेख अभिनन्दनपत्रमें न देखकर मुझे आश्चर्य होता है। इन दोनो बातोकी भावनामें जो सामर्थ्य है वह हिन्दू-मुस्लिम एकतामें भी नही है। बल्कि इन दोनोमें से एककी भी साधना किये बिना हिन्दू-मुसलमानोका ऐक्य भी असम्भव है। एक बार एक मुसलमान-मित्रने मुझसे कहा कि आप जबतक यह मानते रहेगे कि हिन्दू धर्ममे अस्पृश्यताके लिए स्थान है तबतक हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य किस तरह हो सकता है? उक्त भाई एक पवित्र मुसलमान हैं। मुसलमानको अपवित्र माननेवाले लोग भी है, पर मै समझता हूँ कि ऐसा मानकर वे अधर्म करते है। 'गीता' और हिन्दू धर्मशास्त्र शिक्षा देते है कि सम्प्रदाय विभिन्न होकर भी अखण्ड नही है। हिन्दू धर्म, जिसे मै आग्रहपूर्वक पकडे हुए हूँ, गगोत्री है। उसकी अनेक शाखाएँ है। पर उनका मूल एक ही है। और मूलकी तरह मुख भी एक ही है।

कोई व्यक्ति ढेढ, भगी या चमारके घरमें पैदा हुआ तो इससे क्या? चाण्डाल नामकी कोई जाति नही है। ढेढ नामकी कोई जाति है? यह शब्द धर्मशास्त्रमे नही है। यह शब्द रूढ अवश्य है। ढेढ अर्थात् कपडा बुननेवाला, भगी अर्थात् पाखाना साफ

करनेवाला। मै तो आज भी भगी हूँ। बच्चा यदि टट्टी कर दे तो मै उसे साफ कर डालूँ। मेरी माता भी भगी थी। उसके हाथ हमारा मैला साफ कर-करके घिस गये थे। आपकी माता भी यदि सीताकी तरह सती होगी, पतिव्रता होगी तो उसने भी बच्चोका मल-मूत्र साफ किया होगा। सती सीता प्रात स्मरणीया थी। पर उन्होने भी बहुत मैला साफ किया था और वे भी भगी बनी थी। जिस तरह इन माता-ओका त्याग नही किया जा सकता उसी तरह भगीका भी त्याग कैसे किया जा सकता है? यदि हिन्दू धर्मशास्त्रोके अनुसार अस्पृश्यता धर्मका अभिन्न अग हो तो मै हिन्दू कहलानेमे अभिमान न मानूँ। मै शास्त्रियोसे भी उद्धत होकर कहूँगा कि हिन्दू धर्ममे अस्पृश्यताके लिए स्थान नही है और निरन्तर कहता रहूँगा कि नही है।

जब आजका कार्यक्रम मैने देखा कि शास्त्री लोग मुझे आशीर्वाद देगे तो यह देखकर मुझे हर्ष भी हुआ और खेद भी हुआ। खुशी इस बातसे हुई कि मेरे अस्पृश्यता-निवारण सम्बन्धी कामके लिए भी मुझे शास्त्रियोकी ओरसे आशीर्वाद मिलेगा। खेद इस बातका है कि राजाओकी छायामे खडे होकर शास्त्री लोग कुछ कहे भी तो उसका क्या मूल्य? मैने बहुतोसे सुना है कि काठियावाडके इन टीलोमे कमसे-कम एक ऐसा अवश्य है जो वन्दनीय है। सब लोग इस बातको जानते है कि ठाकुर साहब प्रजाके हित चिन्तक है। परन्तु भूल तो प्राणिमात्रसे होती है और यदि मुझे ठाकुर साहबकी भूल मालूम हो तो मै राजकोटका प्रजाजन होनेके कारण, प्रजाके अधिकारका उपयोग करते हुए ठाकुर साहबसे कहूँगा कि आप भूल कर रहे है। मै इस राज्यके अपने जमानेके शास्त्रियोकी हालत जानता हूँ। इनमे एक मावजी जोशी थे, वे शास्त्रज्ञ थे, ज्ञानी थे, किन्तु फिर भी अनेक बार वे सिद्धान्तसे डिग जाते थे। वे स्पष्टवक्ता थे किन्तु हवाका रुख देखकर उन्हे कई मौकोपर बात करनी पडती थी। मैने सोचा कि ठाकुर साहबने हुक्म दिया होगा कि गाधीको शास्त्रियोसे आशीर्वाद दिलाया जाये। नही तो शास्त्री लोग मुझ-जैसोको आशीर्वाद क्यो देने लगे? इस तरह मिले आशीर्वादसे लाभ भी क्या है? मै तो यह चाहता हूँ कि शास्त्री लोगोमे इतना तेज हो कि यदि मुझे वे सनातनी हिन्दू मानते हो तो वैसा कहे; चाण्डाल मानते हो तो चाण्डाल कहे। मै तो शास्त्रियोका भ्रम मिटाना चाहता हूँ। उनसे कहना चाहता हूँ कि जो अहिंसा-धर्मका पालन करता है वह किसीको अस्पृश्य नही मानता। इस कारण मुझे दु ख होता है कि शास्त्री लोगो द्वारा आशीर्वाद दिलाते हुए भी मेरी अन्त्यज-सेवाका उल्लेख अभिनन्दनपत्रमे नही है। इसके बारेमे मै जरूर ठाकुर साहबसे शिकायत करूँगा। मै तो रोकर राज लेनेवाला हूँ इसलिए उनसे कहूँगा कि जो अमियदृष्टि आप प्रजाके दूसरे वर्गोपर रखते है वही अन्त्यजोपर भी रखिए। तभी आपका यह छोटा-सा राज्य, नन्हा होते हुए भी सारी पृथ्वीको सुशोभित करेगा और रामराज्य कहलायेगा। वाल्मीकि कविने कहा है कि श्री रामचन्द्रने कुत्तेके साथ भी इन्साफ किया था और तुलसीदासने कहा कि रामने चाण्डाल कहानेवालेके साथ मित्रता की, भरत निषादराजके पीछे पागल बनकर घूमते रहे, उसके चरण धोये। आप उन्ही भरतके वशज है। आप गरीबोको न भूले, रातको घूमकर प्रजाके दु खोको देखे। अन्त्यजोका प्रतिनिधि बनकर मै आपसे यह

मांगता हूँ कि आप पता लगायें कि पाठशालाओमे अन्त्यजोके लिए स्थान है या नही। यदि हो तो उनमे अन्त्यजोका प्रवेश कराइए और यदि ऐसा करनेसे दूसरे विद्यार्थी चले जायें तो उन्हे खाली रहने दीजिए।

यहां मैने बालचरोको देखा। मेरे मनमे यह खयाल आया कि उनकी वर्दी भी खादीकी नही है। अगर खादीकी वर्दी मिले तो मेरे अन्त्यज भाइयोका कुछ काम चले, काठियावाडकी अनन्त गरीब स्त्रियोको भी कुछ मिले। एक गरीब बहनने मुझसे कहा, हम चरखा चलाती है। मगर आपके लोग चरखा उठा ले गये। मै सुनकर हैरान हो गया। मेरे लोग चरखा उठा ले जाये तो पृथ्वी रसातलको नही चली जायेगी! मैने उनसे कहा कि मेरे लोग चरखा चलवाते-चलवाते थक गये होगे, इसलिए उठा ले गये होगे। आपने मेरा बहुत सम्मान किया। मै तो यही भिक्षा माँग रहा हूँ कि आप मेरे बताये हुए अचूक उपायको अपनायें। आप मुझे खादी दीजिए। आप सब लोग खादी पहने, प्रजा प्रतिनिधि मण्डलमें खादीके सम्बन्धमे प्रस्ताव कराइए। आपने तो मुझे सुवर्णजटित अभिनन्दनपत्र दिया। उसके लिए मै तिजोरी कहाँसे लाऊँ? और यदि तिजोरी मागू तो उसके लिए स्थान भी मांगना पडे, और फिर रक्षक कहाँसे लाऊँ? मेरा रक्षक तो राम है। मै ऐसे अभिनन्दनपत्रोको लेता हूँ क्योकि उन्हे सँभालनेवाले जमनालाल बजाज-जैसे धनवान् पुरुष है, जो कि मेरे पुत्र बनकर बैठे है। मेरे यहां तो केवल खादीको स्थान है। और मै सभीसे खादी मांगूंगा। मैने तो लॉर्ड रीडिगसे भी कहा कि मै चाहता हूँ कि आप और आपके दरबान खादी-भूषित हो। यही शब्द मै आपसे और आपकी प्रजाके प्रतिनिधियोसे कहता हूँ। और इस कारण मुझे यह बात खटकती है कि आपने अभिनन्दनपत्रमें मेरे इन दो मुख्य कार्योका उल्लेख नही किया। मुझे तो राजमण्डलीके साथ कानपुर और धरमपुर जाना है। ठाकुर साहबकी सच्ची शादी तो प्रजाके साथ होगी। और उस शादीके लिए मेरी माँग है—खादी और अन्त्यजोका उद्धार। प्रजा तो कुमारिका है। उसका कुंवारापन यदि दूर करना चाहते हो तो उससे विवाह कीजिए, उसे सुखी बनाइए, उसकी देखभाल कीजिए, रातों जागकर, घूमकर उसके कष्टो और दु ख-दर्दोको जानिए। रामने धोबीकी उडती हुई बातसुन कर सीताजीको छोड दिया। आप भी प्रजामतको जानकर उसके अनुसार चलनेका यत्न कीजिए। राजाकी तलवार सहारका चिह्न नही हे। यह तो इस बातका साक्षी-रूप है कि राजाका धर्म है तलवारकी धारपर चलना। खाडा हमेशा याद दिलाता है कि खाडेकी धारपर चलिए, सीधे रास्ते जाइए। टेढे रास्ते न जाइए। इसका अर्थ है कि राजकोटमें एक भी आदमी व्यभिचारी न हो, एक भी शख्स शराब पीनेवाला न हो, मदमत्त न हो, हरएक स्त्री सीताका स्थान लेनेवाली हो।

मुझे अपने पिताजीका स्मरण आ रहा है। मेरे पिताजीमे ऐब थे, पर गुण भी बडे-चढे थे। भूतपूर्व ठाकुर साहबमे भी ऐब थे, गुण भी थे। उनके तमाम गुण आपमें आयें। ऐबोको कोशिश करके दूर करना आपका धर्म है। दुर्बलताकी जगह सबलता, कलुषताकी जगह पवित्रताको स्थान दिलाना आपका धर्म हे। इसलिए गरीबोपर दया रखें। उन्हे खिलाकर खायें। आपकी तलवार आपके अपने गलेके लिए है। प्रजासे आप कहिए कि यदि मै अधिकारकी मर्यादासे च्युत होऊँ तो यह तलवार मेरी

गर्दनपर चला देना। मै झूठी खुशामद करूँ तो अधर्म करूँगा। मैंने इस दरवार-गढमे नमक खाया है। भूतपूर्व स्व० ठाकुर साहवने मेरे पिताको चार सौ वर्ग गज जमीन विना किसी कीमत, शर्त या किरायेके देनेकी कृपा की थी। ठाकुर साहब तो चार हजार वर्ग गज दे रहे थे किन्तु पिताजीने इनकार किया और सिर्फ चार सौ गज ली। इस बातको न कहूँ तो मै कृतघ्न कहलाऊँगा। सारी पृथ्वी यदि मेरा आदर करे तो भी मै अभिमान नही करूँगा, किन्तु आपके दिये मानकी मेरे निकट वहुत कीमत है। क्योकि मैं राजकोटमे छोटेसे बडा हुआ, अनेक लडकोके साथ यहाँ खेला, असख्य स्त्रियोने मुझे खिलाया और आशीर्वाद दिया। परन्तु यदि असख्य स्त्रियाँ मुझे आशिष दे और मेरी माता न दे तो मुझे यह बात कैसे अच्छी मालूम हो सकती है? मुझे दूधकी जगह शराब मिले, गन्ना चाहूँ तो सिगरेट मिले, तो यह मेरे किस कामका? मैं तो स्त्रियो, गरीबो और अन्त्यजोके दु खका निवारण कराना चाहता हूँ। अन्त्यजोके साथ मै अन्त्यज हो गया हूँ। स्त्रियोसे मै कहता हूँ कि मै आपके लिए स्त्री हो गया हूँ। आपकी पवित्रताकी रक्षाके लिए मै पृथ्वीका पर्यटन कर रहा हूँ। मै यहाँ वतौर एक कगालके आया हूँ, ससारमे जो मुझे मान-आदर मिला है उसके वलपर नही आया हूँ। एक प्रजाजनकी हैसियतसे आया हूँ। मुझे यदि आप खवर देंगे कि राज्यमे इतने चरखे चलने लगे है, इतनी खादी आ गई है तो मुझे वडी खुशी होगी। यदि मुझे खवर मिले कि रानी साहिवा भी खादी पहनती है और सारे राज्यमे, दरवारके कोने-कोनेमे खादी व्याप्त हो गई है तो मै नगे पाँवो आकर आपको प्रणाम करूँगा। आपका भला हो और ईश्वर आपको प्रजाका कल्याण करनेमे समर्थ करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-२-१९२५

७०. भाषण: राष्ट्रीय शालाके उद्घाटनपर[1]

१५ फरवरी, १९२५

यह राष्ट्रीय शाला अथवा जिस विद्यापीठकी यह शाखा है वह विद्यापीठ, एक महान् प्रयोग है जो इस समय हिन्दुस्तानमे किया जा रहा है। शासक और शासन-की ओरसे ऐसे प्रयोग शायद ही हुआ करते है। उनकी प्रवृत्ति प्रचलित पद्धतिपर चलनेकी है। ऐसा राज्य शायद ही कोई होगा जो प्रचलित पद्धतिको छोडकर दूसरा प्रयोग हाथमे ले। ऐसे प्रयोग करना तो लोगोका काम है, शासकोका नही। शासक तो लोगोके रक्षक और प्रतिनिधि है। यदि मै इससे भी आगे वढकर कहूँ तो सच्चा राजा प्रजाका सेवक ही है। इसलिए वह लोगोके खर्चसे ऐसे प्रयोग नही कर सकता। अत इस दृष्टिसे ठाकुर साहवने शिक्षकोके सम्वन्धमे जो कुछ कहा है वह यथार्थ

१. राजकोटमें।

है। किन्तु मेरे लिए, जिसने ऐसे प्रयोगोमे ही अपना जीवन लगाया है, अन्य कुछ करना असम्भव है। इसलिए मै ठाकुर साहवसे निवेदन करता हूँ कि वे मुझ-जैसे लोगोपर अपनी कृपादृष्टि रखे। जिन लोगोमे नया जीवन आ गया है और जो स्वतन्त्र और सयत होना चाहते है, यदि उन लोगोके शिक्षकोके नियम अत्यन्त कठोर न होगे तो उन्हे सामान्य शालाओंके लिए मध्यम कोटिके शिक्षक प्राप्त करनेमे भी कठिनाई होगी।

मै शिक्षकोसे कहना चाहता हूँ कि वे कठिनाइयोसे सघर्ष करे और मरण-पर्यन्त धर्मका पालन करे। चाहे छात्र १५० से ४० रह जाये, किन्तु वे इस शालाकी सेवा करते रहे। जैसे चुम्वक लोहेको खीचता है वैसे उनकी निष्ठा ही भविष्यमे शालामे दूसरे छात्रोको आकर्षित करेगी। हम लोग आरम्भ-शूर कहे जाते है, किन्तु हमपर जैसे ही सकट आता है कि हम सकटमोचन भगवान्की स्तुति करनेके वजाय अहकार-पूर्वक काम छोडकर वैठ जाते है। यदि हम जातियोके इतिहासका अवलोकन करे तो देखेगे कि जिन देशोके लोग स्वतन्त्र है उनमे वहुतसे लोगोने जीवनके सिद्धान्तोका पालन मरण-पर्यन्त किया है। पाँच वर्ष नही, वीस वर्ष भी इस शालामे प्रगति होती न दिखे तो भी कोई चिन्ताकी वात नही है। किसी सस्थाके जीवनमे वीस वर्षका काल कुछ नही होता। चाहे हमे कोई स्पष्ट फल निकलता न दिखे, किन्तु यदि शिक्षकोमे आत्मविश्वास हे तो उन्हे अपने स्वीकार किये हुए सीधे मार्गपर ही चलते जाना चाहिए। अन्तमे उन्हे सुरम्य तट अवश्य दिखाई देगा।

मुझे इस शालाकी विशेषताके सम्वन्धमे दो शब्द कहनेकी आवश्यकता है। इसकी एक विशेषता तो यह है कि इसने अपने सम्मुख अनेक कठिनाइयाँ आनेपर भी अन्त्यज वालकोको प्रविष्ट किया है। इसकी दूसरी विशेषता यह है कि इसमे शरीर-श्रमको प्रथम स्थान दिया गया है। इस शालाकी भूमिमे हमे जो पेड-पौधे उगे दिखाई देते है, उनको उगानेमे शिक्षको और वालकोने योग दिया है। यह शरीर-श्रम यज्ञका रूप है, किन्तु इस देशमे और इस युगमे यज्ञका सर्वोत्तम रूप चरखा चलाना है। प्रत्येक स्त्री और पुरुपको अन्त्यजोके नामपर, देशके असख्य कगालोके नामपर और देशकी असख्य विधवाओके नामपर नित्य आधा घटा चरखा चलाना चाहिए। अभिभावकोको जानना चाहिए कि विद्यार्थियोको अपनी वुद्धि ही नही, शरीर-का भी विकास करना चाहिए। उनको स्वहित ही नही, परहित भी साधना चाहिए। चरखेमे परहित आ जाता है, इस वातको जो लोग समझते है वे तो चरखेका त्याग कदापि नही करेगे। किन्तु मैने तो यह सुना है कि माता-पिताको यह नही रुचता कि उनके वच्चे शरीर-श्रम करे, चरखेसे सूत काते। सच्चे ज्ञानमे शरीर, आत्मा और वुद्धिका विकास सम्मिलित है। इस त्रिवेणीकी साधना ही श्रेयस्कर है। यह देश ऐसा है कि इसमे स्वार्थ-त्यागी और परिश्रमी शिक्षकोके मनमे निराशाके भाव आ जाते हैं। मेरा ठाकुर साहवसे निवेदन है कि वे ऐसे वातावरणमें रहनेवाले शिक्षको-पर अपनी कृपादृष्टि रखे।

क्या शालाका कार्य नीति-विरुद्ध है? यदि वह नीति-विरुद्ध हो तो अलग वात है। यदि कोई अस्पृश्यताके प्रश्नको नीति-विरुद्ध मानते हो, अन्त्यजोको छूना भ्रष्टाचार

समझते हो तो वे अपने वालकोको शालामे न भेजे। ईश्वरसे मेरी यही प्रार्थना है कि यदि इसमे मेरी भूल हो तो वह मुझे वचाये और यदि ऐसे माँ-वापोकी भल हो तो वे उनके इस दुराग्रहको दूर करे।

किन्तु मैं अन्तमे इतना और कहना चाहता हूँ कि यह शाला ठाकुर साहवकी सहानुभूतिसे, माँ-वापोके प्रयत्नसे अथवा मेरे प्रयत्नसे अथवा वल्लभभाईके प्रयत्नसे अथवा अभावग्रस्त विद्यापीठकी सहायताके वचनसे नही चलेगी, इसका दारोमदार तो अध्यापकोपर निर्भर है। मैने तो नही देखा कि कोई सस्था केवल धनसे चली हो। यदि धनसे ही चल सकती होती तो कलकत्तेका हार्डिंग स्कूल वन्द न हो जाता। ऐसी सस्थाओको चलानेके लिए सच्चे सचालकोकी आवश्यकता होती है। उनमे प्राण फूँक सके। वे नही थे, इसलिए उक्त शाला वन्द हो गई। आप इस शालामे प्राण फूँके और ईश्वरका नाम लेकर काम करे। जो अपनेको निर्वल मानकर और ईश्वरका नाम लेकर काम करेगा और द्रौपदीकी तरह आर्त स्वरमे ईश्वरकी सहायता माँगता रहेगा उसे ठाकुर साहवसे या विद्यापीठसे सहायता लेनेकी कभी आवश्यकता न पडेगी। इसलिए यदि शालाको वन्द करनेकी नौवत आती है तो इसमे दोष शिक्षकोका ही होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १-३-१९२५

७१. भाषण: जैन-छात्रावासके उद्घाटन समारोहमें

१५ फरवरी, १९२५

ठाकुर साहवने शिक्षाके सम्वन्धमे सुन्दर विचार व्यक्त किये है, किन्तु उन्होने इस सम्वन्धमे यह कहकर निराशा दिखाई है कि ऐसे छोटे राज्यमे यह सव कैसे किया जा सकता है। ऐसी निराशाका कोई कारण नही है। प्रत्युत राज्य छोटा होनेमे उसे कई लाभ भी है। राजकोटके लोग ऐसे नही है कि उनसे कोई काम न लिया जा सके। यूरोपके छोटे-छोटे राज्य, जैसे स्वीडन, नॉर्वे और स्विटजरलैंड, जिनको गत महायुद्धमे सम्मिलित न होनेसे लोग सामान्यत नही जानते, ऐसे राज्य है जिनकी सभ्यता अन्य वडे राज्योकी तुलनामे किसी भी प्रकार कम नही है और जिन्होने शिक्षाके क्षेत्रमे अनेक प्रयोग किये है। वडे राज्योकी कठिनाइयाँ भी वडी होती है। लॉर्ड रीडिंग-जैसे लोगोको कितनी कठिनाइयोका सामना करना पडता होगा, यह मैं समझ सकता हूँ। उनको अनेक पक्षो और स्वार्थोका विचार रखना पडता है और विस्तृत क्षेत्र सम्भालना होता है, इसलिए उनसे क्या हो सकता है? इसके विपरीत छोटे राज्योमे अच्छी योजनाओपर अधिक सुगमतासे अमल किया जा सकता है। गुजरात विद्यापीठपर कुछ ऐसी ही वात लागू होती है। यदि हम आदर्श छात्रोको लेकर एक आदर्श शालाकी स्थापना करे तो उसमे से वैसी अनेक शालाएँ उत्पन्न हो जायेगी। शून्यसे तो

७३. तार : मदनमोहन मालवीयको

जेतपुर
१६ फरवरी, १९२५

मालवीयजी
बिडला भवन
दिल्ली

आपके लिए नकले मुहैया कर रहा हूँ।[1] आशा है आप रावलपिंडी[2] हो आये होंगे।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

७४. सत्याग्रहकी कसौटी

वाइकोमसे एक सत्याग्रही अपने पत्रमे लिखते है[3]

मन्दिरके मार्गपर अन्त्यजोके आनेकी मॉगको लेकर जो सत्याग्रह चल रहा है, त्रावणकोरकी विधान परिषद्ने २१ के खिलाफ २२ मतसे उसके खिलाफ प्रस्ताव पास किया है। दु ख इसलिए और भी अधिक होता है कि मतदाताओं-पर सरकारने इस बातके लिए दबाव डाला।...खुद अन्त्यजोके एक प्रतिनिधि-ने भी सरकारके हकमें राय दी थी।...अब लोग 'सीधे प्रहार' और जबर-दस्ती मन्दिरोमें घुस जानेकी हिमायत कर रहे हैं। सत्याग्रह छावनीमे चेचक फैल गई है।...केरल प्रान्तीय कमेटीका उत्साह मन्द पडता जा रहा है।... हर बातके लिए हम आपकी अमूल्य सहायता और सलाहपर निर्भर रहते है। हमें पैसेकी बडी तगी हे। सभी सत्याग्रही आपकी बाट आतुरतासे जोह रहे हैं; कहना निरर्थक है कि आपके पधारनेसे हमारे उद्देश्यको अमूल्य सहायता प्राप्त होगी।

यह पत्र अच्छा है, क्योकि इसमे बात साफ-साफ कही गई है। यदि इसमे कही बाते सच हो तो त्रावणकोर सरकारको इसपर बधाई नही दी जा सकती। पर

१. पत्र की।
२. देखिए "तार मदनमोहन मालवीयको", ९-२-१९२५।
३. अशत. उद्धृत।

तथ्योको मै स्वयं ठीक-ठीक नही जानता। जबतक मै जाकर सच्ची हालत न जान लूँ तबतक उसपर अपनी राय कायम करना मुल्तवी रखता हूँ। मै जितना जल्दी हो सके वाइकोम जाना चाहता हूँ और आशा रखता हूँ कि इसमे विलम्ब न होगा।

इस बीच सत्याग्रहियोको निराश तो कदापि नही होना है। निराशाके सामने वे दब तो हरगिज नही सकते। मैने जो थोडी-बहुत तमिल सीखी उसमे से एक कहावत मुझे सदा याद रहती है। उसका शब्दार्थ है 'निर्बलके बल राम'। इस सत्यके प्रति विश्वास ही सत्याग्रहके महान् सिद्धान्तका मूल है। इसके प्रमाणभूत उदाहरणोसे अकेले हिन्दू धर्मका साहित्य ही नही, दूसरे तमाम धर्मोका साहित्य भरा पडा है। त्रावणकोर सरकारने भले ही सत्याग्रहियोके साथ विश्वासघात किया हो और भले ही मै भी उनका साथ न दूं, किन्तु इससे क्या होना है? यदि उन्हे उसपर श्रद्धा होगी तो ईश्वर उन्हे मँझधारमे नही छोडेगा। यदि वे मेरे भरोसे हो तो उन्हे जान लेना चाहिए कि वे एक टूटी हुई पतवारका भरोसा रखे हुए है। इतने फासलेपर बैठा हुआ मै उनकी क्या मदद कर सकता हूँ। मै भले ही उनके आँसू पोछ दे सकूँ, पर कष्ट-सहन तो उन्हींको करना है। और यदि उनका कष्ट-सहन शुद्ध होगा तो उसके द्वारा उन्हे विजय मिले बिना नही रह सकती। ईश्वर अपने भक्तोको अन्त तक कसौटीपर चढाता है, पर उनकी सहनशक्तिकी हदसे बाहर हरगिज नही। वह उनके लिए जिस अग्नि-परीक्षाका विधान करता है उसमे से उत्तीर्ण होनेकी शक्ति भी वह उन्हे देता है। वाइकोमके सत्याग्रहियोका सत्याग्रह ऐसा प्रयोगात्मक नही है कि कुछ समयमे सफल न होनेपर, या इस हदतक कष्ट सह लेनेके उपरान्त वे उसे बीचमे ही छोड बैठें। सत्याग्रहीके लिए काल-मर्यादा नही होती और न कष्ट सहनेकी ही मर्यादा होती है। इसीलिए सत्याग्रहमें पराजय नामकी कोई चीज ही नही होती। जिस बातको लोग सत्याग्रहियोकी हार मानते हो सम्भव है वह उनकी विजयका उषाकाल हो—प्रसूतिके पहलेकी वेदना हो।

वाइकोमके सत्याग्रहियोका युद्ध स्वराज्यसे कम महत्त्वपूर्ण नही है। वे युगोसे प्रचलित अपराध और अन्यायका मुकाबला कर रहे है। कट्टरता, अन्धविश्वास, रूढि और अधिकारीवर्ग उसके पृष्ठपोषक है। यह उन तमाम युद्धोमे एक ऐसा पुण्य युद्ध है जिन्हे ज्ञानके नामपर प्रचलित अज्ञान और धर्मके नामपर प्रवर्तित अधर्मके खिलाफ छेडा ही जाना चाहिए। यदि उनके युद्धमे रक्तपातको कोई स्थान नही दिया जाना है तो कठिनसे-कठिन परिस्थितिमे भी उन्हे धीरज ही रखना है। आगकी धधकती ज्वालाओके मुकाबलेमें भी उन्हे विचलित नही होना है।

हो सकता है कि [प्रान्तीय] काग्रेस कमेटी उन्हे कुछ भी मदद न दे। उन्हे कोई आर्थिक सहायता न मिले। उन्हे भूखो मरना पडे। फिर भी इन भयकर कसौटियोमें उनकी श्रद्धा देदीप्यमान दिखाई देनी चाहिए।

सत्याग्रही जो कर रहे है वही 'सीधा प्रहार' है। परन्तु प्रतिपक्षियोपर वे क्रोध नही दिखा सकते। क्योकि वे बेचारे इससे अधिक नही जानते है। वे सबके-सब दगाबाज नही है, जिस तरह सबके-सब सत्याग्रही भी साफ और पाक नही होते। जिसे वे अपने धर्मपर आक्रमण समझते है उसके खिलाफ वे प्रामाणिकताके

साथ लड रहे है। वाइकोमका सत्याग्रह कष्ट-सहनके रूपमे एक दलील है। क्रोधरहित, द्वेपरहित, कष्टसहनके उदीयमान सूर्यके सामने कठोरसे-कठोर हृदय पिघले बिना नही रह सकता, घोरसे-घोर अज्ञान दूर हुए बिना नही रह सकता।

सत्याग्रह छावनीमे शीतलाके प्रकोपकी वात सुनकर मै डर गया हूँ। यह रोग गदगीसे उत्पन्न होता है और तन्दुरुस्ती-सम्बन्धी मामूली उपायोसे दूर हो सकता है। चेचकके रोगियोको दूसरोसे अलग रखकर उसके प्रकोपका कारण खोजना चाहिए। छावनीमे सफाई तो पूरी-पूरी रहती है न? डाक्टरोके पास चेचककी कोई दवा नही होती। जल-चिकित्सा ही उसका उत्तम इलाज है। सूक्ष्म आहार अथवा अनाहार सबसे अच्छा रास्ता है। पर सबसे वढकर महत्त्वकी वात तो यह है कि रोगी अथवा दूसरे लोगोमे से कोई भी हिम्मत न हारे। रोगियोकी पीडा भी उनके कष्ट सहनकी विधिका एक अग है। सैनिकोकी छावनियाँ रोगसे विल्कुल अछूती नही होती। कहा तो यहाँतक जाता है कि गोलियाँ खाकर मरनेवाले सैनिकोकी अपेक्षा रोगसे मर जानेवाले सैनिक ही अधिक होते है।

सत्याग्रही रुपये-पैसेकी चिन्ता बिलकुल न करे। उनकी अखण्ड श्रद्धा उन्हे आवश्यक आर्थिक सहायता दिला देगी। मैने अवतक एक भी सत्कार्य ऐसा नही देखा जो धनके अभावके कारण पूरा न किया जा सका हो।

[अग्रेजीसे]

यग इंडिया, १९-२-१९२५

७५. हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न

एक सज्जन लिखते है[१]

आपने 'यंग इडिया' में एक पत्र द्वारा तालीमके क्षेत्रमें मुसलमानोके बहुत पिछड़े हुए होनेकी शिकायतका पर्दाफाश करनेवाले एक पत्रको स्थान दिया है। अब मै आपका ध्यान एक और ऐसी चीख-पुकारकी ओर आकर्षित करता हूँ जो तालीमवाली वातसे भी ज्यादा वेतुकी है और वह यह कि 'हिन्दुस्तानमें मुसलमान एक अल्पसंख्यक जाति है।' हमेशा यह बात कही जाती है और राजनीतिक मसलोके पेश होनेपर यह दलील चुपचाप मान भी ली जाती है। पर क्या दरअसल वे अल्पसंख्यक है? अगर उनके सिर्फ एक ही फिरके, हनफी सुन्नियोको ले ले तो क्या वे हिन्दुओके किसी भी एक फिरकेसे सख्यामें अधिक नहीं है? बल्कि भारतके ईसाई, पारसी, सिख, जैन, यहूदी और बौद्ध किसी भी धर्मके लोगोसे अधिक नहीं है? और फिर हिन्दू लोग कितनी ही ऐसी जातियो और फिरकोमें बँटे हुए है जो कि सामाजिक बातोमें परस्पर उतने ही दूर है,

१. यहाँ पत्रका साराश दिया जा रहा है।

> जितने कि मुसलमान किसी गैर-मुसलमानसे? और फिर अछूतोको लीजिए क्या उनकी तादाद 'मुस्लिम अल्पसख्यकोके' वरावर नहीं है? यदि हिन्दुस्तानके मुस्लिम पृथक् और विशेप ढगका व्यवहार, रक्षा और गारटी चाहते हैं तव अछूतोका दावा कितना प्रवल होगा? . वे तो सदियोसे और वास्तवमें आज भी ऐसी निर्योग्यताओके शिकार हैं जिनसे न मुस्लिम और न सवर्णोकी कोई अल्पसख्या पीडित है और न भविष्यमें उनके विषयमें इस तरहकी कोई आशका हो सकती है। उदाहरणके तौरपर वाइकोम सत्याग्रह, पालघाटका झगडा, और वम्वईके 'टूक-टूक कर देने' की प्रतिज्ञा करनेवालोको लीजिए। उन आदिम जातियोका यहां मै जिक्र ही नहीं करता हूँ जिनकी गिनती हिन्दुओमें की जाती है। तव क्या सचमुच केवल मुसलमान ही अल्पसख्यक हैं?

शब्दोके नीचे रेखाकन लेखकका है। यह पत्र मैं उसमे परिलक्षित असन्दिग्ध गम्भीरताके कारण छाप रहा हूँ। फिर भी मेरी, एक निष्पक्ष निरीक्षककी दृष्टिमे लेखककी वह दलील जिसके द्वारा वे यह दिखलाना चाहते है कि हिन्दुस्तानमे मुसलमानोकी अल्पसख्या नही है, सत्यका आभास-भर देती है। लेखक इस वातको भूल जाते है कि वात तो सारे मुसलमानोके सारे हिन्दुओके मुकावले अल्पसख्यक होनेकी है। लेखक 'हैंमव ठठाड, फुलाइव गालू' वाला आग्रह नही रख सकते। यद्यपि हिन्दू आपसमे विभक्त हैं, तथापि मुसलमानोके ही नही तमाम अ-हिन्दुओके विरोधमे वे लगभग एक होकर उनका मुकावला करते हैं। मुसलमान भी यद्यपि आपसमे अनेक दलोमें विभक्त हैं, तो भी कुदरती तौरपर तमाम गैर-मुस्लिमोका मुकावला वे एक होकर करते हैं। हकीकतको भुलाकर या उसको अपनी तजवीजोके मुआफिक वैठाकर इस सवालको कभी हल नही किया जा सकता। हकीकत यह हे कि मुसलमान सात करोड हैं और हिन्दू वाईस करोड। हिन्दुओने इस वातको कभी नामजूर नही किया। अव हम यह भी देखें कि मामला दर-अमल क्या है? अल्पसख्यक लोग वहुसख्यक लोगोसे हमेशा महज इसलिए नही डरते कि उनकी सख्या ज्यादा हे। मुसलमान हिन्दुओकी वहुसख्यामे इसलिए डरते है कि उनका कहना हे, हिन्दुओने हमेशा ही हमारे साथ गैर-इन्साफी की हैं, हमारे मजहवी जजवातकी इज्जत नही की हे, और उनका यह कहना भी है कि हिन्दू लोग तालीम और धन-दौलतमे हमसे वढे-चढे हैं। ये वाते ऐसी ही है या नही इस सवालसे हमे यहाँ कोई मतलव नही। हमारे लिए इतना ही काफी है कि मुसलमानोका विश्वास ऐसा ही है और इसलिए वे हिन्दुओकी वहुसख्याकी ओर सशकित हैं। मुसलमान लोग इस डरका इलाज कुछ अशमे पृथक् निर्वाचन और विशेप प्रतिनिधित्व — कुछ जगहोमे तो अपनी सख्यासे भी ज्यादा प्रतिनिधित्व — प्राप्त करके कराना चाहते हैं। हिन्दू लोग मुसलमानोकी अल्पसख्याको तो मानते है पर उनके इन्साफ न करनेके इलजामसे इनकार करते हैं। इसलिए इसकी तसदीक करनेकी जरूरत है। मैंने हिन्दुओको इस कथनका खण्डन करते नही देखा है कि वे तालीम और धन-दौलतमे मुसलमानोसे वढकर हैं।

इधर हिन्दू भी मुसलमानोसे डरते हैं। उनका कहना है कि जब कभी मुसलमानोके हाथमे हुकूमत आई है, उन्होने हिन्दुओपर बडी-बडी ज्यादतियाँ की है और कहते है कि हालाँकि हमारी वहुसख्या है तो भी मुट्ठीभर मुसलमान हमले करके हमारे छक्के छुडा देते है। हिन्दुओके मनमे हमेशा पुराने अनुभवोके दोहराये जानेका खतरा रहता है, और वे अग्रगण्य मुसलमानोकी नेकनीयतीके वावजूद यह मानते है कि मुसलमान जनता तो मुसलमान गुडेका ही साथ देगी। इसलिए हिन्दू मुसलमानोके कमजोर होनेके उज्रको नामंजूर करते हैं और लखनऊ समझौतेमे[1] निहित सिद्धान्तको व्यापक करनेकी वातसे इनकार करते है। यहाँ भी यह सवाल नही उठता कि हिन्दुओका यह डर कहाँतक ठीक है। उन्हे ऐसा डर है और हमे इसपर विचार करना होगा। किसी भी जाति या नेताकी नीयतपर शका करना अनुचित होगा। मालवीयजी या मियाँ फजल-ए-हुसैनपर अविश्वास करना मानो इस प्रश्नके निपटारेको स्थगित करना है। दोनो अपने विचारोको ईमानदारीके साथ पेश करते है। ऐसी हालतमे अक्लमदी इसी वातमे है कि तमाम छोटे-वडे सवालोको एक ओर रख दे और जो स्थिति वास्तवमे है उसका मुकावला करे, न कि अपने द्वारा कल्पित किसी स्थितिका।

इसलिए मेरी रायमे लेखकने, चाहे अनजानमे ही हो, अपने पक्षको जरूरतसे ज्यादा सिद्ध करनेका प्रयत्न किया है। उनका यह कहना सच है कि खुद हिन्दू परस्पर विरोधी दलोमे विभक्त है। उनमे ऐसे दल है जो अपने लिए अलग-अलग ढगके विशेष व्यवहारका दावा लेकर खडे होते है। उनका यह कहना भी ठीक है कि पृथक् प्रतिनिधित्वके लिए मुसलमानोकी अपेक्षा अछूतोका पक्ष कही अधिक मजबूत है। लेखकने मुसलमानोके अल्पसख्यक होनेकी हकीकतके विरोधमे आवाज नही उठाई है वल्कि जातिगत प्रतिनिधित्व और पृथक् निर्वाचनके विरोधमे उठाई है। उन्होने यह दिखलाया है कि लखनऊके समझौतेके सिद्धान्तका विस्तार करनेसे असख्य उपजातियो और दूसरी जातियोके लिए जातिगत प्रतिनिधित्वका सवाल खडा हुए विना न रहेगा। ऐसा करना स्वराज्यके शीघ्र आगमनको अनिश्चित कालतक स्थगित करना है।

लखनऊ समझौतेके सिद्धान्तको व्यापक वनाना या उसको कायम रखना भयावह है। किन्तु मुसलमानोके दु ख-दर्दोको देखा-अनदेखा कर देना भी क्या स्वराज्यको मुल्तवी करना नही है? इसलिए स्वराज्यका कोई भी प्रेमी तबतक दम नही ले सकता जवतक इस सवालका ऐसा निपटारा न हो जाये, जिससे मुसल्मानोकी आशका दूर हो जाये और स्वराज्यके लिए भी कोई खतरा न रहे। ऐसा निपटारा असम्भव नही है।

एक विकल्प तो यह लीजिए।

मुसलमानोकी यह माँग कि वगाल और पजावमे उनका प्रतिनिधित्व उनकी सख्याके अनुसार रहे, मेरी रायमें अस्वीकार नही की जा सकती है। उनकी यह माँग

१ भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस और मुस्लिम लीग द्वारा १९१६ के लखनऊ अधिवेशनमें अपनाई गई सयुक्त सुधार योजना।

उत्तर या उत्तर-पश्चिमके भयके आधारपर अमान्य नही की जा सकती। अगर हिन्दू स्वराज्य चाहते हैं तो उन्हे यह जोखिम उठाना ही चाहिए। यदि हम बाहरी दुनियासे डरते रहे तो हमें स्वराज्यका खयाल छोड देना चाहिए। पर चूंकि स्वराज्य तो हमें लेना ही है, इसलिए मैं मुसलमानोके न्यायोचित दावोका विचार करते समय हिन्दुओके उनकी दलीलको खारिज करता हूं। अपनी भावी सुरक्षाको खतरेमें डालकर भी हममें न्याय करनेका साहस होना चाहिए।

मुसलमानो द्वारा पृथक् निर्वाचनकी मांगका कारण पृथक् निर्वाचन ही नही है बल्कि यह है कि वे विधान-सभाओमे तथा दूसरे निर्वाचक मण्डलोमे अपने सच्चे प्रतिनिधि ही भेजना चाहते हैं। यह तो कानूनके जरिये अनिवार्य करनेकी अपेक्षा आपसी तौरपर तजवीज कर लेनेसे अधिक अच्छी तरह हो जा सकता है। आपसी तौरपर की हुई तजवीजमे घटा-बढीकी गुजाइश रहती है। मगर विधान द्वारा थोपे हुए निर्णयोमे उनके समयके साथ उत्तरोत्तर सख्त होते जानेकी सम्भावना होती है। आपसी तजवीजसे दोनो दलोकी ईमानदारी और सदाशयताकी परीक्षा होती रहेगी। पर वैधानिक निर्णयमे इन दोनो बातोकी गुजाइश ही नही होती। आपसी तजवीजके मानी है, घरेलू झगडोका घरेलू निपटारा और दोनोकी दुश्मन अर्थात् विदेशी हुकूमतके विरोधमे सम्मिलित बलकी मजबूत दीवार। लोग कहते हैं कि मैं जो आपसी तजवीज सुझा रहा हूँ उसके मुताबिक काम करनेमे कानून बाधक है। यदि ऐसा हो तो हमे उन कानूनी बाधाको दूर करनेकी कोशिश करनी चाहिए, न कि नई बाधा पैदा करने या जोडनेकी। इसलिए मेरा सुझाव है कि पृथक् निर्वाचनका खयाल छोड दिया जाये और क्षेत्र विशेषमें दोनोकी सयुक्त सम्मतिसे तयशुदा तादादमे मुस्लिम तथा दूसरे उम्मीदवारोके चुनावकी सूरत पैदा की जाये। मुस्लिम उम्मीदवार जानी-मानी मुस्लिम सस्थाओके द्वारा नामजद किये जायें। इस मौकेपर नियत तादादसे अधिक तादादमें प्रतिनिधि रखनेके सवालपर चर्चा जरूरी नही है। जब आपसी ठहरावके सिद्धान्तको सभी लोग स्वीकार कर लेगे तब प्रतिनिधित्वकी बातपर विचार किया जा सकेगा और उसी समय सम्बन्धित सभी दिक्कते भी हल की जा सकती हैं।

इसमे कोई शक नही कि मेरे इस प्रस्तावमे पहलेसे यह एक बात गृहीत कर ली गई है कि इस सवालमे लगे हुए तमाम लोग स्वराज्यको ध्यानमें रखकर इसे हल करनेकी कोशिश सच्चे और साफ दिलसे चाहते हैं। यदि उद्देश्य किसी सम्प्रदाय विशेषके हकमे सत्ता-प्राप्तिका हो तब तो कोई भी आपसी व्यवस्था टिकी नही रह सकती। किन्तु यदि स्वराज्य ही हम सबका लक्ष्य हो और दोनो पक्षोके लोग केवल राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे ही उसे हल करना चाहते हो तो फिर उसके भग होनेका अन्देशा रहता ही नही है। इसके विपरीत हर फरीक नेकनीयतीके साथ उसके अनुसार चलनेमे अपना हित समझेगा।

कानूनका काम इतना ही है कि वह समुचित मतदानकी व्यवस्था कर दे, ताकि सम्प्रदाय यदि चाहे तो अपनी तादादके लिहाजसे मतदाताओके नाम दर्ज करा सके। मतदाताओकी सूची ऐसी होनी चाहिए जिससे प्रतिनिधि सख्याके अनुपातमे चुने जा सके। पर इसके लिए वर्तमान मताधिकारकी कार्यरीतिकी गहरी छान-बीन करनी

होगी। मेरी नजरमे तो वर्तमान मताधिकार किसी भी स्वराज्य योजनामे स्थान पाने योग्य नही है।

[अग्रेजीसे]

यंग इडिया, १९-२-१९२५

७६. एस० डी० एन० को[1]

मैने आपके पत्रके एक भागकी चर्चा अग्रलेखमे[2] की है। समयाभावके कारण दूसरे भागपर विचार फिर कभी करूँगा, शायद अगले हफ्ते।

[अग्रेजीसे]

यग इंडिया, १९-२-१९२५

७७. टिप्पणियाँ

पहली मार्च याद रहे

पाठक इस बातको भूले न होगे कि बेलगाँवमे काग्रेसकी बैठकके बाद ही कुछ कार्यकर्त्ताओने १ मार्चके पहले स्वय कातनेवाले सदस्योकी सख्या दर्ज करनेका वादा किया था। वह दिन बहुत नजदीक आ गया है। मेरे सामने उन सज्जनोकी नामा-वली मौजूद है जिन्होने ऐसा वादा किया था। मै आशा करता हूँ, वे अपने वचनका पूरा-पूरा पालन करेगे। लोगोकी जानकारीके लिए मै यह कह देना चाहता हूँ कि उस समय उपस्थित लोगोने सारे देशसे ६,८०३ सदस्य बनानेका वादा किया था, और जबकि उस समय सभी प्रान्तोके कार्यकर्त्ता मौजूद नही थे। पर, उदाहरणके लिए, विहार और गुजरातने बेलगाँवके वादेसे अधिक सदस्य दर्ज करनेका निश्चय किया है। यदि भिन्न-भिन्न प्रान्तोके मन्त्री कृपापूर्वक स्वय कातनेवाले तथा अन्य सद-स्योकी सख्या इस मासके अन्ततक 'यग इडिया' के नाम तारके जरिये भेज दे तो बडी अच्छी बात हो। कार्यकर्त्ताओको सब जगह चार-चार आना देनेवाले सदस्य दर्ज करनेकी अपेक्षा स्वेच्छापूर्वक कातनेवाले सदस्य दर्ज करनेके काममे अधिक कठिनाई आ रही है। मेरे नजदीक कताईके मताधिकारका महत्त्व भी इसी कठिनाईमे है। इस कठिनाईका कारण योग्यताकी कमी नही बल्कि मनोयोग और अध्यवसायकी कमी है। यह बात ध्यानमे रहे कि इस कठिनाईका अनुभव सिर्फ चरखेमे अविश्वास रखनेवाले लोगोको ही नही हो रहा है बल्कि विश्वास रखनेवाले लोगोको भी हो रहा है। वे सहसा वादे कर लेते है और झटही उन्हे तोड भी डालते है, जैसा कि

१. पिछले शीर्षकमें उद्धृत पत्रके लेखक।

२. देखिए "हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न", १९-२-१९२५।

दिसम्बरके सूतके आँकड़ोंमें मालूम होता है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि जिन सज्जनोंने वादे किये हैं, वे अब इसके लिए अविराम प्रयत्न करेंगे।

पुरस्कार-निबन्धके सम्बन्धमें

कुछ मित्रोंने सुझाव दिया है कि हाथ-कताई और खद्दरके सम्बन्धमें पुरस्कार-निबन्ध भेजनेका समय बढ़ा दिया जाये। एक मित्रका सुझाव है कि इसकी तारीख नवम्बरतक बढ़ा दी जाये। लेकिन मैं ऐसा करूँ तो जिस उद्देश्यके लिए निबन्धकी जरूरत है वह उद्देश्य ही विफल हो जायेगा। श्री रेवाशंकरने इस पुरस्कारकी घोषणा ईसवी सन्‌के इसी वर्षमें, जो तेजीसे खत्म हो रहा है, चरखेके सन्देशके सम्बन्धमें विचार और कार्यको उत्तेजन देनेकी दृष्टिसे की है। इसके अलावा अवधि जो कम रखी गई है उसका कारण यह है कि हमारे पास इस विषयके जो थोड़े-बहुत अनुसन्धानकर्ता हैं, वे अपनी शक्तिको केवल इसी दिशामें लगा सकें और आर्थिक लाभकी दृष्टिसे इसमें जरूरतमन्द खादी-विद्यार्थियोंको आकर्षित करनेका ध्यान भी रखा गया है ताकि वे इस अवधिमें निबन्ध तैयार करनेमें अपना समस्त ध्यान केन्द्रित कर सकें। मैं यह आशा नहीं करता कि इस सम्बन्धमें कोई विशद् ग्रन्थ तैयार हो जायेगा, लेकिन मैं यह आशा अवश्य करता हूँ कि इस विषयपर एक उच्च स्तरका प्रारम्भिक निबन्ध लिखा जा सकेगा जो एक अधिक विशद् ग्रन्थ प्रामाणिक रूपमें लिखनेमें सहायक होगा। निबन्धमें इस विषयपर एक विस्तृत पुस्तक-सूची और इस सूचीकी पुस्तकोंका वैज्ञानिक, संक्षिप्त, सम्बद्ध और संगत विवरण होना चाहिए।

ऐसे अनेक लोग हैं जो इन स्तम्भोंमें और अन्यत्र चरखेका आर्थिक महत्त्व सिद्ध करनेके लिए जो कुछ लिखा जाता है, प्रायः उसके तथ्योंपर शंका करते हैं। अनेक लोगोंको यह सन्देह है कि चरखा मिलोंसे स्पर्धा नहीं कर सकता। दूसरे कुछ लोग ऐसे भी हैं जो इसे महज एक खिलौना समझते हैं और यह मानते हैं कि विदेशी कपड़ेके आयातपर इनका कोई प्रभाव भी नहीं पड़ सकता। इस निबन्धमें ऐसे आँकड़े और तर्क चरखेके महत्त्वके सम्बन्धमें दिये जाने चाहिए जो अकाट्य हों। यदि निष्पक्ष और सत्यशोधक विद्यार्थियोंके आँकड़े इसे असम्भव बतायें तो बात दूसरी है। यह प्रयत्न इसी वर्षमें, जबकि मताधिकारके रूपमें चरखा चलानेका प्रयोग जाँचा जा रहा है, किया जाना चाहिए।

मुझे पाठकोंको यह सूचना देते हुए हर्ष होता है कि कुछ प्रतिभाशाली युवक नियमित रूपसे इस काममें लगे हुए हैं और इसमें वे इसके आर्थिक महत्त्वके खयालसे नहीं, बल्कि इसलिए लगे हैं कि उन्हें इससे प्रेम है। मैंने ऐसे दो युवकोंसे निबन्ध प्राप्तिका समय बढ़ानेके सम्बन्धमें सलाह की और उन्होंने कहा कि यदि समय बढ़ाया जा सकता हो तो अच्छा हो। इसलिए अन्तिम तिथि अगली ३० अप्रैल कर दी है। इसका अर्थ है ६ सप्ताह और। मेरा विश्वास है कि यह वृद्धि उन सभी लोगोंके खयालमें, जो उत्तम निबन्ध लिखनेका प्रयत्न कर रहे हैं, पर्याप्त समझी जायेगी।

एक दूसरा सुझाव एक अन्य मित्रकी ओरसे आया है। उनका खयाल है कि परीक्षकोंमें एक दो मिल-मालिक — जैसे अम्बालाल साराभाई और मट्टुभाई काँटावाला —

भी शामिल किये जाने चाहिए। परीक्षकोके नामोका चुनाव मैंने किया था और मुझे स्वीकार करना चाहिए कि मैंने मिल-मालिकोका नाम जानबूझ कर छोडा था। मैंने यह अनुभव किया था कि परीक्षक इस विषयपर न्याय कर सके इसके लिए आवश्यक है कि उनका खादीपर विश्वास हो, तथा जिनमे परीक्षक होनेकी योग्यताके साथ-साथ सीधी वात स्वीकार कर सकनेकी क्षमता भी हो। लेकिन मेरे सवाददाताने सुझाव दिया है कि श्री मगनलाल गाधी-जैसे विशेषज्ञ भी मिल-उद्योगके घनिष्ठ परिचयके अभावमे भूल कर सकते है। इस आपत्तिमे वल है। मैं उसे स्वीकार करता हूँ और इसलिए सम्वन्धित सज्जनसे प्रसन्नतापूर्वक स्वय पत्र-व्यवहार करूँगा और निबन्धकी जाँचमे उनका सहयोग लेनेका प्रयत्न करूँगा।

बंगालके अछूत

वगालसे एक सज्जन पत्र लिखकर पूछते है

> (१) बगालमें अछूतोको कुँओसे पानी नहीं लेने देते और जिस जगह पीनेका पानी रखा हो वहाँ उन्हे जाने भी नही देते। इस बुराईको दूर करनेके लिए क्या करना चाहिए? यदि हम उनके लिए अलग कुएँ खुदवाएँ और अलग शालाएँ स्थापित करे तो इसका अर्थ इस बुराईको छूट देना होगा।
>
> (२) बगालके अछूतोका झुकाव इस वातकी तरफ है कि ऊँची जातिवाले उनके हाथका पानी पीयें। लेकिन वे खुद अपनेसे नीची जातिवालोंके हाथका पानी लेनेसे इनकार करते है। उन्हे इस गलतीसे विरत करनेके लिए क्या करना चाहिए?
>
> (३) बंगालकी हिन्दू महासभा और आम तौरपर हिन्दू लोग यह कहते है कि आप अछूतोके हाथका पानी पीनेकी वात पसन्द नहीं करते।

मेरे उत्तर ये है ·

(१) इस बुराईको दूर करनेका एक उपाय अछूतोके हाथका पानी पीना है। मै यह नही मानता कि उनके लिए अलग कुएँ खुदवानेसे यह बुराई स्थायी हो जायेगी। छुआछूतके प्रभावोको निर्मूल करनेमे वहुत समय लगेगा। इस डरसे कि अछूतोको अलग कुएँ वनवाकर मदद देनेके परिणामस्वरूप भविष्यमे भी उनके सार्वजनिक कुओंके उपयोग कर सकनेकी सम्भावना समाप्त हो जायेगी, इमे रोक रखना ठीक न होगा। मेरा विश्वास तो यह है कि उनके लिए यदि हम अच्छे कुएँ वनायेगे तो और भी वहुतमे लोग उनका इस्तेमाल करेगे। ऊँची जातिवाले हिन्दू उनके प्रति अपने कर्त्तव्य-का खयाल करके उनके सम्वन्धमे अपने भ्रम दूर करते रहेगे। इसके साथ ही अछूतो-मे भी सुवार होता रहना चाहिए।

(२) जव ऊँचे कहलानेवाले हिन्दू अछूतोको छूना शुरू कर देंगे तव अछूतोंमें भी अछूतपन अपने-आप नष्ट हो जायेगा। हमारा कार्य अछूतोमे भी, जो सवसे नीचे दर्जेके है, उन्हीसे शुरू होना चाहिए।

(३) मैं यह नहीं जानता कि बंगालकी हिन्दू महासभा मेरे नामसे क्या कहती है। मेरी स्थिति तो बिलकुल साफ है। अछूतोंको शूद्रोंमें गिनना चाहिए और उनके साथ वैसा ही व्यवहार रखना चाहिए जैसा कि हम शूद्रोंके साथ रखते हैं और चूंकि हम शूद्रोंके हाथका पानी पीते हैं, हमें अछूतोंके हाथका पानी पीनेमें भी नहीं झिझकना चाहिए।

जेलसे

आचार्य गिडवानीने अपनी धर्मपत्नीके नाम जो पत्र भेजा है, उसे देखनेका अवसर मुझे भी मिला। उसका कुछ अंश नीचे देता हूं

> बच्चे कैसे हैं? उनकी और अपनी चायकी आदतको छुडा दो, और जितना दूध दे सको, दो। तुम्हारी पढाईका क्या हाल है? जबतक तुम रचनापर ध्यान न दोगी, तबतक तुम जल्दी आगे नहीं बढ सकोगी। मुझे भरोसा है कि तुम हिन्दी और चरखेके सम्बन्धमें लापरवाही नहीं कर रही हो। दिनका सारा वक्त धूपमें और खुली हवामें बिताओ। हालांकि मेरा वजन कम ही बढा है पर हालत यकीनन् अच्छी है। जबतक तुम फिर मिलने आओगी तबतक मैं खूब चंगा हो जाऊंगा। मैं इसके लिए 'मुलरकी प्रणाली' को धन्यवाद देता हूं, जो जवाहरलालने[1] जब वे यहां थे मुझे बताई थी। मेरा स्वास्थ्य ऐसा नहीं बिगडा है कि सुधर न सके। उस नौ महीनेकी काल कोठरीमें मैं बराबर प्राणायाम और शारीरिक व्यायाम करता रहा था। मैंने उस पद्धतिका पूरा-पूरा अभ्यास कर लिया है। यदि तुम भी उसको शुरू कर सको और बच्चोंको भी सिखा सको तो अच्छा हो। बहरहाल पार्वतीसे कह जरूर देना कि मैं चाहता हूं कि वह घरके तमाम छोटे-बडोंको यह पद्धति सिखा दे। सम्बन्धित पुस्तक बाजारमें मिलती है।
>
> पिछला खत भेजनेके बाद मैंने ज्यादा नहीं पढा है। जिन किताबोंको भेजनेके लिए तुम्हें लिखा था उनके न मिलनेसे संस्कृतकी मेरी पढाई रुकी हुई है।
>
> फिलहाल मैं बढईगिरीका काम सीख रहा हूं। कुछ दिनके बाद बुनना सीखना शुरू करूंगा।

चूंकि मैं भी कैदी रहा हूं इसलिए दूसरे कैदियोंके अनुभवोंके साथ अपने अनुभवोंका मिलान अच्छा लगता है। आचार्य गिडवानी ही ऐसे नहीं हैं जिन्हें जेलमें जाकर चायसे अरुचि हुई हो। मैं खुद भी रोज चाय और काफी पिया करता था। लेकिन मेरी पहली जेल-यात्राने ही वह आदत छुडा दी। वहां चाय नहीं दी जाती थी और चायकी गुलामीसे छूटनेका खयाल मुझे अच्छा मालूम होने लगा। हिन्दुस्तान तो इस शौकको करनेकी स्थितिमें भी नहीं है। मगर चायकी सबसे बडी खराबी यही है कि वह दूधका स्थान ले लेती है। चायमें सिर्फ उतनी ही पोषक शक्ति है जो उसमें पडे दूध और चीनीसे मिलती है। जिस तरीकेसे हिन्दुस्तनमें चाय बनाई

[1] नेहरू।

जाती है वह तो दूध और चीनीका असर भी मार देता है। यहाँ चायको इतना उवालते है कि उसकी पत्तियोका दूषित व हानिकर रस, टेनिन भी उसमे उतर आता है। यदि चाय पीनी ही हो तो उसकी पत्तियाँ हरगिज न उबाली जानी चाहिए। बल्कि उन्हे छन्नीमे रखकर धीमे-धीमे उसपर खौलता हुआ पानी उँडेलना चाहिए। इस तरह जो पानी वरतनमे गिरे उसका रग सूखी घासके रगका होना चाहिए। सवसे अच्छी वात तो आचार्य गिडवानीका अनुकरण करना ही है, अर्थात् हम चाय पीना विलकुल छोड ही दें। जो चायको अपनी खूराक न वनाना चाहते हो, सिर्फ शौकिया पीना चाहते हो, वे महज खौलता हुआ पानी लेकर उसमे थोडा दूध और थोडी चीनी मिलाकर रगके लिए थोडी दालचीनीकी वुकनी डालकर ले सकते है। 'मुलरकी प्रणाली' से सम्वन्धित आचार्य गिडवानीके विचारोमे लोग दिलचस्पी लेगे। मेरी रायमे आचार्यजी इस मामलेमे नये मुल्ला-जैसे है। इन तमाम तरीकोका लाभ शुरूमे जितना दिखाई देता है उतना वास्तवमे होता नही है। 'मुलरकी प्रणाली' मे नई बात कुछ नही है। वह हठयोगकी कुछ क्रियाओकी वेतुकी और अधूरी-सी नकल है। सिर्फ तन्दुरुस्तीके ही खयालसे देखे तो हठयोगकी क्रियाएँ प्राय पूर्णताको पहुँच गई है। उनमे अनेक हिन्दुस्तानी वातोकी तरह सिर्फ दोष इतना ही है कि उनका जन्म हिन्दुस्तानमे हुआ है। उसका रहस्य केवल गहरे और नियमित श्वासोच्छ्वास और रगोको हलके हलके तानमेमे है। मुलरकी ओर हमारा ध्यान इसीलिए दौड जाता है कि उसने अपने इन व्यायामोके शारीरिक लाभ वताये है। मुलरकी पद्धतिका उपयोग उन लोगोके लिए अवश्य है जो हठयोगकी गुत्थियोको समझनेके झगडेमे न पडना चाहते हो। वे जरूर मुलरकी आसान पद्धतिका लाभ उठा सकते है। फिर हमारे यहाँ हठयोगके ज्ञाता भी वहुत नही है और उनके पास सवकी पहुँच भी नही हो सकती। जो थोडे वहुत है वे स्वभावत, और उचित ही, उसके शारीरिक लाभोके फेरमे नही पडते और इसलिए वे अध्यात्मके प्रेमी लोगोको उसकी शिक्षा देते है।

चरखेके प्रेमी आचार्यकी चरखा-भक्ति तथा हिन्दी और सस्कृतके प्रेमकी कद्र किये विना न रहेगे। वहुत दिनोके वाद आचार्य गिडवानीके इस उल्लासपूर्ण पत्रको छापते हुए मुझे वडा आनन्द हो रहा है, आचार्यजीकी तन्दुरुस्ती अव पहलेसे वहुत अच्छी हे।

एक नई बात

पिण्डीसे मेरे लौटनेके वाद मैने वोरसद ताल्लुकेके कोई १० गाँवोकी यात्रा की है। यह वही तहसील है जहाँ कि १९२३ मे श्री वल्लभभाई पटेलके नेतृत्वमे शानदार सत्याग्रह हुआ था और उसमे विजय भी प्राप्त हुई थी। उसके निवासी वुद्धिमान्, सुयोग्य और अपेक्षाकृत हट्टे-कट्टे है। पर मुझे यह देखकर वडा खेद हुआ कि कुछ गाँवोमे गन्दगी और भ्रष्टता फैली हुई है और उसका एकमात्र कारण हे दरिद्रता। कडी सर्दीके कारण फसल नष्ट हो गई थी। कुछ गाँवोमे तो लोगोको रात-दिन यही चिन्ता वनी रहती है कि कही वहाँके प्रमुख जमीदार अपने मवेशी उनके खेतोमें ही न छुडवा दे। उन्हे यह भरोसा नही हे कि कल क्या होगा और न वे यही महसूस

कर पाते हैं कि उनका अपना कोई घरद्वार है। इसका नतीजा है निराशा और इसलिए कामकी ओर उदासीनता। ऐसे लोगोको चरखा ही एक सहारा था। मगर वहाँ चरखेका काम भी धीरे-धीरे ही चल रहा है। वे कुछ भी करना नही चाहते। वे जैसे-तैसे अपनी दो वक्तकी रोटी-भर कमा लेना चाहते हैं। उनकी शून्य और अविश्वासशील दृष्टिसे यही झलकता था कि 'वरसोमे हमारा यही हाल है। इसी तरह हमारी जिन्दगी खतम हो जाने दो।' यदि कोई उन्हे कुछ दूसरा उद्योग या काम सुझाता है तो वे उसकी ओर कोई रुचि नही दिखाते। वे काम नही करना चाहते क्योकि उन्होने अभीतक दूसरोकी चाकरी ही बजाई है और इसलिए वे चाकरीको ही सर्वोत्तम समझते हैं, स्वय उद्योगशील बननेको नही। मेरे लिए यह एक नई बात थी और इससे मुझे बडा दु ख हुआ। पर मैंने ऐसी हालत इसके पहले भी चम्पारनमे देखी थी और उडीसामे उससे भी बदतर। पर इस बोरसद तहसीलमे मुझे बडा धक्का लगा। मैंने यह नही सोचा था कि बोरसद तहसीलमे ऐसा अनुभव होगा। बल्कि मैं तो यह उम्मीद कर रहा था कि वहा सुव्यवस्थित गाँव देखनेको मिलेंगे और उनमे उत्साह और आशा तथा प्रसन्नताके दर्शन होगे। सभी गाँवोकी यही हालत हो सो बात नही है। वे एक दूसरेके बहुत नजदीक बसे हुए हैं, फिर भी हरएककी अपनी समस्या है और हरएककी अपनी खसूसियत है। जिन गाँवोका मैंने जिक्र किया है, यदि उनके लिए आशाका कोई साधन हो सकता है तो वह एकमात्र चरखा ही है। उसे न तो मवेशी चर सकते हैं, न तुषार जला सकता है। कुदरतके निष्ठुर उत्पात तथा एक हदतक मनुष्यकी ज्यादतीसे भी बचनेका यही साधन है।

जो देशप्रेमी युवक ग्राम्य-जीवनकी कठिनाइयोका खयाल नही करते, और जो मूक तथा लगातार परिश्रममे, जो कि बहुत भारी तो नही होता है, फिर भी अपनी एकरूपताके कारण काफी भारी महसूस होता है, आनन्द प्राप्त कर सकते हैं, उनके लिए वहाँ भरपूर काम पडा हुआ है। जीवनदायी उद्योगकी एकरसताका अनुभव कर पानेके लिए पर्याप्त मनोयोगपूर्वक श्रम करनेकी आवश्यकता है। सगीतका नया विद्यार्थी उसके आरम्भिक पाठोको रूखा पाता है, पर ज्यो ही वह उस कलामे प्रवीण हो जाता है, उसकी एकरसता ही उसके लिए आनन्ददायिनी हो जाती है। यही बात ग्राम कार्यकर्त्ताओपर घटती है। मादक शहरी जीवनका नशा उतरते ही जब काममें मन लगने लगेगा तब शारीरिक श्रमकी एकरसतामे उन्हे बल और प्रेरणा मिलने लगेगी, क्योकि उसमें उत्पादनकी शक्ति है। सूर्य-मण्डलको अनुदिन उसी क्रम और अचूक नियमितताके साथ परिभ्रमण करते देखकर किसका जी ऊबा है? महा-पुरातन होनेपर भी उसे देखकर मनमे आश्चर्य और सराहनाके भाव उत्पन्न होते हैं। उसकी सम-गतिमे व्याघात होनेका अर्थ सारी मनुष्यजातिका सर्वनाश ही है। यही बात उस ग्राम-सूर्यमण्डलपर भी घटती है जिसका मध्यबिन्दु चरखा है।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १९-२-१९२५

७८. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

माघ वदी ११ [१९ फरवरी, १९२५][1]

सुज्ञ भाईश्री,

मै यह पत्र पोरबन्दर जाते हुए गाडीमे और इसीलिए पेन्सिलसे लिख रहा हूँ।

मै आश्रममे २२ से २६ तक रहूँगा और २७को दिल्लीके लिए निकलूँगा। वहाँ मै २ मार्च तक तो ठहरूँगा ही। उक्त अंग्रेज सज्जन मुझसे इस बीचमे मिल सकते है। ३ मार्चके बादका कार्यक्रम दिल्लीमे निश्चित होगा।

जब मै राजकोटसे रवाना ही हो रहा था तब उससे जरा पहले भाई जयशकर वाघजी जाम साहबकी ओरसे मुझे मिलने आ गये थे। उन्होने कहा कि जाम साहब मुझसे मिलनेके लिए उत्सुक है। वे मुझसे बम्बईमे मिलना चाहते है और ७ मार्चके बाद। मैने निश्चय किया कि जब बम्बई जाऊँगा तब जयशकरको तार दे दूंगा।

मुझे गोडलके दीवानका असन्तोषजनक उत्तर मिला है। उन्होने लिखा है कि मेरा गोडल राज्यके कार्यमे हस्तक्षेप करना अनुचित है। सूचित करे, आपके प्रयत्नका क्या परिणाम हुआ।

राजकोटमे ठाकुर साहबने बहुत सौजन्य दिखाया। मैने उनको बता दिया है कि मेरे विचार क्या है।

आशा है आप चरखा नियमसे चलाते होगे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१९४) से।
सौजन्य महेश पट्टणी

७९. तार : वाइसरायके निजी सचिवको

पोरबन्दर
१९ फरवरी, १९२५

वाइसरायके निजी सचिव
दिल्ली

तारके लिए धन्यवाद।[2] आपके तारमे उल्लिखित 'यग इंडिया' मे मैने एक आदर्शकी बात की है, परन्तु मुकदमोको वापस लेनेके काममे विघ्न डालनेकी मेरी कोई इच्छा नही। मेरा प्रयोजन सच्ची शान्तिकी स्थापना है

१. गाधीजी १९ और २० फरवरी, १९२५ को पोरबन्दरमें थे।
२. देखिए "तार वाइसरायके निजी सचिवको", ९-२-१९२५ की पाद-टिप्पणी।

जो मेरे विचारसे सरकारी हस्तक्षेप द्वारा लगभग असम्भव है, और भी ठीक कहें तो सरकारके गलत प्रयत्न या हस्तक्षेपके बिना असम्भव है। मेरे [illegible] हस्तक्षेपसे सरकार द्वारा किये जानेवाले प्रयत्नोंसे वास्तविक शान्ति स्थापित करनेमें सहायता ही मिलेगी। कृपया जवाब साबरमतीके पतेपर दीजिए।[1]

गांधी

यंग इंडिया, १९-२-१९२५ तथा अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

८०. भाषण पोरबन्दरमें

१९ फरवरी, १९२५

पोरबन्दरकी प्रजाकी तरफसे मुझे यह अभिनन्दन-पत्र दीवान साहबके हाथों दिलाया गया, इसके लिए मैं उनका कृतज्ञ हूँ। अभिनन्दन-पत्र चांदी या सदलकी मंजूषामें रखकर देनेके बजाय उनके साथ आपने मुझे २०१) रुपयेका चेक देकर जिस विवेकका परिचय दिया है, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। यदि पोरबन्दरके नागरिक ही मेरी अभिलाषाओंको न समझें और उन्हें पूरा न करें तो फिर इस पृथ्वीतलपर मैं किससे आशा रखूँगा? अनेक बार मैंने कहा है कि चाँदी वगैरा रखनेके लिए मेरे पास जगह ही नहीं है। चांदी आदि रखनेके साधन जुटाना एक उपाधि ही है। ऐसी वस्तुओंको त्याग करके ही मैं अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा कर पाया हूँ, और इसीलिए मैं हिन्दुस्तानसे कहता हूँ कि जिसे सत्याग्रहका पालन करना है, उसे निर्धन बननेके लिए और हर क्षण मृत्युसे भेंट करनेके लिए तैयार रहना चाहिए। चांदीकी मंजूषा रखनेके लिए मेरे पास स्थान कहाँ? इसलिए उसके बजाय आपने मुझे जो चेक दिया, उससे मुझे आनन्द ही हुआ है।

लेकिन एक तरफ जहाँ मैं आपको धन्यवाद देता हूँ वहाँ दूसरी तरफ मुझे अपनी कृपणतापर दया आती है। मेरी भूख बहुत बड़ी है। इस कागजके टुकड़ेसे मेरा पेट नहीं भर सकता, २०१) मेरे लिए काफी नहीं हो सकते। मैं यह इसलिए कहता हूँ कि मैं आपको यह यकीन दिला सकता हूँ कि जितना भी आपसे लूँगा

1. वाइसरायके निजी सचिवने २० फरवरीको धन्यवाद देते हुए इसका जवाब दिया था कि जो समझौता अभी इतने प्रयत्नोंके बाद हुआ है वह दोनों जातियोंके गैर-सरकारी लोगोंकी सहज रूपमें की गई मध्यस्थतासे ही सम्भव हो सका है। निस्सन्देह, उसका स्वरूप दोनों जातियोंके बीच आपसी समझौते जैसा है और उसकी शर्तोंमें कोई भी रद्दोबदल करनेसे पूरा समझौता गड़बड़ा जायेगा। इसके अलावा, इसी समझौतेके आधारपर बहुत सोच विचारके बाद ही महामहिमने मुकदमे वापस लेनेकी बात मानी है। इसलिए महामहिमको इस बातकी प्रसन्नता तो है कि आपकी अपनी इच्छा भी शान्ति स्थापित करनेकी है, पर उनको लगता है कि आपके प्रस्तावित दौरेका परिणाम यह होगा कि सारे मामलेपर फिर एक बार बहस खड़ी हो जायेगी ।

उससे दुगुना या उससे भी अधिक आप मुझसे बदलेमे पा लेगे, क्योकि मेरे पास ऐसा एक भी पैसा नही आता जिसमे से रुपयोके वृक्ष पैदा न होते हो — ब्याजसे नही, उसके उपयोगसे। ब्याज लेकर जीनेसे तो मरना ही बेहतर है। एक पैसेसे जितना भी रस लूटा जा सकता है उतना रस मै लुटाऊँगा। उसका उपयोग हिन्दुस्तान-की पवित्रताकी रक्षा करनेमे, हिन्दुस्तानके वस्त्रहीन स्त्री-पुरुषोका [शरीर] ढँकनेमे ही होगा। हिसाब एक-एक पाईका रहेगा। आजतक मुझे एक भी शख्स ऐसा नही मिला जिससे मै यह कह सकूँ कि आपने मुझे बहुत दिया है। इसीलिए मेरे बोहरा मित्र तो मुझसे दूर भागते है। वर्ना उमर हाजी आमद झवेरी[1] तो आज यहाँ होने ही चाहिए थे। वे कहते है कि तुम जब मिलते हो, लूटनेकी ही बाते करते हो। इस प्रकार आजके कठिन कालमे मेरे साथ मित्रता रखना भी भयकर है। आजके कठिन समय जो भाई हिन्दू होकर अपने रुपये भगीके हाथसे[2] लुटवाना चाहते हो, जो भाई देशकी स्वतन्त्रताके लिए अपनी तमाम शक्ति या अपना सब धन खर्च करनेके लिए तैयार हो, वही मुझसे मित्रता कर सकता है। राजकोटके ठाकुर साहबने मुझपर प्रेमकी वर्षा की थी। मै उसमे डूब-सा गया था। लेकिन मै काँप रहा था और अपने हृदयसे पूछ रहा था कि राजाकी मित्रता कबतक रख सकोगे? मेरे पिता जिस राज्यमे दीवान थे उस राजाके हाथसे अभिनन्दन-पत्र लेना मुझे अच्छा क्यो न मालूम हो? आज जो महाराजा साहब है उनके पितामहके राज्यमे मेरे पितामह दीवान थे, उनके भी पिताके राज्यमे मेरे पितामह दीवान थे। राजा साहबके पिता मेरे मित्र थे, मेरे मुव-क्किल थे। मैने उनका अन्न खाया है — इसलिए महाराजा साहबका निमन्त्रण मुझे पसन्द क्यो न हो? लेकिन सबकी मित्रता निबाहना मुश्किल है। मै अग्रेजोकी मित्रता नही निबाह सका। मुझे तो इस ससारमे केवल एक ही की मित्रता निबाहना बहुत जरूरी मालूम होता है — और वह है ईश्वरकी मित्रता। ईश्वरका अर्थ है अपनी अन्तरात्मा। यदि मुझे उसका नाद सुनाई पडे और मुझे लगे कि सारी दुनियाकी मित्रता छोड देनी चाहिए तो मै उसके लिए तैयार हूँ। आप लोगोकी मित्रताका मै भूखा हूँ। मै आपके तमाम रुपये-पैसे ले जाऊँगा और फिर भी मुझे तृप्ति न होगी। आपसे तो मै माँगता ही रहूँगा और जब आप मुझे देशनिकाला दे देगे तो मै ईश्वरकी शरण चला जाऊँगा। मै जो रुका हूँ सो हिन्दुस्तानकी सेवाके लिए। जबतक हिन्दुस्तानमे दु खका दावानल सुलग रहा है तबतक मै कही भी नही जाना चाहता। दक्षिण आफ्रिका जा सकता हूँ, लेकिन आज तो मुझे वहाँ जाना भी पसन्द नही है क्योकि यहाँकी अग्नि बुझानेपर ही वहाँकी अग्नि बुझ सकती है। मै सब राजाओंसे प्रार्थना करता हूँ कि वे अग्नि-शमनके इस काममे मदद करे, और यदि इसमे मै पोरबन्दरसे अधिकसे-अधिक आशा रखूँ तो इसमे गलती क्या है?

प्रजाकी तरफसे भी मै ऐसी ही आशा रखे बैठा हूँ। मै आप सबका सहयोग चाहता हूँ। शायद इसका परिणाम यह भी हो कि हम अग्रेजोसे भी सहयोग करने

१. डर्बनके एक व्यापारी तथा फीनिक्स आश्रमके एक न्यासी, देखिए खण्ड ११, पृष्ठ ३१८।

२. गाधीजी स्वय अपनेको भगी मानते थे।

लगे। इसका यह मतलब नही कि हम लोग अंग्रेजोके पास दौडकर चले जाये। दौडते तो वे ही हमारे पास आयेगे। वे मुझसे कहते है कि तुम तो भले हो, लेकिन तुम्हारे साथी बदमाश है, वे फिर तुम्हे चौरी-चौरा-जैसा धोखा देगे। लेकिन मै तो मनुष्य-स्वभावमे विश्वास रखता हूँ। प्रत्येक मनुष्यमे आत्मा है और प्रत्येक आत्माकी शक्ति मेरी आत्माके बराबर ही है। आप मेरी शक्तिको देख सकते है क्योकि मैने प्रार्थना करके, ढोल बजाकर और उसके समक्ष नाच कर अपनी आत्माको जाग्रत रखा है। आपकी आत्मा उतनी जाग्रत न हो लेकिन हम स्वभावमे तो एकसे ही है। राजा-प्रजा, हिन्दू-मुसलमान लडते रहते है लेकिन यदि इन सबको ईश्वरकी मदद न हो तो उनसे एक तृण भी इधरसे-उधर नही हो सकेगा। प्रजा यदि यह माने कि हम बलवान् होकर राजाको सतायेगे और राजा माने कि मै बलवान् होकर प्रजाको पीस डालूँगा, हिन्दू यदि माने कि सात करोड मुसलमानोको पीस डालना मुश्किल नही है और मुसलमान माने कि बाइस करोड शाक-सब्जी खानेवाले हिन्दुओको हम पीस डालेगे तो राजा-प्रजा, हिन्दू-मुसलमान — ये सभी मूर्ख है। यह खुदाका कलाम है, 'वेद'का वाक्य है, 'बाइबिल'का लेख है कि मनुष्यमात्र एक-दूसरेका बन्धु है। हरएक धर्म पुकार-पुकार कर कहता है कि प्रेमकी ग्रन्थिसे ही जगत् बँधा हुआ है। विद्वान् लोग यह सिखाते है कि यदि प्रेमका बन्धन न हो तो पृथ्वीका एक-एक परमाणु छिटक जाये और पानीका बिन्दु-बिन्दु अलग हो जाये। इसी प्रकार यदि मनुष्य-मनुष्यके बीच प्रेम न होगा तो हम मृतप्राय ही हो जायेगे। यदि हम स्वराज्य चाहते हो, रामराज्य चाहते हो तो हम सबको प्रेमकी ग्रन्थिसे बँध जाना चाहिए। यह प्रेमकी ग्रन्थि क्या है? हाथसे कते हुए सूतकी ग्रन्थि। सूत परदेशी होगा तो वह लोहेकी बेडी बन जायेगा। आपकी एकसूत्रता तो देहातोके साथ, ग्वालोके साथ, बरडाके मेरोके साथ होनी चाहिए। उसके बजाय यदि आपकी एकसूत्रता लकाशायर अथवा अहमदा-बादके साथ हो तो उससे पोरबन्दरका क्या लाभ होगा? प्रजाकी सच्ची माँग तो यह है कि हमारी मेहनतका उपयोग करो, हमे निठल्ला रखकर भूखो न मारो। राणावावके पत्थरोके बजाय आप इटलीसे पत्थर मँगाये तो काम कैसे चलेगा? यदि आप अपने ही देहातोमे बने मिट्टीके रामपात्र और अपनी गाय और भैसोका घी छोडकर ये चीजे कलकत्तेसे मँगाये तो कैसे निबाह होगा? यदि आप अपनी ही चीजोका उपयोग नही करेगे और उन्हे दूसरी जगहोमे मँगायेगे तो मै कहूँगा कि आप बेडियोसे जकडे हुए है। जबसे मुझे यह शुद्ध स्वदेशीका मन्त्र उपलब्ध हुआ है, जबसे मै यह समझा हूँ कि गरीबसे भी गरीबके साथ मेरी एकसूत्रता होनी चाहिए, तभीसे मै मुक्त हो गया हूँ और मुझसे मेरा आनन्द छीन सकनेमे न राजा साहब शक्तिमान है, न लॉर्ड रीडिंग और न सम्राट् जॉर्ज।

बहनोसे मै यह कहूँगा कि आपके दर्शनोसे मै तभी पावन होऊँगा जबकि आप खादीसे विभूषित होगी और चरखा चलाने लगेगी। आप मन्दिरोमे जाकर धर्मकी रक्षा करना चाहती है। लेकिन जो बहन कातती है उसका हृदय ही मन्दिर बन जाता है। इसीलिए मै आपसे पूछता हूँ कि जब मै हिमालयके चमत्कारोकी बाते करूँगा

क्या आप तभी मेरी बाते सुनेगी? और जब मै कहूँगा कि चूल्हेके साथ चरखा भी रखो तो क्या यह कहेगी कि बूढेकी अक्ल मारी गई है? मै पागल नही हूँ, मै तो समझदार हूँ। मेरा अनुभव ही पुकार-पुकारकर बोल रहा है।

एक शख्सने मुझसे पूछा था कि तुम पोरबन्दरका अभिनन्दन-पत्र लेकर क्या करोगे? पहले यह तो जान लो कि वहाँके खादी पहनने वाले कैसे है? लेकिन यह पूछनेके बदले कि पोरबन्दरमे खादी पहननेवाले लोग कैसे है, मै यही पूछता हूँ कि खादी पहननेवाले है ही कहाँ? आपको महीन कपडोकी लालसा रहती है। पर करोड-पतियोने मुझे यह बताया है कि हमेशा बारीक कपडा खरीदना तो उन्हे भी महँगा जान पडता है। लेकिन जिस प्रकार घरमे आप बारीक सेव बनाती है, उसी प्रकार यदि आप बारीक काते तो बारीक कपडे भी पहन सकेगी।

जबतक हम सूत कातनेकी इस साधनाको नही अपनायेगे तबतक प्रेमकी गाँठ नही बँधेगी। यदि समस्त जगत्को आप प्रेमकी गाँठसे बाँध लेना चाहते है तो दूसरा उपाय ही नही है। हिन्दू-मुसलमान प्रश्नके लिए भी दूसरा कोई उपाय नही है। भाई शुएब कुरेशी भी मेरे साथ राजकोट गये थे। उन्हे वहाँके मुसलमानोने कहा कि गाधी आपको धोखा देता है, खादीका प्रचार करके विलायती कपडोका व्यापार करनेवाले मुसलमानोको भिखारी बनाना चाहता है। लेकिन शुएब कुछ सुननेवाले थोडे ही थे। वे जानते है कि विदेशी कपडोका व्यापार करनेवाले मुट्ठीभर मुसलमानो-का मै बुरा नही चाह सकता। वे खुद खादीके भक्त है और वे यह भी जानते है कि जितनी सेवा मै इस्लामकी कर रहा हूँ उतनी खादीकी और देशकी भी नही कर सकता। मुसलमान भाइयोको समझना चाहिए कि उनकी जन्मभूमि यही है और उसे स्वतन्त्र किये बिना इस्लामके स्वतन्त्र होनेकी आशा नही है।

मेरी काठियावाडकी यह शायद आखिरी ही मुलाकात ठहरे। शायद मेरी जिन्दगी अब बहुत कम बरसोकी है। मैने बडी अनिच्छाके साथ काग्रेसका अध्यक्ष होना स्वीकार किया है और काठियावाड राजकीय परिषद्का भी। अब सिर्फ दस महीने बचे है। मै आप लोगोके पास इसीलिए आया हूँ कि यदि आप विशेष रूपसे मुझे अपना भाई समझते हो — यद्यपि मै तो जीव-मात्रका भाई हूँ — तो मेरी इस प्रार्थनाको समझकर रोज आधा घटा चरखा अवश्य चलाये। उससे आपकी कोई हानि नही है, और उससे देशकी दरिद्रता दूर होगी। आप मुझसे कितना दुखडा सुनना चाहते है? यदि आप अस्पृश्यता दूर न कर सके तो धर्मका नाश हो जायेगा। सच्चा वैष्णव-धर्म तो वही है जिसमे पोषक-शक्ति अधिकसे-अधिक हो। आज तो वैष्णव-धर्मके नामपर अन्त्यजोका नाश हो रहा है। हिन्दू धर्मका रहस्य अस्पृश्यता कदापि नही है। अस्पृश्यता-निवारण, हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य और खादी यह मेरी त्रिवेणी है। राजा और गरीब, सभी भाई-बहनोसे मै आज इसीकी माँगकर रहा हूँ।

शराबकी कुटेवका अन्त होना ही चाहिए और वह प्रजाके प्रयत्नोसे ही। इसमे मुझे कुछ भी शका नही है कि प्रजाके प्रयत्नोसे ही यह बुराई दूर होगी। कुछ मूर्ख मनुष्योने जोर-जबरदस्तीसे काम न लिया होता तो आज यह बुराई हिन्दुस्तानसे कभी-

८१. भाषण : पोरबन्दरके अन्त्यजोंकी सभामे

१९ फरवरी, १९२५

दीवान साहब, अन्त्यज भाइयो और बहनो,

आप सबको देखकर मुझे अत्यन्त हर्ष होता है। आप जो अन्त्यज अर्थात् ढेढ, भगी और चमार भ्रमवश नीचे वर्णमे माने जाते है, यहाँ आये है। आपसे मिलकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। आप जानते है कि अन्त्यजोको उच्च वर्णोंके हिन्दू नही छूते। वे लोग मानते है कि अन्त्यजोको खानेके लिए जूठन दी जा सकती है। इस प्रकार आपके साथ कई प्रकारके अन्याय किये जाते है। कितने ही हिन्दू इन सभी अन्यायोकी निवृत्तिके लिए बहुत प्रयत्न कर रहे है और काग्रेसमे भी इस सम्बन्धमे बहुत चर्चा चल रही है और कोशिश की जा रही है।

किन्तु ये लोग अकेले क्या कर सकते हैं। इस कार्यमे आपकी सहायता भी आवश्यक है। मुझसे बहुतसे हिन्दू कहते है, "आप तो इनका पक्ष लेते है। किन्तु आप देखे तो कि ये लोग कैसे है। ये लोग मुरदार माँस खाते है और ये नहाते-धोते भी नही है। इनको देखकर मतली होती है। इनके रीति-रिवाज गन्दे हैं। हम इनको कैसे छुएँ?"

इसमे कुछ तो सच है ही। इसमे जितनी सचाई है उसपर आपको ध्यान देना चाहिए। जो बाते खराब हो, वे आपको छोड देनी चाहिए और अपने सुधारमे स्वय योग देना चाहिए। जो खुद प्रयत्न नही करता, ईश्वर भी उसकी सहायता नही करता। इसलिए मै आपसे कहता हूँ कि आप स्वय प्रयत्न करे। आप प्रात चार बजे जगे, मुँह-हाथ धोएँ, आँखोसे मैल साफ करे और भगवानका नाम जपे। स्मरण कैसे करना चाहिए, यह पूछे तो मै कहूँगा कि आप रामका नाम ले। कान्हा या कृष्ण कहे तो वह भी ठीक है। किन्तु राम-नाम सबसे सुगम है। आप भगवानसे भीख माँगे, 'हे भगवान तू हमे अच्छा बना।' आप कई दिन बीत जानेपर भी नहाते नही है, यह ठीक नही है। नहाना तो प्रतिदिन चाहिए। मजूर कामसे लौटकर रातको नहा ले। आप चोरी भी न करे। अपने बच्चोको साफ रखे। आप इन्हे साफ नही रखते, इसमे आप सबका दोष है। शालाके पण्डितजी बेचारे क्या करे? तीसरी बात यह है कि आप शराब न पीये। शराब पीकर मनुष्य पशु बन जाता है। आप गला-सडा माँस न खाये। सच तो यह है कि आपको माँस ही नही खाना चाहिए। रोटी और दूध मिल जाये तो क्या उससे आपका काम नही चल सकता? जो लोग कपडा बुनना जानते है, वे कपडा बुनते रहे। आप सूत न कातते हो तो मै उसे बर्दाश्त कर सकता हूँ, लेकिन ये सारी बुराइयाँ बर्दाश्त नही की जा सकती।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

८२. तार : मोतीलाल नेहरूको

पोरबन्दर
२० फरवरी, १९२५

पण्डित नेहरू
केन्द्रीय विधानसभा
दिल्ली

मेरी रायमें डा० बेसेंट अपनी रिपोर्ट[1] प्रकाशित कर सकती हैं।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

८३. पत्र : रेवाशंकर झवेरीको

[२० फरवरी, १९२५][2]

आदरणीय रेवाशंकर भाई,

इसके साथ पट्टणीजीसे हुआ पत्र-व्यवहार वापस भेज रहा हूँ। मैं इसे पढ़ गया हूँ। इनको दिया गया उत्तर भी पढ़ लिया है। उनके व्यवहारसे दुःख होता है। उनसे बहुत आशाएँ थीं, किन्तु अब तो वे सभी व्यर्थ हो गई जान पड़ती हैं।

पोरबन्दरके राणा साहबसे भेंट कल हुई। उन्होंने भी खादी-कार्यमें सहायताका वचन दिया है। बातें जी-भर कर हुईं।

आज वाँकानेर पहुँच जाऊँगा।

मोहनदासके प्रणाम

मूल गुजराती पत्र (जी० एन० १२६१) की फोटो-नकलसे।

१ देखिए "टिप्पणियाँ", २६-२-१९२५ के अन्तर्गत उपशीर्षक "२८ फरवरी"।

२ गांधीजी वाँकानेर २० फरवरी, १९२५को पहुँचे थे।

८४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

वाँकानेर
माघ कृष्ण १३ [२१ फरवरी, १९२५][1]

भाईश्री ५ घनश्यामदासजी,

आपसे मैंने मुसलमानोके लीये कहा था। अलीगढमे राष्ट्रीय मुस्लीम युनिर्वासिटी चलती है। उसकी आर्थिक स्थिति वहोत ही कठिन है। मैंने उन भाइयोको कहा है मै सहाय दिलानेका प्रयत्न करूगा। वे लोग एक रकम इकट्ठी कर रहे है। मैंने कहा हे कि उसमे रु० ५००००की सहाय मागनेकी कोशीप मैं करूगा। आप इस बातको सोचीये और आपका दिल यदि इस सहाय पूरी या कुछ भी देना चाहता है तो मुझे लीखिये। हिंदु-मुसलमीन प्रश्नका मैं खूव अभ्यास कर रहा हु। मेरा विश्वास मेरे हि इलाजपर वडता जाता है। अगर मुसीबते ज्यादा देखता हु तो भी।

मैं आजकल काठीयावाडमे घूम रहा हु। आज मेरा प्रवास खतम होगा।

आपका,
मोहनदास गाधी

[पुनश्च]

आश्रममे १२ से २६ तारीख तक रहुगा। २८ तारीखको दिल्ली पहोचुगा।

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६१०५) से।
सौजन्य घनश्यामदास बिडला

८५. भाषण : बढवान कैम्पकी सभामे

२१ फरवरी, १९२५

हमे आज शिवलालभाईकी[2] अनुपस्थिति साल रही हे। यह तो आपने अभी सुना कि उन्होने काठियावाड और देशकी कितनी सेवा की हे। यह हिन्दुस्तानका दुर्भाग्य ही है कि इसमे से जो अच्छे लोग चले जाते हैं उनकी जगह दूसरे नये पैदा नही होते। जाना तो हरएकके नसीबमे ही है। जन्म और मरणका जोडा है और वे साथ-साथ चलते हैं। इनके सम्बन्धमे किसीको मोह या शोक नही करना चाहिए। फिर भी कोई मरता है तो दुख होता है। मुझे ऐसा लगता है कि इस दुखका

१. पत्रमें उल्लिखित काठियावाड़की यात्राके दौरान गाधीजी २१ तारीखको वांकानेरमे थे।

२. वढवानकी उद्योगशालाके सस्थापक। देखिए "काठियावाड़के सस्मरण—२", ८-३-१९२५के अन्तर्गत उपशीर्षक "उद्योग शाला"।

कारण स्वार्थ है। मै जब शिवलालभाईका पुण्य स्मरण करता हूँ तब सोचता हूँ कि इन व्यक्तिसे हमारा कितना स्वार्थ सधता था। यदि हम उनकी याद कायम रखना चाहते हो तो हमे उनकी जगह ले लेनी चाहिए। हमे यह सकोच नही होना चाहिए कि हम उनसे आगे कैसे बढेंगे। यदि हम पुरखोकी वसीयतमे कुछ भी वृद्धि न करे तो यह शर्मकी बात होगी। जो अपने पुरखाकी सम्पत्तिमे थोडी बहुत भी वृद्धि कर पाता है वही सच्चा उत्तराधिकारी कहा जा सकता है। शिवलालभाईकी इस सम्पत्तिमे वृद्धि करना हमारा कर्त्तव्य है। यह नही हो पाया है, इसका मुझे दुख होता है।

मेरी अभिलाषा तो यह है कि खादीका काम सब लोग करे और वह गाँव-गाँवमे फैले। जबतक चरखा हर गाँवमे नही पहुँचता और जबतक सब लोग खादी नही पहनने लगते तबतक यहाँ शुद्ध स्वराज्यकी स्थापना होनी कठिन है। अभी हिन्दुओ और मुसलमानोके हृदय एक नही हुए है। यदि हिन्दुओ और मुसलमानोको अपने हृदय एक करने है तो दोनोको चरखा चलाना आरम्भ कर देना चाहिए। अन्त्यजोका प्रश्न भी खादीके अन्तर्गत आता है। अन्त्यजोको लेकर वढवानमे हलचल मच गई है। क्या मच गई है, यह मेरी समझमें नही आता। यदि हम खादीको सब लोगोमे फैलाना चाहते हो तो हमे अन्त्यजोको गले लगाना होगा। हिन्दुस्तानकी प्रतिष्ठा मुसलमानो और अन्त्यज बुनकरोपर ही निर्भर है। बुनकरोका सगठन किये बिना मनचाही खादी नही मिल सकती। मै वांकानेरसे आया हूँ। वहाँ ३०० मुसलमान बुनकर है। वे बहुत अच्छा कपडा बुनते है। किन्तु उनमे हाथ-कता सूत बुननेवाले केवल दो या तीन ही है। यदि हम दूसरोसे भी खादी बुनवाना चाहते है तो हम सबको सूत कातना आरम्भ कर देना चाहिए। जो बहने पैसेके लिए सूत कातती है हम उनसे दूसरी कमाई छुड़वाकर सूत नही कतवाना चाहते। जिनको एक पैसा भी नसीब नही है हम उन्हीसे सूत कतवाना चाहते है। जिस देशमे लोगोको रूखी रोटियाँ और मटमैला नमक ही खानेको मिलता है, वहाँ चरखा कामधेनु है। इतना यज्ञ करना अनिवार्य है। यह यज्ञ व्यवस्थित रूपसे चलता रहे तो अच्छा हो।

आप कातनेका काम छोडकर बुनाईका काम हाथमें न ले। यदि बारीक सूत जरूरी हो तो वह अपने हाथसे ही कातना पडेगा। बारीक सूतके अभावमे हम अपने सुकुमार भाई-बहनोको क्या देगे? आप एक सेर सूतकी बुनाई छ आना या आठ आना देंगे, किन्तु आपको कोई भी छ आनेमें चालीस नम्बरका सूत कात कर न देगा।

यदि आप शिवलालभाईकी याद कायम रखना चाहते है तो आपको उनका काम जारी रखना पडेगा। खादीके प्रति स्नेह ही शिवलालका प्रथम और अतिम काम था। उन्होने इसमे बहुत रुपया भी लगाया। अब यदि हम उनके कार्यकी दिशामे कुछ भी न करे तो यह हमारे लिए शर्मकी बात होगी।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

८६. भाषण : बढवानकी सार्वजनिक सभामें

२१ फरवरी, १९२५

मै अन्त्यज वाडेसे अभी हाल ही लौटा हूँ। मुझे वहाँ बैठनेमे बहुत सुख मिला क्योकि मै इस प्रकार अपने कर्त्तव्यका पालन कर रहा था। अब मै यहाँ आपके बीच बैठा हूँ। इस सम्बन्धमे ईश्वर मुझसे अवश्य पूछेगा, क्या वढवानके लोगोसे कोई नई बात कहने गया था? आपने उनका मुहल्ला अलग बनाकर उनका त्याग कर दिया है, इसलिए मुझे उनको बहुत-सी नई बाते कहनी और बतानी थी। आज मुझे आपको कोई ऐसा चमत्कार करके नही दिखाना है कि आप स्तम्भित रह जाये। मै तो यही अनुरोध करता हूँ कि आप अपने धर्मको समझे और उसका पालन करे। मेरा आपसे इतना ही कहना है कि आप जिस बातको धर्म मान रहे है, वह पाप है। आप इस सम्बन्धमे भली-भाँति विचार करे और यदि आपका हृदय और आपकी बुद्धि दोनो इस बातको स्वीकार करे तभी आप उसे माने और अन्त्यजोको अस्पृश्य समझना बन्द कर दे।

जब मै [आफ्रिकासे] हिन्दुस्तानमे आया था तब पहले अहमदाबाद गया। मैंने उस शहरके लोगोसे सलाह की। मैंने उनको अपने विचार बताये। वे मुझे एक वर्ष तक सहायता देगे यह वचन लेनेके बाद मैंने वहाँ अपना आश्रम खोला।[1] अन्त्यजोके सम्बन्धमे भी बात हुई। मैंने कहा, मै तो किसी विधर्मीसे भी भेदभावपूर्ण व्यवहार नही करूँगा और अन्त्यजोको तो अपने आश्रममे अवश्य लूँगा। उन्होने कहा, 'आपको ऐसे अन्त्यज कही नही मिल सकेंगे।' मै वहाँ गया और रहने लगा। मुझे बर्तन-भाँडे सब मिले, किन्तु रुपया बिलकुल नही मिला। किन्तु मैंने आशा नही छोडी। एक महीना ही बीता था कि दूदाभाई[2] ठक्कर बापाकी[3] चिट्ठी लेकर आ गये। मैंने उनको स्थान दे दिया। स्थान देते ही अहमदाबादके भाइयोने मेरे बहिष्कारका निश्चय कर लिया। मै जिस कुएँमे पानी भरता था, उस कुएँसे पानी भरनेवाले लोगोने मुझे बहिष्कृत कर दिया। मैंने उनसे कहा, आप चाहे जो करे, किन्तु मै तो अहमदाबादसे नही जाऊँगा। यदि ईश्वर मुझे यहाँ रखना चाहेगा तो रखेगा। कुछ न होगा, तो मै अन्त्यज वाडेमे जाकर रहूँगा। मै तो अपनी मान-मर्यादा समझनेवाला मनुष्य हूँ। आप रोष करेगे तो भी मै उसे अपना अपमान कदापि न मानूँगा। पाँच दिन बाद कुएँसे पानी भरनेवाले लोगोके हृदय पसीज गये और उन्होने दूदाभाईको कुएँसे पानी भरनेकी अनुमति दे दी। किन्तु रुपया? जिस दिन रुपया बिलकुल खत्म हुआ, उसी

१. देखिए खण्ड १३ पृष्ठ ८८-९१।

२. एक अन्त्यज शिक्षक जिसके आश्रममें प्रवेशपर बहुत शोर मचा था, देखिए आत्मकथा, भाग ५, अध्याय १०।

३. अमृतलाल वि० ठक्कर।

कि ईश्वर मनगीर यहाँ आकर मुझे अपने हाथसे रुपया दे गया। एक दिन एक मोटर आकर खड़ी हुई उसमें से एक सज्जन[1] जिन्हें मैं पहचानता भी नहीं था, उतरकर आये और बोले, मुझे १३,००० रुपये देने हैं। क्या आप ले लेंगे? वे दूसरे दिन फिर आये और १३,००० रुपयेके नोट देकर चले गये। यह सत्याग्रह आश्रम आज भी मौजूद है। मुझे तो अपने सत्याग्रहपर आरूढ़ रहकर अहमदाबादमें जमे रहना ही था। आज अहमदाबादके लोग मेरे साथ हैं। वे सब मेरे पास आते हैं और मुझे उन सबकी सहानुभूति प्राप्त है। इसका कारण केवल यह है कि मैंने उन्हें प्रेमकी डोरीसे बाँध लिया था और मुझे यह विश्वास था कि अहमदाबादसे ही अपने प्रेमका बदला मुझे मिलेगा। फूलचन्द भी मेरी ही तरह आसन लगाकर जम जानेवाले व्यक्ति हैं। वे वढवानको क्या छोड़ेंगे? चाहे भूखों ही मरना पड़े तो भी उन्हें तो कभी डिगना ही नहीं चाहिए। यदि वे रोष या दुराग्रहवश ऐसा कुछ करेंगे या आपसे तकरार करेंगे तो वह पाप होगा। यदि उनके शब्द प्रेममें पगे होंगे तो समाज उनपर पसीज जायेगा। उनके व्यवहारके मूलमें क्या भाव है, यह तो ईश्वर ही जाने। उनका भाव जैसा होगा, परिणाम भी वैसा ही होगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-३-१९२५

८७. भाषण : वढवानके बाल-मंदिरमें[2]

२१ फरवरी, १९२५

चाँदीका यह ताला, कुंजी और कैंची, मुझे अपने साथ ले जानी हैं। इन चीजोंको खादीका स्पर्श भी नहीं हुआ है। गोरजी वालाभाईने जो गिन्नियाँ मुझे दी हैं, मैं वे गिन्नियाँ फूलचन्दभाईको दे दूँगा। चाँदीकी ये चीजें और ये गिन्नियाँ कुछ अर्थ रखती हैं। इस देशमें अनेक प्रकारके काम हो रहे हैं। किसे पता, उनके अन्दर कितना सत्य, कितनी कुर्बानी, कितनी भावना है? मैं सिर्फ इतना जानता हूँ कि आज देशकी बहुत थोड़ी संस्थाओंमें आत्मा और जीवन है। एक अंग्रेज कविने स्वर्गका वर्णन करते हुए कहा है — स्वर्गके दरवाजेपर पीटर बैठा है और उसकी चाबी सोनेकी नहीं, लोहेकी है। इसका खुलासा करते हुए दूसरा कवि कहता है — स्वर्गका दरवाजा खोलना सहल काम नहीं है, वह सोनेकी चाबीसे नहीं खुल सकता, क्योंकि सोना मुलायम होता है। लोहा सबसे सख्त धातुओंमें से एक है। इसलिए वह लोहेकी चाबीसे ही खुल जाता है।

किसी बातका करना यदि बहुत मुश्किल होता है तो उसके लिए हम काठियावाड़में कहते हैं — लोहेके चने चबाना। सो ऐसी संस्थाओंकी सुव्यवस्था लोहेके चने

१. अम्बालाल साराभाई।

२. काठियावाड़की यात्रामें गांधीजीने वढवानके बाल मन्दिरका उद्घाटन किया। चाँदीके तालेको चाँदीकी कुंजीसे खोला। इसीलिए इन्होंने अपना भाषण चाँदीके ताले-कुंजीके उल्लेखसे ही शुरू किया।

चवानेके वरावर है। पुस्तकालयको वनानेके लिए चाँदीके औजार काम नही आते, लोहेके ही चाहिए और उसे वन्द करनेके लिए चाँदीका ताला काम नही दे सकता, लोहेका ही चाहिए। अर्थात् हमने इस क्रियाको करते हुए आरम्भ कृत्रिमतासे ही किया हे। मैने तो सिर्फ थोडी-सी मट्टी डालकर पत्थर रख दिया, इसे वाँधनेका सारा काम तो राज ही करेगे और मन्दिरका उद्घाटन तो शिक्षको द्वारा ही होगा। पुस्तकालयका अर्थ पुस्तकोका घर या पुस्तके नही है, और न उसका अर्थ उसमे केवल जाकर वैठ जानेवाले लोग ही है। यदि ऐसा होता तो किताव वेचनेवाले अनेक लोग चरित्रवान् होते। वाल-मन्दिरकी इमारत खूवसूरत है और पैसा भी इसपर काफी खर्च किया गया है, पर क्या इसी कारण यह चल गया? इसका उत्कर्ष तो उसके सचालकोके सुयोग्य होने और उसमे आत्मा होनेपर ही निर्भर करेगा। साधारण तौरपर ऐसी सस्थाओका उद्घाटन करनेका कार्य मुझे ठीक नही मालूम होता, क्योकि इन्हे खोलकर मै क्या करूँगा? पर इस सस्थाका उद्घाटन करना मैने कुबूल किया, उसका कारण यह है कि इसमे काम करनेवाले लोगोपर मुझे विश्वास है। वाकी आप ऐसा न समझे कि मेरे हाथो उद्घाटन हुआ है इसलिए कुछ लाभ हो सकता है। मै तो उडता पछी हूँ। आज यहाँ, कल अहमदावाद और परसो दिल्ली। फिर भी मेरा नाम लेकर जितना भला किया जा सकता है, उतना आप करना चाहे तो मै नाही नही करता। इस मन्दिरकी हस्तीका आधार न तो धनवान है, न वालक है, और न दानकी लाखो अर्शफियाँ, उलटे अधिक अर्शफियाँ तो वाधक ही हो सकती है। मैने खुद अपने अनुभवसे देखा है कि जव-जव वहुत आर्थिक सहायता मिली, मेरे कामोमे विघ्न ही आये। जव दक्षिण आफ्रिकाका सत्याग्रह चल रहा था, तव ज्यो ही यहाँसे रुपये-पैसेकी वर्षा होने लगी, त्यो ही मेरे आन्दोलनकी शक्ति न जाने कहाँ चली गई। उसी तरह जिस तरह युधिष्ठिरने 'नरो वा कुजरो वा' कहा था और उसके रथका पहिया नीचे खिसक गया था। ईश्वरने सवको २४ घटे ही दिये है। और ८ घटेकी मजदूरीसे २४ घटेके लिए जरूरी चीजे मिल जाती है। इतने ही पर सवको सन्तुष्ट रहना चाहिए। इस कारण मै विलकुल नही चाहता कि इस सस्थाकी आर्थिक अवस्था अच्छी हो। इस सस्थाके पास धन सिर्फ इतना ही हो कि जिससे यहाँ काम करनेवालोका शरीर चलता रहे और जरूरत आ पडे तो वे उसका त्याग भी कर दे।

जिस सस्थाको वहुत-सा धन और थोडे कार्यकर्त्ता मिल जाये उसे तो मै 'मशरूम' (कुक्करमुत्ता)-जैसी उपज ही कहूँगा। वह चार दिन रहकर नष्ट हो जायेगी। मेरे इस कथनका तात्पर्य यह है कि जो भाई यहाँ आये है और जिन्होने इस सस्थाके लिए अपने प्राणोकी आहुति देनेकी प्रतिज्ञा की हे, उन्हे चाहिए कि वे परमात्मामे भरोसा रखते हुए जमकर वैठ जाये। जव ऐसा भी मालूम हो कि अव डूवनेमे देर नही है तव भी श्रद्धापूर्वक पार जानेका प्रयत्न करते रहे, नही तो निश्चय ही आप हिन्दुस्तानके शापके अधिकारी होगे। यह भव्य भवन इस गरीव देशको शोभा नही देगा। ऐसे मकान तो राजा-महाराजाओको शोभा देते है — हिन्दुस्तानकी गरीवीमे तो विलकुल शोभा नही देते। यदि हम जनताको इनके वदलेमे कुछ न दे तो जवतक जनताको

इनका कोई प्रतिदान नहीं मिलता तबतक क्या ये मकान उनके सचालकोको खानेको नही दीजिएगे? जिस तरह जनक राजा महलोमें रहते हुए भी त्यागी माने गये उसी तरह यदि फूलचन्दभाई और उनके साथी त्यागवृत्तिसे इसका सचालन करे तो फिर इनमे कोई हर्ज नहीं कि यह सस्था कायम हुई और उसकी नीव मेरे हाथो डाली गई। पर यदि त्याग-भाव उड गया और भोगको प्रधानता मिल गई तो इसका नाश निश्चित समझिए। राष्ट्रीय शाला वही है जिसके द्वारा हम स्वराज्य प्राप्त कर सके, और जिसके शिक्षक सभी नियमोका पालन करते हो, त्यागवृत्तिवाले हो तथा कठिन जीवन व्यतीत करते हो।

स्थानीय लोगोने इस सस्थाकी सहायतासे हाथ खीच लिया है, यह जानकर मुझे दुःख हुआ है। आज हिंदमें प्राय यही स्थिति प्रत्येक सस्था की है।[1] जिस सस्थाको जबतक चलानेकी जरूरत हो तबतक उसके लिए धन स्थानीय लोगोसे मिलना चाहिए और सचालकोको भी स्थानीय जनताको अपने कार्यसे प्रसन्न रखना चाहिए। हम जैसे स्वराज्यवादी जनसेवकोकी स्थिति विषम है, क्योकि वे सुधारक भी है। सुधारककी स्थिति विचित्र हो जाती है, क्योकि वह वातावरणके अनुसार काम नही कर सकता। उसे आवश्यक पोषण बाहरसे ही लेना होता है। नही तो रगूनके डा० मेहताका[2] वढवानकी शालासे क्या सम्बन्ध। फूलचन्दके अन्त्यज सेवा सम्बन्धी विचारोसे परिचित रहते हुए भी वढवानके लोगोने इसके कोषमें चन्दा दिया और फिर अब उसका बहिष्कार क्यो कर रहे हैं, यह बात समझमें नही आती। मैं चाहता हूँ कि वे मुझे आकर अपनी बात समझाये।

राष्ट्रीयका अर्थ होता है राष्ट्रके जीवनका पोषक। राष्ट्रीयका अर्थ इतना ही नही है कि केवल सरकारसे सम्बन्ध छोड दिया जाये — राष्ट्रीय सस्थाकी बुनियाद तो चारित्र्य है। यदि लडकोका ढेर लगा हो और पढकर उन्हे जीविका मिलने लगे तो शाला उससे भी राष्ट्रीय नही हो सकती। आजीविका मिले तो ठीक है, परन्तु शिक्षणका यह हेतु नही है कि वह आजीविका पैदा करनेकी कला सिखाये। उसका हेतु तो है बालककी आत्माको जाग्रत करना, उसे प्रकाशमे लाना, बालकके शरीर, बुद्धि और आत्माको विकसित करना। वाँकानेरकी शालामे भी बहुत लडके दाखिल होते हैं क्योंकि उनका परीक्षा-फल शत-प्रतिशत रहता है। यह भी हो सकता है कि वहाके शिक्षक अच्छे हो। किन्तु यह मापदण्ड कोई सही मापदण्ड नही है। वहाँ जो बालक दाखिल कराये जाते हैं, सो इस इच्छासे नही कि वे अच्छे शिक्षकोसे नीति और सदाचरण सीखेंगे बल्कि इस आशासे दाखिल कराये जाते है कि योग्य शिक्षकोसे पढकर वे परीक्षामें उत्तीर्ण होगे। केवल परीक्षाके कृत्रिम शिक्षा-मापसे हमे मुक्त होना है और विद्यापीठकी स्थापना इसीलिए हुई है और राष्ट्रीय शालाका अस्तित्व भी इसीलिए है। मैं माँ-बापोसे कहता हूँ कि ऐसी शालाओको सहायता दीजिए और शिक्षकोसे कहता हूँ कि आप अपने ध्येयपर दृढ रहिये, तपश्चर्या करिये और अपने

१ **महादेवभाईनी डायरी**, भाग ७ में यह वाक्य भी है।

२ प्राणजीवन मेहता।

चरित्र-बलसे बालकोको आकर्षित करिये। ऐसा होनेपर ही मेरा यहाँ आना और इस भवनको खोलना सार्थक कहलायेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-३-१९२५

८८. टिप्पणियाँ

उत्कलमें खादी

उत्कल अर्थात् उडीसाके विषयमे श्री शकरलाल बैंकर कलकत्तासे लिखते है[1]

उत्कलके बराबर कगाल प्रान्त दूसरा नही है। उसमे खादीका काम तो सबसे ज्यादा हो सकना चाहिए। परन्तु इस पत्रसे मालूम होता है कि वहाँ काम दूसरी सभी जगहोसे कम हो रहा है। इसका कारण सभी जानते हैं। जहाँ लोगोको खाने-पीनेकी कमी है, वहाँ काम करनेकी शक्ति और उत्साहका लोप हो जाता है। यदि वहाँ कार्यकर्त्ता मिल जाये तो यह आशा की जा सकती है कि उत्कल सबसे आगे बढ जायेगा।

सूत बनाम खादी

एक सज्जन लिखते है "आपके पास हाथकते सूतको खरीदकर भेजनेकी अपेक्षा क्या यह अधिक ठीक न होगा कि हम उतनी ही खादीका पैसा आपको भेज दे और खादी भी पहने?" इस प्रश्नमे थोडी-सी गलतफहमी है। काग्रेसकी माँग इन दो मे से एककी नही, दोनो बातोकी है। पहली बात तो यह है कि हरएक आदमीको २,००० गज हाथकता सूत खुद कातकर या किसीसे कतवाकर हर माह भेजना है, और दूसरी बात यह हे कि हर एकको खादी पहननी हे। इसलिए विकल्प तो कोई है ही नही — दोनो बाते अनिवार्य है, केवल कातनेवाला काग्रेसका सदस्य नही हो सकता और न केवल खादी पहननेवाला ही। और यही ठीक भी है। कातनेको सबपर लागू करके हम खादीका उत्पादन बढायेगे और खादी पहनना सबपर लागू करके हम खादीकी खपत बढायेंगे। इस प्रकार हिन्दुस्तानकी गरीबी और भुखमरी मिट सकेगी।

एक बहनकी कठिनाई

एक सज्जन लिखते है कि मैंने एक बहनको खादी पहननेके लिए समझाया। उन्होने कहा, "यदि मै खादी पहनने लगूँ तो मेरे पति मिलके कपडे पहननेवाली किसी स्त्रीपर मोहित होकर चरित्र भ्रष्ट न हो जायेगे?" ऐसे जवाबकी आशा मै किसी पवित्र बहनसे नही रख सकता। पर जब यह सवाल पूछा ही गया है तब

१. पत्र यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है, इसमें उत्कल प्रदेशमें खादी प्रचार कार्यका ब्योरा था।

उसका विचार कर लेना उचित है। अपनी पत्नीके सादगीका अवलम्बन करनेपर अथवा स्वधर्म-पालन करनेपर यदि किसी पतिके चरित्रभ्रष्ट होनेकी सम्भावना हो तो उसके विषयमे पवित्र स्त्रीको चिन्ता नही करनी चाहिए। जिस पुरुषकी पवित्रता किसी अन्यकी पत्नीके लिवासको देखकर भग हो सकती हो तो उसकी पवित्रतामे क्या सार है? लिवासके फेरफारसे जो पति भ्रष्ट हो सकता है वह क्या किसी अधिक रूपवती स्त्रीको देखकर भी नही गिर सकता?

पर मेरा अनुभव उक्त वहनकी वातसे उलटा है। मै ऐसे सैकडो पतियोको जानता हूँ जो अपनी पत्नियोके खादी पहननेसे प्रसन्न हुए है। उनके घरका खर्च कम हुआ है और खादी धारण करनेवाली अपनी पत्नीके प्रति उनका प्रेम वढा हे। यह भी हो सकता है कि इन वहनको वास्तवमे खादी पहनना ही नही था और इसलिए अनजानमे ऐसा अनुचित विचार उनके मनमे उठ आया। ऐसी वहनोमे तो मेरी यह प्रार्थना हे कि उन्हे दृढतापूर्वक खादी पहननी चाहिए और समझना चाहिए कि शृगार लिवासमे नही, वल्कि पवित्रतामे है और लिवास शृगारके लिए नही है वल्कि सर्दी-गर्मीसे शरीरकी रक्षा करने और वदन ढँकनेके लिए है।

हम क्या करे।

मुझे जेतपुर [काठियावाड]मे वहाँके निवासी दो सज्जनोका नीचे लिखा हुआ पत्र मिला था

> आपका चरखेका सिद्धान्त हमें हृदयसे स्वीकार हे। परन्तु वर्तमान समय ही ऐसा विकट हो गया है कि आजीविकाके लिए जो काम रोज ही करने पडते हैं, वे इसके मार्गमें वहुत वडी वाधा वने हुए हैं। इससे मजिलपर पहुँचनेमें असफल हो जाना अचरजकी वात नहीं है। अनुभवसे तो हम केवल इतना ही देख सके है कि सच्ची राहको भुलाकर दॉव-पेच, प्रपच, दगा इत्यादिसे रुपया पैदा करना और गृह-ससार चलाना रूढ हो गया हे। यदि इसमें सफल न हो तो नौकरीके लिए भटकना पडता है। इससे हृदयवल घट गया हे और यही सवव है कि निश्चित लक्ष्य चूक जाता हे।
>
> इस रूढिको वदल देनेमें हमारी मुश्किले ये हैं खेती करनेसे सव वातें हल हो सकती हैं, किन्तु धनाढ्यतामें पले हुए होनेके कारण शरीरके वलका ह्रास हो गया हे, यहॉतक कि जिन्दगी-भर उस सामर्थ्य और हिम्मतके लौटनेकी आशा नहीं हो सकती।
>
> किसानोकी सख्या वहुत है। वे अपना काम चला लेते हैं। लेकिन उन्हे ज्ञान प्राप्त करनेके साधन ही नहीं मिलते। इसलिए आज तो वे भी अधोगतिको प्राप्त होते जा रहे हैं। उनके वाद, हम-जैसे अर्धदग्ध मनुष्योकी सख्या अधिक है। उनके लिए क्या मार्ग होगा? हम यह किस प्रकार जान सकते हैं? यदि कभी आपके सत्य सिद्धान्तोके अनुसार कार्य करनेकी कोशिश करते हैं तो हम-जैसे शक्तिहीन मनुष्योको हर प्रकारके साधनोको प्राप्त करनेके लिए दूसरोकी मदद लेनेकी जरूरत पडती हे। यदि ऐसी मदद प्राप्त करना

> **चाहते है तो निःस्वार्थ मदद करनेवाले बहुत कम मिलते है। नमन करने जाते है तो सिर ही खो देना पड़ता है। ऐसा भी अनुभव हुआ है। अब हमें कोई सरल मार्ग दिखाई नहीं देता। हम आशा करते हैं कि आप हमें जरूर ही सरल मार्ग बतायेंगे।**

यह वर्णन यथार्थ है। बिना मानसिक बल प्राप्त किये ऐसे लाचार वातावरण-मे से कोई नही उबर सकता। ये भाई जिस वर्गके हैं उसे आलस्य रूपी रोगने घेर रखा है। चालाकीसे द्रव्य प्राप्त करनेकी आदत पड जानेके कारण उन्हे मेहनत करके कमाना अच्छा नही मालूम होता। आवश्यकताएँ बढ गई है। मेहनत करके जो-कुछ मिलता है उससे पूरा नही पडता। विवाह, मरण इत्यादिके कृत्रिम खर्च इतने बढ गये है कि बिना कर्ज लिये या बेजा तौरपर कमाये बिना चलाये ही नही जा सकते। खेती लायक शरीर नही रह गये है और उसके लिए पूंजी और आवश्यक जानकारी भी नही रही। इसलिए अब बच रहता है केवल चरखा। यहाँ चरखेके मानी सिर्फ कातना नही समझना चाहिए, बल्कि रुईसे सम्बन्धित समस्त क्रियाएँ समझनी चाहिए। यही एक पेशा है जिसमे पूंजी और शारीरिक समृद्धि दोनोकी जरूरत कम है। यदि हम रूढ आडम्बरसे बचते रहे और सादा रहन-सहन रखे तथा आलस्यका त्याग कर दे तो उसके द्वारा आजीविका मिल सकती है। पूर्वोक्त दोनो भाई यदि कुछ हिम्मत करे तो थोडे ही प्रयत्नसे कातने और बुननेका काम भी सीख सकते है और फिर आगे चलकर वे बुनाईके कामसे ही अपनी आजीविका प्राप्त कर सकते है।

अभी लोगोको खादीका शौक नही हुआ है इसलिए बुनाईके जरिये आमदनी कम होती है। लेकिन जब खादीका अच्छा प्रचार हो जायेगा तब हममे से अधिकतर लोग बुननेका काम करेगे या खादीके नीतियुक्त व्यापारके द्वारा अपनी आजीविका प्राप्त करेंगे। यदि ये भाई कुछ पुरुषार्थ करनेकी हिम्मत दिखाये तो वे जाकर किसी खादी विद्यालयमे भरती हो जाये। काठियावाडमे ऐसी एक संस्था मढडामे है ही। अब तो काठियावाड़ राजकीय परिषद्ने चरखेके प्रचारके कार्यको अपना प्रधान कार्य बना लिया है। इसलिए उसके मन्त्रीके साथ सलाह करके उन्हे अपना मार्ग ढूंढ लेना चाहिए। हमे स्मरण रखना चाहिए कि एक कमाये और दूसरे लोग बैठकर खाये यह इस धन्धेमे नही चल सकता।

खादी प्रदर्शनी

सूपा गुरुकुलके वार्षिकोत्सवके अवसरपर एक खादी प्रदर्शनी की गई थी। उसका विवरण देते हुए वहांके खादी विभागके व्यवस्थापक लिखते है[1]

यदि समय-समयपर ऐसी खादी प्रदर्शनियाँ होती रहे तो खादी और चरखेके प्रचारपर उनका असर हुए बिना नही रहेगा।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-२-१९२५

१. उद्धृत नहीं किया जा रहा है।

८९. भेट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिसे

अहमदाबाद
२२ फरवरी, १९२५

श्री गाधी काठियावाडमें राजकोट, पोरवन्दर, वाँकानेर और वढवानका दौरा करके आज सुवह सत्याग्रह आश्रम लौटे। लौटते हुए उन्होने गनोद गरासिया केन्द्र भी देखा। वे इन सभी राज्योके राजाओसे मिले थे और उन्होने प्रजाके हितका जो आग्रह उनमें देखा वे उससे वहुत ही प्रभावित हुए। इन स्थानोके जिन लोगोसे वे मिले उनसे इन सभी राज्योके राजाओकी वडी प्रशसा की। श्री गाधीका कहना है कि राजकोटके राजा ठाकुर साहवने प्रातिनिधिक विधानसभाकी स्थापनाके साथ जो प्रयोग शुरू किया है, वह वहुत ही दिलचस्प है, हालाँकि उसके वारेमें कोई निश्चित राय अभी कुछ समय वाद ही दी जा सकती है। फिर भी जितना वे जान पाये हैं उससे उन्हे सफलताकी आशा है।

श्री गाधीने कहा.

यह समयके परिवर्तनका ही लक्षण है कि इन सव जगहोमे मैंने जनतामे पूर्ण मद्यनिपेधकी इच्छा वडी वलवती पाई। राजकोटमे यह इच्छा वहुत ही तीव्र है, क्योंकि वहाँ शरावके सरकारी ठेको और गैर-सरकारी ठेकोके वीच एक वडी ही अशोभनीय और दूपित क़िस्मकी होड लगी हुई है। इसके परिणामस्वरूप कीमते काफी गिर गई है, और निचले वर्गोके लोग अव पहलेसे कही अधिक शराव पीने लगे है। इन वर्गोके मर्द रोज ही शराव पीकर घर लौटते है। उनकी स्त्रियाँ वडे दुःखी मनसे परिवारोके तवाह होनेकी शिकायत करती है। लोग ठाकुर साहवसे शरावकी दूकानें विलकुल वन्द करा देनेका आग्रह कर रहे हैं। व्यक्तिगत स्वतन्त्रताकी वात लेकर वे ऐसा करनेमे हिचक रहे हैं। उनकी राय है कि शराववन्दी लोगोको समझा-बुझा कर ही की जानी चाहिए। राज्यकी विधान-परिपदने सर्वसम्मतिसे एक प्रस्ताव पास किया है जिसमे दरवारसे सभी लाइसेस शुदा शरावकी दूकाने वन्द कर देनेका अनुरोध किया गया है। और यह भी कि यदि जरूरत ही पडे तो औपधिके काम आनेवाली शरावके अलावा और सभी तरहकी शराव उतारनेपर प्रतिवन्ध लगा दिया जाये। देखे ठाकुर साहव इस प्रस्तावसे कैसे निपटते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-२-१९२५

९०. तार : कलकत्ता कांग्रेस कमेटीके मन्त्रीको[१]

२३ फरवरी, १९२५

मन्त्री
कांग्रेस कमेटी
कलकत्ता

लगता है मार्चमे बंगाल आना लगभग असम्भव, अप्रैलसे पहले नही आ सकता।

गाधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

९१. तार : गोविन्द दासको

२३ फरवरी, १९२५

गोविन्द दास
कोषाध्यक्ष
गरताली

रुपया भेजनेका प्रबन्ध कर रहा हूँ।

गाधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

९२. तार : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

२३ फरवरी, १९२५

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी
एक्सटेंशन
सेलम

वाइकोम-सत्याग्रहके लिए एक हजार दे दीजिए। अगली मार्चके पहले वापस कर दूँगा। आगामी मार्चमे वाइकोम जा रहा हूँ। क्या मार्चमे मद्रास अहातेके अन्य जिलोंमे मेरा दौरा जरूरी है?

गाधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१. ऐसा ही तार बंगाल प्रान्तीय सम्मेलन, फरीदपुरकी स्वागत-समितिके अध्यक्षको भी भेजा गया था।

९३. तार : लाजपतरायको[1]

[साबरमती
२३ फरवरी, १९२५]

सदस्योंकी राय लिये बिना मैं बैठक[2] मुल्तवी नहीं कर सकता। बैठकके लोग अभी [illegible] इसे मुल्तवी कर सकते हैं। उम्मीद है आप अब बिलकुल अच्छे हो गये हैं।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २८५६) से।

९४. तार : आ० टे० गिडवानीको

[२३ फरवरी, १९२५][3]

गिडवानी
हिन्दू कालेज
दिल्ली

बधाई। शनिवारको दिल्ली पहुँच रहा हूँ। हो सके तो आज रवाना हो जाइए या मेरे आनेतक रुकिए।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २८५६) से।

१ यह तार २३ फरवरी, १९२५को मिले लाजपतरायके निम्नलिखित तारके जवाबमें था "आयंगर, जयकर, जयरामदास तथा अन्य लोग २८को शरीक नहीं हो सकते। मार्चके तीसरे सप्ताहसे पहले कोई तारीख अनुकूल नहीं पड़ती। कृपया मुल्तवी करनेकी व्यवस्था कीजिए और तार दीजिए।"

२ देखिए "वक्तव्य सर्वदलीय सम्मेलन उप-समितिकी बैठकके स्थगनपर", २-३-१९२५।

३ गुजरात महाविद्यालय, अहमदाबादके प्राध्यापक, जैतो जानेवाले शहीदी जत्थेके साथ जानेके कारण १९२४में जेल गये थे। नाभाके अधिकारियोंने २२ फरवरीको उन्हें रिहा कर दिया था और वे हिन्दू कालेजके प्राध्यापकका पास रहे थे। देखिए "टिप्पणियाँ", २६-२-१९२५के अन्तर्गत उपशीर्षक "आचार्य गिडवानी रिहा"।

९५. तार : मोतीलाल नेहरूको[1]

२३ फरवरी, १९२५

लालाजीको तार भेजा है। अन्य सदस्योंकी राय लिये बिना मुल्तवी नहीं कर सकता। बैठक होनी चाहिए।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

९६. पत्र : शौकत अलीको

साबरमती
२३ फरवरी, १९२५

प्यारे दोस्त और भाई,

मैंने आज कोहाट-सम्बन्धी अपने वक्तव्यपर आपकी टिप्पणी पढ़ी। आपकी स्पष्टवादितामें मेरे दिलमें आपके प्रति और भी ज्यादा प्रेम और सम्मान पैदा हो गया है। पर आपकी टिप्पणीसे यह जाहिर होता है कि कभी-कभी हम लोगोंकी तरह परस्पर इतने घनिष्ठ सम्बन्ध रखनेवाले व्यक्ति भी पूरी तौरपर तटस्थ और निष्पक्ष रहनेके बावजूद, हूबहू एक-से तथ्योंके आधारपर भी, सर्वथा विपरीत निष्कर्षोंपर पहुँच जा सकते हैं। इससे मैं अपने विरोधियोंके प्रति पहलेसे ज्यादा उदार और अपने निर्णयोंके प्रति और अधिक अविश्वस्त बन गया हूँ। टिप्पणी दूसरी बार भी गौरसे पढ़ ली है और मैंने देखा है कि इस मामलेमें मेरे और आपके विचारोंके बीच बहुत ही चौड़ी खाई है। मैं कविताके प्रकाशनकी जोरदार शब्दोंमें निन्दा करनेको तैयार हूँ, किन्तु लूटमार तथा आगजनीको मैं माफ नहीं कर सकता। मैं आपकी इस रायकी पुष्टि नहीं करता कि उपद्रवोंका कारण पुस्तिका थी। उसकी पृष्ठभूमि तो पहले ही तैयार हो चुकी थी। मैं उन धर्म-परिवर्तनके मामलोंको उतना मामूली नहीं मान सकता जितना आप मानते हैं। मेरी रायमें खिलाफती लोगोंने अपने कर्त्तव्यकी बुरी तरह उपेक्षा की है और मौलवी अहमद गुलने निश्चय ही, उनपर जो विश्वास किया जाता था, उसका घात किया है।

मैं यह सब बातें आपकी रायको, यदि उसके बदले जानेका आप कोई कारण न मानें तो, बदलनेके लिए नहीं कह रहा हूँ। किन्तु मैं यह अवश्य चाहता हूँ कि

१. यह २३ फरवरीको मिले, मोतीलाल नेहरूके एक तारके उत्तरमें भेजा गया था। तारका मजमून [illegible] लाजपतरायके तार-जैसा ही था। देखिए "तार : लाजपतरायको", २३-२-१९२५ की पाद-टिप्पणी १।

९७. तार : रेवाशंकर झवेरीको

२५ फरवरी, १९२५

मॉरेलिटी[1]
[बम्बई]

आपकी उपस्थितिके बिना प्रभाशंकर[2] विवाह करनेसे इनकार करते है।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

९८. तार : मथुरादास त्रिकमजीको

२५ फरवरी, १९२५

मथुरादास त्रिकमजी
९४, बाजारगेट स्ट्रीट
बम्बई

शौकत अलीके साथ बड़ौदासे दिल्लीके लिए बृहस्पतिवारको दो सीट सुरक्षित करवाइए।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

९९. तार : रघुवीरसिंहको

[२५ फरवरी, १९२५][3]

रघुवीरसिंह[4]
कश्मीरी गेट
दिल्ली

शुक्रवारकी रातको नागदा मेलसे पहुँच रहा हूँ।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१. रेवाशंकरका तारका पता।

२. इनकी बड़ी कन्याका विवाह डा० प्राणजीवन मेहताके पुत्र रतिलालसे होनेवाला था।

३. यह तार भी २५-२-१९२५ को भेजा गया होगा। देखिए "तार: मथुरादास त्रिकमजीको", और "तार: रेवाशंकर झवेरीको", २५-२-१९२५।

४. दिल्लीके मॉडर्न स्कूलके मन्त्री।

१००. तार : मुख्तार अहमद असारीको

२५ फरवरी, १९२५

डा० असारी
दरियागज
दिल्ली

शुक्रवारकी रातको नागदा मेलमे पहुँच रहा हूँ। हकीमजी, मुहम्मद अलीको खबर दीजिए। शायद रघुवीरसिंहके पास ठहरूँ।

गाधी

अग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१०१. तार : चौंडे महाराजको

२५ फरवरी, १९२५

चौंडे महाराज[1]
वाई

शुक्रवारको दिल्ली पहुँच रहा हूँ। क्या आप आ रहे है?

गाधी

अग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१०२. पत्र : फूलचन्द शाहको

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती
फाल्गुन सुदी ३ [२५ फरवरी, १९२५][2]

चि० फूलचन्द,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने जो कुछ लिखा है वह बिलकुल ठीक है। हमारे जीवनमे अतिशयोक्ति और निन्दा बहुत बढ गई है।

तुम पट्टणी साहबको पत्र लिखोगे, यही प्रायश्चित्त पर्याप्त होगा।[3]

१ महाराष्ट्रके एक साधु, जिन्होने गोरक्षा कार्यमें अपना जीवन लगा दिया।

२ डाकखानेकी मुहरसे।

३ देखिए "पत्र: प्रभाशंकर पट्टणीको", १०२-१९२५ से पूर्व तथा "पत्र: फूलचन्द शाहको", १०२-१९२५।

एक अच्छा पत्र लिखकर मुझे भेज देना। मैं उसे उनको भेज दूँगा।

मैं तुम्हारे पत्रकी भाषा देखना चाहता हूँ। तुम उन तीनों सज्जनोंसे फिर मिले थे? शहरके लोग तुम्हारा साथ देंगे तो बहुत अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २८२५) से।
सौजन्य : शारदाबहन शाह

१०३. भाषण : विवाहोत्सवपर[1]

२५ फरवरी, १९२५

प्रार्थनाका समय आशीर्वाद देनेके लिए उपयुक्त समय है। इससे पूर्व दो अवसर आ चुके हैं जब आश्रममें पले-बढ़े युवकों और युवतियोंके विवाह किये गये थे। हममें से बहुतेरे उन अवसरोंके महत्त्वको भी नहीं समझ सके थे। आश्रममें कुमार अथवा विवाहित जितने भी लोग आते हैं वे सभी ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहते हैं और जिस आश्रमका हेतु सभीको ब्रह्मचर्यके पालनकी प्रेरणा देता है, उस आश्रममें विवाह कैसे सम्पन्न किया जा सकता है, यह प्रश्न सभीके मनमें उठना स्वाभाविक है। फिर भी यहाँ तीन विवाह करने पड़े हैं। यों आश्रममें नियम कड़े रखनेपर भी हम संयमके पालनमें असमर्थ रहे हैं। युवकों और युवतियोंको ब्रह्मचर्यकी शिक्षा देना आसान बात नहीं है। अवश्य ही प्रौढ़ लोग भी ब्रह्मचर्यका पालन समुचित रूपसे नहीं कर सकते। यदि मनुष्य किसी ध्येयको प्राप्त करना चाहता हो तो उसके मनमें उसके लिए तीव्र लगन होनी चाहिए। यह विषय इतना गहन है कि मैं इसमें ज्यों-ज्यों उतरता जाता हूँ त्यों-त्यों डर लगता है। मुझे इसके सौन्दर्यका भी उतना ही अधिक अनुभव होता जाता है और मैं तो पात्र भर-भरकर यह अनुभव-रस पी रहा हूँ।

हम आश्रममें बच्चों और नवयुवकोंको रखते हैं। किन्तु किसीसे जबरदस्ती ब्रह्मचर्यका पालन नहीं कराया जा सकता। इसलिए कभी-कभी ऐसी स्थिति आ जाती है कि विवाह अनिवार्य हो जाता है। ऐसे तीन अवसर आ चुके हैं। इसलिए मैंने इस सम्बन्धमें अपने मनको समझानेके लिए उनके साथ जबरदस्ती न करना तय किया। विवाहकी विधि आश्रमकी सीमाके बाहर सम्पन्न की जानी चाहिए। जगतको और आत्माको धोखा न देकर विवाह कर लेना चाहिए, और फिर आश्रममें बैठकर समस्त आश्रमका आशीर्वाद ले लेना चाहिए।

यदि ऐसा विवाह करना ही पड़े तो उसका उद्देश्य भोगवृत्तिका पोषण नहीं, किन्तु संयम है। यह बात विवाहित दम्पतीको बता देनी और आश्रमवासियोंको भी

१. यह भाषण गांधीजीने अहमदाबादमें रामभाई पंड्याके पुत्र [illegible] पंड्याके विवाहके अवसरपर दम्पतीको आशीर्वाद देते हुए दिया था, देखिए "[illegible]", २९-२-१९२५।

समझा दी जानी चाहिए। विवाहका अवसर आयेगा ही, आश्रमवासियोको ऐसी बात तो कदापि नही सोचनी चाहिए। किन्तु यह अनिवार्य हो जाये तो बात दूसरी है। यह तो परमात्माके साथ आत्माका सम्बन्ध है। इसी कारण अग्रेजीमे आत्मा स्त्रीलिंग है। जयदेवने भी आत्माकी कल्पना स्त्रीके रूपमे की है और कहा है कि आत्मा परमात्मासे रमण करती है। ऐसे दिव्य विवाहके बाद जगतमे कुछ करना बाकी नही रह जाता। किन्तु यदि वैसे दिव्य विवाहका अवसर न आये और तब इस [सासारिक] विवाहका अवसर आ जाये तो कोई बात नही है। इसलिए [आश्रममें विवाहके] इस चौथे अवसरपर मुझे आपको यह बताना आवश्यक है कि विवाह भोगके निमित्त नही है, बल्कि त्यागके निमित्त है। आप आज यह निश्चय करते है कि यदि आपको रति-सुख भी लेना हो तो आपको उसमे भी मर्यादाका पालन करना है। हमारे समाजमे अव्यभिचारी-धर्म केवल स्त्रीके लिए ही रखा गया है, यद्यपि विवाह-सस्कारमे वर और वधूको जो पिछले चार ग्रास खिलाये जाते है वे दोनोके मांस, अस्थि, और आत्माके एकीकरणके द्योतक होते है। हमारा दुर्भाग्य है कि हम पुरुषके सम्बन्धमे ऐसी कल्पना नही करते। इसीलिए मुझे बताना पडता है कि आप मर्यादाका पालन करे और समझ ले कि रति-सुख केवल सन्तानोत्पत्तिके निमित्त होता है।

आजके भयकर समयमे एक सन्तानको उत्पन्न करनेका अधिकार भी किसे है? हिन्दुस्तानमें असख्य लोग ब्रह्मचर्यका पालन करते है और यूरोपमे भी ऐसे बहुत लोग है। रोमन कैथोलिक सम्प्रदायमे बहुतसे प्रौढ स्त्री-पुरुष ऐसे होते है जो आजीवन ब्रह्मचर्यका पालन करते है। अठारह वर्षकी कन्या सासारिक जीवनको छोड देती है और फिर आजन्म अखण्ड ब्रह्मचर्यका पालन करती है। ऐसे स्त्री-पुरुषोके लिए वहाँ मठ भी बने हुए है। आजके कठिन कालमें हिन्दुस्तानमे किसीको भी सन्तानोत्पत्तिका अधिकार नही है। कोई भी मनुष्य सामर्थ्यवान हुए बिना यह अधिकार नही पा सकता।

मेरी इच्छा थी कि विवाहकी विधि आश्रममे सम्पन्नकी जाये। इसका कारण यह था कि आश्रममे गुरु समस्त क्रियाएँ समझाकर पूरी करेगा और उससे यह बात समझमें आ सकेगी कि विवाहकी क्रियाका उद्देश्य भोग नही, बल्कि सयम है। इसलिए तुम दोनो इस अवसरपर विचार करना और उसे याद रखना। मैने अपने ऊपर यही एक जिम्मेदारी ली है। मुझे इसपर पश्चात्ताप तो अवश्य ही नही होगा। इसका परिणाम शुभ ही होगा। वल्लभभाईसे मेरा क्या सम्बन्ध है, यह तो आप जानते ही है। उन्होने अपनी इच्छासे आग्रह किया था कि यह विवाह मेरे हाथो सम्पन्न हो। काशीभाई भी इस विचारसे सहमत हो गये। क्या खर्च करना विवाहका अग है? उसका अग तो तपश्चर्या है। किन्तु आश्रमसे बाहर, अन्यत्र, बिना रुपया खर्च किये विवाह नही किया जा सकता। वहाँ बरात-जैसी रूढियोको छोडकर विवाह करना असम्भव हो जाता है। इसीलिए विवाह-विधि यहाँ सम्पन्न की गई है। जो बीज आज बोया गया है यह कभी वृक्ष बनेगा। किन्तु तुम इसके अकुरको पुष्ट करनेके लिए अपने माता-पिताओके योग्य बनो और भोगवृत्तिका त्याग करो। खर्च न करनेमे पैसा बचानेकी वृत्ति नही थी — लोभकी दृष्टि तो थी ही नही। किन्तु ऐसे खर्चका

बोझ समाजपर — पाटीदार समाजपर — पडता है, इससे हमने उसको बचानेका विचार किया था।

मै डाह्याभाईको बहुत समयसे जानता हूँ और यशोदाको भी जानता हूँ। दोनोमे इस विवाहको सयमसे शोभित करनेकी क्षमता है, ऐसा मुझे लगता है। मुझे आश्रम-वासियोसे जो-कुछ कहना है, उसके अवसर बार-बार नही आ सकते। मै ऐसे अवसरोको ढूँढ-ढूँढ कर नही लाना चाहता। यह काम मेरा नही है। फिर भी ऐसे विवाहोके अवसर आये तो उनको सम्पन्न करानेसे सयममे ही वृद्धि होनेकी सम्भावना है। सम्भव है, मेरा यह विचार भ्रमयुक्त हो, फिर भी यदि ऐसी विधियाँ सम्पन्न करानेके अवसर आयेगे तो मै उनको सम्पन्न करानेसे पीछे नही हटना चाहता। साथ ही मै यहाँके सब लोगोसे यह चाहता हूँ कि आप सब ऐसे अवसरोसे अधिक सयम पालना सीखे। इसीलिए हम सब ऐसे अवसरपर यहाँ इकट्ठे हुए है। हम प्रभुसे प्रार्थना करते है कि हमारी भावनाएँ पूरी हो, यहाँ ऐसे स्त्री-पुरुष उत्पन्न हो जिनका ध्यान ही इन बातोकी ओर न हो, जिनका मन सन्तानोत्पत्तिकी ओर न जाये, जो ससार-भरके बालकोको अपना बालक माने और जो अपना समय दुखी बालकोकी सेवा करनेमे ही लगाये। डाह्याभाई और यशोदाको स्वय स्वतन्त्र रूपसे सोचना चाहिए कि उनकी जिम्मेदारी कितनी बढ गई है। मुझे ऐसा लगता है मानो वे आज तो अपनी-अपनी स्वतन्त्रता तो खो ही बैठे हैं। किन्तु इसमे सौन्दर्य भी हो सकता है। वे सुखी हो, सयमी हो, उनमे त्यागभावका विकास हो और वे अपने-अपने माता-पिताकी और हमारी प्रतिष्ठा बढाये, जिससे किसीको यह कहनेका अवसर न मिले कि आश्रममे ऐसा प्रसग कैसे आया?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, खण्ड ७

१०४. निषेधादेश[1]

यह बात बिल्कुल सच है कि मेरे कोहाट जानेसे वहाँके हिन्दू-मुसलमानोके समझौतेका मामला, जिस हदतक वह अपने आपमे दोषपूर्ण होगा, फिरसे खुले बिना न रहेगा। पर जो समझौता हुआ है वह दबावमे हुआ है, क्योकि मुकदमे चलाये जानेकी धमकी तो दोनो दलोके सिरपर खडी ही थी। यह समझौता स्वेच्छासे नही हुआ है और दोनोके मनका नही है। हिन्दू और मुसलमान दोनोमे, जो कि रावल-पिण्डीमे मौ० शौकत अलीसे और मुझसे मिले थे, ऐसा ही कहा था। परन्तु मेरे कोहाट

१. [illegible] सम्पादक हिन्दी [illegible] तथा अपने बीच हुए तार-व्यवहारको [illegible] शौकत अली और [illegible] पहले दिये जा चुके हैं। देखिए "[illegible] सम्पादक हिन्दी [illegible]", ९-२-१९२५ तथा "तार: सम्पादक हिन्दी मिलापको", १९-२-१९२५।

जानसे चाहे कुछ भी नतीजा निकले, उसमे दोनो दलोमे जो मनमुटाव है वह वढने-वाला तो हरगिज नही है। ऐसी हालतमे यदि मुझे अपने मुसलमान मित्रोके साथ कोहाट जाने दिया जाता तो शान्ति-स्थापनाका ध्येय, जिसका कि दावा मेरे वरावर ही वाइसराय साहव भी करते है, आगे वढता। उस समय जव कि कोहाटमे आग धधक रही थी, मुझे वहाँ न जाने देना कुछ-कुछ समझमे आ गया था, परन्तु इस समयकी मनाई समझमे नही आती। कितने ही मित्रोने मुझे सूचित किया कि विना इजाजत लिये अथवा विना खवर किये मुझे कोहाटके लिए रवाना होकर निपेवादेशके उल्लघनकी सजा ओढ लेनी थी। पर यह मै उमी हालतमे कर सकता था जव इस प्रकारके आदेशकी अवज्ञा करके मैने जेल जानेकी ठान ली होती। पर मै मानता हूँ कि देशमे आज ऐसी किसी कार्रवाईके योग्य वायुमण्डल नही हे। इसलिए मैने यह जोखिम नही उठाई। मुझे तो आशा है कि जिस सावधानीके साथ मै ऐमी किसी भी कार्रवाईसे, जिससे सविनय अवज्ञाकी नौवत आ जानेकी सम्भावना पास आ सकती हे, दूर ही रहा हूँ, सरकार उसकी कदर करेगी। और इस सावधानीमे भी मेरा हेतु यह हे कि जहाँतक हो सके ऐसा कोई काम न किया जाये जिससे लोग अप्रत्यक्ष-रूपसे भी हिंमामे प्रवृत्त हो सके। पर हाँ, ऐसा समय आये विना न रहेगा जव अघटित परिणामो-का लेशमात्र विचार किये विना सविनय अवज्ञा करना मेरा धर्म हो जायेगा। मै स्वय नही जानता कि यह समय कव आ सकेगा या आवेगा भी। पर मै इतना जरूर मानता हूँ कि वह आ सकता है। जव वह वक्त आ जायेगा तव मेरा खयाल है, मेरे मित्र मुझे पीछे हटते हुए नही देखेगे। तवतक वे मुझे निवाह ले।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २६-२-१९२५

१०५. सच हो तो अमानुष

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रवन्धक-समितिकी ओरसे मुझे नीचे लिखा तार मिला है

> **नाभासे हाल ही में वडे अमानुषी अत्याचारोकी खवरे आई है। कैदियोको केश, दाढी पकडकर खींचा गया है और ऐसी मार मारी गई है कि वे वेहोश हो गये है। उनसे पानीमें गोते लगवाये गये है। वदनके भिन्न-भिन्न हिस्से लोहेके लाल गरम सींकचोसे दागे गये है और उन्हे सिर नीचे और पांव ऊपर बाँधकर लटका दिया गया है, जिससे कितने ही लोग मर भी चुके है। वहुतो-की हालत चिन्ताजनक हो रही है। कितनो ही को सख्त जख्म पहुँचे है। कुछ जत्थोको तो ता० १३–१४ को खाना ही नहीं दिया गया। वडी सनसनी फैल रही हे। हालत निहायत गम्भीर है। तुरन्त कुछ उपाय करना जरूरी है।**

मै इस तारको छाप रहा हूँ, पर अफसोसकी वात है कि तुरन्त कुछ भी नहीं किया जा सकता है। निश्चय ही लोगोकी हमदर्दी तो कैदियोके प्रति है। मुझे इस

बातमे भी कोई शक नही कि विधानसभामे प्रश्नोत्तर भी होगे, पर इससे उन दुखियो-को क्या तसल्ली मिलेगी। मै तो यही चाहता हूँ कि यह विवरण अतिरजित निकले और कर्मचारीगण द्वारा उपरोक्त अमानुषता बरतनेका अपराध न किया गया हो। मै विश्वास करता हूँ कि जो भयकर इल्जाम जेलके कर्मचारियोपर लगाये गये है, नाभाके राज्याधिकारी उनका स्पष्टीकरण देगे और निष्पक्ष तौरपर उनकी जॉच करावेगे।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २६-२-१९२५

१०६. फिर वाइकोम

वे हिन्दू जो अस्पृश्यताको पाप मानते है, नीचे लिखे पत्रको पढकर बडे क्षुब्ध होगे[1]

एक उन्नत बताया जानेवाला राज्य[2] प्रगतिशील विचारोका विरोध करे तो यह उस 'उन्नत' राज्यके लिए लज्जाजनक है। नैतिक दृष्टिकोणसे तो प्रगतिशील लोगोकी जीत हो गई है। यद्यपि यह खेदकी बात है कि कथित अस्पृश्यो द्वारा एक सार्वजनिक मार्गके उपयोगके विरुद्ध २२ सदस्योने मत दिये, किन्तु यह जानकर सान्त्वना मिलती है कि २१ सदस्योने हिन्दू सुधारकोके प्रस्तावके पक्षमे अपना मत देकर उनके द्वारा ग्रहण की हुई स्थितिका समर्थन किया है। लेकिन पत्रकी सबसे दु खजनक बात यह है कि सत्याग्रही निराश होते हुए जान पडते है। मुझे इससे आश्चर्य नही होता। लगातार सत्याग्रह करनेका उनका यह पहला अवसर है। फिर भी मै उन्हे विश्वास दिला दूं कि विजय सुनिश्चित है क्योकि उनका उद्देश्य न्याय्य है और उनके साधन अहिंसात्मक है। उन्हे यह भी जान लेना चाहिए कि उन्होने अपने कष्ट सहनसे ससार-का ध्यान आकर्षित कर लिया है। आन्दोलन शुरू होनेसे पहले वाइकोमको कौन जानता था? उन्हे यह भी ध्यानमे रखना चाहिए कि वे युगो पुराने एक अन्धविश्वास-के विरुद्ध लड रहे है। द्वेषकी लौहभित्तिको तोडनेके प्रयत्नमे कुछ सुधारकोका एक वर्षका कष्ट सहन कोई बडी बात नही है? अधीर होनेका अर्थ लडाई हार जाना है। उन्हे तो अन्ततक लडना होगा। इसके अतिरिक्त दूसरा मार्ग हो भी क्या सकता है? हिंसासे कोई कार्य सिद्ध न होगा। रूढिवादी लोग और भी अकड जायेगे और शहीदोंके खूनसे उन्हे बल मिलेगा; क्योकि यदि रूढिवादी घायल होते है तो सहानुभूति प्रबल रूपसे उनको ही प्राप्त होगी — चाहे उनका उद्देश्य अनुचित ही क्यो

१ यह पत्र नहीं दिया गया है। पत्रमें बताया गया था कि राज्यकी सरकारने स्थानीय विधान [illegible] सत्याग्रहियोंको जिस प्रकार [illegible], उसमें यह भी कहा गया था [illegible] है। उसमें यह प्रार्थना भी की गई थी कि यदि ऐसी [illegible] तो वे [illegible] एक वक्तव्य देकर सत्याग्रहियोंके मनोबल [illegible] आवश्यक है। "सत्याग्रहीकी कसौटी", १९-२-१९२५ भी देखिए।

२ त्रावणकोर।

न हो। सडकपर जबरदस्ती जा पहुँचनेके प्रयत्नसे बाडे और भी मजबूत कर दी जायेगी और यदि बल-प्रयोग सफल हो ही गया तो उसका अर्थ केवल यही होगा कि अस्पृश्य लोग केवल एक सार्वजनिक मार्गका उपयोग-भर कर सकेंगे, लोकमतको बदल नही सकेंगे।

किन्तु हिन्दू सुधारक तो उन रूढिवादी लोगोके विचारको बदलना चाहते है जिन्होने अस्पृश्यताको अपना धर्म मान लिया है। इस उद्देश्यको तो वे जैसे अब कष्ट सह रहे है, वैसे कष्ट सहकर ही प्राप्त कर सकेंगे। सत्याग्रह सफलताका छोटेसे-छोटा रास्ता है। जोर-जबरदस्तीके तरीकोंमे जितने भी सुधार हुए है वे एकाध बरस नही, बहुत बरसोंमे हो पाये है। यूरोपमे अज्ञानपर ज्ञानकी विजय लम्बी अवधिमे और बडी यातनाएँ सह कर हुई थी, और यह निश्चय किसीको नही है कि उनकी यह सफलता स्थायी सफलता है अथवा नही। जिन लोगोने विरोध किया और उसी विरोध-मे मरे, उनके विचारमे परिवर्तन नही हुआ। जिन दूसरे लोगोके विचारमे परिवर्तन हुआ वे उन लोगोंके कष्ट सहनसे आकर्षित हुए जो अपने विरोधियोको मारते हुए स्वय मृत्युको प्राप्त हुए थे। उस युगके प्रयत्नका विशुद्ध परिणाम यह हुआ है कि ससारका विश्वास हिंसाके तरीकोंमे बद्धमूल हो गया। इसलिए मै आशा करता हूँ कि वाइकोमके सत्याग्रही अपने मार्गसे विचलित न होंगे, भले ही उनकी सख्या कम रह जाये और उनके जीतनेकी आशा और भी धुधली पड जाये। सत्याग्रहका अर्थ है अपने आपको पूरे तौरपर मिटा देना, अधिकतम अपमान सहन करना, अधिकतम धैर्य धारण करना और गहरी श्रद्धाको जागृत रखना। सत्याग्रह स्वय अपना पुरस्कार है।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, २६-२-१९२५

१०७. टिप्पणियाँ

२८ फरवरी

सर्वदलीय सम्मेलन-समितिकी तरफसे नियुक्त उपसमितिकी बैठक दिल्लीमे २८ फरवरीको फिर होगी। जो कठिन काम उसके सुपुर्द किया गया है, ऐसा कठिन काम तो शायद ही किसी उपसमितिको करना पडा होगा। इस समितिने अपनेको दो हिस्सोमे बाँट लिया है। एकको स्वराज्य योजनाका मसविदा और दूसरीको हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यकी योजना तैयार करनेका काम सौपा गया है। स्वराज्य समितिकी प्रमुख डा० बेसेंट थी और उन्होने अपनी रिपोर्ट समितिके सामने विचारार्थ पेश भी कर दी है। समितिकी बैठक पहले मुल्तवी इसीलिए कर दी गई थी कि उस समय हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यके प्रश्नका समझौता नही हो सका था और उपस्थित सदस्य चाहते थे कि वे अनुपस्थित सदस्योसे और जो लोग सदस्य तो नही है लेकिन इस कार्यमे मदद कर सकते है, उनसे मशविरा कर सके। यह आशा की जाती है कि जो लोग आ सकते

हैं वे समितिकी इस बैठकमें जरूर ही आयेंगे। लाला लाजपतरायने मुझे तार किया है कि इस बैठकको मार्चके तीसरे हफ्तेके बाद किसी भी तारीखतक मुल्तवी किया जाये। कुछ सदस्योंने उन्हें खबर दी है कि वे इस बैठकमें हाजिर न हो सकेंगे। मैंने उन्हें खबर दी है कि समितिसे पूछे बिना मैं इस बैठकको मुल्तवी नहीं कर सकता। यदि जरूरी हुआ तो समिति ही स्वयं अपनी बैठकको मुल्तवी कर देगी। अबतक यह तो हरएकने मान ही लिया होगा कि आगे क्या करना है। इस बैठकमें शायद इस प्रश्नपर अब कोई नई बात सामने नहीं रखी जायेगी। हमारे सामने केवल यह सवाल होगा कि दिल्लीकी आखिरी बैठकमें जो दो भिन्न विरोधी विचार-धाराएँ उठ खड़ी हुई थी, उनके बीचका कोई रास्ता निकल सकता है या नहीं। इससे एक दूसरा यह भी सवाल पैदा होता है कि दोनों दल इस प्रश्नका तत्काल निपटारा करना चाहते हैं या नहीं? स्वराज्यकी योजना भी बड़ा महत्त्वशाली प्रश्न है। सिर्फ हिन्दू-मुस्लिम सवालने ही सारी प्रगतिको रोक रखा है। मैं सोचता हूँ कि जो लोग आ सकते हैं, वे अवश्य ही आयेंगे और इस प्रश्नको हल करनेमें मदद करेंगे। लालाजीकी सूचनाके विपरीत यदि बैठक मुल्तवी न की जाये और वहाँ इस प्रश्नका विचार करना ही पसन्द किया जाये तो मेरी सलाह है कि जो सदस्य हाजिर न हो सकें, वे अपनी राय समितिको लिख भेजें।

आचार्य गिडवानी रिहा

हमें सोमवारको प्रातः अम्बालासे निम्न तार मिला है, जिसे पढ़कर मुझे प्रसन्नता हुई है, और आशा है मेरी तरहसे पाठकोंको भी प्रसन्नता होगी

> गिडवानी कल सायंकाल सजा फिर स्थगित किये जानेके कारण रिहा कर दिये गये। इस बार प्रशासककी आज्ञामें तथ्य सही रूपमें दिये गये हैं। उनके भाई आलिम गिडवानीके हाथ, जो ८ तारीखको श्रीमती गिडवानीके लिए भेंटकी तारीख लेने गये थे, प्रशासकने एक सन्देशा भेजा था। प्रशासकके सन्देशमें कहा गया था कि यदि गिडवानी नाभाकी राजनीतिमें हस्तक्षेप न करें तो वे आज ही चले जा सकते हैं। गिडवानीने खबर भेजी है कि यदि इसका अर्थ निर्वासनकी आज्ञाका पालन करना है तो जब वे आये थे तब भी उनका उस आज्ञाका उल्लंघन करनेका कोई विचार नहीं था, और भविष्यमें भी नहीं होगा। श्रीमती गिडवानी ११ तारीखको यह खबर लाईं कि प्रशासक श्री गिडवानीसे यही चाहते हैं। श्री गिडवानीने तुरन्त निम्न पत्र भेजा "श्रीमती गिडवानीने मुझे बताया है कि आप मुझसे कोई ऐसा आश्वासन लेना चाहते हैं कि आपकी जारी की हुई निर्वासन आज्ञाको न माननेका मेरा कोई इरादा नहीं है। मुझे आपको इस आश्वासनको देनेमें कोई झिझक नहीं है। जब पिछले साल मैं अमृतसरसे रवाना हुआ था और मैंने आपसे जैतोमें प्रवेशकी अनुमति

१ देखिए "तार: लाला लजपतरायको", २३-२-१९२५।

मांगी थी तब भी उस आज्ञाका उल्लंघन करनेका मेरा कोई विचार न था। जैसा कि मैंने ८ मार्च, १९२४ के अपने लिखित वक्तव्यमें स्पष्ट किया था, मैंने आपके निर्णयको माननेका पूरा इरादा कर लिया था। मेरे मित्र मुझे बताते हैं कि वह पत्र आपको समयपर नहीं मिला, जिसमें इस दुःखजनक भ्रमको कदाचित् स्पष्ट कर दिया गया है। मैंने रवाना होनेसे पहले स्वयं इस मामलेमें कांग्रेसकी स्थिति और श्री गांधीकी इच्छा जान ली थी। उनके अनुसार मुझे आपके आदेशका पालन करना था और भविष्यमें भी मेरी कार्यदिशा यही रहेगी, मैं इस आज्ञाका पालन तबतक करूँगा जबतक वह वापस नहीं ले ली जाती।" प्रशासक १२ तारीखको प्रातःकाल दिल्ली चले गये थे। वे १५को वहांसे लौटे और उन्हें तुरन्त जैतो जाना पड़ा। जैतोसे वे २१ की रातको लौटे। श्री गिडवानीको इस सजाको स्थगित करानेकी आज्ञा २२ तारीखको ४ बजे सुबह प्राप्त हो गई। श्री गिडवानी आज रात दिल्ली जा रहे हैं जहां वे हिन्दू कालेजके आचार्यके पास ठहरेंगे और महात्माजीकी हिदायतोंकी प्रतीक्षा करेंगे।

मुझे आचार्य गिडवानीकी रिहाईकी खबर पाकर खुशी हुई है क्योंकि उनकी कैदकी सजा बिलकुल अन्यायपूर्ण थी और अब उस अन्यायका परिमार्जन कर दिया गया है। सचमुच ही नाभाके अधिकारियोंके तरीके अजीब हैं। आचार्यसे जो आश्वासन उन्होंने अब लिया है उसे वे बहुत पहले ले सकते थे। असलमें जैसा कि इन स्तम्भोंमें बार-बार कहा जा चुका है, आचार्य गिडवानी आज्ञा भंग करनेकी गरजसे नाभाकी सीमामें कदापि नहीं घुसे। वे तो वहां विशुद्ध और केवल मानवीय सेवा करनेके उद्देश्यसे गये थे। लेकिन इस कैदकी सजासे न तो राष्ट्रकी कोई हानि हुई है और न आचार्य गिडवानीकी। यह तो स्वराज्यके लिए आवश्यक शिक्षण और स्वतन्त्रताका मूल्य है जो प्रत्येक व्यक्तिको चुकाना ही चाहिए।

संगसारी

मुझे एक लम्बा तार मिला है जो मुझे राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्षकी हैसियतसे भेजा गया है। यह तार अफगानिस्तानमें अहमदिया फिरकेके दो सदस्योंके पत्थरोंसे मार दिये जानेके बारेमें है। जब स्वर्गीय नियामतुल्लाह खाँको भयंकर दण्ड दिया गया था तब मैंने जान-बूझकर उसपर कोई टिप्पणी नहीं की थी, लेकिन अब इन घटनाओंकी, जिनकी खबर मुझे अभी मिली है, उपेक्षा करनेका साहस मुझमें नहीं है — खास तौरसे तब जब मुझसे मत प्रकट करनेका अनुरोध निजी तौरपर किया गया है। मुझे मालूम हुआ है कि 'कुरान' मे केवल कुछ अवस्थाओंमें ही संगसारीकी हिदायत दी गई है, किन्तु जिन मामलोंपर हम विचार कर रहे हैं उनपर ये अवस्थाएँ लागू नहीं होतीं। मैं मनुष्य हूँ और ईश्वरसे डरता हूँ। इस रूपमें किन्हीं भी स्थितियोंमें ऐसे तरीकोंकी नैतिकतापर मुझे शंका करनी चाहिए। नबीके जीवनकालमें और उस युगमें चाहे कुछ भी आवश्यक या विहित रहा हो, 'कुरान' मे इसका उल्लेख होने मात्रसे इस विशेष दण्डका समर्थन नहीं किया जा सकता। प्रत्येक धर्मके प्रत्येक

नियमको विवेकके इस युगमें पहले विवेक और व्यापक न्यायकी कसौटीपर कसना होगा। तभी उसपर समाजकी स्वीकृति मांगी जा सकती है। किसी भूलका समर्थन समाजके समस्त धर्मग्रन्थोंमें भी किया गया हो तो भी वह उस नियमसे मुक्त नहीं हो सकती। इस सकटमें मैं अहमदिया फिरकेके प्रति सहानुभूति प्रकट करता हूँ। यह कहना अनावश्यक है कि मैं इस मामलेके गुणावगुणोंके सम्बन्धमें अपना मत व्यक्त नहीं कर सकता। मेरा खयाल है कि आम लोगोंको इस मामलेके तथ्य मालूम नहीं है जिससे वे इसके गुणावगुणोंपर अपना मत स्थिर कर सकें। यह ऐसा दण्ड है जिससे मानवीय अन्तःकरणको चोट पहुँचती है। विवेक और हृदय किसी भी अपराधके लिए ऐसी यातनाका समर्थन नहीं करते—चाहे वह अपराध कितना ही जघन्य क्यों न हो।

टेढे प्रश्न

'एक हितचिन्तक'ने नीचे लिखे सवाल मेरे विचारके लिए भेजे हैं:

> 'बाइबिल'को लोग ५६६ भाषाओंमें पढ सकते है। पर उपनिषदों और 'गीता'को कितनी भाषाओंमें पढ सकते है?
>
> पादरी लोगोने कितने कुष्ठालय खोले है और कितनी सस्थाएँ दलित और पीडित लोगोके लिए खोल रखी है?
>
> "आपने कितनी खोली है?"

ऐसे टेढे प्रश्न मुझसे अक्सर पूछे जाते है, 'एक हितचिन्तक'को जवाब देनेकी जरूरत है। पादरियोंके उत्साह, उमग और त्यागके प्रति मेरे मनमें बडा आदर-भाव है। पर मैंने उन्हे यह बतानेमें कभी सकोच नही किया है कि उनके उत्साह, उमग और त्यागका समुचित उपयोग नही होता। दुनियाकी हरएक जबानमें अगर 'बाइबिल'का तरजुमा हो जाये तो इससे क्या? पेटेंट दवाका विज्ञापन बहुतेरी भाषाओंमे किया जाता है, इसलिए क्या उसकी महत्ता उपनिषदोंसे बढ सकती है? कोई गलती अपने बहुल प्रचारके कारण सत्यका स्थान नही ग्रहण कर सकती, और न सत्य इसलिए मिथ्या हो सकता है कि उसपर किसीकी दृष्टि नही पडती। जिन दिनों 'बाइबिल'का उपदेश पूर्वकालीन ईसाई धर्मप्रचारक देते थे उन दिनों उसकी शक्ति आजसे कही अधिक थी। अगर 'एक हितचिन्तक' यह समझते हो कि 'उपनिषदो'की अपेक्षा 'बाइबिल'का अधिक भाषामें अनुवाद होना उसकी श्रेष्ठताकी कसौटी है तो कहना होगा कि उनको पता नही है कि सत्यका प्रसार कैसे होता है। सत्यका फल तभी मिल सकता है जब तदनुसार आचरण किया जाये। परन्तु यदि मेरा उत्तर पानेसे 'एक हितचिन्तक'को कुछ सन्तोष हो सकता है तो मैं उनसे खुशीके साथ कहूँगा कि हाँ, 'बाइबिल' की अपेक्षा 'उपनिषदो' और 'गीता'का अनुवाद बहुत कम भाषाओंमें हुआ है। मुझे कभी इस बातकी जिज्ञासा नही हुई कि उनके अनुवाद कितनी भाषाओंमे हुए है।

अब, दूसरे सवालके बारेमें भी, मुझे यह कबूल करना चाहिए कि पादरियोंने कुष्ठ चिकित्सालय तथा ऐसी बहुत-सी सस्थाएँ खोली है। मैंने एक भी नही। फिर

भी मेरी स्थिति समान है। ऐसी बातोंमें मैं पादरियों अथवा और किन्हीं लोगोंसे प्रति-स्पर्धा नहीं कर रहा हूँ। मैं तो जिस तरह ईश्वर राह दिखाता है उसी तरह नम्र भावसे मनुष्य-जातिकी सेवा करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। कुष्ठालय इत्यादि खोलना मनुष्य-जातिकी सेवाका एक साधन है और वह भी शायद सर्वोत्तम नही है। परन्तु ऐसी इन सेवाओंकी भी उच्चता उस अवस्थामें बहुत-कुछ घट जाती है जबकि उनके पीछे धर्मान्तर करनेका हेतु रहता है। वही सेवा सर्वोच्च होती है जो केवल सेवाके लिए ही की जाती है। हाँ, यहाँ कोई मेरे आशयको गलत न समझ ले। जो पादरी निःस्वार्थ भावसे ऐसे कुष्ठालयमें सेवा करते है, उनका मैं आदर करता हूँ। यह कबूल करते हुए मुझे बहुत शर्म मालूम होती है कि हिन्दू लोग ऐसे निष्ठुर हो गये है कि दूसरोंकी बात तो दूर, अपने देशके ही दीन-अनाथोंकी भी वे बहुत कम परवाह करते है।

एक वहम

बंगालके एक जमींदारने हिन्दू-मुस्लिम एकता, अस्पृश्यता और स्वराज्यके विषयमें मुझे एक बड़ी लम्बी चिट्ठी भेजी है। चिट्ठी इतनी लम्बी है कि प्रकाशित नही की जा सकती और उसमें कोई नई बात भी नही कही गई है। फिर भी नमूनेके तौरपर उसमें से एक वाक्य यहाँ पर देता हूँ

> पांच सौ बरससे हिन्दुओंका और मुसलमानोंका सम्बन्ध दुश्मनोंका-सा रहा है। ब्रिटिशोंका राज्य होनेके बाद एक नीतिके तौरपर हिन्दू-मुसलमान उस जातिगत द्वेषको भूल जानेपर मजबूर किये गये थे और अब उन दोनों जातियोंमें वैसी कटुता और दुश्मनी नहीं रही। लेकिन इन दोनों जातियोंके स्वभावका स्थायी-भेद अब भी मौजूद है। मेरा विश्वास है कि हिन्दू-मुसलमानों-का वर्तमान मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध ब्रिटिश राज्यके कारण ही है और नवीन हिन्दू धर्मकी उदारताके कारण नहीं।

मैं इसे सिर्फ एक वहम मानता हूँ। मुसलमानोंके राज्यमे दोनों जातियाँ आपसमे सुलह-सफाईके साथ रहती थीं। यह याद रखना चाहिए कि मुसलमानोंके राज्य-कालके पहले भी कितने ही हिन्दुओंने इस्लामको अंगीकार किया था। मेरा यह विश्वास है कि जिस प्रकार ब्रिटिश राज्य यहाँ न होता तो भी यहाँ ईसाई लोग होते ही, उसी प्रकार यदि मुसलमानोंका राज्य न हुआ होता तो भी यहाँ मुसलमान तो रहते। इस बातका कोई प्रमाण नही है कि ब्रिटिश राज्यकी स्थापनासे पहले यहाँ हिन्दू और मुसलमानोंमें झगड़ा रहता था। मेरा विश्वास है कि ब्रिटिशोंकी इस 'फूट डालकर शासन करनेकी' नीतिने हमारे मतभेदोंको और भी बढ़ा दिया है। और जबतक, इस नीतिके होते हुए भी, हम यह न समझ जाये कि हमें एक हो जाना चाहिए तबतक वह हमारे मतभेदोंको बढ़ाती ही रहेगी। लेकिन यह तबतक मुमकिन नही जबतक हम अधिकार और पदोंके लिए झगड़ते रहेंगे। पहल हिन्दुओंको ही करनी चाहिए।

भरूचाकी डायरी

यहाँ हम श्री भरूचाके कागजका अंश देते हैं:

> मैं श्री दास्ताने और श्री देवके साथ पूर्वी खानदेशका दौरा कर रहा हूँ। दैनिक विवरण इस प्रकार है:
>
> १३-२-१९२५, भुसावल: ३५० रुपयेकी खादी मुख्यतः वकीलोंको बेची और १२ बंगाली मन रुई इकट्ठी की।
>
> १४-२-१९२५, जामनेर: १६/१३ बंगाली मन रुई इकट्ठी की।
>
> १५-२-१९२५, चालीसगाँव: ३१० रुपयेकी खादी वकीलोंको और ४५० रुपयेकी कपड़ा व्यापारियोंको बेची। एक बंगाली मन रुई इकट्ठी की।
>
> १६-२-१९२५, पाचोरा: यहाँ १२ मन और ५ पक्का बंगाली मन रुई सिन्दूरनीमें इकट्ठी की।
>
> १७-२-१९२५, आज हम यावलमें हैं। श्री दास्ताने पश्चिमी खानदेशमें ३ दिन अर्थात् २३ तारीखतक और रहना चाहते हैं।

मैं श्री भरूचाके एक पत्रसे यह उद्धरण इस खयालसे दे रहा हूँ कि उससे दूसरे कार्यकर्ताओंको काम करनेकी प्रेरणा मिले। व्यावसायिक ढंग और सतत प्रयत्नके बिना सूत कातने और खद्दरके प्रचारमें सफलता मिलनी सम्भव नहीं है। मेरा अनुभव तो यह है कि जितना भी काम किया जाये उसकी प्रतिक्रिया तुरन्त होती है।

भारतकी दुर्दशा

इलाहाबाद कृषि संस्थानके श्री हिगिनबॉटमसे कर जाँच-समितिने इसी ६ तारीख-को पूछताछ की थी। उस पूछताछके उत्तरमें उन्होंने कई महत्त्वपूर्ण विषयोंमें अपनी यह दिलचस्प राय जाहिर की। मैं 'सिविल ऐंड मिलिटरी गजट' से चुनकर निम्न उद्धरण देता हूँ:

> भारत बहुत गरीब देश है, फिर भी वह खेती सम्बन्धी कई बातोंमें संसार-भरमें सबसे ज्यादा फिजूलखर्च देश है। देशमें जो हद दर्जेकी गरीबी है उसका कारण जमीनकी कमी या खेतीके सामानकी कमी उतनी नहीं जितनी वैज्ञानिक ढंगसे खेती करनेकी। देशमें अलाभप्रद असंख्य पशु और धार्मिक भिखारी होनेकी वजहसे भारी आर्थिक शोषण होता है। देशमें खाद्य जुटानेके लिए और कामकी दृष्टिसे जितने जानवरोंकी जरूरत है उसकी अपेक्षा यहाँ बहुत ज्यादा जानवर हैं। उनको काफी चारा नहीं मिलता, इसलिए वे कदमें छोटे और कीमतमें हल्के रह जाते हैं। भारतकी गाय सब देशोंकी गायसे कम दूध देती है; इसका कारण यह है कि यहाँ चारा कम है और जो निकम्मी गायें हैं, भारतीय उनको खतम करना नहीं चाहते। भारतमें दूधका उत्पादन करनेमें बहुत ज्यादा खर्च आता है और देशके ९० प्रतिशत पशु आर्थिक दृष्टिसे बोझ हैं।....

लोग अत्यन्त कीमती खादको, जिसका मिलना मुश्किल है, जला रहे हैं। भारतमें कर लगानेकी गुंजाइश बहुत अधिक है, लेकिन लोगोंकी कर देनेकी वर्तमान सामर्थ्य बहुत कम है। जमीनपर करका भार जितना पड़ना चाहिए उसकी अपेक्षा बहुत कम पड़ रहा है। भारतमें जब किसानकी जमीन इतनी कम होती है वह आर्थिक दृष्टिसे लाभ नहीं दे सकती तो उसपर लगान भार-रूप हो जाता है।

अलाभप्रद खातों (जमीनके टुकड़ों) को खतम करनेके लिए कानून बनानेकी जरूरत है। वर्तमान कानूनसे तो छोटे खातोंको प्रोत्साहन मिलता है। ऐसे बड़े खाते बहुत कम हैं जिनपर मेहनत बचानेके लिए मशीनोंका इस्तेमाल किया जा सके। कानूनकी वर्तमान स्थितिमें सब लाभप्रद खाते अलाभप्रद हो रहे हैं। गाँवोंमें उद्योगोंकी उचित व्यवस्था नहीं है जिनमें फालतू लोग लग सकें। इसके अलावा बहुतसे लोगों और जानवरोंके लिए जो जमीनपर सिर्फ आधा वक्त ही काम कर सकते हैं, जमीनसे पूरी आजीविकाकी आशा करते हैं। इसका उपाय यही है कि गाँवोंमें स्त्रियों या पुरुषोंके लिए मौसमी उद्योग स्थापित करनेकी योजनाएँ बनाई जायें और उन उद्योगोंका विकास किया जाये जिससे जब खेतीमें उनके लिए कुछ काम नहीं होता तब वे कुछ समय लाभप्रद काममें लगा सकें। जमींदार अपनी आमदनीको व्यक्तिगत समझता है और यह नहीं सोचता कि गाँवोंका सुधार करनेमें उसका लाभ है। इसके अतिरिक्त काश्तकार और जमींदार हमेशा आपसमें लड़ते रहते हैं।

इन उद्धरणोंमें चार बातोंकी चर्चा की गई है। कीमती खादकी बरबादी, पशुओंकी चिन्ताजनक समस्या, अलाभप्रद खाते और किसानोंके लिए पूरे वर्ष धन्धेकी कमी। करके भारकी बात छोड़ भी दें तो भी इन सबसे जनसमुदायकी गरीबी बढ़ती है और इसलिए सब देशभक्तोंको इस सम्बन्धमें विचार करना उचित है। इनमें से प्रत्येक प्रश्नपर कारगर तौरपर कार्रवाई की जा सकती है। जिस देशमें गायकी पूजा की जाती हो, उसमें पशुओंकी कोई समस्या होनी ही नहीं चाहिए। किन्तु हमारी इस गोभक्तिने अज्ञानपूर्ण धर्मान्धताका रूप ले लिया है। हम जितने जानवरोंको रख सकते हैं उनसे ज्यादा जानवरोंको रखते हैं। इस तथ्यपर सबसे पहले विचार करना जरूरी है। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि गोरक्षा समितियोंको यह प्रश्न अपने हाथमें लेना चाहिए। यह उनका उचित कर्त्तव्य है। अलाभप्रद खातोंका प्रश्न ऐसा है जिसके लिए हमें अपनी परिवार-व्यवस्थाको बदलनेकी जरूरत है। खादकी बरबादीका प्रश्न हल करनेके लिए खेतीकी सच्ची शिक्षा देनेकी जरूरत है। और लाखों स्त्रियों और पुरुषोंके ६ महीने बेकार रहनेका प्रश्न केवल चरखेसे ही हल किया जा सकता है। यह साफ है कि सरकारसे लड़नेके साथ-साथ हमें विज्ञानका अध्ययन करना चाहिए और श्री सैम हिगिनबॉटम द्वारा उठाये गये सवालोंपर विचार करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-२-१९२५

१०८. तार : आर्यको

२६ फरवरी, १९२५

आर्य
रंगून

रतिलाल चम्पाका विवाह आनन्दपूर्वक समस्त धार्मिक संस्कारोंके साथ सम्पन्न।

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २८५६) से।

१०९. पत्र : अब्बास तैयबजीको

दिल्ली जाते हुए
२७ फरवरी, १९२५

प्रिय मित्र और भुर्र[1],

आप फिजूल क्यों परेशान होते हैं? यदि मैंने कार्ड अंग्रेजीमें लिखा होता तो शायद आप उसको ठीक-ठीक पढ़ लेते। मुझे आपके हृदयका आलिंगन तो सदा प्राप्त है। शरीरका आलिंगन प्राप्त हो या न हो इससे क्या हुआ? मुझे आपके सम्बन्धमें गलतफहमी नहीं हो सकती। मैंने जान लिया था कि आप भ्रममें पड़ गये हैं। रेहानाको[2] मेरा सस्नेह स्मरण।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० ९५५१) की फोटो-नकलसे।

१. गांधीजी और तैयबजी द्वारा एक दूसरेके लिए अभिवादनमें प्रयुक्त एक विशेष ध्वनि।
२. तैयबजीकी पुत्री।

११०. पत्र : एस० बी० बापटको

२७ फरवरी, १९२५

आपका पत्र मिला। 'काफी पा लेनेपर और पानेकी कामनामें गांठका भी चला जाता है।' मुझे क्षमा कीजिए।

मो० क० गांधी

एस० बी० बापट
'केसरी', 'मराठा' कार्यालय
पूना

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

१११. तार : अब्दुल मजीदको

दिल्ली
२८ फरवरी, १९२५

ख्वाजा साहब अब्दुल मजीद
अलीगढ़

आशा है परसों सुबह आप यहाँ जरूर पहुँच जायेंगे। मैं शायद कल शाम चल दूंगा।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २८५६) से।

११२. तार : आनन्दानन्दको

दिल्ली
२८ फरवरी, १९२५

स्वामी आनन्दानन्द
अहमदाबाद

२६ मार्चको आपको पूरा समय दे सकता हूँ। क्या इससे काम चलेगा? नही तो मैं मद्रास जानेसे पहले अहमदाबाद आनेको तैयार हूँ।

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २८५६) से।

११३. पत्र : डा० मैक्कूवरको

२८ फरवरी, १९२५

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। सत्याग्रह और अहिंसामे मेरा विश्वास पहले जैसा ही अटूट है। मैं अब भी असहयोग कर रहा हूँ और उसी प्रकार भारतके हजारो नर-नारी असहयोग कर रहे हैं। जो लोग हमसे सहमत नहीं हैं उनसे यह समझौता हुआ है कि एक राष्ट्रीय कार्यक्रमके रूपमे असहयोग-कार्य मुल्तवी कर दिया जाये। इससे जो लोग देशकी विधान-परिषदोमे प्रवेशके इच्छुक है, वे वहाँ जानेको स्वतन्त्र हो जाते हैं।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य : नारायण देसाई

११४. पत्र : प्रभाशंकर पट्टणीको

फाल्गुन सुदी ६, स० १९८१ [२८ फरवरी, १९२५]

सुज्ञ भाईश्री,

आपका पत्र मिल गया है। मेरा कार्यक्रम इस प्रकार है

आश्रम	४ मार्च
बम्बई	५ मार्च
मद्रास	७ मार्च
वाइकोम	८ मार्च

उसके बादका कार्यक्रम वाइकोममें तय किया जायेगा। आश्रममें २६ मार्चको वापस पहुँचनेका विचार है। मुझे १ अप्रैलको बोटाद जाना है और उसके बाद मढडा पालिताना, सिहोर आदिका कार्यक्रम है।

अब तो मैं वाइकोमसे बम्बई लौटनेके बाद ही जाम साहबसे मिल सकूँगा, बशर्ते कि वे बम्बई आ जायें।

इसके साथ भाई फूलचन्दका पत्र है। उनके सम्बन्धमें मेरे मनमें बहुत ऊँचा भाव है। अच्छे-अच्छे लोग भी सुनी-सुनाई बातोंमें कैसे भ्रमित हो जाते हैं, इसका यह एक उदाहरण है। आप भाई फूलचन्दको क्षमा तो कर ही देंगे, मैं यह माने लेता हूँ। जब भाई फूलचन्दने आपसे क्षमा माँगनेका विचार स्वयं प्रकट किया तब मैंने उन्हें यह सुझाव दिया था कि वे यह पत्र मुझे भेज दें।

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ३१९७) से।
सौजन्य : महेश पट्टणी

११५. पत्र : फूलचन्द शाहको

फाल्गुन सुदी ६, १९८१ [२८ फरवरी, १९२५]

भाई फूलचन्द,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने पट्टणी साहबको जो पत्र लिखा था, वह मैंने उनको भेज दिया है।[1] तुम्हारा दूसरा पत्र मिल गया है। मैं फुरसतसे उसका उत्तर नामोका उल्लेख किये बिना सार्वजनिक रूपसे दूँगा।

हमें शराबियोंके घर खाना-पीना नहीं चाहिए, इस नियमका औचित्य मेरी समझमें नहीं आया है।[2]

१ देखिए पिछला शीर्षक।
२ देखिए "जहाँ मद्यपान हो, वहाँ क्या करें?", २२-३-१९२५।

जो लोग खादी नहीं पहनते, क्या मैं उनके घर नहीं जाता? तुम्हारी जैसी मान्यता है वैसा मैं करूँ तो उससे शराबबन्दीमें कोई खास मदद नहीं मिलती।

किन्तु मैं मानता हूँ कि यदि हम शराबियोंके घर जानेपर भी शराब न पियें तो इससे सहायता मिलती है। यदि हम उस तरह व्यवहार न रखना चाहें तो हमें जन-समाजको ही त्याग देना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० २८७०) से।
सौजन्य: शारदाबहन शाह

११६. पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको

फा० सु० ६, १९८१ [फरवरी २८, १९२५]

भाई श्री घनश्यामदासजी,

आपके लीये जो खास चरखा बनवा रहा था, बनकर आ गया है। देखनेमे तो सुदर हे हि है। मैंने ओर भाई महादेवने चलाकर भी देखा है। अच्छा चलता है। मैं नहिं जानता कोई आपके वहा उसको अच्छी तरह बिठा सकेंगे। मुझको लीखिये कैसे चलता है। एक चरखा और भी भेजनेका मैंने चि० मगनलालको कहा था। मैं नहिं जानता कि वह मील गया है या नहिं। आपको मैंने एक पत्र उसके पेस्तर लीखा था मीला होगा। मैं वाईकम जा रहा हु।

आपका
मोहनदास गांधी

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६०६) से।
सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

११७. काठियावाड़के संस्मरण – १

प्रजा प्रतिनिधि-मण्डल

तारीख १५ से २१ तक मैं काठियावाडमे घूमा। उस अवधिके संस्मरण मेरे दिलमे हमेशा ताजा बने रहेंगे। राजकोटके ठाकुर साहबके स्वतन्त्रता-प्रेमपर मैं मुग्ध हो गया। प्रजा प्रतिनिधि-मण्डलकी उपयोगिताके बारेमे मुझे कुछ शक था, लेकिन उसकी एक बैठकमे तीन घटे बैठनेके बाद मेरा वह शक भी जाता रहा। यह तो भविष्यकी बात है कि यह मण्डल आखिर कितना उपयोगी साबित होगा। लेकिन यह कह सकते है कि वह आज भी उपयोगी है। उसे अधिक उपयोगी बनानेका दारोमदार प्रतिनिधियोपर ही है। प्रतिनिधियोको अपने विचार प्रकट करनेकी पूर्ण स्वतन्त्रता है और वे उसका पूरा-पूरा उपयोग करते हुए भी देखे गये। किसीको भी यह खयाल नहीं होता था कि माननीय ठाकुर साहबको क्या पसन्द होगा, क्या नहीं। प्रतिनिधि उन विचारोंको भी प्रकट करते थे, जो ठाकुर साहबको अप्रिय मालूम हो सकते थे।

सब कामकाज गुजरातीमे होनेके कारण बडी शोभा देता था। अग्रेजी व्याख्यानोमे जो कृत्रिमता, आडम्बर इत्यादि पाये जाते है, यहाँ वे देखनेको भी न मिले। वहाँके कुछ व्याख्यान तो बडे प्रभावपूर्ण और अच्छे कहे जा सकते है। व्याख्यान लम्बे नही थे और सामान्य तौरपर सब लोग वही बाते कहते थे, जो जरूरी थी। यह मण्डल अपनी दलील करनेकी शक्तिमे, मर्यादाकी रक्षा करनेमे और बाकायदा काम करनेमे किसी भी दूसरे प्रतिनिधि-मण्डलसे कम है, यह मै हरगिज नही कहूँगा।

मद्यपान-निषेध

इस मण्डलमे मद्यपान-निषेधपर ही मुख्यत चर्चा हुई थी। प्रतिनिधि-मण्डलने सर्वसम्मतिसे यह प्रस्ताव पास किया कि शराबकी दुकाने और शराबका बनना राज्यकी तरफसे बन्द कर दिया जाये। प्रतिनिधि लोग यह जानते थे कि ठाकुर साहबका मत इसके विरुद्ध है तो भी प्रतिनिधि-मण्डलने इसे वहाँ दूसरी बार पेश किया था।

विचार-दोष

माननीय ठाकुर साहबने स्वय प्रतिनिधियोके सामने अपनी बात पेश की। इसलिए उनके विचार भी जाने जा सके। उनकी दलील यह थी कि यदि शराबकी दुकाने बन्द कर दी जायेगी तो यह व्यक्तिके स्वातन्त्र्यको हानि पहुँचाना होगा। मेरा खयाल है कि इसमे बडा भारी विचार-दोष है। यह समझना मुश्किल है कि यदि राज्यकी तरफसे शराबकी दुकाने बन्द कर दी जाये तो इससे व्यक्तिके स्वातन्त्र्यकी क्या हानि होगी? प्रजाकी माँग यह नही थी कि शराबका पीना जुर्म माना जाये।

उनकी मांग तो यह थी कि राज्यमे शराबका बनना और बेचना बन्द कर दिया जाये। व्यक्ति या समाज जिस चीजको दोषयुक्त मानता है, उसे बनाना या बेचना समाज या व्यक्तिके लिए लाजिमी नही है। शराबसे होनेवाली हानिको तो सभी जानते है। जिस प्रकार चोरी करनेका स्वातन्त्र्य नही मिल सकता उसी प्रकार शराब बनाने और बेचनेका स्वातन्त्र्य भी नही मिल सकता। जो लोग बिना शराबके नही रह सकते, वे चाहे तो उस राज्यको छोड दे। व्यक्तिके स्वातन्त्र्यके पूजक देशोमे भी ऐसी रोक-टोकके दृष्टान्त बहुत पाये जाते है। स्वतन्त्रता और स्वच्छन्दता दोनो एक ही नही है। किसी भी व्यक्तिको स्वच्छन्द होकर काम करनेका अधिकार ही नही है। जहां ऐसा अधिकार हो वहां स्वतन्त्रता देवीका निवास सम्भव नही है। प्रत्येक मनुष्यको उतनी ही स्वतन्त्रताके उपभोग करनेका अधिकार है जिससे किसी दूसरेको नुकसान न पहुंचे। अंग्रेजीमे विधिशास्त्रका एक सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक मनुष्यको अपनी सम्पत्तिका उपयोग ऐसा करना चाहिए कि उससे किसी दूसरेकी हानि न हो। मुझे अधिकार है कि मै अपनी सारी जमीन खोद डालूं। लेकिन मै उसे उस तरह नही खोद सकता कि उससे मेरे पडोसीके घरकी नींव ही कमजोर हो जाये। प्रजाका कोई वर्ग यदि शराब पीता हो तो उसका नतीजा केवल पीनेवालेको ही नही भुगतना पडता, उसके बाल-बच्चों और पडोसियोको भी भुगतना पडता है। अमरीकाने शराबकी दुकाने और शराब बनानेके कारखाने बन्द कर दिये। उससे वहां व्यक्तिके स्वातन्त्र्यका लोप नही हो गया। इस समय जब शराबके व्यापारके विरुद्ध सारी दुनियामें हलचल हो रही है, यदि राजकोट-नरेश शराबके लिए व्यक्तिके स्वातन्त्र्यका तर्क पेश करे तो यह बडे दुःखकी बात है।

प्रजामत

यदि यह मान भी ले कि शराबके व्यापारको बन्द करनेसे व्यक्तिके स्वातन्त्र्यकी हानि होती है तो भी यह सिद्धान्त तो सर्वमान्य है कि जहाँ स्पष्टतया प्रजाका एक ही मत हो वहाँ राजाका धर्म है कि वह उसीका वशवर्ती होकर रहे। प्रजा प्रतिनिधि-मण्डलमे ऐसा कोई भी न था जो शराबके व्यापारको बन्द न करवाना चाहता हो। ऐसे भी प्रमाण मौजूद है कि स्वयं शराब पीनेवाले ही उसे बन्द कराना चाहते है। उनके कुटुम्ब त्रस्त है। ऐसे विषयोमे भी यदि राजकोटके ठाकुर साहब प्रजामतका आदर न करे तो यह बडे दुःखकी बात होगी। जिस नरेशने प्रजा प्रतिनिधि-मण्डल बनानेमे पहल की है उनसे मै यह आशा जरूर रखता हूँ कि वे शराबके लिए दूषित सिद्धान्तोके कायल होकर प्रजामतका तिरस्कार नही करेंगे और शराबके व्यापारको बन्द करके गरीबोकी दुआ लेंगे।

नियमितता

राजकोटके ठाकुर साहब नियमितताके पुजारी है। सब काम नियत समयपर करते है और दिये हुए और मुकर्रर किये हुए समयकी पाबन्दी स्वयं भी बडी सजगता-से करते है और दूसरोसे भी कराते है। वे (डिसिप्लिन) अनुशासनके भी पुजारी

हैं। वे मानते हैं कि हमारा बड़ा भारी दोष अनुशासनका अभाव है। इसमें बहुत कुछ सचाई है, इसे इनकार नहीं किया जा सकता। नियम और अनुशासनके अभावके कारण ही प्रजा अपनी शुभेच्छाओंको पूरा नहीं कर पाती।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १-३-१९२५

११८. स्टेनकोनोवके प्रश्नोके उत्तर[1]

[२ मार्च, १९२५]

यह ठीक है कि आज मेरा मौन-व्रत है। लेकिन आप जो-कुछ कहना चाहते हों, वह कहिये। मैं उसका जवाब लिखकर दूंगा। मैं 'यंग इंडिया' के सम्पादन-कार्यमें बहुत व्यस्त हूँ परन्तु कुछ मिनट निकालूँगा।

चरखेका प्रभाव[2]

मैं चरखेको व्यक्तिपर इसके प्रभावकी दृष्टिसे उतना नहीं देखता जितना राष्ट्र-पर होनेवाले प्रभावकी दृष्टिसे देखता हूँ। कताईका प्रभाव व्यक्तिपर भले ही साफ दिखाई न पड़े किन्तु राष्ट्रपर उसका प्रभाव बहुत काफी होगा। जैसे कि एक [illegible] मारनेवाले सैनिकका काम भले ही कुछ न लगे परन्तु वही काम हजारोंके मिलकर करनेसे परिणाम भारी हो सकता है।

"इंडिपेंडेंट" दलके धमकी-बाज लोगोंकी स्थिति

सुनाई पड़ता है वे नेतृत्व करनेकी धमकी दे रहे हैं। किन्तु वे सफल नहीं होंगे। भारतकी मनोवृत्ति उनकी प्रणालीके विपरीत बैठती है। आपने जो-कुछ भी नृशंसता देखी है, मेरा खयाल है वह लोगोंके एक बहुत ही छोटे भागतक सीमित है।

इंग्लैंडसे सौहार्दपूर्ण समझौतेकी सम्भावना

निश्चय ही इसकी पूरी सम्भावना है। मैं इसीके लिए प्रयत्न कर रहा हूँ। लेकिन यह बहुत-कुछ अंग्रेजोंके आचरणपर निर्भर है।

अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ५९९३) की फोटो-नकलसे।

सौजन्य : प्रो० जॉर्ज मॉर्गेनस्टन

१. श्री स्टेनकोनोव (१८६७-१९४८), नॉर्वेके भारतीय संस्कृतिशास्त्री, पुरालेखविद और पत्रकार। शान्तिनिकेतनमें (१९२४-२५) एक अतिथि प्राध्यापक। मौन दिवसपर गांधीजीने स्टेनकोनोवके प्रश्नोंके उत्तर लिखकर दिये थे। उपशीर्षक गांधीजीकी लिखावटमें नहीं हैं।

२. स्टेनकोनोव द्वारा सूचित।

११९. तार : आनन्दानन्दको

२ मार्च, १९२५

स्वामी
'नवजीवन'
अहमदाबाद

दससे ज्यादा स्तम्भोंकी सामग्री डाकसे रवाना। दो अंक मंगलको पहुँचेंगे। मैं बुधवारको पहुँच रहा हूँ। उसी दिन बम्बईके लिए रवाना होना जरूरी। वल्लभभाई और आश्रमको सूचित करें।

बापू

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१२०. तार : जयशंकर वाघजीको

दिल्ली
२ मार्च, १९२५

जयशंकर वाघजी
जामनगर

बृहस्पतिवारकी सुबह बम्बई पहुँच रहा हूँ। उसी रात वाइकोमके लिए रवाना।

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१२१. तार : वरदराजुलु नायडूको

[२ मार्च, १९२५]

डा० वरदराजुलु नायडू[1]

वाइकोम पहुँचनेसे पहले कुछ तय नहीं किया जा सकता। शायद शनिवारको मद्रास पहुँचूंगा। उसी दिन वाइकोमके लिए रवाना होऊँगा।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१. कांग्रेस कार्य समितिके एक सदस्य।

१२२. पत्र : बीरेन्द्रनाथ सेनगुप्तको

२ मार्च, १९२५

प्रिय मित्र,

मैंने इस बीच आपका पत्र बराबर अपने पास रखा है। मौलाना मुहम्मद अलीके वक्तव्यमें[1] आपत्ति करने लायक कोई बात मुझे नही दिखी। क्या एक सात फुट लम्बा आदमी दूसरे पाँच फुट लम्बे आदमीसे अपनेको ऊँचाईमें बडा नही कह सकता, भले ही दूसरा व्यक्ति और सब बातोमें उससे बढ-चढकर हो? क्या मौलाना पूरी ईमानदारीमें ऐसा नही कह सकते कि वे ससारके तथाकथित सबसे बड आदमीसे भी बडे हैं क्योंकि जहाँतक धर्मका सवाल है मौलाना ऐसे धर्मके अनुयायी है जो उनके विचारमें सबसे अच्छा धर्म है? मैं समझता हूँ कि मौलानाने यह फर्क बहुत ही ठीक दिखाया है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

१२३ पत्र : फजल-ए-हुसैनको

दिल्ली
२ मार्च, १९२५

प्यारे मियाँ साहब,

आपने कृपापूर्वक मौलाना मुहम्मद अलीसे हिन्दू-मुसलमान सवालपर अपनी टिप्पणी मुझे दिखा देनेके लिए कहा था। इसलिए उन्होने वह टिप्पणी मेरे पास भेज दी। मैंने उसे बार-बार पढा। मैं पूरी तरह इसके पक्षमें हूँ कि पजाब और

१ मुहम्मद अलीने लिखा था
"इस्लामको माननेवाला होनेके नाते मैं यह माननेके लिए मजबूर हूँ कि इस्लामके उसूल इस्लामके अलावा किसी भी दूसरे मजहब माननेवालोंके उसूलोंसे ऊँचे हैं। इस नजरियेसे एक पस्त और गिरे हुए मुसलमानके मजहबी उसूल भी एक गैर-मुसलमानके मजहबी उसूलोंके मुकाबिले ऊँचा दर्जा पानेके मुस्तहक हैं — भले ही वह गैर-मुसलमान कितना ही पाक और नेकचलन क्यों न हो और चाहे वह खुद महात्मा गाधी ही क्यो न हो।" देखिए खण्ड २३, परिशिष्ट १३।

बगालमे मुसलमानोको उनकी संख्याके अनुपातसे प्रतिनिधित्व मिले। लेकिन आपने पृथक् निर्वाचनके पक्षमे जो दलील दी है, उसे मै समझ नही पाया। लगभग सभी जगह चुनावकी यह प्रणाली असन्तोषजनक सिद्ध होती दिखाई देती है। और यदि एक जातिके लिए पृथक् निर्वाचन मान लिया जाये तो फिर आप अन्य जातियो और अन्ततोगत्वा उपजातियोको भी ऐसे ही निर्वाचनका हक मागनेसे रोक नही सकेंगे। इसका अवश्यम्भावी परिणाम राष्ट्रीयताका विनाश है। मैंने जो सुझाव दिया था, क्या आपने उसपर विचार किया है?

मै आशा करता हूँ कि आपसे मै जब मिला था उसकी अपेक्षा आपकी सेहत अब बेहतर होगी। अच्छा होता कि हम दोनो फिर मिल सकते और जब-तब मिलते रह सकते।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

[पुनश्च]

मै फिलहाल दिल्लीमे हूँ। कल साबरमती जा रहा हूँ और वहांसे मद्रास जाऊँगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य　नारायण देसाई

१२४. पत्र : जफर अली खॉको

२ मार्च, १९२५

आपका पत्र मिला। मेरा खयाल है कि आप नाहक परेशान हो रहे हैं। यदि आप मेरी टिप्पणी दुबारा पढे, तो उसे नुकसानदेह नही पायेगे। मैं आपके पत्रपर 'यग इडिया' के स्तम्भोमे चर्चा कर रहा हूँ क्योकि उसकी विषय-वस्तु सर्वसाधारणके हितकी है।[1] परन्तु मान लीजिये मैंने भूल की, तो क्या हमे एक-दूसरेकी राय बर्दाश्त नही करनी चाहिए, विशेष रूपसे जब कि वह ईमानदारीसे स्थिर की गई हो।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

[अंग्रेजीसे[

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य　नारायण देसाई

१. देखिए "मेरा अपराध", ५-३-१९२५।

१२५. पत्र : सरोजिनी नायडूको

२ मार्च, १९२५

राष्ट्रीय स्कूलोतक को बन्द करनेका यह निर्णय आखिर किसलिए? कालेजोको बन्द करनेकी बात तो मै कुछ समझ सकता हूँ। क्या स्कूलोको भी बन्द करना जरूरी है?

सस्नेह,

[अंग्रेजीसे]

तुम्हारा,
मो० क० गाधी

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

१२६. पत्र: नरोत्तम लालजी जोशीको

२ मार्च, १९२५

मैने आपका पत्र बहुत दिनोसे सभालकर रख छोडा है। फुरसत मिलेगी तो आपका नाम दिये बिना 'नवजीवन'मे उसका सार्वजनिक उपयोग भी करूँगा। यदि ऐसा करूँ तो आप मेरी टीकाको ध्यानसे पढे। आशा है जल्दी ही करूँगा। आप बहुत लोभी है। सब बाते तुरन्त ही जान लेना चाहते है, भविष्यके लिए कुछ नही छोडते और श्रद्धाको भी कोई अवकाश नही देते। रामनाम किसीके धन्धेकी या रोजगारकी जगह नहीं ले सकता, बल्कि वह तो उसकी शुद्धिके निमित्त होता है। आप कुछ भी काम करते हुए रामनाम जप सकते है। इस जपका फल तो श्रद्धालु ही पा सकते है। यदि आपकी श्रद्धा अपने शिक्षकमे नही है तो आप उससे कुछ भी प्राप्त नही कर सकते। यदि जगह हुई तो कुछ समयके लिए ही क्यो न हो आश्रममे प्रवेश मिल जायेगा। यदि आपकी ऐसी इच्छा हो तो व्यवस्थापकको लिखे। आप गाँवमे तो बहुत-सा काम कर सकते है, बशर्ते कि आप वहाँ शान्तचित्त होकर रह सके और शरीर-श्रम कर सके।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।
सौजन्य नारायण देसाई

१२७. वक्तव्य : सर्वदलीय सम्मेलन उप-समितिकी बैठकके स्थगनपर[1]

दिल्ली
२ मार्च, १९२५

हिन्दू-मुसलमान समस्याके सम्बन्धमें सर्व-दलीय सम्मेलनकी उप-समितिकी बैठकके मुल्तवी किये जानेका कारण बतलाते हुए महात्मा गांधी और पण्डित मोतीलाल नेहरूने निम्नलिखित वक्तव्य जारी किया है :

सर्वदलीय सम्मेलनकी समिति द्वारा नियुक्त उप-समितिकी बैठकमें निर्णय किया गया था कि उस व्यवस्थाके साथ कार्यवाही स्थगित की जाये कि उप-समितिके सदस्य जब बहुमतसे माग करे तो फिर बैठक बुलाई जाये। बैठकने हमें यह अधिकार और आदेश दिया था कि आज जैसी स्थिति है हम उसका संक्षिप्त लेखा-जोखा प्रस्तुत करे। बैठकमे बहुत कम सदस्य — ५३ मे से १४ ही — शरीक हुए। हम दोनोंके अलावा मौलाना मुहम्मद अली, मौलाना शौकत अली, स्वामी श्रद्धानन्द, पण्डित जवाहरलाल नेहरू, डा० एस० दत्त, श्री अहमद अली, एम० एल० ए०, सलेमपुरके राजा अहमद अली खाँ, नवाब सर साहबजादा अब्दुल कयूम, श्री मुहम्मद याकूब, श्री ना० म० जोशी और श्री न० चि० केलकर थे। श्री जिन्ना एक दूसरी बैठक (स्वतन्त्र दलकी बैठक)को छोडकर चन्द मिनटोके लिए इस बैठकमे शरीक हुए थे।

सर्वश्री जयकर, श्रीनिवास आयगार और जयरामदासके शरीक होनेकी असमर्थताके कारण लाला लाजपतरायने बैठक आगेके लिए मुल्तवी करनेकी माँग[2] की थी। हम अपनी जिम्मेदारीपर बैठक मुल्तवी नही कर सकते थे। इसलिए हमने लाला लाजपतरायको सूचित कर दिया कि मुल्तवी करनेका प्रश्न बैठकमे पेश किया जाये।[3] बादमें यही हुआ। लेकिन लाला लाजपतराय तथा उनके बताये सज्जनोकी अनुपस्थितिके अलावा यो भी उपस्थिति इतनी कम थी कि कोई निर्णय नही लिया जा सकता था। फिर हमारी रायमे किसी निश्चित निष्कर्षपर पहुँचनेके लिए सामग्री भी नही थी। निकट भविष्यमे किसी निश्चित निष्कर्षपर पहुँचनेकी कोई सम्भावना भी नही है। इसलिए सिवा इसके कि हमने बैठक बुलानेकी माँग करनेका जो उल्लेख किया है वह माँग की जाये तो भले ही बैठक हो, अन्यथा निश्चित अवधिके भीतर सभाकी आम बैठक बुलाये जानेकी आशा हमे दिखाई नही देती। किसी निष्कर्षपर पहुँचनेमे असफल होनेसे जनतामे निराशा फैलनेकी सम्भावना है। फिर भी हम पत्रकारो और

१. पहली मार्चको। गांधीजी इस उप-समितिके अध्यक्ष थे और मोतीलाल नेहरू महामन्त्री।

२. देखिए "तार : लाजपतरायको", २३-२-१९२५ की पाद-टिप्पणी।

३. देखिए "तार : लाजपतरायको", २३-२-१९२५।

अन्य लोगोंको निराश न होनेकी सलाह देंगे। चूंकि उप-समिति किसी निष्कर्षपर नहीं पहुँच सकी है, इसी कारण व्यक्तियों और दलोंको कोई हल निकालनेके अपने प्रयत्न शिथिल नहीं कर देने चाहिए।

डा० बेसेंटकी अध्यक्षतामें उप-समितिने जो स्वराज्य-योजना बनाई है, उसका उल्लेख करना बाकी है। इस उप-समितिके सदस्योंकी ओरसे असहमतिकी आवाजें उठ रही हैं। हमारे पास उनकी विमति-टिप्पणियाँ आ रही हैं। यह देखते हुए कि उपस्थिति बहुत कम थी और हिन्दू-मुसलमान प्रश्नके विषयमें किसी निष्कर्षपर नहीं पहुँचा जा सकता था, इस बैठकमें योजनापर विचार नहीं हो सका।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ४-३-१९२५

१२८. पत्र: दाभोलकर और जेष्टरामकी पेढीको[1]

साबरमती,[2]
३ मार्च, १९२५

महोदय,

मुझे आपका ... का[3] पत्र मिला जिसमें आपके ... के[4] पत्रकी नकल संलग्न है। मुझे अभीतक वह पत्र नहीं मिला। शायद वह मेरे पिछले पतेपर दिल्ली भेज दिया गया हो।

चूंकि न्यायालयमें मामला आगे पहुँच गया है और चूंकि श्री गोदरेजके अपने मुख्तार हैं, इसलिए मैं प्रस्तुत विषयपर कुछ नहीं कहना चाहता। आपके मुताबिक अगर श्री गोदरेज द्वारा निर्वाचित व्यक्तिके साथमें प्रसन्नतापूर्वक पंच बननेके लिए मैं तैयार हूँ। बात केवल यह है कि उस दिशामें मेरी काम करनेकी क्षमता सीमित है। इसलिए मेरे साथी पंचको मेहरबानी करके मेरे अन्य कार्योंका भी खयाल रखना होगा। मैं आपका पत्र श्री गोदरेजको भेज रहा हूँ ताकि वे जैसा चाहें कदम उठा सकें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० १०५२७ आर०) से।

१ इस पत्रका मसविदा मेसर्स दाभोलकर और जेष्टराम (मुख्तारोंकी एक फर्म) से प्राप्त २ मार्च, १९२५ के पत्रकी पीठपर तैयार किया गया था।

२ किन्तु २-३-१९२५ को दिल्लीसे लिखे हुए पत्रमें गांधीजीने लिखा था: "मैं कल साबरमती जा रहा हूँ।" देखिए "पत्र: फजल-ए-हुसैनको", २-३-१९२५

३ व ४ साधन-सूत्रके अनुसार।

१२९. तार : च० राजगोपालाचारीको

[४ मार्च, १९२५को या उसके पश्चात्][1]

शनिवारको सुबह मद्रास पहुँचकर उसी दिन वाइकोम रवाना हो जाऊँगा। अवश्य साथ चलें।

अंग्रेजी प्रति (एस० एन० १०६३३) की फोटो-नकल से।

१३०. टिप्पणियाँ—१

हिन्दू-मुस्लिम समस्या

पाठकोको समाचारपत्रोंमें प्रकाशित वक्तव्यसे विदित हो जायेगा कि सर्वदलीय सम्मेलनकी उप-समिति उक्त जबरदस्त समस्याके बारेमें कोई भी निर्णय नही कर पाई है। परन्तु शायद यह ठीक ही हुआ कि उसने कोई निर्णय नही किया। इसके उचित समाधानके लिए उपयुक्त वातावरणका अभी तो अभाव ही है। दोनो पक्षोमे परस्पर अविश्वास है। ऐसी परिस्थितिमे काम करनेका कोई सर्व-सामान्य आधार नही मिल सकता। यथासम्भव कोई भी कुछ छोडना नही चाहता, और न दोनोमे से कोई पक्ष समाधानके लिए सचमुच चिन्तित ही दिखाई पडता है। फिर भी निराश हो बैठनेका कोई कारण नही है। दूसरोकी नीयतपर भरोसा रखनेवाले, बिलकुल निर्भय किस्मके लोग यदि अपने विश्वासपर अडिग रहकर कोई समाधान निकालनेकी कोशिश करे तो वर्तमान असफलता ही हमारी भावी सफलताकी सीढी बन जा सकती है। समाधान कोई भी हो, वह राष्ट्रीय तभी बन सकेगा जब वह सरकारपर बिलकुल ही निर्भर न हो, अर्थात् जब उसके अन्दर अपने ही पैरो चलने और आगे बढनेकी क्षमता होगी और जब वह अमलमें आनेके लिए सरकारकी सद्भावनाका मुखापेक्षी नही रहेगा।

असहायता

मुझे एक काफी लम्बा-चौडा तार मिला है। उसमे बतलाया गया है कि २२ तारीखकी रातको दस बजे सक्खर नगरके ऐन बीचोबीच एक पुलिस थानेके पास ही एक बडी दु साहसपूर्ण डकैती हुई है। तारमें यह भी कहा गया है कि डाकू अभी तक पकडे नही गये हैं और साहूकार लोग अपने-आपको बडा असुरक्षित महसूस कर रहे हैं। तारका उद्देश्य तो स्पष्ट ही जनताकी सहानुभूति प्राप्त करना और ससारके

१. यह च० राजगोपालाचारी द्वारा देवदास गाधीको ४ मार्च, १९२५ को भेजे गये निम्न तारके उत्तरमें था : "बापूके साथ जानेकी कोशिश करना, उनके मद्रास पहुँचनेकी तारीख तुरन्त सूचित करना।"

इन सबसे अधिक व्यय-साध्य प्रशासनकी इस असफलताको जनताके सामने लाना है कि वह लोगोंके जान-मालकी रक्षा करनेका अपना मामूली-सा कर्त्तव्य भी पूरा नही कर पाया। जहांतक सहानुभूतिका सम्बन्ध है जनताकी पूरी सहानुभूति सक्खरके नागरिकोंके साथ है। सरकारकी आलोचना भी जितनी चाहे की जा सकती है। परन्तु अधिक बड़ा प्रश्न तो यह है कि डकैतोंके हमलेके वक्त साहूकार क्या कर रहे थे। सुननेमें तो यह आता है कि उन्होंने पर्याप्त सफलताके साथ आत्म-रक्षाका प्रयास किया था। परन्तु पैसेवालोंके पास आत्म-रक्षाकी शक्ति आखिरकार बहुत नही होती। इस डकैतियोंके [illegible] ऐसी असहाय पुकार सुनकर मैं तो सरकारकी असमर्थताकी अपेक्षा लुटे हुए लोगोंकी कमजोरीकी बात ही अधिक सोचता हूँ। कानून आत्म-रक्षाका अधिकार देता है। मानवीय गरिमाका भी यही तकाजा है कि आत्म-रक्षाका साहस हमारे अन्दर होना चाहिए। यदि सभी लोग हर जगह अपनी सम्पत्ति और अपने सम्मानकी रक्षाके लिए सरकारका मुंह ताकना छोडकर अपने पैरोंपर खडे होना सीख लें तो यह स्वराज्यकी एक अच्छी तालीम होगी।

सिलहटकी पुकार

सिलहट जिलेमें दौरा करनेके लिए निमन्त्रण देते हुए उसके समर्थनमें नीचे लिखी मार्मिक अपील की गई है

> यद्यपि हमारी आजकी हालतको देखते हुए आपको तकलीफ देना ठीक नहीं मालूम होता, लेकिन हमारा पिछला इतिहास तो आपकी सहानुभूति प्राप्त किये बिना नहीं रह सकता। हमारी कुछ अजीब स्थिति है। राजनीतिक दृष्टिसे तो हम लोग असम सरकारकी हुकूमतमें हैं लेकिन भाषामें, सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक, सभी बातोंमें हमारा बंगालसे ही घनिष्ठ और अभिन्न सम्बन्ध है। हमारी जिला-कमेटी बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके मातहत है।
>
> जब असहयोग जोरोंपर था उन दिनों पंजाबके बाद असम प्रान्तको ही, जिसमें हमारा जिला भी शामिल है, नौकरशाहीके क्रोधका सबसे बडा शिकार बनना पडा था।
>
> हिन्दुस्तानके दूसरे हिस्सोंमें यह जिला चाय बागानके मजदूरोंके बडी संख्यामें बाहर चले जाने, मेज भागमें 'कुरान' के फाडे जाने और अन्तमें कानाईघाटकी दुर्घटनाके कारण मशहूर हुआ।
>
> 'कानून और व्यवस्था' के नामपर इस जिलेके करीब २६ लाख निवासियोंसे करीब २ लाख रुपयेसे भी अधिक महसूल जुर्मानेके तौरपर वसूल किया गया था।
>
> लगभग २०० राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओंको जेलमें डाल दिया गया था।
>
> इस निष्ठुर दमनसे कांग्रेसके कार्यको बडी हानि पहुँची है। बहुतसे लोग तो अपने काम-धन्धोंको सँभालनेके लिए वापिस चले गये और इसीलिए आज हमें कार्यकर्त्ताओंकी संख्यामें बडी कमी दिखाई देती है।

दस राष्ट्रीय शालाओंमें से आज सिर्फ एक ही शाला मुश्किलसे चल रही है। करीब २०,००० करघे चल रहे हैं, लेकिन चन्द करघोंको छोड कर सब विदेशी सूतका इस्तेमाल कर रहे हैं। हमारे जिलेसे साल-दर-साल विदेशी धनपतियोंके द्वारा काफी मात्रामें कपास बाहर भेज दिया जाता है।

सिलहटका पिछला इतिहास निस्सन्देह बडा शानदार रहा है। लेकिन कोई भी राष्ट्र सिर्फ अपने भूतकालपर ही जिन्दा नहीं रह सकता। गौरवशाली इतिहास वर्तमान-कालको प्रेरणा दे सकता है, उसे प्रेरणा देनी ही चाहिए, लेकिन भविष्यका निर्णय तो हमारे वर्तमान कार्यसे ही होगा। इसलिए सिलहट जिलेके लोगोंको जागना चाहिए और जहाँतक उनके जिलेका ताल्लुक है उन्हें रचनात्मक कार्यक्रमको सफल वनाना चाहिए। यह विचार वडा ही दुःखद है कि जेलकी सजाओंने देशभरमें लोगोंको निष्क्रिय वना दिया है। यदि हम कष्ट-सहनका रहस्य समझे होते, तो उससे हमारे अन्दर एक नया जोश आना चाहिए था, वजाय इसके कि हम निस्तेज पड जाते जैसा कि आम तौरपर हुआ है। उनके जिलेसे जो कपास वाहर जाता है उसे रोकना और अपने ही जिलेके कते हुए सूतसे कपडा वुननेके लिए जुलाहोंको राजी करना, यह सिलहटके लोगोंकी ताकतके वाहर नहीं होना चाहिए। तभी वे मुझे अपने जिलेके दौरेके लिए कहनेके हकदार होंगे, उससे पहले नहीं।

दुर्भाग्यपूर्ण प्रतिवन्ध

दक्षिण आफ्रिकी विधानमें रंग-भेद सम्वन्धी प्रतिवन्धका क्षेत्र और अधिक विस्तारित करनेके प्रस्तावके वारेमें आखिरकार जनरल स्मट्सने[1] अपने विचार व्यक्त कर ही दिये। पाठकोंको कुछ समय पहलेके उस तारका स्मरण होगा जिसमें कहा गया था कि संघ सरकार खानोंमें काम करनेवाले एशियाइयोंपर प्रतिवन्ध लगानेकी वात सोच रही है। समाचार है कि उस प्रस्तावित विधानके सम्वन्धमें उसके विरुद्ध वोलते हुए जनरल स्मट्सके वक्तव्यका विवरण इस प्रकार है

> संघ विधानसभामें रंग-भेद विधेयकका विरोध करते हुए जनरल स्मट्सने स्पष्ट कहा कि विधेयक सरकारको यह शक्ति प्रदान करना चाहता है कि वह खानों और निर्माण-कार्योंमें कानूनके जरिये गोरों और वतनियों तथा एशियाई रंगदार लोगोंके लिए अलग-अलग काम निश्चित कर सके। उन्होंने कहा कि यह एक वड़ी गम्भीर चीज है। उनकी समझमें विधेयकके पीछे ईमानदारी नहीं है। वे निश्चित रूपसे यह मानते हैं कि गोरे लोगोंकी सभ्यताकी सुरक्षाकी केवल एक ही गारंटी हो सकती है और वह यह है कि इस देशमें रहनेवाले प्रत्येक मनुष्यके साथ ईमानदारीसे न्यायपूर्ण वर्ताव किया जाये। (हर्षध्वनि) एशियाइयोंपर पडनेवाले विधेयकके प्रभावके वारेमें उन्होंने कहा श्री गांधीसे

१. जे० सी० स्मट्स (१८७०-१९५०), दक्षिण आफ्रिकी राजनीतिज्ञ, प्रधान मन्त्री (१९१९-१९२४ और १९३९-१९४८)।

चलनेवाली वार्ताके दौरान श्री गाधीका यही अनुरोध था कि भारतीयोको बे-इज्जत न किया जाये और श्री गाधीने बादमें लन्दनमें हुए सम्मेलनोमें अपने इसी अनुरोधको बार-बार दोहराया है। श्री गाधीने कहा था, "हम मानते है कि हमारे और आपके बीच एक अन्तर है और दोनोके बीच विभेद किया जाना चाहिए, परन्तु अपने देशके कानूनमें हमारे ऊपर कोई कलक मत थोपिये।" —लेकिन इस विधेयकके जरिए सरकार ठीक वही कर रही है जो उससे न करनेको कहा गया था। सरकार एकसे दूसरे छोरतक, समूचे एशिया महाद्वीपकी घृणा मोल लेने जा रही है। उन्होने अन्तमें कहा कि सरकारको इस प्रश्नपर गम्भीरतासे विचार करना चाहिए कि क्या उसे विधेयकके दूसरे वाचनको सरकारी कार्य-सूचीसे निकाल नहीं देना चाहिए और क्या इस कठिनाईसे बाहर निकलनेका कोई दूसरा रास्ता नहीं हो सकता।

मेरे साथ जनरल स्मट्सकी जो बातचीत हुई थी उसका ठीक-ठीक सार उन्होने दे दिया है। मेरा मुद्दा यह था कि जबतक मानव-स्वभाव बदलता नही है, आज जैसा है वैसा ही बना रहता है, और जबतक यूरोपीय और भारतीय सस्कृतियोमें टकराव बना रहता है तबतक कुछ प्रशासकीय भेदभाव तो रहेगा ही, पर उस भेदभावको कानूनी तौरपर मान्यता देना, देशके कानूनमें रग-भेदके दुर्भाग्यपूर्ण प्रतिबन्धोको शामिल कर देना एक असहनीय बोझ बन जायेगा। १९१४ का समझौता भारतीयोके इसी दृष्टिकोणकी जीत थी। जनरल स्मट्सके विरोधके बाद हम आशा करते है कि अब विधेयकको आगे नही बढाया जायेगा। लेकिन हमें अपने आपको धोखेमें नही रखना चाहिए। हालमें पारित नेटाल मताधिकार-वचक विधेयक (नेटाल डिसफ्रैंचाइजिंग बिल) इसी 'दुर्भाग्यपूर्ण प्रतिबन्ध'के क्षेत्रको विस्तार देता है। इसलिए जनरल स्मट्सके विरोधका अर्थ केवल इतना ही है कि आजीविकाके मामलेमें भी इस प्रतिबन्धको लागू न किया जाये। उनका विरोध प्रतिबन्ध-मात्रके विरुद्ध नही है। फिर भी मैं जनरल स्मट्सको बधाई देता हूँ कि उन्होने देशमे अपनी राजनीतिक साख कमजोर होनेकी परवाह न करते हुए, इस तरहकी स्पष्टवादिता दिखाई। यह दूसरी बात है कि हमें तबतक सन्तोष नही होगा जबतक कि दक्षिण आफ्रिकाकी विधि-पुस्तिकासे, सभी विधियोमें से गोरो और एशियाइयो या अधिक उपयुक्त शब्दोमें कहिए तो गोरे और रगदार लोगोके बीच किये जानेवाले कानूनी भेदभावको बिलकुल ही निकाल नही दिया जाता।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-३-१९२५

१३१. कांग्रेस और ईश्वर

एक मित्र लिखते है[1]

जहाँतक अन्त करणके उज्रसे सम्बन्ध है यदि जरूरत हुई तो कांग्रेसके प्रतिज्ञा-पत्रमे से, जिसे कि तैयार करनेका मुझे अभिमान है, ईश्वरका नाम निकाल दिया जा सकता है। यदि यह उज्र उसी समय पेश किया गया होता तो मै फौरन स्वीकार कर लेता। हिन्दुस्तान-जैसे देशमे ऐसे उज्रकी मैने आशा नही की थी। यद्यपि शास्त्रोमें चार्वाक मत भी मान लिया गया है तथापि मै यह नही जानता कि उसके माननेवाले लोग है भी या नही। मै यह नही मानता कि बौद्ध और जैन लोग अज्ञेय-वादी या नास्तिक है। वे लोग तो अज्ञेयवादी हो ही नही सकते। जो लोग आत्माको शरीरसे भिन्न मानते है और शरीरके नष्ट हो जानेपर भी उसकी स्वतन्त्र हस्ती रहना स्वीकार करते है, वे नास्तिक नही कहे जा सकते। हम सब ईश्वरकी जुदी-जुदी व्याख्याये करते है। हम सब यदि ईश्वरकी व्याख्याये अपनी मर्जीके मुताबिक करे तो उसकी उतनी ही व्याख्याये होगी जितने कि स्त्री या पुरुष होगे। लेकिन इन जुदी-जुदी व्याख्याओके मूलमे भी एक किस्मका अभ्रान्त सादृश्य होगा, क्योकि मूल तो सबका एक ही हे। ईश्वर तो यह अनिर्वचनीय (ला-कलाम) वस्तु है कि जिसका हम सब अनुभव तो करते है लेकिन जिसे हम जानते नही है। बेशक चार्ल्स ब्रेडलॉने[2] अपनेको नास्तिक कहा है, लेकिन बहुतेरे ईसाइयोने उन्हे ऐसा नही माना है। मुँहसे अपनेको ईसाई कहनेवाले बहुतसे लोगोके मुकाबलेमे मैने ब्रेडलॉसे अपनेको अधिक निकट महसूस किया हे। भारतवर्षके उस नेक दोस्तकी अन्त्येष्टि क्रियाके समय मौजूद रहनेका मुझे भी सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उस समय मैने बहुतसे पादरियोको वहाँ देखा। उनके जनाजेके साथ कुछ मुसलमान और बहुतेरे हिन्दू भी थे। वे सब ईश्वरको माननेवाले थे। ब्रेडलॉने ईश्वरके उस स्वरूपके अस्तित्वसे इनकार किया था जिसे उन्होने धर्मशास्त्रोमे पढा था। उस समय जो शास्त्रीय विचार प्रचलित थे उसके तथा आचार और विचारके भयकर भेदके खिलाफ उनका पाण्डित्यपूर्ण और तीव्र विरोध था। मेरा ईश्वर तो मेरा सत्य और प्रेम हे। नीति और सदाचार ईश्वर है। निर्भ-यता ईश्वर है। ईश्वर जीवन और प्रकाशका मूल है, और फिर भी वह इन सबसे परे है। ईश्वर अन्तरात्मा ही है। वह तो नास्तिकोकी नास्तिकता भी है। क्योकि वह अपने अमर्यादित प्रेमसे उन्हे भी जिन्दा रहने देता है। वह हृदयको देखनेवाला

१ उद्धृत नहीं किया गया है। पत्रमें लेखकने कांग्रेसके प्रतिज्ञापत्रसे 'ईश्वर' शब्दको हटानेका सुझाव दिया था।

२ (१८३३-१८९१) अंग्रेज चिन्तक और राजनीतिज्ञ।

है। वह बुद्धि और वाणीसे परे है। हम स्वय जितना अपनेको जानते है, उससे कही अधिक वह हमे और हमारे दिलोको जानता हे। जैसा हम कहते है, वैसा ही वह हमे नही मानता। क्योकि वह जानता हे कि जो हम जवानसे कहते है अक्सर वही हमारा भाव नही होता, और कुछ लोग ऐसा जान-बूझकर करते है तो कुछ अनजाने ही। ईश्वर उन लोगोके लिए एक व्यक्ति ही है जो उसे व्यक्ति-रूपमे हाजिर देखना चाहते है। जो उसका स्पर्श करना चाहते है, उनके लिए वह साकार है। वह पवित्रसे पवित्र तत्त्व है। जिन्हे उसमे श्रद्धा है उन्हीके लिए उसका अस्तित्व है। विभिन्न लोगोके लिए उसके विभिन्न रूप है। वह हममे व्याप्त हे और फिर भी हमसे परे है। "ईश्वर" शव्द काग्रेससे निकाल दिया जा सकता है, लेकिन खुद ईश्वरको तो कोई कहीसे नही निकाल सकता। ईश्वरके नामपर की गई प्रतिज्ञा और केवल प्रतिज्ञा यदि एक वस्तु नही है तो फिर प्रतिज्ञा होगी क्या चीज? अन्तरात्मा तो निश्चय ही ईश्वर शव्दका एक वडा ही अपर्याप्त और जवरदस्ती वनाया हुआ पर्याय है। उसके नामपर भयकर अनीतियुक्त काम किये गये है और अमानुप अत्याचार भी हुए है, लेकिन इससे उसका अस्तित्व नही मिट सकता। वह वडा सहनशील है, वह वडा धैर्यवान् है, लेकिन वह रुद्र भी है। उसका व्यक्तित्व इस दुनियामे और भविष्य-की दुनियामे भी सवसे अधिक काम करानेवाली ताकत है। जैसा हम अपने पडोसी —मनुष्य और पशु—दोनोके साथ वरताव करते है वैसा ही वरताव वह हमारे साथ भी करता है। उसके सामने अज्ञानकी दलील नही चल सकती। लेकिन यह सव होनेपर भी वह वडा रहमदिल है, क्योकि वह हमे पश्चात्ताप करनेके लिए मौका देता है। दुनियामे सवसे वडा प्रजातन्त्रवादी वही है, क्योकि वह वुरे-भलेको पसन्द करनेके लिए हमे स्वतन्त्र छोड देता हे। वह सवसे वडा जालिम है, क्योकि वह अक्सर हमारे मुँह तक आये हुए कौरको छीन लेता है और इच्छा-स्वातन्त्र्यकी ओटमे छूट लेनेकी वहुत ही कम गुजाइश देता है और हमारी लाचारीपर हँसता है। यह सव हिन्दू धर्मके अनुसार उसकी लीला है, उसकी माया है। हम कुछ नही है सिर्फ वही है और अगर हम हो तो हमे सदा उसके गुणोका गान करना चाहिए और उसकी इच्छाके अनुसार चलना चाहिए। आइए, उसकी वसीकी धुनपर हम नाचें। सव अच्छा ही होगा।

लेखकने मेरी एक पुस्तिका 'नीतिधर्म' का भी जिक्र किया हे। सो पाठकोका ध्यान इस वातकी ओर खीचना जरूरी है कि लेखकने जिसका उल्लेख किया है वह अग्रेजी पुस्तक है। मूल पुस्तक गुजरातीमे लिखी गई है। और गुजराती पुस्तिकाकी भूमिकामे यह वात साफ तौरपर कही गई है कि यह मौलिक पुस्तक नही है। वल्कि अमरीकामे प्रकाशित 'नैतिक-धर्म' नामक एक पुस्तकके आधारपर लिखी गई है। यह अनुवाद यरवदा जेलमे मेरी नजरोसे गुजरा और मुझे यह देखकर अफसोस हुआ कि उसमे मूल पुस्तकका कही उल्लेख नही हे। मुझे मालूम हुआ है कि खुद अनुवादकने भी गुजराती नही वल्कि उसके हिन्दी अनुवादका अनुवाद किया है। इस तरह उसके अग्रेजी अनुवादको एक 'द्राविडी प्राणायाम' ही समझिए। उस मूल

अमरीकी पुस्तकके[1] प्रति यह खुलासा देना मेरा कर्तव्य था। और खुशीकी बात है कि पत्र-लेखकने मुझे इसकी याद दिलाकर उनके ऋणको अदा करनेका अवसर दिया।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-३-१९२५

१३२. मेरा अपराध

मौ० जफर अलीखाँने पंजाब खिलाफत समितिके सभापतिकी हैसियतसे एक पत्र मुझे भेजा है। मैं उसे यहाँ खुशीके साथ दे रहा हूँ

> इसी ता० २६ के 'यंग इंडिया' में काबुलकी संगसारीके विषयमें आपके प्रकाशित वक्तव्यको पढ़कर मुझे बड़ा दुःख और आश्चर्य हुआ। आप फरमाते हैं कि 'कुरान' में इसका उल्लेख होने मात्रसे इस विशेष दण्डका समर्थन नहीं किया जा सकता।' आपने यह भी कहा कि 'प्रत्येक धर्मके प्रत्येक नियमको विवेकके इस युगमें पहले विवेक और व्यापक न्यायकी अचूक कसौटीपर कसना होगा तभी उसपर संसारकी स्वीकृति माँगी जा सकती है।' अन्तमें आप कहते हैं कि 'किसी भूलका समर्थन संसारके समस्त धर्मग्रन्थोंमें भी किया गया हो तो भी वह इस नियमसे मुक्त नहीं हो सकती।'
>
> मैंने हमेशा आपकी महत्ताके आगे सर झुकाया है और आपको बराबर ही उन थोड़े-से आदमियोंमें गिनता आ रहा हूँ जो आधुनिक इतिहासका निर्माण कर रहे हैं; पर अगर मैं यह बात आपपर रोशन न करूँ कि आपने यह कहकर कि 'कुरान' को यह अधिकार नहीं है कि वह अपने अनुयायियोंके जीवनको अपने ही ढंगसे नियन्त्रित करे, अपने लाखों मुसलमान प्रशंसकोंके दिलमें यह भावना पैदा कर दी है कि आप उनकी रहनुमाई करने लायक नहीं हैं, तो मैं एक मुसलमानकी हैसियतसे अपने कर्त्तव्यसे च्युत हो जाऊँगा।
>
> आपको इस बातपर अपनी राय जाहिर करनेकी छूट तो पूरी-पूरी है कि धर्मसे च्युत लोगोंको शरीयत संगसारीकी सजा देती है या नहीं। परन्तु यह मानना कि यदि 'कुरान' भी ऐसी सजाकी ताईद करती हो तो वह गलती है और इस रूपमें मलामतके काबिल है, इस किस्मकी विचारसरणी है जो मुसलमानोंको जँच ही नहीं सकती।
>
> गलती आखिरकार एक सापेक्ष चीज है और मुसलमानोंके यहाँ उसका अपना अलग अर्थ है। उनके नजदीक 'कुरान' एक अटल कानून है जो क्षुद्र मानवजातिकी सदा परिवर्तनशील व्यवहार नीति और समय-नीतिकी सीमासे

१. विलियम मैकिंटायर साल्टर लिखित पुस्तक 'एथिकल रिलिजन'।

परे है। अच्छा होता यदि भारतके नेताकी हैसियतसे आपने जो अनेक काम किये हैं उनमें 'कुरान' शरीफकी शिक्षाओंकी प्रतिकूल आलोचना करनेका नाजुक काम आपने न किया होता।

मौलाना साहबने मेरी उस टिप्पणीपर जो अर्थ घटाया है वह उसपर घटता नही है। मैंने 'कुरान' शरीफके उपदेशोंकी प्रतिकूल (या अन्य किसी ढगकी) आलोचना नही की है। मैंने उपदेशकोंकी अर्थात् उसके भाष्यकारोंकी आलोचना जरूर की है। और यह जानते हुए की है कि वे इस सजाका समर्थन किये विना नही रहेंगे। मुझे भी 'कुरान' और इस्लामकी तवारीखका इतना इल्म जरूर है कि मै यह कह सकता हूँ कि 'कुरान' के ऐसे कितने ही भाष्यकार हुए है जिन्होने अपने पूर्व कल्पित विचारोंके अनुकूल उसका अर्थ लगाया है। इसमे मेरा उद्देश्य ऐसे किसी अर्थको माननेके विपयमे चेतावनी दे देनेका था। लेकिन मै यह भी कहना चाहता हूँ कि खुद 'कुरान'की शिक्षाएँ भी आलोचनासे मुक्त नही रह सकती। आलोचनासे तो हरएक सच्चे धर्म-ग्रन्थको लाभ ही होता है। आखिर अपने तर्क-वलके अतिरिक्त हमारे पास यह वतानेवाली और कोई चीज नही है जो हमे वताये कि क्या अपौरुपेय (इल्हामी) है और क्या नही। शुरूमे जिन मुसलमानोंने इस्लामको अख्तियार किया उन्होंने उसे इसलिए अख्तियार नही किया कि वे इसे इल्हामी मानते थे वल्कि इसलिए कि वह उनकी सीधी-सादी समझमे वैठ गया था। मौलाना साहवका यह कहना विलकुल ठीक है कि भूल एक सापेक्ष शब्द है। लेकिन हकीकतमे देखा जाये तो कुछ वाते तो ऐसी है ही जिन्हे सारा ससार गलत मानता है। मेरे खयालसे यन्त्रणा देकर प्राण लेना ऐसी ही गलत चीज है। मौलाना साहव द्वारा उल्लिखित मेरी तीन वातोंमे मैंने सिर्फ अर्थ लगानेकी तीन विधियोंका जिक्र किया है और उसके खिलाफ कोई उँगली नही उठा सकता। हर हालतमे मै तो उन्हींका पावन्द हूँ। और अगर मुझे इस वातको जाहिर करनेकी पूरी आजादी है कि इस्लामकी शरीयतके मुताविक धर्मपतित लोग सगसारीकी सजाके पात्र है या नही, तव मै इस वातपर भी क्यो न अपनी राय जाहिर करूँ कि शरीयतके अनुसार सगसारीकी सजा दी भी जा सकती है या नही। मौलाना साहवने इस्लाम सम्वन्धी गैर-मुस्लिमकी आलोचनाको वरदाश्त न करनेकी वृत्ति जाहिर की है। मै उन्हे सूचित करता हूँ कि प्राणप्रिय वस्तुओकी भी आलोचनाको वरदाश्त न करना सार्वजनिक और सामुदायिक जीवनके विकासके लिए हितकर नही है। यदि आलोचना वेजा भी हो तो उससे निश्चय ही इस्लामको डरनेकी आवश्यकता नही है। इसलिए मै मौलाना साहवसे कहूँगा कि कावुलकी इस दुर्घटनामे जो जवर्दस्त प्रश्न जुडे हुए है उनपर मेरी आलोचनाके प्रकाशमे विशद दृष्टिसे चिन्तन करना उचित होगा।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, ५-३-१९२५

१३३. टिप्पणियाँ – २

मरुस्थलमें हरियाली

खद्दरके सम्बन्धमे बम्बईके खिलाफ जिस समय शिकायतें आ रही है उस समय यदि यह मालूम हो कि स्त्रियोका एक मण्डल वहाँ चुपचाप खादीका अच्छा प्रचार कर रहा है तो यह एक खुशीकी बात मानी जायेगी। मेरे सामने एक पत्र पड़ा है। उसमे लिखा है

> इस महीनेमें २,०००) से ज्यादा की खादीको वनियान श्रमिक-निकाय और स्कूलोंमें बेची जा चुकी है और कुछ भावनगरमें भी भेजी गई है। इसमें रोजाना मामूली बिक्रीके दाम और जोड़ दीजिए। सेवासदनमें[1] एक नया वर्ग इस शर्तपर खोला जा रहा है कि उसमें वे ही बच्चे दाखिल किये जायेंगे जो रोज थोडा-बहुत कातनेके लिए तैयार है। कातना भली-भाँति सीख लेनेके बाद उन्हे माहवार २,००० गज सूत देना होगा। इसका असर मौजूदा वर्गोपर भी पड़ा है। कुछ वर्गोकी लडकियाँ कातना शुरु करनेवाली है।

एक-दूसरे मित्र ठीक कहते है कि यह नही कि लोगोमे सहानुभूति नही है। उसका अभाव तो नेताओ और कार्यकर्त्ताओमे ही है। वे इसके सन्देशके प्रचारके लिए कुछ भी नही कर रहे है। अभी खादीका चाव लोगोमें इतना नही बढा है कि वे समय निकालकर स्वय खादी खरीदने जाये। लेकिन यदि उनके दरवाजोपर कोई खादी लेकर जाये तो वे उसे खुशीसे खरीद लेगे। फसल तो शानदार खडी है, काटनेवाले नही मिलते। हरएक कार्यकर्त्ता यह निश्चय क्यो न कर ले कि वह हर महीनेमे एक निश्चित परिमाणमे खादी बेचेगा। मै यह जानता हूँ कि खादी बनानेमे हमने काफी प्रगति कर ली है और शौकीन लोगोकी रुचिके अनुरूप खादी भी तैयार होने लगी है। मुझे एक रोजएक धनी दुल्हनका जामा दिखाया गया। वह सारा-का-सारा खादीका बना हुआ था और उसमे सोने चाँदीकी जरीका काम किया गया था। श्रीमन्तोकी दृष्टिसे भी उसमे कोई कसर नही थी। अब जैसी चाहे वैसी खादीकी साडियाँ बन सकती है। पाणिग्रहणके समय ओढनेके लिए आवश्यक रगीन दुशाला भी खादीका ही बनाया गया था। इसलिए अब कोई यह बहाना नही बना सकता कि जैसी चाहिए वैसी बारीक और रगीन खादी नही मिलती है इसीलिए हम खादी नही पहनते। क्या हिन्दुस्तानके सभी कार्यकर्त्ता, जिन बहनोके कार्यके प्रति मैंने उनका ध्यान दिलाया है, उनके कार्यपर गौर करेगे और उनका अनुकरण करेगे?

फरीदपुर सम्मेलन

मेरे पास तारपर-तार आ रहे है कि मै बगाल प्रान्तीय सम्मेलनमे उपस्थित होऊँ। पर अत्यन्त खेद है कि मैं उसमे शरीक नही हो पाऊँगा। मेरी भी वहाँ

१ सारस्वत भवन, देखिए "एक भूल सुधार", २६-३-१९२५।

जानेकी वडी इच्छा थी, परन्तु जा नही पा रहा हूँ और इसका मुझे वडा खेद है। मैंने फरीदपुरके मित्रोको सूचित भी कर दिया है कि मेरी उपस्थिति निश्चित न माने। मैंने उनसे कह दिया है कि आजकल मेरा आना-जाना अनिश्चित रहता है। मेरी स्थिति दयनीय है। विहार, वर्धा, उडीसा, आन्ध्र तथा कितनी ही दूसरी जगहोसे मुझे निमन्त्रण है। मै सभी जगह जाना पसन्द करूँगा। पर मै सव जगह एक साथ नही जा सकता। इसीलिए मुझे यह निर्णय करना होगा कि कहाँ पहुँचकर मै ज्यादासे-ज्यादा सेवा कर सकूँगा। मै महसूस करता हूँ कि अभी फिलहाल मेरा स्थान वाइकोमके वीर सत्याग्रहियोके बीच ही है। यह वडा पुराना वादा है। वे छोटीसे-छोटी वातमे सत्याग्रह-सिद्धान्तका पालन करना चाहते है। उनकी तादाद थोडी है। वे वडी विपरीत परिस्थितिमे भी लडाई जारी रखे हुए है। अवतक मैंने उन्हे वाहरसे आर्थिक तथा अन्य प्रकारकी सहायता नही लेने दी है। अव उनके प्रति मेरा यह कर्त्तव्य हे कि मै सत्याग्रहके एक विशेषज्ञके नाते वहाँ जाऊँ, उनका निर्देशन करूँ और उनके सामने जो दिक्कतें पेश है उनसे निपटनेमे उनकी हिम्मत वढाऊँ। वहाँ जानेकी वात वहुत दिनोसे टलती ही जा रही थी। आशा है, दूसरे प्रान्तोके सज्जन इसपर आपत्ति नही करेगे।

एक वात और। मै समझता हूँ कि मेरे वाइकोम जानेमे सत्याग्रहियोको कुछ सहायता मिलेगी, लेकिन अन्य प्रान्तोमें उसका प्रदर्शनके सिवा और कोई उपयोग नही है। उन्हे तो मैं एक सीधी वात वताता हूँ। अपने-अपने स्थानीय झगडोको निवटा लीजिए — वे चाहे हिन्दू-मुसलमानोमें हो, चाहे व्राह्मणो-अव्राह्मणोमे हो। जितना आपसे हो सके उतना चरखा कातिए, सदा खादी पहनिए और आप काग्रेसके लिए सूत कातनेवाले जितने सदस्य वना सकते हो, वनाइए। इसके साथ ही ऐसे सदस्य भी वनाइए जो खुद भले ही न काते फिर भी हर माह २,००० गज सूत दूसरेसे कतवा कर दे। अपने जिले या प्रान्तके दलित-पीडित भाइयोकी जिस तरह हो सके मदद कीजिए। अपने मुकामको शराव और अफीमकी कुटेवसे मुक्त कीजिए। इतना हो चुकनेपर काम वढानेकी दृष्टिसे मुझे वुलाइए। अगर हम यह चाहते हो कि आगामी वर्षके प्रारम्भ तक आशाका अरुणोदय हो जाये तो हमे चाहिए कि इस शान्तिके वर्षमे हम अपनी तमाम शक्ति राष्ट्रके इस रचनात्मक कार्यक्रमको पूरा करनेमे लगावें। सरकार क्या करती है, इसकी परवाह किये विना वगाल अध्यादेशके रहते हुए भी हमे अपना काम जारी रखना चाहिए। यदि हम चाहते हो कि यह अध्यादेश रद हो जाये तो उसके लिए हमे काफी शक्ति उत्पन्न करनी चाहिये। मेरी दृष्टिमे उसका एक ही उपाय है, और वह है अपनी पूरी शक्तिके साथ रचनात्मक कार्यक्रममे लग जाना।

पुनर्विचारके योग्य

वम्वई नगर-निगम द्वारा वनवाई गई चालोमे रहनेवाले कुछ दलित वर्गके लोग वेदखल कर दिये गये थे। निगमने उस सम्वन्धमे जाँच करनेके लिए एक समिति नियुक्त की थी। दलित वर्गोके प्रख्यात हितैषी श्री अमृतलाल ठक्करने मुझे उस समितिकी रिपोर्ट की एक प्रति भेजी है। इन गरीव स्त्री-पुरुषोको चालोमे वेदखल

करनेके तीन कारण बताये गये हैं। वे नगरपालिकाके कर्मचारी नहीं हैं, उनमें से कुछ लोग ज्यादा किराया देने योग्य हैं और कुछ ऐसे अवांछनीय, गजायापत्ता लोग हैं। बेदखल किये गये लोगोंकी ओरसे यह दलील दी गई है कि वे नगरपालिकाके कर्मचारियोंके निकट सम्बन्धी हैं, वे बरसोंसे नगरपालिकाकी उन चालोंमें रहते आये हैं और उनके विरुद्ध बेदखलीकी कार्यवाही नगरपालिकाके उन भ्रष्ट कर्मचारियोंके कहनेसे की गई है जिनको ये बेदखल लोग रिश्वत नहीं दे सके। नगरपालिकाके कमिश्नरकी रिपोर्टमें कहा गया है :

> कुछ साल पहले श्री गांधीने इन चालोंको देखने और जांच करनेके बाद यह विश्वास व्यक्त किया था कि (भ्रष्टाचारके सम्बन्धमें) जो साक्षी दी गई है और जो बातें कही गई हैं वे ऐसी हैं कि उन्हें कोई भी निष्पक्ष व्यक्ति नहीं मान सकता।

मुझे याद नहीं आता कि मैंने कभी ऐसी बात कही थी, लेकिन रिश्वतका सवाल असगत है। यदि यह सिद्ध भी किया जा सके कि नगरपालिकाका कोई भी कर्मचारी रिश्वत नहीं लेता है तो भी 'जहाँतक दलित वर्गोंका सम्बन्ध है' उनमें से उन लोगोंकी बेदखली जो नगरपालिकाके कर्मचारी नहीं हैं सिद्धान्ततः अनुचित है। इनका मामला एक विशिष्ट मामला है। ऐसी कोई जगह ही नहीं है, जहाँ वे चले जायें। वे सस्ती रिहायश पानेके लोभमें नगरपालिकाकी चालोंमें इकट्ठे नहीं हुए हैं, वे वहाँ इसलिए रहते हैं कि उन्हें कोई दूसरे मकान मिल ही नहीं सकते। मैं मानता हूँ कि निगमका यह कर्त्तव्य है कि वह दलितवर्गीय कर्मचारियोंके सम्बन्धियोंको उनके साथ रहने दे, इतना ही नहीं, बल्कि उसे उन वर्गोंके लिए काफी और अच्छी अतिरिक्त रिहायशका प्रबन्ध भी करना चाहिए। निगमको ऐसी रिहायशके लिए उचित किराया वसूल करनेका हक होगा। मैं दलित वर्गोंके बहुत ही सम्माननीय सदस्योंके कुछ उदाहरण जानता हूँ जिन्हें ऊँचेसे-ऊँचे किरायेपर भी मकान नहीं मिल सके हैं। मालिक इन वर्गोंके लोगोंको अपने मकान किरायेपर नहीं देना चाहते। जो लोग नगरपालिकाके कर्मचारी नहीं हैं और नगरपालिकाकी चालोंमें रहते हैं उनके विरुद्ध नगरपालिकाकी समितिकी या कमिश्नर-की आपत्ति उचित तभी हो सकती है जब वह किसी दूसरे वर्गके बारेमें हो। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि इस मामलेपर पुनर्विचार किया जायेगा और दलित वर्गोंके जो लोग बेदखल किये गये हैं उनमें से हरएकके रहनेका प्रबन्ध कर दिया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, ५-३-१९२५

१३४. तार: मद्रास नगरनिगमके अध्यक्षको

५ मार्च, १९२५

अध्यक्ष मद्रास नगरनिगम, मद्रास

धन्यवाद। नगरनिगमकी सुविधाके समयपर शनिवारको अभिनन्दन सहर्ष स्वीकार।

गाधी

अग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१३५ तार: डा० वरदराजुलु नायडूको

५ मार्च, १९२५

डा० वरदराजुलु नायडू
३, ब्रॉडवे
मद्रास

शनिवारको अभिनन्दनपत्रकी स्वीकृतिका नगरनिगमको तार भेज दिया। मद्रासमे दो दिन ठहरना असम्भव क्योंकि उसके बाद ही मौन दिवस।

अग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१३६. तार: एस० श्रीनिवास आयंगारको

५ मार्च, १९२५

एस० श्रीनिवास आयगार
मयलापुर
मद्रास

शनिवारको अभिनन्दनपत्रकी स्वीकृतिका नगरनिगमको तार दे दिया।

अग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१३७. पत्र : एन० मेरी पीटर्सनको

५ मार्च, १९२५

कुमारी पीटर्सन[1]
पोर्टोनोवो

वाइकोम जाते हुए शनिवारको मद्रास पहुँच रहा हूं।

गांधी

अंग्रेजी गमविदे (एस० एन० २४५६) से।

१३८. पत्र : अमृतलाल खेतसीको

बम्बई
फाल्गुन सुदी १० [५ मार्च, १९२५][2]

भाई श्री अमृतलाल,

चि० रामीकी तबियत खराब होनेकी खबर पढ़कर दुःख हुआ। मुझे वाइकोम-के पतेपर उसकी खबर देते रहना। रामीसे कहना, ठीक होते ही मुझे पत्र लिखे।

मोहनदासके आशीर्वाद

गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ६७७) से।
सौजन्य : नवजीवन न्यास

१३९. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

फाल्गुन सुदी १० [५ मार्च, १९२५][3]

भाईश्री घनश्यामदासजी,

आपका पत्र रांचीसे मीला है। आश्रमसे एक पेटी-चर्खा आपको कलकत्ते भेजा गया है। और एक नयी किसमका दिल्लीसे भेजा गया है। दोनो आपके खत मीलनेके पेश्तर भेजे गये। इसलीये कलकत्ते गये हैं।

१. दक्षिणमें डेनिश धर्म प्रचारक संघकी कार्यकर्त्री। वे कुछ समयतक साबरमती आश्रममें रही थी।
२. गांधीजी ५ मार्च, १९२५ को बम्बईमें थे।
३. गांधीजी ५ मार्च, १९२५ को बम्बईसे मद्रासके लिए रवाना हुए थे।

आपकी धर्मपत्नीकी तवीयत अच्छी नहि है सुनकर मुझे खेद होता है। सव हाल ठीक जाननेके सिवा कुछ कहना मुश्केल है। हा, इतना तो सामान्य हे कि दर्दके वखत खाना कमसे-कम और ज्यादेतर दूध ही और फल। हमारी आदत कमरा वध करके सोनेकी है। दर्दके समय स्वच्छ हवाकी ज्यादह आवश्यकता है। परतु मेरी सव वाते निकम्मी मानता हू। आपके वैद्य या दाक्तर जो कुछ कहे वही सही समजा जाय।

मैं आज वाईकोम जा रहा हूँ। शायद इस महीनेकी आखर तक मद्रास इलाकेमे रहना होगा। आश्रममे २६-२७ मार्चको पहोचुगा।

आपका,
मोहनदास गाधी

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६११८) से।
सौजन्य घनश्यामदास विडला

१४०. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोसे

वम्वई
५ मार्च, १९२५

मेरे विचार अव भी वही रहते है जो पहले थे। एकता अपरिहार्य हे। मेरे अनुमानसे जितना समय लगना था, यह उससे ज्यादा समय लेगी। विद्वेपकी आँधी जोर पकड रही है। आशा हे कि तूफानके वीच भी हममे से कुछ लोग अविचलित ही रहेगे। मैंने तो जीतनेकी कसम ले ली हे। मै हिन्दू हूँ, मुसलमानोके साथ झगडा नही करूँगा। न मै ऐसी धमकियोसे डरूँगा जैसे कि कहा जाता है पेशावरमे दी गई है। मै मौलाना जफर अली खाँ और डा० किचलूसे पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ। मुझे आशा हे, उनके वारेमे गलत रिपोर्ट दी गई हे। मै तो तव भी आवेशमे नही आऊँगा, यदि उन्होने वह सव-कुछ कहा हो जो उनके द्वारा कथित माना जा रहा हे। मै वदला लेनेकी उपयोगितापर विश्वास नही करता। मै हिन्दुओसे जोर देकर कहूगा कि वे ऐसी घटनाओपर क्रुद्ध न हो। लेकिन मै देखता हूँ कि निकट भविष्यमे कोई समझौता होने की आशा नही हे। सौदेवाजीसे कोई स्थायी समझौता नही हो सकता। नौकरशाहीके साथ सत्तामे साझीदार होनेके लिए सघर्प करना मुझे पसन्द आ ही नही सकता। इस प्रकारके सघर्पसे केवल व्रिटिश प्रभुत्वको ही वल मिलेगा। समान साझीदार होने पर मै व्रिटिश सहयोगकी कद्र करूँगा, किन्तु उनकी प्रभुताकी अपेक्षा मै अराजकताको पसन्द करूँगा। क्योकि मै जानता हूँ कि, इस प्रभुताके रहते हुए हम कभी एक राष्ट्र नही वन सकते। हिन्दुओ और मुसलमानोके वीच खुलकर लडाई हो चुकनेपर भी मुझे उनमे पारस्परिक समझौता होनेकी आशा हे, किन्तु व्रिटिश शस्त्रोके प्रतिवन्धमें शान्तिपूर्वक रहते हुए भी मुझे उनके वीच मेल-मिलापकी कोई आशा नही। हमे अपनेको अनुशासनमे रखना सीखना चाहिए। इसलिए मेरा आदर्शवाक्य है "यदि एकता सम्भव

है तो आज अभी, हो, और लडे विना काम न चले तो लडाई भी आज ही हो ले। किन्तु हर सूरतमे हम ब्रिटिश हस्तक्षेपसे अपनेको वचाये।" मै जानता हूँ कि उसमे उनकी मदद लेना एक वहुत वडा प्रलोभन है, वहरहाल मुझे तो उससे वचना ही है फिर यह प्रलोभन वडा हो, चाहे छोटा। भारतके हर गाँव या गली-कूचेमे थर्मापोलीके[1] दृश्य उपस्थित हो जानेपर भी मुझे स्वराज्यका उदय दीख पड रहा है। परन्तु शस्त्रोकी वदौलत उन दो जातियोके वीच स्थापित शान्तिमे मुझे स्वराज्यके दर्शन नही होते। उचित समझौता होनेसे पहले जितनी आवश्यकता अग्रेजोके हृदय-परिवर्तनकी है, उतनी ही हिन्दुओ और मुसलमानोके हृदय-परिवर्तनकी भी है।

एक प्रतिनिधिने पूछा, "लेकिन आपकी सलाहपर चलेगा कौन ?" महात्माने उत्तर दिया :

मै चलूँगा, क्या इतना काफी नही है? क्या मुझे अपने विश्वासको इसलिए छोड देना चाहिए कि उसका कोई अनुसरण नही करेगा।

एक प्रतिनिधिने कहा, "अव भी यह मेरे प्रश्नका उत्तर नहीं हुआ ?" महात्माने कहा :

आपकी यह शिकायत उचित है, फिर भी मै ज्यादा कुछ नही कह सकता। मै जानता हूँ कि इस समय मेरी कोई नही सुनता। लोग सरकारके पास जायेगे और ऐसी परिस्थितिमे शायद कोई भी वैसा ही करता जैसा कि अग्रेज कर रहे है, अर्थात् दोनोको विभक्त करके शासन करनेकी कोशिश करता। जो लोग अपने ऊपर दूसरोका शासन चाहते है उनके साथ और किया भी क्या जा सकता है? इसलिए हिन्दू-मुस्लिम समस्या इस समय वहुत जटिल वन गई है। मै अपनेको इससे वाहर रखना चाहता हूँ। जव मेरी आवश्यकता पडेगी तव मै इसमे हाथ डालूँगा। मै ईश्वर-पर सिद्धान्तके रूपमे नही, वल्कि तथ्यके रूपमे विश्वास करता हूँ। उसका अस्तित्व जीवनके अस्तित्वसे भी अधिक यथार्थ है। इसलिए मुझे उसका भरोसा करना चाहिए। आवश्यकता पडनेपर वह इस प्रश्नके सम्वन्धमे मुझे राह सुझायेगा जैसा कि आज तक सुझाता रहा है। इस वीच चरखा और अस्पृश्यता, दोनो मुझे और मेरी तरह सोचनेवालोको व्यस्त रखनेके लिए काफी है।

"किन्तु, क्या आप उन लोगोको भी जो कि आपकी सलाहपर चलेगे, ठोस सुझाव नहीं देंगे ?" यह अन्तिम प्रश्न था।

मुझे उनके वारेमे सोचना ही होगा। किन्तु मै जवतक यह नही देखता कि मेरे द्वारा सुझाया गया उपाय समुचित प्रकारसे कार्य करेगा तवतक मै अपने वीच प्रचलित सिद्धान्तोमे एक और जोडकर स्थितिको अधिक पेचीदा नही वनाना चाहता।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ६-३-१९२५

१ यूनानमें, स्पार्टा निवासियोंने ई० पू० ४८० में ईरानियोंके आक्रमणका वहादुरीके साथ सामना करते हुए वीरगति पाई थी।

१४१. पत्र : जनकधारी प्रसादको

गाडीमे
६ मार्च, १९२५

प्रिय जनकधारी बाबू[1],

आपका पत्र इतने सारे दिनोसे मेरे साथ-साथ घूम रहा है। मैं यह पत्र मद्रास जाते हुए गाडीमे लिख रहा हूँ। बेलगाँवमे किसीकी उपेक्षा करनेका मेरा कोई इरादा नही था। लेकिन मैं क्या करता? मेरे पास वैयक्तिक बातचीतके लिए एक क्षण भी नही था। इसलिए मैंने अपने हृदयको कठोर बना लिया।

आप उदास हैं। किन्तु यह उदास होनेका समय नही है। हम अपनी पूरी योग्यताके साथ अपना दैनिक कार्य करे और प्रसन्न रहे। जीवनकी पुस्तकमें निष्ठाके साथ किये गये सभी कार्योंका मूल्य एक ही है। फिर चिन्ता क्यो करे?

आपने कोई निश्चित प्रश्न नही पूछे हैं, किन्तु यदि ऐसे निश्चित कोई प्रश्न हों तो पूछनेमे सकोच न करे। इस बातका विश्वास रखे कि मेरे लिए आप जो पहले थे, आज भी वही है। चम्पारनके सच्चे सहयोगियोकी स्मृतिको तो मैं एक निधिके समान सजोये हुए हूँ। इससे अधिक सच्चे लोगोके साथ न तो मैंने पहले कभी काम किया और न आगे आशा है। यदि इस प्रकारके लोग सारे भारतमे मिल जायें तो स्वराज्य आनेमे विलम्ब न हो।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजी पत्र (जी० एन० ४८) की फोटो-नकलसे।

१४२. तार : 'नवजीवन'को

मद्रास
६ मार्च, १९२५

'नवजीवन'
अहमदाबाद

डाकसे सोलह कालम सामग्री रवाना। एन्ड्रयूजका लेख अवश्य दे। मेरे लेखोमे से एकाध निकाला जा सकता है।

अग्रेजी मसविदे (एस० एन० २८५६) से।

१. सन् १९१७के चम्पारन आदोलनमें गाधीजीके सहयोगी कार्यकर्ता।

१४३. तार : अलवाई यूनियन कालेजके प्राध्यापकको

मद्रास
६ मार्च, १९२५

प्राध्यापक
यूनियन कालेज
अलवाई

सफरमें रुकनेकी अपेक्षा वाइकोमके बाद कार्यक्रम निश्चित करना अधिक अच्छा।

गांधी

अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० २४५६) से।

१४४. पत्र : छगनलाल गांधीको

यात्रामें
फाल्गुन सुदी ११, [६ मार्च, १९२५][1]

चि० छगनलाल,

यदि अकलेश्वरका वह आदमी आये तो उसे उसकी अँगूठी दे देना और कह देना कि यदि उसे कुछ कहना हो तो वह मुझे पत्र लिखे। उसे आश्रममें ठहरनेकी अनुमति बिलकुल नहीं है। वह आदमी तो स्पष्ट ही पागल है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

तुमने वढवानके ५,००० रुपये भेज ही दिये होंगे। उस ४,००० रुपयेके चेकके सम्बन्धमें उचित कार्रवाई करना।

गुजराती पत्र (एस० एन० १०२४५) की फोटो-नकलसे।

१ सन् १९२५ में फाल्गुन सुदी एकादशी, ६ मार्च को थी। डाकखानेकी मुहर ७ मार्च, १९२५ की है।

१४५. भेंट : 'स्वदेशमित्रन्' के प्रतिनिधिसे[1]

मद्रास
७ मार्च, १९२५

हमारे प्रतिनिधिने आज दोपहर बाद १–३० बजे महात्माजीसे श्री श्रीनिवास आयंगारके निवास-स्थानपर भेंट की. । जब हमारा प्रतिनिधि वहां पहुँचा तब कालेजकी कुछ छात्रायें उनके दर्शनार्थ आई हुई थीं।

महात्माजीने छात्राओंसे पूछा

आप चरखा चलाती है ?

एक छात्राने उत्तर दिया, हम तो कालेजमें पढती हैं, इसलिए हमें चरखा चलानेके लिए समय नहीं मिलता। महात्माजीने उनसे उनके कालेज और पाठ्यक्रम आदिके सम्बन्धमें कुछ प्रश्न पूछे। उन्होंने उसके बाद पूछा

आपको तमिल भाषा अधिक अच्छी लगती है या अंग्रेजी ?

एक छात्राने उत्तर दिया, तमिल हमारी मातृभाषा है, इसलिए हमें वह अधिक अच्छी लगती है। अन्तमें छात्राओंने गांधीजीसे जानेकी अनुमति मांगी। गांधीजीने उन्हें सलाह दी कि वे चरखेपर सूत काता करें। छात्राओंने गांधीजीको चरखा चलानेका वचन दिया।

इसके बाद हमारे प्रतिनिधि और गांधीजीमें इस तरह बातचीत हुई.

आपने बम्बईमें हिन्दू-मुस्लिम एकताके प्रश्नके सम्बन्धमें एक पत्रके संवाददातासे जो-कुछ कहा था उसे पढकर मुझे लगा कि वातावरण ही ऐसा है कि मतभेद हो जाते हैं। इसलिए मैं सीधा आपसे ही यह जानना चाहता हूँ कि वर्तमान स्थितिके सम्बन्धमें आपका क्या खयाल है ?

इन दोनों बड़ी साम्प्रदायिक समुदायोंमें एकता नहीं है और उनकी फूट बढ रही है। उनका एक-दूसरेके प्रति सन्देह भी बढ गया है।

आपकी रायमें इसका तात्कालिक हल क्या हो सकता है ?

उन्हें एक-दूसरेपर सन्देह करना छोड देना चाहिए जिससे उनका ऐक्य-सम्बन्ध दृढ हो। लोगोंको अपने नेताओंमें श्रद्धा रखनी चाहिए।

वाइसरायकी इंग्लैंड यात्राके अवसरपर इंग्लैंडके पत्रोंने भारत और भारतके हितों तथा उसके उत्थानके विरुद्ध प्रचार आरम्भ कर दिया है। इस सम्बन्धमें कुछ लोगोंका सुझाव है कि हमें भी जवाबमें इंग्लैंडमें प्रचार करना चाहिए और इस प्रकार उन लोगोंको वस्तुस्थिति और भारतके लोगोंका दृष्टिकोण बताना चाहिए। मैं इस विषयमें आपका मत जानना चाहता हूँ।

१ तमिल दैनिक स्वदेशमित्रन्में प्रकाशित मूल विवरण तमिलमें है, लेकिन यहां अनुवाद अंग्रेजीसे किया गया है।

हमारे लिए ब्रिटेनके पत्रोके माध्यमसे प्रचार करना असम्भव है, ब्रिटेनके पत्र साम्राज्यीय उद्देश्योको पुष्ट करनेके लिए कृत-सकल्प है। हम उन्हे भारतकी वास्तविक स्थिति बतानेके लिए कितने ही तथ्य क्यो न दे, वे उन्हे प्रकाशित ही न करेगे। एक बार एक व्यक्तिने ब्रिटेनके एक पत्रमे विज्ञापनके रूपमे प्रकाशनार्थ तथ्यात्मक सामग्री छपाईके खर्चके साथ भेजी थी, किन्तु पत्रने उसे यह कहकर लौटा दिया कि वह उसे प्रकाशित नही कर सकता।

क्या हम इंग्लैंडकी आम जनतामें अपने विचारोका प्रचार नहीं कर सकते?

अग्रेज ऐसे नही है कि वे हमारे वक्ताओके व्यक्त किये हुए विचारोपर विश्वास कर ले। उनका स्वभाव ऐसा है कि वे किसी देशकी बुरी स्थितिको केवल दो लक्षणोके उपस्थित होनेपर ही अनुभव कर सकते है — या तो वहाँ विद्रोह कर दिया जाये या उस देशकी सरकारसे असहयोगका जन-आन्दोलन आरम्भ कर दिया जाये। एक बार बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जी इग्लैंड गये थे। वहाँ उन्होने बडी योग्यतासे भारतकी दुर्दशाका चित्र प्रस्तुत किया। कहा जाता है कि इसपर एक अग्रेज सज्जनने उनसे पूछा, "यदि आप जो-कुछ कहते है वह सत्य है तो आपके देशवासी विद्रोह क्यो नही कर देते?" यह मनोदशा वहाँ अभीतक कायम है।

कहा जाता है कि सुधार-जांच समितिके बहुमतकी रिपोर्ट प्रतिगामी है। क्या समितिके निष्कर्षोंकी सरकार द्वारा स्वीकृतिके विरुद्ध देशव्यापी आन्दोलन करनेकी आवश्यकता नहीं है?

जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मै जनसाधारणके विचारोको समझनेका पूरा-पूरा प्रयत्न करता हूँ। मै नही समझता कि इस समय मुडीमैन-समितिके[1] प्रतिगामी निष्कर्षोसे, या सरकारकी दमन कार्रवाइयोसे या उसके आतककारी शासकोसे — इनमे से किसी भी तत्त्वमे — हमारे देशवासियोकी भावनाए जागृत हो सकती है। जहाँतक मै देख सकता हूँ, मुझे तो देशमे सर्वत्र ही लोगोमे निराशाका भाव व्याप्त दिखाई देता है।

तब आप लोगोंकी इस निराशाको दूर करने और उनमें उत्साहका संचार करनेके लिए क्या सुझाव देते हैं?

लोगोमे उचित भावना उत्पन्न करनेके लिए चरखा चलाने और सूत कातनेसे अधिक अच्छा कोई दूसरा उपाय नही है। जनसाधारणकी — गरीबोकी — पहली माँग अन्न है और उन्हे अन्न — केवल चरखा ही दे सकता है। वह उनके लिए हितका एक जबरदस्त साधन है।

१ सर अलेक्जेंडर मुडीमैनकी अध्यक्षतामें, भारत शासन कानूनपर अधिक अच्छा अमल कैसे किया जा सकता है, इस सम्बन्धमें जाँच करने और रिपोर्ट देनेके लिए नियुक्त की गई सरकारी समिति। इसकी रिपोर्ट मार्च १९२५ में प्रकाशित हुई थी। इसका बहुमत — जिसमें मुडीमैन और तीन अन्य सदस्य शामिल थे — इस पक्षमें था कि निश्चित विचार-मर्यादाके अन्तर्गत वे कानूनके उद्देश्यको ध्यानमें रखते हुए ऐसे उपायोंकी सिफारिश नही कर सकते किन्तु उन्होने कानूनके सफलतापूर्ण कार्यान्वयनकी प्रशसा की थी। इसके विपरीत अल्पमत समितिने यह मत व्यक्त किया था कि यह द्वैध शासन प्रणालीपर आधारित संविधान असफल रहा है और इससे भविष्यमें अधिक अच्छे परिणाम नही निकल सकते। देखिए **इंडिया इन १९२५-२६।**

आपने जनरल स्मट्सके अभी हालके भाषण पढ़े होंगे। क्या दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके लिए उनसे और उनके दलके लोगोंसे उनके भाषणोंमें वर्णित अधिकारोंकी प्राप्तिके लिए सहयोग करना ठीक होगा?

यदि जनरल स्मट्स वास्तवमें अपने [हालके] भाषणोंमें कही हुई सब बातोंको कार्यरूप देना चाहते हैं तो जो उन्होंने अधिकार गिनाये हैं उन्हें प्राप्त करनेके लिए सतत प्रयत्न करना ठीक होगा। वे इस समय विरोधी पक्षमें हैं। [दक्षिण आफ्रिकाके] भारतीय उन अधिकारोंको प्राप्त करनेके प्रयासोंमें उनका साथ दे सकते हैं, किन्तु इस सम्बन्धमें सावधानी बरतनेकी आवश्यकता है, क्योंकि यह ध्यान रखना चाहिए कि वे सत्तारूढ़ होनेपर वचन-भंग कर सकते हैं।

गांधीजीने हमारे प्रतिनिधिसे बादमें बातचीत करते हुए कहा मैं नहीं कह सकता कि मैं वाइकोममें कबतक ठहरूँगा। मैं मद्रास आनेसे पूर्व सब सम्बन्धित व्यक्तियोंको सूचना दे दूंगा।

[अंग्रेजीसे]

स्वदेशमित्रन्, ८-३-१९२५

१४६. भेंट : 'फ्री प्रेस ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिसे

मद्रास
७ मार्च, १९२५

महात्मा गांधी वाइकोम जाते हुए मद्रास पहुँचे।

फ्री प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिने लॉर्ड रीडिंगके इंग्लैंड जानेके सम्बन्धमें महात्मासे भेंट की।

प्रश्न किया गया "क्या आप बर्कनहेड[1]-रीडिंग मन्त्रणाके फलस्वरूप ब्रिटेनकी भारतीय नीतिमें किसी परिवर्तनकी आशा करते हैं?"

एक साधारण व्यक्तिके लिए जो चरखेमें विश्वास करता है, यह बहुत ही बड़ा प्रश्न है?

मान लीजिए कि सरकार निकट भविष्यमें दमनकी नीति अपनाती है तो आपका देशके लिए क्या सन्देश होगा?

मैं कहूँगा, "खद्दर, खद्दर, खद्दर।" यह एक चीज है जिसपर मैं जोर देता हूँ, उसके अलावा आप अस्पृश्यता-निवारणको भी याद रखें।

क्या आप विश्वास करते हैं कि दमनका उत्तर देनेके लिए खद्दर काफी है?

हाँ, ऐसा ही है। वह एक प्रभावशील उत्तर है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ९-३-१९२५

१. लॉर्ड बर्कनहेड (१८७२-१९३०), अंग्रेज राजनीतिज्ञ, भारतमन्त्री १९२४-२८।

१४७. भेंट : 'स्वराज्य' के प्रतिनिधिसे

मद्रास
७ मार्च, १९२५

'स्वराज्य' के प्रतिनिधि द्वारा यह प्रश्न करनेपर कि क्या स्वराज्यवादियोंके पद स्वीकार करनेसे कांग्रेस और स्वराज्यवादियोंके आपसी सम्बन्धपर प्रभाव पड़ेगा, महात्माजीने निश्चयात्मक स्वरमें उत्तर दिया, "नहीं, कांग्रेसने स्वराज्यवादियोंको परिषदोंमें उनकी गति-विधियोंके लिए पूर्णाधिकार दे दिया है।"

निर्वाचित हिन्दू सदस्योंके विरोध करनेके बावजूद वाइसराय द्वारा हिन्दू धर्मस्व अधिनियमको स्वीकृति देनेकी ओर ध्यान खींचनेपर महात्माजीने कहा कि मैंने अधिनियमका या उसके अभिप्रायोंका अध्ययन नहीं किया है। यदि मेरे लिए नितान्त आवश्यक हो जायेगा तो मैं अपना ध्यान उस ओर लगाऊँगा और समय आनेपर उसके बारेमें अपने विचार प्रकट करूँगा।

यह सवाल करनेपर कि क्या तमिलनाड-कांग्रेसके अध्यक्ष द्वारा अधिनियमका खुलेआम समर्थन करना कांग्रेसकी नीतिके साथ मेल खाता है, महात्माजीने उत्तर दिया कि मैं ऐसे किसी कांग्रेसी द्वारा अधिनियमका समर्थन करनेमें कोई आपत्ति नहीं देखता जिसने परिषदोंमें प्रवेशके सिद्धान्तको भी स्वीकार किया हो।

एक अन्य प्रश्नका उत्तर देते हुए महात्माजीने कहा कि यदि हो सका तो वाइकोम जानेके सुअवसरका लाभ उठाकर मैं राज्य-संरक्षिका महारानीसे अवश्य मिलूँगा।

उन्होंने दु:खके साथ यह स्वीकार किया कि उत्तरमें, जहाँ वे अभी हाल गये हुए थे, हिन्दू-मुस्लिम एकताके आसार बहुत उज्ज्वल नहीं हैं। उन्होंने कहा कि मैंने बम्बई जाते हुए इस विषयपर डा० किचलू और अन्य मुस्लिम नेताओंको लिखा था और मैं उनसे उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। मुझे यह देखकर सन्तोष होता है कि इस प्रान्तमें दोनों जातियोंके बीच सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध है।

दक्षिणको मैं केवल एक सन्देश दे सकता हूँ और वह यह कि आप लोग चरखा कातें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १२-३-१९२५

१४८. भाषण : मद्रासमे[1]

७ मार्च, १९२५

श्री अध्यक्ष, निगमके सदस्य तथा भाइयो,

मुझे आशा है कि खडे होकर भाषण न दे सकनेके लिए आप हमेशाकी तरह मुझे क्षमा करेंगे। मैं इसके लिए आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूँ कि आपने मुझे एक सुन्दर अभिनन्दन-पत्र भेट किया है। अभिनन्दन-पत्र स्वीकार करना मेरे लिए सदैव एक परेशानीकी चीज रही है। मैंने बहुतसे अवसरोपर अपने आपको भगी कहा है। मुझे नगरपालिकाके कार्योंमें प्यार है। मगर किस्मतमें कुछ और ही लिखा था। एक समय था जब मैं नगरपालिकाका काम अपनानेके विषयमे गम्भीरतासे सोचता था। यह एक ऐसा जीवन है जिसमे घोर परिश्रमकी आवश्यकता होती है। मैं स्वय वैसा व्यक्ति हूँ। मैं अपनको भगी इसलिए कहता हूँ कि मैं एकाधिक दृष्टियोसे सफाईमे विश्वास करता हूँ, अर्थात् बाह्य और अभ्यन्तर स्वच्छतामे।

मैं मद्रासके लिए अजनबी नही हूँ। मुझे प्राय कई अवसरोपर काफी लम्बे अर्से तक मद्रासमे रहनेका समय मिला है जिससे मैं आपके नगरकी सफाईको गौरसे देख-समझ सका हूँ, जब भी प्रात काल मैं आपकी गलियोसे गुजरा हूँ, उन्हे गन्दा देखकर मुझे दुःख हुआ है। मुझे जब कभी श्री नटेसनके[2] साथ रहनेका अवसर मिला, मैंने उनसे मद्रासकी सडकोकी दुर्व्यवस्थाके बारेमे बातें की। मैं यह नही कहता कि भारतके दूसरे नगरोकी अपेक्षा मद्रासकी सडके खास तौरपर गन्दी है, किन्तु मुझे उनके बारेमें ऐसा इसलिए कहना पडता है कि उन दिनो बच्चे ही नही, सयाने भी सडकोको गन्दा किया करते थे। मेरी समझमे देशके किसी दूसरे नगरमे यह बात इतनी ज्यादा देखनेमे नही आती थी। इस प्रकारके दृश्य, दुःखके साथ कहता हूँ कि मैंने मद्रास आनेसे पहले कही नही देखे थे और कई बार मुझे ऐसा लगा कि मै स्वय झाडू क्यों न उठा लूँ और जिस गली-कूचेमे होकर मुझे जाना होता था उसको पूरी तौरपर क्यो न साफ कर डालूँ। मैं अवकाश मिलनेपर सफाईका काम अब भी किया करता हूँ। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि जब भी मुझे थोडा-सा सफाईका काम करनेको मिल जाता है, मुझे अच्छा लगता है। इससे आप नगरपालिकाओ द्वारा दिये जानेवाले अभिनन्दन-पत्रोको स्वीकार करनेकी मेरी कमजोरीको समझ ले सकते है। मैं जब-जब अभिनन्दन-पत्रोका इस तरह दिया जाना स्वीकार करता हू, तब-तब यही खयाल मनमे आता है कि इससे मुझे देशके नागरिकोके मनमे यह बात बखूबी अकित करनेका मौका मिलेगा कि सफाईका काम स्वय करना कितनी अच्छी चीज है। मेरा खयाल है कि बाहरी स्वच्छताके बारेमे हमे पश्चिमसे बहुत-कुछ

१ नगर-निगम द्वारा दिये गये अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें।

२ जी० ए० नटेसन।

सीखना होगा। मुझे अक्सर पाश्चात्य सभ्यता और उसके तौर-तरीकोंके विरुद्ध कुछ कहना पडता है और इसलिए मुझे जब भी अवसर मिलता है, मै यह बतानेमे नही चूकता कि हमे पश्चिमसे किन-किन उपयोगी बातोकी शिक्षा ग्रहण करना उचित है। मेरा विचार है कि भारतमे हमारे जो बडे-बडे नगर है उनकी सफाईके तरीकोके सम्बन्धमे शिक्षा ग्रहण करनेके लिए हम पश्चिमके पास जाये, उससे बढकर और कुछ नही हो सकता। मै चाहता हूँ कि मै यह बात आपके हृदयमे बिठा सकूँ कि झाड देना एक शानदार पेशा है, यद्यपि हमे उससे वह यश अथवा अपयश नही मिलता जो जीवन-के दूसरे विभागोमे काम करनेसे मिलता है। जब मै नगरपालिकाकी सेवाके विषयमे कहता हूँ तब आप मेरी बातका गलत अर्थ न लगाये। जीवनके अन्य क्षेत्रोमे सेवा करना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि नगरपालिकाकी सेवा करना। किन्तु मैने देखा है कि हमारे सार्वजनिक जीवनमे सफाईके कामकी कीमत न समझनेकी प्रवृत्ति पाई जाती है।

अपने अभिनन्दन-पत्रमें आपने मेरी उन छोटी-छोटी सेवाओकी प्रशसामे जो, मै जनसेवीके रूपमे कर सका हूँ, बहुत-सी बाते कही है। मै जनसेवी हूँ और जनसेवी ही रहना चाहता हूँ। किन्तु मै देखता हूँ कि आपने अपने अभिनन्दन-पत्रमे एक बातका उल्लेख नही किया है, और वह है खद्दरके सम्बन्धमे। मै आपको यह बताना चाहूँगा कि मानवताके लिए मैने जो कुछ भी किया है उनमे मै खद्दरको लगभग सबसे आगे रखता हूँ। भारतकी विभिन्न जातियो तथा विभिन्न धर्मोका अनुसरण करनेवाले समाजो मे एकता स्थापित करना राष्ट्रीय जीवनके उदयके लिए अनिवार्य है। अस्पृश्यताके अभि-शापको दूर करना भी उतना ही आवश्यक है जितना एक व्यक्तिके क्षयरोगको दूर करना। अस्पृश्यताके कारण हिन्दू धर्मकी जीवनी शक्तिका ह्रास होता चला जा रहा है। जनताको गिरानेवाली गरीबीको दूर करना खद्दरपर निर्भर है। यही कारण है कि जब प्रत्येक भारतीय, प्रत्येक अग्रेज तथा प्रत्येक विदेशी जो भारत आता है और मुझसे पूछता है कि आप एक विदेशीसे क्या कराना चाहते है, तो मै उनसे कहता हूँ कि आप मेरे देशकी परिस्थितियोका अध्ययन करे और यह मालूम करे कि क्या इस मामूली-से चरखेकी अपेक्षा कोई और अच्छी चीज आपको मिली है। यदि आपको भारतकी परिस्थितियो-का ध्यानपूर्वक अध्ययन करनेके बाद यह लगे कि उससे अच्छी कोई चीज नही मिली तो आप चरखेके पक्षमे दो शब्द कहे। मै चाहता हूँ कि मै चरखेको बहुत-सी अन्य चीजो-से — राजनीतिसे अलग कर लूँ। किन्तु आप जानते है, मैने कई बार कहा है कि जीवनके ये सारे विभाग परस्पर ग्रथित और अन्तर्मिश्रित है, और इसलिए उन्हे जीवनके अन्य विभागोसे अलग करना असम्भव है। किन्तु मै यह निश्चित रूपसे जानता हूँ कि चरखे और खद्दर-उत्पादनका राजनीतिक मूल्य तो है ही। इसके अतिरिक्त यदि हमे उस आर्थिक कष्टको जिसके नीचे यह देश छटपटा रहा है, दूर करना है, यदि हमे भारतके करोडो मूक लोगोकी सेवा करनी है तो हम खद्दरके बिना, चरखेके बिना कुछ नही कर सकते। इसलिए मै निवेदन करता हूँ कि नगरपालिकाके सदस्य उसकी ओर ध्यान दे। मै आपसे कहता हूँ कि आप उसे अपने स्कूलोमे स्थान दे। आप अग्रेज, भारतीय-

मुसलमान, हिन्दू — कोई भी हों और चाहे आप देशके इस राजनीतिक दलके हों या उस दलके, मैं आपसे कहता हूँ कि आप अपने घरोंमें चरखे और खद्दरको स्थान दें।

चरखे और खद्दरका कुछ अनुभव होनेके कारण मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि जो कुछ मैंने कहा है वह सत्य है, सत्यके अलावा और कुछ नहीं। इस अभिनन्दन-पत्रको देनेके लिए मैं आपको फिरसे बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूँ। मैं चाहता हूँ कि मद्रास नगर-निगमको अपने कार्यमें सफलता मिले और नगरपालिकाके जीवनसे सम्बन्धित मामलोंमें यह सबसे अग्रसर बने।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-३-१९२५

१४९. भाषण : मद्रासकी सार्वजनिक सभामें

७ मार्च, १९२५

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

आज तीसरे पहर जो मुझे अभिनन्दन-पत्र दिये गये हैं उनके लिए मैं आप सबको तथा विभिन्न संस्थाओंको हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। खेदकी बात है कि इतने वर्षोंके बाद भी आप लोग हिन्दुस्तानी या हिन्दी नहीं समझते। और मेरे लिए यह लज्जाकी बात है कि मैं आपसे तमिल या तेलगूमें बात करनेमें असमर्थ हूँ। मैं सोचता था कि यदि मैं पूरे छ: वर्षोंतक यरवदा जेलमें रह सका तो मैं दक्षिणके इस प्रान्तमें श्रोताओंके बीच तमिलमें भाषण दे सकूँगा। यह मेरी और आपकी बदकिस्मती है कि ऐसा नहीं हुआ। किन्तु मैं आशा जरूर करता हूँ कि ऐसा समय आयेगा और वह भी जल्दी ही, जबकि आप उत्तर और पश्चिम प्रदेशोंसे आनेवाले लोगोंसे हिन्दुस्तानीमें भाषण देनेका आग्रह करेंगे। आप जानते हैं, और यदि नहीं जानते तो आपको अब जान लेना चाहिए कि भारतके अन्य भागोंने ७५,००० रुपये मद्रास प्रान्तके लिए दिये हैं ताकि उसे हिन्दुस्तानी सीखनेके लिए प्रोत्साहित किया जाये। इस प्रान्तमें अध्यापक नियुक्त किये गये हैं जो हिन्दी या हिन्दुस्तानीकी शिक्षा देते हैं। आपको उसे सीखनेके लिए परिश्रम तो करना ही चाहिए। यदि आपने अभीतक इस अवसरसे लाभ नहीं उठाया है तो अब सही।

मैं तो अपनी यात्राके दौरान यहाँ उतर-भर गया हूँ। मैं मद्रास नहीं आया हूँ बल्कि वाइकोमके सत्याग्रहियोंसे मिलने निकला हूँ। यदि वहाँ काम खत्म करनेके बाद समय मिला तो निश्चय ही मैं मद्रासमें कुछ दिन बिताने और आप लोगोंके साथ पुराने सम्बन्ध ताजा करनेका इरादा करता हूँ। (हर्षध्वनि)। इस बीच आपसे निवेदन है कि अध्यक्ष महोदयने जो बात आपसे कही है, उसे आप पूरा करें, अर्थात् मैं जिस उद्देश्यसे वाइकोम जा रहा हूँ उसकी पूर्तिके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करें। मैं वहाँके निष्ठावान सत्याग्रहियोंके दलके प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करने और उन्हें समर्थन

देनेके लिए वाइकोम जा रहा हूँ। मुझे आशा है कि वे मुझे कट्टरपन्थी दलके पास जाने और उनका दृष्टिकोण समझनेकी अनुमति देंगे। सत्याग्रह हिंसात्मक संघर्ष नहीं है, बल्कि वह हृदय परिवर्तन करने तथा सच्ची धारणा उत्पन्न करनेका प्रयास है, इसलिए कट्टरपन्थी दलका दृष्टिकोण समझने तथा अपना दृष्टिकोण उनके सामने रखनेका मैं कोई भी अवसर हाथसे नहीं जाने दूँगा। यदि महाविभव महारानी अनुग्रहपूर्वक मुझे मिलनेकी अनुमति देंगी तो मैं आशा करता हूँ कि मैं उनसे भी मिलूँगा। साथ ही मैं दीवान और अन्य सम्बन्धित अधिकारियोंसे भी मिलूँगा।

मेरे लिए अस्पृश्यताका प्रश्न एक गम्भीर धार्मिक प्रश्न है। जो लोग अछूत नहीं हैं, उनके लिए यह प्रायश्चित्त और शुद्धीकरणका मामला है। यह हिन्दू धर्मके मूल तत्त्वसे सम्बन्धित सुधार है। (हर्षध्वनि)। इसलिए यदि आप गहरे विश्वासके साथ मेरे उद्देश्यकी सफलताके लिए प्रार्थना कर सकें तो उससे मुझे बड़ी मदद मिलेगी।

मैं जानता हूँ, कि मेरे यहाँ आ जानेपर आप मुझसे यह आशा करते होंगे कि मैं भारतके सामने उपस्थित वर्तमान समस्याओंके बारेमें कुछ कहूँगा। किन्तु आप मुझसे यह आशा न करें कि मैं इस प्रश्नके उस पहलूपर जिसे राजनीतिक पहलू कह सकते हैं, कुछ कहूँगा। उसमें मेरी दिलचस्पी नहीं है। कांग्रेस संगठनका तो यह एक बड़ा जरूरी अंग है, किन्तु मैं अपनेको उससे जान-बूझकर दूर रख रहा हूँ।

इसके प्रति मेरी स्वाभाविक रुचि नहीं है। लेकिन इसका यह मतलब भी कदापि नहीं है कि दूसरे लोग भी इस कार्यक्रमके प्रति निष्ठा न रखें या उसे अनावश्यक समझें। मेरे लिए मेरा जीवन-कार्य निर्दिष्ट है। मैं निश्चित रूपसे जानता हूँ कि यदि हम सुधार अन्दरसे शुरू करें तो बाहर सुधार उसी तरह हो जायेगा, जैसे रातके बाद दिन होता है। मुझे इस बातका भी उतना ही विश्वास है कि जबतक सुधार अन्दरसे नहीं होता, तबतक बाहरसे किया गया कोई भी सुधार सफल नहीं होगा। विधान परिषद् या विधान सभामें किया गया तथा लन्दनमें आपकी ओरसे किये जानेवाले सभी प्रयत्न पूरी तरह विफल हो जायेंगे। जो लोग इस गतिविधिमें भाग ले रहे हैं, यह बात उनकी आलोचना करनेके लिए नहीं कही गई है, बल्कि इस तथ्यपर जोर देनेके लिए कही गई है कि आपको और मुझे, जनताके हर साधारण आदमीको, अपनी चिन्ता स्वयं करनी होगी। यह इस तथ्यपर जोर देनेके लिए कही गई है कि यदि आप और मैं उस कार्यक्रमको पूरा करनेके लिए सहायता पहुँचाना चाहते हैं तो हमें यह कार्य अपनेसे शुरू करना होगा। यदि हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरेका सिर फोड़नेके लिए तैयार रहते हैं तो आपकी परिषदें क्या कर सकती हैं? यदि हम हिन्दू अपने ही भाइयोंके पंचमांशका बहिष्कार किये हुए हैं तो हमारे पार्षद परिषदोंमें क्या कर सकते हैं? यदि हम चरखा न चलायें और खद्दर न पहनें और इस प्रकार अपने दलित और गरीब देशभाइयोंके साथ एकरूप नहीं हो जाते तो फिर वे बेचारे कर ही क्या सकते हैं? मुझसे समय-असमय, अनेक बार कहा गया है कि जबतक हमारे इस विशाल देशमें लोगोंको आवेश नहीं दिलाया जाता तबतक यहाँ कुछ भी नहीं हो सकता। किन्तु कृपया यह याद रखें कि स्वराज्य आवेश

या नारोंसे मिलनेवाली चीज नहीं है। स्वराज्य सुव्यवस्थित आचरणसे स्वयमेव प्रतिफलित होगा और होगा हमारे पारस्परिक सहयोग, कठोर अनुशासन और आज्ञापालन, सतत उत्साह और खुशीसे किये हुए सदाशयतापूर्ण सोचे-समझे बलिदानसे, वह सारे राष्ट्रके मिले-जुले उद्योग और श्रमसे तथा जनताकी विवेकपूर्ण जागृतिसे प्राप्त होगा। भारतके दस-बीस नगरोंके सम्मिलित प्रयत्नोंसे वह नहीं मिल सकता। हम लोगोंको, जिनमें कुछ हदतक राजनीतिक चेतना आ गई है और जो अपने देशको अपना देश होनेके नाते प्रेम करने लगे हैं, जनताके बीच फैल जाना चाहिए और गाँवोंमें बस जाना चाहिए।

मैंने हिन्दू-मुस्लिम एकताके बारेमें बम्बईमें जो-कुछ कहा है सो आपको विदित है। आप लोगोंमें से जो लोग कातना जानते हैं, वे उस उपमाको समझ जायेंगे, जिसे मैं देने जा रहा हूँ। आपमें जो लोग अच्छा कातना नहीं जानते उन्हें अनुभव हुआ होगा कि जब वे तकुएसे सूत निकालते हैं तब सूत कभी-कभी उलझ जाता है और फिर जितना ही आप उसे सुलझानेकी कोशिश करते हैं, वह उतना ही उलझता जाता है। किन्तु एक कुशल कातनेवाला उस उलझे हुए सूतको सीझ जानेपर एक तरफ रख देता है और सीझ मिट जानेपर उसे सुलझानेकी कोशिश करता है। ऐसा ही हिन्दू-मुस्लिम समस्याके साथ समझिए। यह समस्या इस समय बुरी तरह उलझ गई है। मैं सोचता हूँ कि मैं कातनेमें माहिर हूँ, उसी प्रकार मैंने यह भी सोचा था कि मैं ऐसी उलझनोंको सुलझानेमें भी माहिर हूँ। फिलहाल मैंने इस समस्याको ताकपर रख दिया है, किन्तु उसका मतलब यह नहीं है कि मुझे इसके सुलझनेकी कोई आशा नहीं रही है। जबतक मुझे इसका कोई हल नहीं मिलता तबतक मेरा मस्तिष्क इस समस्यापर विचार करता ही रहेगा। किन्तु मुझे यह बात स्वीकार करनी ही होगी कि मैं कोई ऐसा व्यवहार्य हल, जिसकी आप आशा करते हैं, फिलहाल प्रस्तुत नहीं कर सकता। किन्तु मैं आपके सामने एक छोटा-सा विचार रखना चाहूँगा। आपमें से जिन लोगोंको हिन्दू या मुसलमानोंसे, व्यवहार करना होता है, उन्हें एक-दूसरेके प्रति अपने व्यवहारमें खरा, ईमानदार और निडर होना चाहिए। यद्यपि अभी आशा की कोई किरण दिखाई नहीं देती फिर भी आप अपने विश्वासको न छोड़ें, आपसमें प्रेमका व्यवहार करें और इस बातको याद रखें कि चाहे हिन्दूका शरीर हो, चाहे मुसलमानका, उसमें एक ही दिव्यात्मा विराजमान है और यह सोचकर एक-दूसरेके प्रति उदार रहनेकी कोशिश करें।

यह आवश्यक नहीं है कि मैं आपसे अस्पृश्यताके बारेमें कुछ कहूँ क्योंकि उसकी स्थितिका आपको पूरा-पूरा ज्ञान है। किन्तु मेरी समझमें, और शायद आप भी इस बातमें सहमत होंगे कि हमने विगत चार वर्षोंके दौरान इस दिशामें जबरदस्त प्रगति की है। मैं जानता हूँ कि अपने उद्देश्यकी पूर्तिके लिए यह काफी नहीं है, किन्तु हममें इतनी आशा जागृत करनेके लिए काफी है कि हमारे जीवनकालमें ही हिन्दू धर्मसे यह कलंक मिट जायेगा।

अन्तमें चरखा और खद्दरका उल्लेख करना शेष रह गया है जो कि कम महत्वकी बातें नहीं हैं। मैं जानता हूँ कि उस दिशामें भी हमने थोड़ा-बहुत काम किया

है। फिर भी खादीकी जो हालत आज है उसके लिए हमारा आलस्य और अज्ञान ही उत्तरदायी है। हिन्दू-मुस्लिम समस्याकी तरह कटुता और द्वेषभावनाका यहाँ कोई सवाल नही है और न अस्पृश्यताकी तरह धार्मिक असहिष्णुताका प्रश्न है। मुझे अभी तक एक भी आदमी ऐसा नहीं मिला जो यह कहे कि चरखा चलाना या उससे उत्पन्न खद्दरको पहनना उसकी अन्तरात्माके विरुद्ध है। यह तो अर्थशास्त्रका ककहरा-मात्र है कि यदि भारतके उन लाखो लोगोकी झोपड़ियोमे जो वर्ष-भरमे कमसे-कम चार महीने खाली बैठे रहते है, चरखा पहुँचा दिया जाये तो वह उन चार महीनोका सदुपयोग कर सकेंगे। वे उससे जो दो पैसे रोजाना कमायेगे उनका आपके और मेरे लिए चाहे कुछ मूल्य न हो, किन्तु उनके लिए तो वे एक नियामत ही ठहरेंगे। यह समझ लेना तो बहुत ही आसान है कि यदि हम चाहते है कि हमारे देशवासी चरखा चलाये तो उनकी झोपड़ियोमे आशाका सन्देश पहुँचानेके पहले हमे इस मृतप्राय कलाको सीख लेना होगा। आप यह मानेगे कि यह बात तो एक बच्चेकी समझमे भी आ सकती है कि जब सारी जनता चरखा चलायेगी और खद्दर तैयार करेगी तो छोटे-बडे हरएकको खद्दर ही पहनना और काममे लाना चाहिए। मुझे यह कहते हुए खेद होता है कि यदि हम इतने नाजुक बन गये है कि मोटा खद्दर नही पहन सकते तो मै कहे रखता हूँ और आप इसकी गाँठ बाँध लीजिए कि स्वराज्य इस पीढीके भाग्यमे नही है। स्वराज्य एक मजबूत पेड है जो धीरे-धीरे जड पकडता और पल्लवित होता है, और इसीलिए उसे साहसी स्त्री-पुरुषोके धैर्यके साथ किये गये परिश्रम-की आवश्यकता होती है। इसलिए आपको वही करना होगा जो पुराने समयमे रानी एलिजाबेथने अपने देशके लिए किया था। उसने हॉलैडसे नरम कपडेके आयातपर पाबन्दी लगा दी थी और वह स्वय अपने प्यारे देश, इग्लैडका बुना हुआ मोटा कपडा पहनने लगी थी। और उसने यही सारे राष्ट्रके लिए अनिवार्य कर दिया था। आपको खद्दर और चरखेके प्रश्नकी गुत्थियोमे उलझनेकी जरूरत नही। आपको यह सोचनेकी भी जरूरत नही कि यह स्वय स्वराज्य लानेमे समर्थ है या नही। आप तो इसे अपने और मेरे लिए एक साधारण और सरल कसौटी ही रहने दे। क्या हम आधा घटा राष्ट्रको देने और यथाशक्ति कताई करके उसका ऋण चुकाने तथा अपनको देशके गरीबसे-गरीब लोगोके साथ एकरूप करनेके लिए तैयार है, या नही? हम ऐसा कपडा पहननेके लिए तैयार है या नही जिसे हमारी बहनो और भाइयोने काता और बुना हो? इनमे से क्या ठीक है हमारा प्रतिगज कैलिकोके लिए १ या २ आने मैंचेस्टर या अहमदाबादको भेजना अथवा एक या दो आने मद्रासके पासकी ही इन झोपडियोमे भेजना — बोलिए, आपको क्या पसन्द है? अपने पास-पडोसके उन लोगोके बारेमे जिन्हे खानेके लाले पडे है, सहानुभूतिके साथ सोचने लायक देशप्रेम आपमे है या नही?

वैसे तो मै बडा धैर्य रखनेवाला आदमी हूँ किन्तु फिर भी इस बातके अत्यन्त बोधगम्य होनेके बावजूद कि एक गज खादी खरीदनेका अर्थ किसी गरीबसे-गरीब आदमीकी जेबमे कमसे-कम दो आने पहुँचाना है, चतुर व्यक्ति मेरे पास आकर तरह तरहकी बारीकियाँ निकालते है, तब मेरा धीरज छूट जाता है। मेरे पास अपने देशको

देनेके लिए यही एक चीज है, और मेरे पास इससे अच्छा सन्देश हे ही नही। यदि इस सन्देशका एक प्रचारक मै ही वच रहूँ और कोई सुननेवाला भी न हो तो भी मै अपनी अन्तिम साँसतक इसी सन्देशकी रट लगाता रहूँगा।

आप सविनय अवज्ञाके इच्छुक है। मै भी इसे चाहता हूँ। मै जानता हूँ कि सशस्त्र विद्रोहका एक यही विकल्प हे। यह हमारी शक्तिकी वास्तविक कसौटी हे। किन्तु अवज्ञाके सविनय होनेके लिए अनुशासन, विचार, सावधानी तथा सतर्कताकी आवश्यकता हे। सविनय अवज्ञा और आवेश तथा उत्तेजनामे वडा वैर है। फिर मे यह भी जानता हूँ कि चरखे और खद्दरका उचित एव सावधानीके साथ सगठन किये विना सविनय अवज्ञा सम्भव ही नही हे। जैसा कि लालाजीने कहा हे और ठीक कहा हे कि हम स्वराज्य तो प्राप्त कर सकते है, किन्तु उस हालतमे उसे कायम रखनेकी शक्ति हममे नही होगी। यह वात उन्होंने किसी और अवसरपर, किसी और विषयके सम्वन्धमे कही थी, किन्तु उनका वह कथन यदि अधिक नही तो उतने ही जोरसे सविनय अवज्ञापर भी लागू होता हे।

आपने मेरी वात अत्यन्त धैर्य ओर शिष्टताके साथ सुनी इसलिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। मुझे आशा करनी चाहिए कि यदि मेरी वात आपको ठीक जँची हो तो आप उसे कार्यरूपमे परिणत करनेकी कृपा भी करेगे। ईश्वर आपको इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए आवश्यक वल और वुद्धि दे। (जोरकी हर्षध्वनि)।

अन्तमें गाधीजीने प्रार्थना की कि सव लोग अपने स्थानोपर वैठे रहे और मुझे विना किसी वाधाके इस सभासे जाने दें।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, ९-३-१९२५

१५०. काठियावाड़के संस्मरण – २

दूसरे राज्य

मुझे पता चला हे कि जिस प्रकार राजकोटके ठाकुर साहव लोकप्रिय है उसी प्रकार पोरवन्दर, वाँकानेर ओर वढवानके नरेश भी है। ऐसा लगता हे कि ये चारो अपनी-अपनी प्रजाका हित चाहते है। मेरे दिलपर यह छाप पडी कि ये सव राजा प्रजाको सन्तुष्ट करनेकी कोशिश कर रहे है। पर मै एक वात कहे विना नही रह सकता। हर राज्यमे न्यूनाधिक परिमाणमे राज्यका खर्च आमदनीसे वहुत वढा हुआ दिखाई दिया। मेरा विश्वास हे कि जवतक राजा अपने खर्चपर अकुश नही रखेगे तवतक वे अपनेको प्रजाका रक्षक सिद्ध नही कर सकेगे। राजा प्रजाकी मेहनत-कमाईमे से हिस्सा लेता हे और उसके वदलेमे वह उसकी सेवा करता है। जिसकी सेवाके विना प्रजाका काम नही चल सकता, वही सरदार वनता है, पर वह जवतक प्रजाके प्रति वफादार रहता है तभीतक वह उसका सच्चा सरदार रहता है। वफादार राजामे दो गुण होने चाहिए—एक तो वह प्रजाके सुख, उसकी स्वतन्त्रता और उसके

नीति-सदाचारकी रक्षा करे और दूसरा प्रजासे मिले धनका सदुपयोग करे। यदि राजा अपने लिए अनुचित खर्च करता है तो वह धनका सदुपयोग नही करता। भले ही वह प्रजाकी अपेक्षा ज्यादा खर्च करे, उससे ज्यादा आमोद-प्रमोद करना चाहे तो करे, किन्तु उसकी एक हद अवश्य होनी चाहिए। मैं तटस्थ रहकर यह भली-भाँति देख रहा हूँ कि जन-जागृतिके इस युगमे मर्यादाकी बडी आवश्यकता है। ऐसी कोई भी सस्था जो अपनी लोकोपयोगिता सिद्ध नही कर सकती, अधिक कालतक जीवित नही रह सकती। एक सप्ताहमे काठियावाडके चार राज्योंका जितना निरीक्षण हो सकता है उसके आधारपर कहा जा सकता है कि काठियावाड राजनीतिक परिषद्मे मैंने वहाँ प्रचलित राज्यतन्त्रका बचाव करते हुए जो विचार व्यक्त किये थे उनसे मेरे विचारोकी पुष्टि हुई है। पर उसके साथ ही मैं उस तन्त्रकी कमजोरियाँ भी देख पाया हूँ। राजाओके एक शुभेपीकी हैसियतसे मैं नम्रतापूर्वक कहना चाहता हूँ कि यदि वे पूर्वोक्त बातोमे स्वेच्छापूर्वक सुधार कर देगे तो वे अधिक लोकप्रिय ही नही बनेगे वरन् अपने सिंहासनकी शोभा भी बढायेगे। वही सच्चा शासक है जो अपनी सत्ताकी मर्यादा खुद ही बाँध लेता है। ईश्वरने अपनी सत्ताको स्वय नियमित कर लिया है, उसका दुरुपयोग करनेकी शक्ति होते हुए भी वह ऐसा नही करता। शरीरको जीवित रखनेका सामर्थ्य रहते हुए जो उसका त्याग करता है वह मोक्ष प्राप्त करता है। शुद्धतम ब्रह्मचारी स्वेच्छासे अपनी शक्तिका सग्रह करता हुआ ऐसी पराकाष्ठाको पहुँच जाता है कि अन्तको क्लीवकी तरह हो जाता है। यह स्थिति अवर्णनीय है—द्वन्द्वातीत है। वह जडकी तरह होते हुए भी शुद्ध निर्विकार चैतन्य है। इसीसे अग्रेजीमे कहावत है कि राजा गलती कर ही नही सकता। भागवतकार कहते हैं कि तेजस्वीमे दोप नही होता। तुलसीदासने कहा है, 'समरथको नहिं दोप गुसाईं'। इस कालमे इन तीनो वचनोका अनर्थ हो रहा है। अर्थात् यह कि बलवानके दोप करते हुए भी हम यह मानते हैं और दूसरोसे मनवाते हैं कि वह दोपी नही है। सच बात तो उससे उलटी ही है। बलवान वही है जो अपने बलका दुरुपयोग नही करता, अपनी इच्छासे वह बलका दुरुपयोग करना त्याग देता है—वह भी इस हदतक कि वह दुरुपयोग करनेके लिए अशक्त बन जाता है। हमारे राजा भी ऐसे क्यो न हो? क्या ऐसा होना उनकी शक्तिसे बाहरकी बात है?

राष्ट्रीय शाला

दो राष्ट्रीय शालाओका उद्घाटन मेरे सामने हुआ है। एक तो राजकोट की, इसका उद्घाटन श्रीमान् ठाकुर साहबने ही किया—मैं तो केवल उपस्थित था। दूसरी बढवानकी। इसका उद्घाटन मेरे हाथो हुआ। दोनोपर काले बादल मडराये। दोनोके सामने अछूतोका सवाल आया। दोनोंने इस समस्याको हल कर लिया है। फिर भी इसके सम्बन्धमे वे निर्भय नही हुई। निर्भय होनेमे ही शिक्षकोकी शक्तिका माप मालूम हो जायेगा। यदि शिक्षक विवेक, शान्ति, मर्यादा तथा तितिक्षापूर्वक अपना कार्य करते रहे तो अन्त्यजोको अपनाते हुए भी वे लोगोके विरोधके पात्र न होगे और शालाओमे दूसरे वर्णोंके बालक अवश्य आ जायेंगे। शालाओकी राष्ट्रीयता अध्या-

पकोके चरित्र बलपर, उनके देश-प्रेमपर, उनकी त्याग-भावना तथा उनकी दृढता-पर अवलम्बित है। दोनोकी इमारतोको मैं मीठी ईर्ष्यासे देखता हूँ। यदि इनमे तपस्वी अध्यापक रहे तो ठीक होगा अन्यथा सम्भव है उनके द्वारा हमारी अधोगति हो। बर्मामे एक समय ऐसा था कि हर गाँवमे बढिया इमारतवाली सुन्दर शालाओमे वहॉके साधु परिश्रमके साथ शिक्षा देते थे। इमारते तो आज वही है, पर जब मैं उनमे गया तो वहॉ मुझे ऊँघते हुए आलसी साधु ही दिखे। शालाएँ तो नाम-मात्रको रह गई है। उनके प्राण निकल चुके है। जिस तरह अन्त्यजोको भरती करना राष्ट्रीय शालाका आवश्यक अग है उसी तरह चरखा भी है। इस चक्रकी नियमित गतिपर भारतवर्षके चक्रकी गति अवलम्बित है। इस चक्रका पूर्ण विकास तो राष्ट्रीय शालाओ-के द्वारा ही हो सकता है। मैं प्रत्येक शालामे उसकी साधनाकी आशा रखता हूँ। शिक्षकगण चरखेके प्रति जिस हदतक आदर पैदा कर सकेगे उसी हदतक वे देशभक्त माने जायेगे। आलस्यकी नीदमे सोये इस देशको उद्यमी बनानेका चरखा ही एक साधन है। चरखा एक निष्काम उद्यम है और इसी कारण पूर्णत फल-दायी है। वह उद्यमका एक उत्कृष्ट स्वरूप है। आरम्भमे वह भले ही नीरस मालूम हो, पर उसकी नीरसतामे ही रस समाया हुआ है। उस रसके लिए रुचि पैदा करनेका काम शिक्षकोका है। मैं आशा करता हूँ कि दोनो शालाएँ आदर्श बनेगी।

बढवानके नागरिकोसे

राजकोट और बढवानके निवासियोसे मेरा निवेदन है कि वे अपनी-अपनी शालाओमे दिलचस्पी ले, यह निवेदन मुख्यतया बढवानके नागरिकोसे है। बढवानमे आचार्य फूलचन्द तथा नगर निवासियोके बीच कुछ तनाव था। मैंने इस मामलेको समझनेका अवसर खोज निकाला और उन व्यक्तियोसे भी मिला जिन्हे आचार्य फूल-चन्दके विरुद्ध कुछ शिकायते थी। बातचीत करनेपर मुझे एसा लगा कि इन शिका-यतोका कारण भाई फूलचन्दके स्वभावकी उग्रताके सिवा और कुछ न था। नवीन व्यवस्थामे नागरिकोका महत्त्वपूर्ण स्थान है। शाला नगर-निवासियोकी ही हैं। इसलिए यह वाछनीय है कि वे उसके सचालनमे सोत्साह भाग ले और यह उनका कर्त्तव्य भी है। एक समय था जब वे ऐसा करते थे और शालाके लिए धन भी देते थे। यह बात सभीकी जुबानपर थी कि अगर भाई शिवलाल जीवित होते तो बढवानका तेज कुछ और ही होता। परन्तु मरना तो प्रत्येक व्यक्तिको है। यदि हम चाहे तो जिनसे हमे स्नेह है उन्हे हम अमर बना सकते हैं। बढवानके अनेक बुद्धिमान नागरिक शिवलाल क्यो नही बन सकते? इस बातकी उम्मीद करना कि बढवानके सम्पन्न नागरिक अपने नगरकी शालाका खर्च उठा लेगे, कोई बडी बात नही है। इस प्रकारकी सस्थाओके प्राण उनमे काम करनेवाले अध्यापक है। शरीर नागरिकोको बनाना चाहिए।

उद्योग-शाला

बढवानमे भाई शिवलाल द्वारा स्थापित कताई-बुनाई सम्बन्धी उद्योग-शाला भी उल्लेखनीय है। इस शालाके द्वारा खादी-प्रचार कार्य समुचित रूपसे हुआ है, परन्तु

समीपवर्ती ग्रामोकी क्षमताको देखते हुए कहा जा सकता है कि काफी प्रचार नही हुआ है। हाँ, जहा आसपास कुछ काम न हुआ हो वहाँ थोडा काम भी बहुत दीखता है, इस न्यायसे यह माना जा सकता है कि वढवानने काफी काम किया है। परन्तु हम थोडेसे सन्तोष नही कर सकते। सवाल तो यह है कि वढवानने शक्ति-भर योग दिया है या नही? इस नगरकी शक्ति बहुत बडी है—यह मैने देख लिया है। यह उद्योग-शाला भाई शिवलालका स्मारक है, चरखा-प्रचार उनके जीवनका मुख्य ध्येय था। मुझे बतलाया गया था कि उन्होने चरखेके महत्त्वको भली प्रकार जान लिया था। मै चाहता हूँ कि वढवानमे चरखेसे सम्बन्धित सभी कलाओका विकास हो।

तीन-स्रोत

इन दिनो काठियावाडमे खादीके तीन स्रोत है—वढवान, मढडा और अमरेली। कार्यवाहक समितिने और अधिक खादी तैयार करनेकी योजना बनाई है। पर ये तीनो केन्द्र अपने अनुभवोका आदान-प्रदान करते हुए एक-दूसरेसे स्वस्थ स्पर्द्धा करे यह वाछनीय है। तीनो केन्द्र खादीकी उत्पत्ति बहुत बढा सकते है। राज्योकी ओरसे खादीको प्रोत्साहन मिलनेकी पूर्ण आशा है। इसलिए वे बिना रुके खादीका उत्पादन करते रहे। लोगोमे खादी-प्रचार लगातार करते रहनेके लिए उचित कार्रवाई की जानी चाहिए। यह कार्य मुख्यत कार्यवाहक समितिका है। मै तो यह चाहता हूँ कि कार्यवाहक समिति तमाम खादी लागतके दामोपर खरीद ले और उसका सग्रह करे। समितिको खादीका इजारा ले लेना चाहिए। अमेरिकामे जो बात धनवान लोग अपना धन बढानेके लिए करते है वह हम यहाँ जनहितके लिए करे। किसी एक चीजके व्यापारको अपने हाथमे लेनेके लिए वे उसे साराका-सारा खरीद लेते है और फिर उसे मनमाने दामपर बेचते है। हम लोग हितकी भावनासे खादीके सम्बन्धमे ऐसा ही क्यो न करे? अमेरिकामे वे ऐसा दाम बढानेके लिए करते है, हम दाम घटानेके लिए करे। खादीके उत्पादनका खर्च सब जगह एक समान नही होता। क्योकि कताई आदिकी दरोमे थोडा-बहुत फर्क रहा ही करता है। फिर हम तो कपास माँग रहे है। यह खादीके लिए "बाउटी"—प्रोत्साहन—के रूपमे है। इससे समिति घाटेपर भी खादी बेच सकती है। पर खानगी सस्थाएँ ऐसा नही कर सकती। समिति खादी बनानेसे सम्बन्ध रखनेवाली सब चीजोके दाम और दानमे मिली कपासका दाम जोडकर जो भाव पडे उसपर खादी बेचे। खानगी सस्थाओसे खादी किस दरपर ली जाये, इसका निर्णय उनसे मिलकर किया जा सकता है। इतनी बाते तो ध्यानमे रखी ही जानी चाहिए।

१ स्थानीय रूपसे जितना माल बिक सके, बेच दिया जाये। जैसे कि वढवानमे तैयार की गई खादीके कुछ भागकी बिक्री वढवानमे हो जानी चाहिए। इस सम्बन्धमे भिन्न-भिन्न सस्थाओको अपने-अपने स्थानोपर अवश्य प्रयत्न करना चाहिए।

२ सस्थाओको सूतकी किस्म और अच्छी बनाने, उसे बटदार और महीन बनानेकी ओर ध्यान देना चाहिए।

३ वुनाईमे मुधार करना चाहिए।

४ समितिसे लागत-मात्र ही ली जाये, और इस सम्वन्वमे समितिको इत-मीनान दिला दिया जाये।

यह काम तभी हो सकता हे जव सव लोग उमग, परिश्रम, और ईमानदारीके साथ परस्पर विश्वास रखकर काम करे। अभी वहुतेरे लोगोके दिलोमे लोकसेवाके लिए एक साथ मिलकर काम करनेकी इच्छा उत्पन्न नही हुई हे और न ही उसकी योग्यता आ पाई हे। इससे हमारे काममे अनेक रुकावटे पैदा होती हैं। ये सस्थाएँ इन तमाम दोपोमे मुक्त रह सकती हैं क्योकि उनके कार्यकर्त्ताओमे लोकसेवाकी भावनाका पर्याप्त विकास हो गया हे। उनमे धर्म-भावना है और उन्हे थोडा-वहुत अनुभव भी हे। केवल साथ मिलकर काम करनेकी और एक दूसरेके स्वभावको सहन करनेकी तालीमकी कुछ कमी हो सकती है। पर जहाँ भावना अच्छी हे वहाँ इम खामीको अनुभव ही दूर कर मकेगा।

चरखेमें सुधार

सामान्य तौरपर मै यात्रामे भी अपना चरखा अपने माथ रखता हूँ। लेकिन काठियावाडपर श्रद्धा होनेके कारण और वहुत-सी चीजोको साथ रखनेकी अनिच्छाके कारण मैने चरखा साथ नही लिया और यह निश्चय किया कि जहाँ जाऊँगा वहीमे चरखा माँग लूँगा। इससे मुझे परीक्षाका भी ठीक-ठीक अवसर मिल गया। मैने राज-कोटमे तो अच्छे-अच्छे चरखे देखनेकी उम्मीद बाँध रखी थी। लेकिन जो मिला उसे मै वहुत अच्छा नही कह सकता। वढिया चरखा तो वही है जो वरावर चलता हो, जिसकी साडी, माल इत्यादि सव अच्छे हो और जिसका तकुआ पतला और विलकुल सीधा हो। मुझे नही लगता कि वहाँका चरखा सव वातोमे पूरा उतरा। चरखेपर जो गर्द और धूल चढी हुई थी वह तो विलकुल असह्य थी। कारीगर हमेशा अपने औजा-रोको अच्छीसे-अच्छी हालतमे रखता हे। चरखेपर धूल क्यो जमी हो? जेतपुरने तो हद कर दी। जोशमे आकर देवचन्दभाईने कह दिया कि "मेरे पास अच्छा चरखा हे, अभी भेजता हूँ।" वे मुझे मोटरमे विठा कर जेतपुर ले गय। रातके ग्यारह वजे थे। लेकिन मै विना काते कैसे मो सकता था? चरखा तो लाया गया, लेकिन वह चलता ही न था। तकुआ तो मानो गिरनारका मेहमान हो, साडीकी जगह जैमा-तैमा लपेटा गया सूत, माल तो मानो रस्सा था। चरखा चलाते हुए साधारण तौरपर मेरा कन्धा नही थकता। लेकिन इस अवसरपर तो चरखा चलानेमे मुझे इतना जोर लगाना पडा कि आधे घटेमे ही मेरा कन्धा थक गया। इतना वढिया था देवचन्द-भाईका चरखा! ऐसे कटु अनुभवके वाद मानो उस चरखेकी फजीहत करानेके लिए ही देवचन्दभाईने सभा आयोजित की हो! मैने उस सभामे उस चरखेको तथा उसके मालिकको वदनाम करनेमे कुछ उठा नही रखा। लेकिन जैमा कि मै ऊपर कह गया हूँ, समरथको दोप नही लगता। इस लोकोक्तिका अनर्थ करके देवचन्दभाईके चरखेका दोष कौन निकालेगा? देवचन्दभाई तो मन्त्री ठहरे। उनके चरखेमे तो दोप हो ही नही सकते। उन्होने भी यही मान लिया था। इसलिए मै खुलेआम यह वता देना

चाहता हूँ कि यदि देवचन्दभाई अपने चरखेको तुरन्त नही सुधारेंगे तो वे मन्त्रीपदसे हटा दिये जायेंगे।

लेकिन विनोद छोडिए। विनोदमे फटकार तो है ही। परन्तु चूंकि यह आग्रही-की डाँट है इसलिए उससे चोट तो लगेगी, लेकिन वह मीठी प्रतीत होगी। देव-चन्दभाई-जैसा खरा और चरित्रवान मन्त्री मिलना मुश्किल है। उनकी सेवाओंका जितना भी उपयोग हम कर सके, हमे करना चाहिए। यह नही हो सकता कि प्रजा सोती हो और राजा जागता रहे। हम स्वय ही लापरवाह रहे तो फिर देवचन्दभाई सावधान कैसे रह सकेंगे? देवचन्दभाई चरखेका महत्त्व तो समझते है लेकिन चारो तरफ वाता-वरणमे शिथिलता होनेके कारण उन्होने उसको दुरुस्त नही किया है, और उसे अच्छा नही बनाया। यदि उन्हे केवल चरखेकी ही साधना करनी होती तो उनके चरखेकी यह अपूर्णता अक्षम्य थी। पोरबन्दरमें असन्तोष कुछ कम रहा, इसी प्रकार वांकानेरमे भी। इस अपूर्णताको देखकर मुझे काठियावाडमे चरखेकी प्रगतिका अन्दाजा हो गया। चरखेको जो सम्मानपूर्ण स्थान मिलना चाहिए अभी नही मिला है। चरखेको लोग सहन,कर लेते है लेकिन उसका स्वागत नही करते है। वह अभी अभ्यागत है, मान-नीय अतिथि नही बना है। और जबतक उसका अतिथि-जैसा स्वागत न होगा, काठियावाडकी भूख नही मिटेगी।

चरखेकी अपूर्णताके बारेमें मैंने जो इतना विस्तारसे लिखा है उसमे कुछ मतलब है। चरखेके दोष ढूंढ निकालना आसान है। मेरे सुझाव ये है

(१) मन्त्री लोग चरखोकी गिनती करायें।

(२) चरखोकी जाँच करनेके लिए एक या अधिक निरीक्षक नियुक्त किये जाये। और वे घूम-घूमकर प्रत्येक चरखेकी जाँच करे।

(३) चरखेके मालिकोसे अपने-अपने चरखेके दोषोकी शिकायतें दर्ज करानेका अनुरोध किया जाये।

(४) चालू चरखोके तकुए आदि सुधार दिये जाये। बडे तकुओको बदल दे और तकुएके पायोमे आवश्यक फेरफार कर दे।

(५) निरीक्षक लोग चरखेके मालिकोको उसमे किये गये सुधारोके बारेमे समझाएँ।

(६) निरीक्षक जिस-जिस गाँवमे जाये वहाँ एक स्थानीय व्यक्तिको इस कामके लिए तैयार करे और उसका नाम दर्ज कर ले।

(७) वह इसका भी हिसाब रखे कि किस चरखेसे कितना सूत काता जाता है और वह कितने घटे चलाया जाता है।

इस प्रकार व्यवस्थित काम करनेसे थोडे ही समयमे चरखेमे और उससे उत्पन्न होनेवाले सूतमे बडा सुधार होगा। मैंने अनुभव किया है कि मैं अपने चरखेपर आधे घटेमे १०० गज सूत आसानीसे कात सकता हूँ परन्तु इन चरखोपर तो मैं मुश्किल-से ५० गज सूत ही कात सका। और अच्छे चरखेपर कातनेमे जो आनन्द मिलता है

वह मुझे राजकोटके सिवा और कही भी न मिला। इस वर्षके अन्ततक काठियावाडमे खादीकी नींव मजबूत हो जाये — इतना ही नही बल्कि हम इतना बारीक सूत कातने लगें कि खादीकी साड़ियाँ भी बनाई जा सके। मैंने देखा है कि यशोदा बहनने अपने पति उत्तमभाईके लिए हाथ-कते सूतकी धोतियाँ बुनवाई थी। ये धोतियाँ आन्ध्रकी बारीक धोतियोंके मुकाबलेमें रखे जाने योग्य थी। सैकडो भाई-बहन इतना बारीक सूत क्यों नही कात सकते?

राजनीति

परिषद्के समय ऐसे विभाग किये गये थे कि प्रजा चरखे चलाये और खादी पहने और मैं राजनीतिक मामलोको देखूँ। उस विभाजनका अर्थ तो मैं समझा चुका हूँ लेकिन फिर भी उसे स्पष्ट करनेकी आवश्यकता मालूम होती है। उसका अर्थ यह कि यदि जनता जागृत रहकर अपनी प्रतिज्ञाका पालन करेगी तो मैं भी जागृत रहूँगा और अपनी प्रतिज्ञाका पालन करूँगा। जनता यदि जागृत रहती है तो अपनी प्रतिज्ञाका सफलतापूर्वक पालन कर सकती है क्योंकि सफलता प्राप्त करना उसके अपने हाथमें है। लेकिन सम्भव है कि मैं जागृत रहनेपर भी और अपनी प्रतिज्ञाका पालन करने-पर भी सफल न होऊँ, क्योंकि मेरी सफलता दूसरोपर निर्भर है। जनताके प्रतिज्ञा-पालनपर मेरी सफलताका दारोमदार है। बड़े दुःखकी बात तो यह है कि आज भी सूतका राजनीतिसे क्या सम्बन्ध है, यह समझाना पडता है। सूत कातनेमे ही जनताकी सामूहिक शक्ति निहित है। मुझे विश्वास है कि उस शक्तिका अदृश्य प्रभाव सर्वत्र पडेगा। यह हो या न हो, लेकिन यह आवश्यक है कि जनता मेरी प्रतिज्ञाका अर्थ समझ ले। यह नही कह सकता कि मैं कुछ कर सकूँगा ही। जिसे मैं सर्वोत्तम मार्ग समझता हूँ वह मैंने जनताको दिखा दिया है। केवल आन्दोलन करनेसे ही जनता कुछ नही प्राप्त कर सकती। राजाओकी स्थिति भी समझ लेनी चाहिए। निन्दा करनेसे या टीका करनेसे ही कुछ नही बनता। इस स्थितिको समझनेके लिए ही मैंने परिषद्को राज-नीतिक प्रकरणोके सम्बन्धमे चुप रहनेकी सलाह दी थी। मैंने प्रतिज्ञा की थी कि अध्यक्षकी हैसियतसे इस सम्बन्धमें जितनी जाँच कर सकता हूँ, उतनी करूँगा। उसका पालन करनेका मैं अब भी प्रयत्न कर रहा हूँ। मैं निश्चित होकर न बैठा हूँ और न बैठूँगा। लेकिन इसका मतलब यह नही कि जिसे बीमारी है वह अपनी बीमारीका इलाज ही न करे। मेरी सलाहका मतलब तो सिर्फ यही था कि पूर्वोक्त सहायता ही परिषद्की तरफसे मिल सकती है। यह समझ लेना चाहिए कि न्याय प्राप्त करनेके लिए अगर लोग सत्य और शान्तिपूर्ण उपायोको काममे लाना चाहे तो उसमे मेरी तरफसे कोई रुकावट न होगी। परिषद्से जितनी भी मदद हो सकेगी वह करेगी। आज उस मददका यह रूप है कि जिन राज्योके बारेमे शिकायतें हो रही है उनके सम्बन्धमे मैं अपनी अनुनय-विनय करनेकी शक्तिका उपयोग करूँ। सफलता तो मामले और उसमे सम्बन्धित लोगोकी सचाई तथा जनताके प्रतिज्ञा-पालनपर निर्भर है। जनता-को भी अपनी कार्यदक्षताकी छाप डालनी चाहिए। जनता यदि रचनात्मक कार्य करेगी और आत्मसम्मान बनाये रखेगी तो उसका आत्मविश्वास बढेगा। आज तो

दूसरे भागोकी ही तरह काठियावाडकी भी जनता अपना आत्मविश्वास खो बैठी है। जनताको भी अपनी कार्यदक्षताकी छाप डालनी चाहिए। लेकिन मेरा अनुभव तो यह है कि काठियावाडके बहुतसे राज्योमे स्थिति यह है कि जनता जितनी चाहे उतनी प्रगति कर सकती है। ब्रिटिश प्रशासनमे जनताको जो सुविधाएँ प्राप्त नही है वे काठियावाडकी रियासतोमे है। रचनात्मक कार्य करके ही जनता इन सुविधाओका पूरा लाभ उठा सकती है।

१ अप्रैल

काठियावाडने मुझे इतना मोह लिया है कि मैंने अप्रैलमे फिर काठियावाड जानेके लिए अवकाश निकाला है। बोटादकी अन्त्यज शाला, अमरेली खादी कार्यालयका काम और मढडाका आश्रम देखनेके लिए मुझे जाना तो था ही। लेकिन पिछली बार मैं वहाँ नही जा सका था। जो लोग मुझे कही भी ले जाना चाहते है वे देवचन्दभाई और अमरेली कार्यालयके साथ इस सम्बन्धमे बात कर ले। मैं चाहता हूँ कि जहाँ खादीका आकर्षण न हो वहाँ मुझे ले जानेकी बात कोई न सोचे। अप्रैलमे बहुतसे लोगोके सदस्य बननेकी आशा करता हूँ और यह आशा भी करता हूँ कि जिन रुईका वादा किया गया था वह प्राप्त हो जायेगी, उसके लिए और लोग भी वादा करेंगे। जिन केन्द्रोको खोलनेके बारेमे राजकोटमे विचार हुआ है वे सब केन्द्र काम करने लगेंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ८-३-१९२५

१५१. टिप्पणियाँ

एक बहनकी भावना

भाई विट्ठलदास जेराजाणी लिखते है[1]

इसका रस तो जिसने अनुभव किया है वही जानता है। जिसने अपने हाथ-कते सूतका और अपने हाथसे बुना या किसी दूसरेसे बुनवाया हुआ कपडा पहना है वह इस बहनकी आँखोसे गिरे हुए मोती-जैसे आँसुओका मूल्य समझ सकता है। एक भाईका अपने हाथसे कते हुए सूतका बना तौलिया खो गया, जबतक वह मिल न गया तबतक उसकी बेचैनी कम नही हुई। हम एक दियासलाईकी सीक या एक आल-पिनका कोई मूल्य नही समझते, किन्तु यदि वह हमारी ही बनाई हुई हो तो? अपने हाथकी पकी रसोईमे जो मिठास और भाव होता है, वही अपने हाथसे काते गये सूतकी बनी खादीमे होता है।

१. यह पत्र यहाँ उद्धृत नही किया गया है। इसमें केन्द्रमे बुनाईके लिए दी गई अपने हाथके कते सूतकी साड़ीके केन्द्रसे गुम हो जानेपर एक बहनके खेदका वर्णन था। बादमें वह साड़ी मिल गई थी।

१५२. भाषण : एर्नाकुलम्में[1]

८ मार्च, १९२५

अभिनन्दन-पत्र तथा उसमे अभिव्यक्त भावनाओंके लिए मै आपको धन्यवाद देता हूँ। यह मेरे लिए अत्यन्त दु:खकी बात है कि इस समय मेरे साथ न तो मेरे मित्र मौलाना शौकत अली है और न मौलाना मुहम्मद अली। जैसाकि आप जानते है, भारत-का दौरा करते समय हम सदा ही साथ रहे है। किन्तु उनमे से एक भाई आज पत्रकारितामे व्यस्त हो गये है और दूसरे महान् भाईने बम्बई और बम्बईके आस-पासके कार्योमे अपनेको बिलकुल तल्लीन कर लिया है। चूँकि मै केवल वाइकोम तथा उस प्रदेशमे, जहाँ मुझे अपने वर्तमान दौरेमे काम करना है, प्रवेश करनेके लिए इस प्रान्तसे गुजर रहा हूँ, मुझे आपका यह अभिनन्दन-पत्र स्वीकार करते हुए अत्यन्त प्रसन्नता होती है। यह यात्रा मैने शान्तिके उद्देश्यसे की है, इसलिए मै चाहता हूँ कि मुझे वह सम्पूर्ण समर्थन आप दे जो मुझे इस देशके कोने-कोनेसे सहमतिके रूपमे मिल सकता है। सबसे अधिक शुभकामना मै उन लोगोकी प्राप्त करना चाहता हूँ जिनका प्रार्थनामे विश्वास है, चाहे वे हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, यहूदी या पारसी कोई भी हो। वे चाहे किसी भी धर्मभे विश्वास क्यो न करते हो, यदि वे प्रार्थनामे विश्वास करते है तो मै चाहता हूँ कि वे मेरे इस उद्देश्यकी सफलताके लिए प्रार्थना करे।

कुछ दूसरी चीजे भी है जिनमे मेरी दिलचस्पी है और जिनमे आपकी भी दिलचस्पी होनी चाहिए। इससे कोई भी फर्क नही पडता कि आप खास ब्रिटिश भारतके निवासी है या किसी रक्षित-राज्यके। मेरा अभिप्राय उस हिन्दू-मुस्लिम एकता से है जो भारतके विभिन्न धर्मोको माननेवाली जातियोकी एकताका ही रूप है। मुझे मालूम हुआ है कि इस राज्यमे हिन्दुओ और मुसलमानो या हिन्दुओ या अन्य जातियोके बीच कोई समस्या नही है। यह मेरे लिए अत्यन्त प्रसन्नताका विषय है कि इस राज्यमे सभी जातियाँ शान्ति, सौहार्द तथा भ्रातृभावके साथ रहती है। ईश्वर करे ऐसी स्थिति हमेशा ही बनी रहे। किन्तु जहाँतक चरखेका सम्बन्ध है, आपकी इस तरह प्रशंसा नही की जा सकती। मद्रास नगर-निगम द्वारा दिये गये अभिनन्दन-पत्रका उत्तर देते हुए मैने अवसरका लाभ उठाकर इस तथ्यका उल्लेख किया था कि तबतक भारतमे किसी भी नगरपालिकाका कार्य पूरा नही माना जा सकता जबतक कि वह अपनेको अपने निम्नतम नागरिकोके साथ एक न कर ले। अक्सर यह जान पडता है कि इस क्रमको उलट दिया गया है, अर्थात् नगरपालिकाएँ उन्हे ही देती है जिनके पास पहले ही काफी है और उन्हीसे अधिक लेती है जिनके पास कि पहलेसे ही बहुत कम है। (हँसी) वे धनी और शक्तिशाली लोगोकी ज्यादा परवाह करती है और गरीब और दलितकी बिलकुल भी परवाह नही करती, या कम करती है। (तालियाँ) मुझे आशा है कि

१ एर्नाकुलम्-निगम द्वारा दिये गये अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें।

यह वात इस नगरपर लागू नही होती होगी और जिस वस्तुको जो स्थान दिया जाना चाहिए यहाँ उसे वही स्थान दिया जा रहा होगा। इसलिए मेरा चरखेका सुझाव देना आपके प्रशसनीय कार्योंमे केवल एक कार्य और जोडना है। यह मेरे लिए गरीव और अमीरके वीच अटूट सम्वन्धका प्रतीक है। यह भारतकी जनताकी गरीवीका एक निश्चित हल है। इसलिए मै आपसे कहता हूँ कि आप चरखेको अपने स्कूलोमे स्थान दे और साथ ही इससे प्राप्त होनेवाली चीज, खद्दरको अपनाये। मै आपसे कहता हूँ कि आप अपने घरोमे इसे जो पवित्र स्थान अतीतमे प्राप्त था, वही फिरसे दे। मैने इसे इस युगका एक यज्ञ कहनेमे सकोच नही किया है। जैसा श्रेष्ठ जन करते है, वैसा ही इतर प्रजा भी करती है, इसलिए आप जवतक स्वय चरखेको नही अपनायेगे तवतक आपको इसका सन्देश भारतके गरीव घरोतक पहुँचानेमे सफलता नही मिलेगी। ईश्वर आपको मेरी नम्रतापूर्वक दी गई इस सलाहका अनुसरण करनेके लिए साहस, वल, और सद्भावना प्रदान करे।

[अग्रेजीमे]

हिन्दू, ९-३-१९२५

१५३. भाषण : कोचीनकी सार्वजनिक सभामे

८ मार्च, १९२५

मित्रो,

मुझे इस वातकी वडी खुशी है कि आखिरकार मैं आपसे मिल सका। जव मैंने वाइकोम आनेका निश्चय किया था तव मुझे इस वातकी कोई आशा नही थी कि वहाँ रवाना होनेके पहले मेरा यहाँ आना जरूरी और सम्भव हो जायेगा। मै जानता हूँ कि आपका नगर ऐतिहासिक है। यहाँ आकर न जाने कितनी वाते मनमे जाग उठी है। वे सभी यादे सुखद नही है। आप समुद्रके किनारे रहते है, इसलिए आप जानते है कि साहसिक कार्योंसे क्या-कुछ कर दिखाया जा सकता है। समुद्र साहसिक कार्योंका प्रतीक है। किन्तु मै आपसे वैसे साहसिक कार्योंकी अपेक्षा नही रखता जो समुद्री किनारेके लोगोमे जुडे हुए माने जाते है। हमे जिस वातकी जरूरत है वह तो यह है कि हममे अपने राष्ट्रीय जीवनमे साहसिक कार्य करनेकी भावना आये। यदि हमे ऐसा लगता है कि हमने अपने लक्ष्यकी ओर नहीके वरावर प्रगति की है तो इसका कारण यह है कि हममे साहसिक कार्य करनेकी भावना नही है। उदाहरणके लिए हिन्दू धर्मकी बुराइयोको ढूँढनेके लिए साहसिक भावनाकी आवश्यकता है। जिन लोगोमे यह भावना नही है वे जिन परिस्थितियोमे रहते है, उन्हीसे सन्तुष्ट रहते है। वे यह तक देखनेकी जरूरत नही मानते कि वे बुरी है या भली। दक्षिण आफ्रिकाके अपने २० वर्षोंके प्रवासके वाद जवसे भारत आया हूँ तभीसे हिन्दुओसे कहता आ रहा हूँ कि हमारे हिन्दू धर्मका एक कलक है, हमे उसे दूर करना होगा। यह कलक अस्पृश्यता है।

मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि यहाँ तो अस्पृश्यताके साथ अनुपगम्यता भी जुडी है। मैं यहाँ कट्टरपन्थियोंसे तर्क करने नही आया हूँ। मैं शान्तिका सन्देश लेकर आया हूँ। मैं उनसे विवेकसे काम लेनेकी अपील करता हूँ, उनसे कहता हूँ कि अस्पृश्यता और अनुपगम्यता हिन्दू धर्मका अंग हो ही नही सकती। मैं उनसे यह कहनेके लिए आया हूँ कि जो सत्याग्रही वाइकोममें अत्यधिक कठिनाइयोंके बीच संघर्ष कर रहे हैं वे धर्मको नष्ट करनेके लिए नही, बल्कि उसमें सुधार करनेके लिए निकले हैं। मैं उन्हें इस संघर्षके सभी फलितार्थ बताने आया हूँ। मैं उन्हें यह बतानेके लिए भी आया हूँ कि यदि हमें यह भरोसा हो जाये कि ये बातें खराब हैं तो फिर हमें उनके वर्तमान रूपसे सन्तुष्ट नही रहना चाहिए। इसलिए मुझे इससे प्रसन्नता होती है कि मैं अपने साथ आपकी शुभकामनाएँ और सहानुभूति ले जाऊँगा, क्योंकि आपकी ओरसे नगरपालिकाने मुझे जो अभिनन्दन-पत्र भेंट किया है उसमें विश्वास दिलाया गया है कि आपकी सहानुभूति और आपका समर्थन मेरे साथ है। मैं यह भी चाहता हूँ कि आप इस भावनाको थोडा और आगे ले जाकर यह मालूम कर लें कि सारे भारतमें जनताकी निरन्तर बढती हुई गरीबीका एक प्रबल कारण यह है कि वर्षके करीब एक तिहाई भागमें उनके पास करनेके लिए कुछ भी नही होता। मैं चाहूँगा कि आप भी मेरी तरह यह जान लें कि केवल सौ वर्ष पहले चरखेके लिए घर-घरमें स्थान था, और यदि आज भी लोगोंको चरखा दे दिया जाये, तो उन्हें फुरसतके समयमें लगे रहने योग्य काफी काम मिल जायेगा। किन्तु यदि हम लोग विदेशी या मिलके कपडे पहनना नही छोडते तो फिर हमारा अपने लाखों घरोंमें चरखेको दाखिल कराना बिलकुल बेकार होगा।

इसलिए जब मैं यात्रामें होता हूँ तब भी जिन स्त्री-पुरुषोंसे मिलता हूँ, उनसे कहता हूँ कि विदेशी या मिलके बने कपडोंको छोडना और उनके स्थानपर हाथसे तैयार किये गये खद्दरको पहनना उनका अनिवार्य कर्त्तव्य है। मलाबारमें आपका ढेर सारे कपडे पहनना व्यर्थकी बात है। मुझे इसमें जरा भी सन्देह नही कि आप लोगोंमें से बहुत-से लोग इस समय मुझसे ईर्ष्या कर रहे होंगे। यहाँके इस मौसममें हम जितने कम कपडे पहनें प्रत्येक दृष्टिकोणसे उतना ही अच्छा है। मैं चाहता हूँ कि आप बिना सोचे-समझे इस विचारको सही न मानने लगें कि प्रतिष्ठा और सभ्यताके लिए ज्यादा कपडे पहनना कोई आवश्यक चीज है। (हँसी और हर्षध्वनि)। "वह व्यक्ति सुन्दर नही है जो सुन्दर कपडे पहनता है, बल्कि सुन्दर वह है जो सुन्दर काम करता है।" सभ्यता, संस्कृति और प्रतिष्ठाकी सर्वाधिक सच्ची कसौटी चरित्र है, न कि कपडे। जब कभी मैं भारतके लोगोंको यह कहते सुनता हूँ कि वे खद्दरके युगसे बहुत आगे बढ चुके हैं और इसलिए अब उनका उस बर्बर युगमें जबकि उनके पूर्वज खद्दरके कपडोंसे सन्तुष्ट हो जाते थे, वापस जाना असम्भव है तो मुझे बडा दुःख होता है। जिन लोगोंका ऐसा विचार है, मैं चाहूँगा कि आप उन्हें यह उत्तर देनेके लिए मेरे साथ हो जायें कि भारतको गरीबी एवं कंगालीसे मुक्त करनेके लिए हम सबको खद्दर ही पहनना चाहिए। उसका सर्वोत्कृष्ट तरीका यही है। आपमें से जो लोग सजधज और महीन वस्त्रोंको पसन्द करते हैं वे अपनी इच्छानुसार सुन्दर महीन सूत कात

या स्वराज्य को प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप प्रयास करेंगे, अपनी बुद्धिका उपयोग करेंगे और कोचीनमें हर घरको चरखेसे सुशोभित करेंगे और साथ ही इस बातका भी ध्यान रखेंगे कि कोचीनका प्रत्येक व्यक्ति खद्दर ही पहने और कुछ नहीं।

मुझे हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नपर कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं जानता हूँ कि आपको अली भाइयोंमें से किसीका भी न आना खल रहा है। अभीतक सारे भारतकी यात्राके इन दौरोंमें से एक भाई मेरे साथ होता ही था किन्तु अब ऐसा करना सम्भव नहीं था। किन्तु मैं आपको इसलिए बधाई देना चाहता हूँ कि यह हिन्दू-मुस्लिम समस्या आपके यहाँ नहीं है। यह मेरे लिए अत्यन्त हर्षकी बात है कि इस राज्यमें विभिन्न धर्मोंको माननेवाली सभी जातियाँ सद्भावना और भाईचारेके साथ रहती हैं। मैं चाहता हूँ कि हम भारतके प्रत्येक भागमें आपके प्रशंसनीय उदाहरणका अनुसरण कर सकें। अपने घरोंमें चरखा और खद्दर दाखिल करनेके लिए तथा हिन्दू समाजको कलंकित करनेवाले अभिशापसे मुक्त करनेके लिए ईश्वर आपको बल और बुद्धि प्रदान करे। ईश्वर करे इस सुन्दर देशमें रहनेवाली सभी जातियाँ सदैव वैसे ही प्रेमके साथ एक होकर रहें, जैसे आज रहती हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ९-३-१९२५

१५४. पत्र : सुब्रह्मण्यम्को

[९ मार्च, १९२५][1]

सुब्र[ह्मण्यम्]

पत्रके लिए धन्यवाद। कल सुबह ८ बजे जिला मजिस्ट्रेटके घर आपसे और अन्य मित्रोंसे मुलाकात होगी। वे सभी लोग जिनका आपने उल्लेख किया है और अन्य जिन्हें आप चुनें, भेंटके समय वहाँ आ जायें। मैं अपनी ओरसे उन व्यक्तियोंके सिवा जिनका कि आपने उल्लेख किया है और किसीको अपने साथ नहीं लाऊँगा। किन्तु कृष्णस्वामी अय्यरके यहाँ न होनेके कारण श्रीयुत कैलप्पन नय्यरको जो उनकी जगह-पर आये हैं, अपने साथ लाना चाहता हूँ, बशर्ते कि आप इसे स्वीकार करें।

आपने ठीक ही कहा है कि दोनों पक्षोंके बीच कोई दुर्भावना नहीं होनी चाहिए। मैं भी यही चाहता हूँ। हमें एक-दूसरेके विचारोंके प्रति सहिष्णु होना ही चाहिए।

अनुपगम्यताकी आपने और दूसरे मित्रोंने जो व्याख्या की है उसके पक्षमें मैं किसी औरका नहीं, शंकराचार्यका प्रमाण चाहता हूँ। यदि यह प्रश्न सौहार्द तथा

१. इस पत्रमें उल्लिखित भेंट १० मार्च, १९२५ को हुई थी।

सन्तोषपूर्ण ढंगसे एवं उस धर्मकी प्रतिष्ठा और शुद्धताके अनुरूप हल हो जाये, जिसमें हमारा और आपका समान रूपसे विश्वास है तो मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होगी।

आपका,
धर्म-सेवक,

[पुनश्च]

मुझे खेद है कि मैं मलयालम नहीं जानता। आपके लिए मेरी हिन्दीको अनूदित कराना कठिन होगा, इसलिए मैं अपना उत्तर अंग्रेजीमें भेज रहा हूँ।

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० १०५९४) की माइक्रोफिल्मसे।

१५५. पत्र: डा० वरदराजुलु नायडूको

१० मार्च, १९२५

प्रिय डा० वरदराजुलु,

गुरुकुल विवादके[1] सन्दर्भमें मैंने श्री अय्यरसे[2] कहा कि जबतक मैं आपसे नहीं मिलता और आपके विचार नहीं सुन लेता तबतक मैं अपना निश्चित मन्तव्य प्रकट नहीं करूँगा। आपकी बात सुननेके बाद मुझे लगता है कि जहाँतक ब्रह्मचारियोंका सम्बन्ध है यदि ब्राह्मण लड़कोंके माता-पिता जोर देते हैं कि उनके बच्चोंको अलग भोजन करनेकी अनुमति मिलनी चाहिए तो इनकी नैतिक आपत्तियोंको मान लेना चाहिए। किन्तु भविष्यके लिए यह घोषणा कर देनी चाहिए कि ऐसे किसी भी ब्रह्मचारीको यहाँ भरती नहीं किया जायेगा जिसके माता-पिताको उसके अन्य ब्रह्मचारियोंके साथ पंक्तिमें बैठकर भोजन करनेमें आपत्ति हो। मुझे आपसे मालूम हुआ है कि गुरुकुलमें रसोइया सदैव ब्राह्मण ही रहेगा। आपकी जो आपत्ति है (वह उचित ही है) वह है अब्राह्मण लड़कोंको ब्राह्मण लड़कोंसे अलग रखनेमें। मेरा भी यह निश्चित विचार है कि जब लड़के भोजन करें तो वे सभी एक ही पंक्तिमें बैठें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-३-१९२५

१ शेरमादेवीमें स्थित तमिल गुरुकुलमें प्रवेश सम्बन्धी प्रश्न।
२ उक्त गुरुकुलके वी० वी० एस० अय्यर।

१५६. वाइकोमके सवर्ण हिन्दू नेताओके साथ बातचीत[1]

[१० मार्च, १९२५]

गाधीजी क्या यह उचित है कि हिन्दुओकी एक समूची जातिको तथाकथित निम्नवर्गमे उत्पन्न होनेके कारण उन सडकोके उपयोगसे वचित कर दिया जाये जिनका उपयोग अहिन्दू, अपराधी, दुश्चरित्र और यहाँतक कि कुत्ते और ढोर भी कर सकते हैं?

नम्बूद्री न्यासी इसके लिए क्या किया जा सकता है? वे अपने कर्मोका फल भोग रहे हैं।

इसमे कोई सन्देह नही कि अछूतोके रूपमें उत्पन्न होनेकी वजहसे उन्हे जो काम मिला है उनके कारण वे वैसे ही कष्ट भोग रहे हैं। अब आप उनके इस कष्ट को और क्यों बढाते हैं? क्या वे अपराधियो और जानवरोसे भी गये बीते हैं?

अवश्यमेव वे ऐसे होगे, नहीं तो ईश्वर उन्हे अछूतोके घरोमें जन्म लेनेकी सजा ही क्यो देता?

ईश्वर उन्हे सजा दे सकता है, किन्तु हम मानव कौन हैं जो ईश्वरका स्थान ग्रहण कर उनकी सजा बढाये?

हम तो केवल निमित्त हैं। उन्होने अपने कर्मोका जो दण्ड पाया है, उसे उनपर लागू करनेके लिए ईश्वर निमित्त रूपमें हमारा उपयोग करता है।

किन्तु मान लीजिए, अवर्ण कहे कि वे आपको सजा देनेके लिए ईश्वरके हाथोमे निमित्त-रूप है तो आप क्या करेगे?

तब सरकार उनके और हमारे बीच आकर उन्हे रोकेगी। अच्छे आदमी भी ऐसा ही करेगे। महात्माजी, हम आपसे प्रार्थना करते है कि आप अवर्णको हमारे युगो पुराने अधिकार छीननेसे रोकिये।

क्या आप यह सिद्ध कर सकते है कि आपको उन्हे सडकोका उपयोग न करने देनेका अधिकार है? मेरा विश्वास है कि पद-दलित जातियोको भी सडकोके उपयोग-का उतना ही अधिकार है जितना आपको है। शास्त्रोमे कही भी ऐसा नही लिखा है कि वे इन सडकोका उपयोग नही कर सकते है।´क्या आप जानते है कि दीवान साहबके विचारानुसार भी आपने गलत रुख अपनाया है?

१ इसका सक्षिप्त विवरण देते हुए हिन्दूने अपने ११-३-१९२५ के अकमें लिखा है "कल सवेरे ही श्री गाधी सत्याग्रहियोकी प्रार्थनामें शामिल हुए ... श्री गाधी इटनतुरित्ति नम्ब्यातिरीके निवास स्थानपर स्थानीय कट्टरपन्थी सवर्ण हिंदुओंके विरोधी नेताओसे मिले। जो लोग श्री गाधीके साथ गये थे, उनम सर्वश्री राजगोपालाचारी, महादेव देसाइ, रामदास गाधी तथा कृष्णस्वामी अय्यर थे। उन्होने बातचीत तीन घटेसे अधिक समयतक की जिसम व्यावहारिक प्रस्ताव इस दृष्टिसे रखे गये कि सघर्ष जल्दी ही समाप्त हो जाये। वे वैकल्पिक प्रस्ताव ये पच निर्णय, जनमत सग्रह तथा चुने हुए पण्डितो द्वारा शकरकी स्मृतियोका परीक्षण। विरोधियोने इनमें से किसीको भी नही माना"।

दीवान साहब भले ही ऐसा मानते हो। वे चाहें जैसा विचार रखें, यह उनकी मर्जीकी बात है। महात्माजी, आप इन जातियोंके लिए दलित शब्दका उपयोग क्यो करते हैं? और क्या आप जानते हैं कि वे दलित क्यो हैं?

जी हा! इसका भी ठीक वही कारण है, जिसके लिए डायरने जलियांवाला बागमे निर्दोषोका सहार किया था।

इसलिए आपके विचारमें जिन्होंने यह प्रथा चलाई, वे डायर कहलाये? क्या आप शकराचार्यको डायर मानेंगे?

मै किसी भी आचार्यको डायर नही कहता। किन्तु मै आपकी कार्यवाहीको जरूर डायरशाही मानता हूँ। यदि कोई आचार्य इस प्रथाको लागू करनेके लिए सचमुच उत्तरदायी है तो उसका अज्ञान भी उतना ही भयानक माना जायेगा जितना कि जनरल डायरका था।

किन्तु हम प्राचीन प्रथाको छोड कैसे सकते हैं? आप कहते हैं कि सत्याग्रही कष्ट उठा रहे हैं। कष्ट तो हम उठा रहे हैं। सत्याग्रही मन्दिरके द्वारपर बैठे रहते हैं। कहीं उनकी छाया हमें अपवित्र न कर दे, इसलिए हमें लम्बे और चक्करदार मार्गसे मन्दिर जाना पडता है। क्या यह कोई बड़ा कष्ट नहीं है?

निश्चित रूपसे यह असाधारण कष्ट है। इसपरसे तो मुझे भेडिये और मेमनेकी कहानी याद आ जाती है। मै आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप कमसे-कम तर्ककी बात तो करे।

धार्मिक मामलोमें तर्क काम नहीं देता।

यदि यह कोई पुरानी सनातनी प्रथा होती तो इसे भारतमे सर्वत्र प्रचलित होना चाहिए था। लेकिन मै इसे देशके अन्य किसी भागमे प्रचलित नही देखता।

निश्चित रूपसे अस्पृश्यता भारतके हर भागमें मिलती है। हम अस्पृश्यताको थोडा और आगे ले गये हैं। बस इतना ही।

आप कहते है कि ये लोग अपराधियोंसे भी गये-बीते है। मान लीजिए कि कल ये मुसलमान या ईसाई बन जाये तो क्या फिर ये अपराधी नही रहेंगे?

(नम्बूद्री न्यासी मौन रहा। किन्तु कमिश्नर देवस्वम्ने उसकी ओरसे उत्तर दिया: नये मुसलमान या ईसाईको यह अधिकार नहीं होगा। पुराने ईसाई और मुसलमान ही इस अधिकारका उपभोग करते हैं।)

राजगोपालाचारी तो क्या ईसाई और मुसलमान ईश्वरके नियमो और आदेशोंको उलट सकते हैं?

(कोई उत्तर नहीं।)

गाधी आप अपने तर्ककी पुष्टिमे शकराचार्यको उद्धृत करते है। क्या आप यह उद्धरण मुझे भी दिखायेंगे?

न्यासी: अवश्य।

और यदि शकराचार्यके ग्रन्थ इस प्रथाका समर्थन न करे तो क्या आप अपने विरोधको वापस ले लेगे?

उनमें इसके काफी प्रमाण है। लेकिन वस्तुत आप उसकी दूसरी व्याख्या करनेमें समर्थ है।

मै उसकी व्याख्या नही करूँगा। व्याख्या तो माने हुए पण्डित करेगे।

यदि व्याख्या प्रथाके विरुद्ध गई तो हम उसे स्वीकार नहीं कर सकते।

इनका यह अर्थ हुआ कि शकराचार्यके ग्रन्थोमे इस प्रथाका कोई समर्थन नही है, किन्तु यह आपके विवेककी कमीके कारण प्रचलित है? मान लीजिए न्यायालय यह निर्णय दे कि अवर्णोके लिए सडके खोल देनी चाहिये?

तो फिर हमें चाहिए कि हम उन सडकोका उपयोग बन्द कर दें और उन मन्दिरोको छोड दें।

यदि महाराजा, शकराचार्यकी भाँति ही जिन्हे कि आप प्रतिवन्धके समर्थनमे उद्धृत करते है, सडकोको खुला छोडनेकी घोषणा जारी कर दे तो आप क्या करेगे?

राज्यको अधिकार है कि वह जो चाहे आदेश जारी करे। हमें उसका पालन करना ही होगा।

मै आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप यह न भूले कि आप हिन्दू-धर्मके न्यासी है, और मुझे आशा है कि आप उसके उज्ज्वल नामपर धब्बा नही लगायेगे। मै आपके सामने एक बीचका रास्ता रखता हूँ। क्या आप जनमत सग्रहको स्वीकार करेगे?

क्या आपका अभिप्राय केवल मन्दिरमें आनेवाले लोगोके मत-सग्रहसे है?

नही, यह उचित नही है। मेरा मतलब सभी सवर्णोके मत-सग्रहसे है। मै अवर्णोके मत-सग्रहकी बात नही कहता। आपको इससे सन्तुष्ट हो जाना चाहिए।

(कोई उत्तर नहीं।)

दूसरा सुझाव है। मान लीजिए कि हम भारतके किसी माने हुए पण्डितसे शकराचार्यके आदेशकी व्याख्या करनेके लिए कहते है। क्या आप उसकी व्याख्याको स्वीकार करेगे?

हो सकता है कि स्मृतिमें ऐसा कोई प्रमाण न हो, किन्तु स्मृतिपर लिखी गई टीकामें काफी प्रमाण मिलेगे।

(यहाँपर एक बूढे न्यासीने कहा परशुरामने हमें सारा मलाबार दिया है। अब यदि आप हमसे कहे कि परशुरामका पट्टा दिखाओ तो हम ऐसा कैसे कर सकते है? प्रस्तुत अधिकारके बारेमें भी यही बात है। इसके लिए हम प्रमाण कहाँसे लायें?)

अन्तिम विकल्पके रूपमे, क्या आप पच फैसलेको स्वीकार करेगे? आप एक पण्डित नियुक्त करे और मै भी सत्याग्रहियोकी ओरसे एक पण्डित नियुक्त करूँ और दीवान साहब निर्णायकका पद ले, आप इस बारेमे क्या कहते है?

(कोई उत्तर नहीं)

[अग्रेजीसे]

एपिक ऑफ त्रावणकोर

२६-१७

१५७. भाषण: वाइकोमकी सार्वजनिक सभामें

१० मार्च, १९२५

मित्रो,

मै जानता हूँ कि आप मुझे इस वातके लिए तो क्षमा कर ही देगे कि मै खडे होकर भाषण नही दे सक रहा हूँ, साथ ही मै यह भी आशा रखता हूँ कि आप मेरे कुछ मिनट विलम्वसे आनेके लिए भी मुझे क्षमा करेगे। मै अपनी ओरसे आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि मेरे यहा आनेमे जो देरी हुई है उसका कारण व्यक्तिगत नही है। जिस उद्देश्यको लेकर मै यहा आया हूँ, उसीके लिए मै सारा दिन व्यस्त रहा। आप लोग इतनी वडी सख्यामे यहाँ उपस्थित है, यह देखकर मुझे वडी प्रसन्नता होती है, क्योकि मै आप सवको अपने आनेका उद्देश्य वता सकूँगा।

किन्तु सवसे पहले मै उन सव लोगोको धन्यवाद देना चाहता हूँ, जिन्होने मुझे कल अभिनन्दन-पत्र भेट किये थे। जव अभिनन्दन-पत्र भेट किये जा रहे थे उस समय मुझे एक पत्र मिला जिसमे अभिनन्दनका विरोध किया गया था और मुझे विश्वास दिलाया गया था कि यह अभिनन्दन-पत्र वाइकोमके रहनेवाले सभी लोगोकी भावनाओका प्रतिनिधित्व नही करता (शर्म, शर्म)। मै सहर्ष इस विरोधको स्वीकार करता हूँ और आपपर उस स्वीकृतिको प्रकट भी कर रहा हूँ। उस पत्रपर कुछ सज्जनोके हस्ताक्षर थे, और इसलिए जाहिर है कि कमसे-कम इन लोगोका समर्थन तो अभिनन्दन-पत्रको या उसकी शब्दावलीको प्राप्त नही था। मुझे इससे भी आश्चर्य नही हुआ कि इस अभिनन्दन-पत्रको वाइकोमके सभी लोगोकी स्वीकृति नही मिली है। मै जानता हूँ कि दुर्भाग्यसे आप सव एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्नपर सहमत नही है। जहाँतक मेरा अपना प्रश्न है, अभिनन्दन-पत्रका न दिया जाना ही मुझे अधिक रुचिकर लगता है। किन्तु अभिनन्दन-पत्र भेट किये ही जाते है तो मुझे उनसे जिन सभाओमे भाषण देने होते है भाषणका मसाला मिल जाता है और इस अभिनन्दन-पत्रसे यह तथ्य भली-भाँति प्रकट हो जाता है। जिन लोगोने आज मुझे अभिनन्दन-पत्र दिया है उन्हे भी मै धन्यवाद देता हूँ। उसमे भी उसी विषयको, जिसके कारण मै यहाँ आया हूँ उठाया गया है। वह विषय है अस्पृश्यता, अनुपगम्यता और उन्हे दूर करनेका तरीका अर्थात् वाइकोममे एक विशिष्ट प्रणाली द्वारा अपनाया गया सत्याग्रह। जैसा कि आप जानते है, प्रारम्भसे ही इस सघर्षके प्रति मेरी गहरी सहानुभूति रही है और मै इसकी हार्दिक सराहना करता रहा हूँ। सम्भव है कि सत्याग्रह चलानेवालोने इस सघर्षमे कोई गलती की हो। ससारमे ऐसा कौन है जिससे गलती न होती हो, किन्तु मुझे इस वातसे सन्तोष है कि यदि कोई गलती हुई भी है तो वह जानवूझकर नही की गई। सत्याग्रह, अपने नामके समान ही, कुछ हदतक एक नया सिद्धान्त है। या यो कहिये कि इसमे एक पुराने सिद्धान्तको नये ढगसे प्रस्तुत किया गया है।

अस्पृश्यता उन प्रश्नोमे से एक है जिसके लिए खास तरहसे सत्याग्रहका सहारा लेना पडता है। क्योकि सत्याग्रह स्वय कष्ट उठानेका तरीका है। अत इसमे उन लोगोको कष्ट नही दिया जाता जो इसका विरोध करते है, वल्कि कष्ट स्वय ही उठाना पडता है। इस समय सत्याग्रहियोने वाइकोममे यह स्थिति ग्रहण की है कि जो सडके वडे मन्दिरके पाससे गुजरती है, उन्हे अछूत या अनुपगम्य समझे जानेवाले लोगोके लिए खोल दिया जाये। इस दावेका आधार मानवता ही है। जहाँतक हिन्दुओ-का सम्बन्ध है ऐसी कोई भी सडक जो जनताके अर्थात् सवर्ण हिन्दुओके लिए खुली है, उन लोगोके लिए भी खुली रहनी चाहिए जो वहिष्कृत है और जिन्हे अछूत या अनुपगम्य कहा जा रहा है। मेरे नम्र विचारमे उनका यह दावा स्वाभाविक और न्यायसगत है। जैसा कि आप जानते है, दक्षिण आफ्रिकाके लम्वे प्रवासके वाद मैने जवसे भारतकी जमीनपर पाँव रखा है तभीसे मै स्पष्ट रूपसे, निडरताके साथ तथा खुलकर अस्पृश्यताके प्रश्नपर वोलता आ रहा हूँ। मै सनातनी हिन्दू होनेका दावा करता हूँ। मै इस वातका भी दावा करता हूँ कि मुझे अपने मतलव-भरके लिए शास्त्रोका काफी ज्ञान है। इसलिए मैं यह सुझाव देनेका साहस करता हूँ कि अस्पृश्यता और अनुपगम्यताके लिए, हमारे इस पवित्र देशमे जैसा उन्हे व्यवहारमे लाया जाता है, हिन्दू शास्त्रोमे न तो कोई विधान ही है और न किसी प्रकारकी स्वीकृति ही। (हर्ष-ध्वनि और तालियाँ)। मेरे कथनका आप न तो अनुमोदन करे और न विरोध करे, उसे केवल सुने। मै उन लोगोको जो हिन्दू धर्मके अनुयायी होनेका दावा करते है, जो हिन्दू धर्मको अपने प्राणोके समान प्रिय समझते है, यह सुझाव देनेका साहस करता हूँ कि प्रत्येक अन्य धर्मके समान ही हिन्दू धर्मको शास्त्रोकी अनुमतिके अलावा भी, अपने-को एक सार्वभौम तर्ककी कसौटीपर कसना जरूरी है। इस तर्क, सार्वभौम ज्ञान तथा शिक्षाके युगमे और ऐसे युगमे जिसमें विभिन्न धर्मोका तुलनात्मक अध्ययन होता हो, जो धर्म केवल अपने ही शास्त्रीय वचनो और प्रमाणोका अनुसरण करता है, मेरे नम्र विचारमे असफल ही रहता है। मेरे विचारमे छुआछूत मानवतापर एक कलक है और इसीलिए हिन्दू धर्मपर भी वह कलक है। यह तर्ककी कसौटीपर खरा नही उतर सकता। यह हिन्दू धर्मके मूलभूत नियमोके विरुद्ध है। हिन्दू धर्मके तीन सिद्धान्तोमे से जिन्हे मै यहाँ प्रतिपादित करना चाहता हूँ, पहला है, "सत्यान्नास्ति परोधर्म" अर्थात् सत्यसे वढकर कोई धर्म नही है। दूसरा है, "अहिसा परमोधर्म"। यदि अहिसाका अर्थ प्रेम है तो अहिसा जीवनका कानून है और वह सवसे वडा धर्म है, वल्कि वही एकमात्र धर्म है। तो फिर मैं आपसे कहूँगा कि अस्पृश्यताका सत्यके साथ सीधा विरोध है। तीसरा है, "ब्रह्म सत्य जगन्मिथ्या" अर्थात् अकेला ईश्वर ही सत्य है, और सव-कुछ क्षणभगुर है, माया है। यदि ऐसी वात है तो मै कहता हूँ कि हमारे लिए अस्पृश्यता-की इस महान् सिद्धान्तके साथ सगति विठाना असम्भव है। इसलिए मै अपने कट्टर-पन्थी मित्रोके साथ तर्क करने आया हूँ। मै उनसे और उनके सौजन्य तथा सद्भावनासे अपील करने आया हूँ। आज दोपहरके वाद मुझे उनके साथ वैठनेका अवसर मिला। उन्होने मेरी वात धैर्यपूर्वक और ध्यानसे सुनी। हमने वहस की, मैने उनके विवेकसे,

उनकी मानवतासे और उनके हिन्दुत्वसे अपील की। मुझे खेदके साथ स्वीकार करना पडता है कि मै उनपर प्रभाव नही डाल सका। मुझे आशा थी कि मै डाल सकूँगा, किन्तु निराशा एक ऐसा शब्द है जो मेरे शब्दकोशमे नही है (हँसी)। मै तभी निराश होऊँगा जबकि मै अपनेसे, ईश्वरसे तथा मनुष्यतासे निराश हो जाऊँगा। लेकिन जैसे मै ईश्वरपर विश्वास करता हूँ, जैसे मै इस तथ्यपर विश्वास करता हूँ कि हम यहाँ पर एक साथ बैठे है, साथ ही जैसे मै मानवतापर विश्वास करता हूँ, क्योकि हमारे सारे मतभेदो और हमारे सारे झगडेके बावजूद मानवता जीवित रहती है, उसी प्रकार मै इसपर भी विश्वास करता हूँ कि जिस सत्यके प्रतिनिधि होनेका दावा मै इस समय कर रहा हूँ वह यहाँ रहनेवाले मेरे कट्टरपन्थी मित्रोपर अपना प्रभाव डालेगा।

वाइकोमके सत्याग्रहियोके नामपर और उनकी ओरसे मैने अपने इन मित्रोके सामने तीन उदार प्रस्ताव रखे है। ये प्रस्ताव मेरे लिए अपरिहार्य है। किन्तु मैने उन्हे खुली छूट दी है कि वे चाहे तो उन्हे स्वीकार करे और चाहे तो अस्वीकार करे। मैने उन्हे समझानेकी कोशिशकी है कि उन्हे, चाहे परीक्षणके रूपमे ही सही, ये प्रस्ताव स्वीकार कर लेने चाहिए। मुझे इस एकपक्षीय इकरारपर जरा भी सकोच नही हुआ है, क्योकि उस सत्यपर जिसपर मै निश्चित रूपसे विश्वास करता हूँ, और जिसका मै प्रतिनिधित्व करता हूँ, मुझे विश्वास है। मै झगडको उत्तेजित करने एव बढानेके लिए नही आया हूँ, बल्कि कट्टरपन्थियो और उन लोगोके बीच जो आज मनुष्यता और न्यायके नामपर काम करनेकी कोशिश कर रहे है, शान्ति और सद्भावना स्थापित करनेके लिए आया हूँ। यद्यपि कभी-कभी ऐसा लगता है कि मै लड रहा हूँ, किन्तु मेरा उद्देश्य कभी लडनेका नही रहा, न मैने कभी यह कोशिश की है कि लडाई लम्बी हो, बल्कि मेरा उद्देश्य तो जल्दीसे-जल्दी शान्ति स्थापित करनेका रहा है। जब मैने असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ किया था तब एक अग्रेज मित्रने मुझसे कहा कि आपका असहयोग ऊपरी मनसे ही है और सच कहे तो आप सहयोगके लिए ही उत्सुक है। मैने तुरन्त उनकी बात स्वीकार कर ली और मैने उनसे कहा कि आपने मेरे हृदयको सही रूपमे समझा है। और मै अपने कट्टरपन्थी भाइयोको भी विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मेरा इस मामलेमे भी यही रुख है। सत्याग्रह चल रहा है लेकिन यह उनके चाहते ही बन्द कर दिया जायेगा। यह उनपर निर्भर करता है कि वे कोई उचित प्रस्ताव रखे। वह स्वीकार कर लिया जायेगा, केवल ध्यान यही रखना है कि उसमे सत्यका गला न घोटा जाये। सत्याग्रही अपनी माँगे सदैव कमसे-कम ही रखता है। और इस सघर्षमे भी कमसे-कम माँग रखी गई है। इस प्रकारकी उचित माँग रखना ही सही है कि जो माँगते ही स्वीकार करने योग्य हो। इसलिए यह समझ लेना चाहिए कि इस सघर्षके बारेमे मनमे कोई दुराव-छिपाव नही है।

मैने भारतके हिन्दुओंको बार-बार बताया है कि अस्पृश्यता-निवारण, मेरे लिए तथा उन लोगोके लिए जो आज उस पवित्र सघर्षमे रत है, क्या अर्थ रखता है। इसका अर्थ वर्णाश्रम धर्मको भग करना नही है। इसका अर्थ अन्तर्जातीय भोजन और अन्तर्जातीय विवाह भी नही है। किन्तु इसका इतना अर्थ जरूर है कि मानव

और मानवके बीच ऐसे सामान्य सम्बन्ध जो कि किसी भी सभ्य समाजमे होने चाहिए, स्थापित हो। इसका यह अर्थ जरूर है कि यदि पूजाके स्थान किसी व्यक्तिके लिए खुले है तो वे उन सबके लिए, जो हिन्दू कहलाते है, खुले रहने चाहिए। किन्तु मै यह बात स्वीकार करता हूँ कि यदि कोई विशिष्ट वर्ग, मान लीजिए ब्राह्मण मन्दिर बनाना चाहता है और उनमे अब्राह्मणोको नही आने देना चाहता तो मै कहता हूँ कि ऐसा करनेका उसे अधिकार है। किन्तु यदि कोई ऐसा मन्दिर है जो अब्राह्मणोके लिए भी खुला है, तो फिर पचम जाति जैसी कोई चीज नही है जिसे कि उस मन्दिरमे बाहर रखा जाये। इस प्रकारके बहिष्कारके लिए तो मुझे हिन्दू शास्त्रोमे कोई प्रमाण नजर नही आता। इसी प्रकार मेरा दावा है कि स्कूलो-जैसे सार्वजनिक स्थान जो कि अन्य वर्गोके लिए खुले हो, समान रूपसे अछूतोके लिए भी खुले रहने चाहिए। यही बात कुओ, तालावो तथा नदी आदि जलाशयोपर भी लागू होनी चाहिए। उन लोगोकी ओरसे जो अस्पृश्यता और अनुपगम्यताके विरुद्ध सघर्षमे सलग्न है, मेरी इतनी ही माँग है।

किन्तु जहाँतक वाइकोमका सम्बन्ध है, मै स्थितिको थोडा और स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। वर्तमान सत्याग्रह केवल अछूतोके उन सडकोसे गुजरनेके अधिकारोकी पुष्टिके लिए किया गया है जिनमे गुजरनेका ईसाइयो, मुसलमानो तथा सवर्ण हिन्दुओको अधिकार है। सत्याग्रही आज मन्दिर प्रवेशके लिए नही लड रहे है। वे स्कूलोमे प्रवेशके लिए — मै नही जानता कि त्रावणकोरके स्कूलोमे प्रवेशपर किसी प्रकारका प्रतिबन्ध है या नही — नही लड रहे है। यह बात नहीं कि वे ऐसा करनेका दावा नही करते। किन्तु मै वर्तमान सघर्षका सार आपके सामने रख रहा हूँ। चूँकि सत्याग्रह, हृदय परिवर्तन और विश्वासकी प्रणाली है, इसमे, जबरदस्तीकी गुजाइश ही नही होती। इसीलिए मै प्रसन्नतापूर्वक त्रावणकोर विधानसभामे दिये गये दीवान साहबके भाषणमे कही गई बातमे पूरी तरह सहमत हूँ,[1] यदि मुझे ऐसा जान पडा है कि वाइकोमके सत्याग्रही, कट्टरपथी हिन्दुओपर अनुचित दबाव डालनेके लिए अपने सिद्धान्तके विपरीत हिंसाका उपयोग करते है या कोई दूसरा तरीका अपनाते है तो आप देखेगे कि प्रमाण मिलनेपर मै उन तथाकथित सत्याग्रहियोमे अपनेको बिलकुल अलग कर लूँगा। किन्तु जबतक सत्याग्रही अपने करारकी शर्तोके अन्तर्गत बने रहते है तबतक मेरा यह निश्चित कर्त्तव्य है कि मै एक अकेले और विनम्र व्यक्तिके रूपमे जो सहायता दे सकता हूँ, उन्हे देता रहूँ। इसलिए मै अपनी सारी शक्तिके साथ वाइकोमके उन कट्टरपन्थी ब्राह्मणो और अब्राह्मणोसे जो कि इस सघर्षके विरुद्ध है, अपील करता हूँ कि वे सघर्षका अध्ययन उसके सभी पहलुओको नजरमे रखकर करे और सघर्षको विवेकदृष्टिसे देखकर यदि उन्हे ऐसा लगे कि यह सघर्ष न्यायसगत है और वे तरीके जो मानवताके अधिकारोकी पुष्टिके लिए सत्याग्रहियोने अपनाये है, उचित, अहिंसक और तर्कसगत है तो वे न्याय और मानवताके पक्षमे खडे हो।

१ देखिए परिशिष्ट १।

मुझे इस बातकी ताईद करनेमें प्रसन्नता होती है कि पुलिस अधिकारियों तथा सत्याग्रहियोंके बीच आम तौरपर अबतक सम्बन्ध अच्छे ही रहे हैं। उन्होंने दिखा दिया है कि सभ्य और सौजन्यपूर्ण लडाईको किस प्रकार बिना किसी रोषके, बिना किसी तरहकी कठोर बातें कहे तथा बिना किसी हिंसाके चलाया जा सकता है। मैं जानता हूँ, एकाएक पूर्वग्रहोंपर विजय पाना बड़ा कठिन है। अस्पृश्यता एक ऐसी कुप्रथा है जो दीर्घकालसे चली आ रही है। इसीलिए मैंने अपने सत्याग्रही मित्रोंसे कहा है कि उन्हें अत्यन्त धैर्यसे काम लेना होगा। समय हमेशा उनका साथ देता है जो धैर्यसे काम लेते हैं। मेरा खयाल है कि वाइकोमकी जनताकी राय भी उनके ही पक्षमें है। वाइकोमसे बाहरकी जनताकी राय भी उन्हींके पक्षमें है। संसारकी राय उनके पक्षमें बनती जा रही है और इसलिए यदि सत्याग्रही केवल सारे नियमोंका पालन करते हुए सत्याग्रह करते रहे और धीरज खोये बिना चुपचाप कष्ट सहन करते रहे तो निस्सन्देह विजय उन्हींकी होगी। त्रावणकोरकी सरकारने, जहाँतक मुझे दीवान साहबके भाषणसे मालूम होता है, दोनों पक्षोंके प्रति समान दृष्टि रखी है। जब मैंने अपने सत्याग्रही भाइयोंसे यहाँपर यह कहा कि दीवान साहबने जो-कुछ कहा है वह आपत्तिसे परे नहीं है तो उन्होंने सहमति प्रकट की। कुछ भी हो, इसमें सन्देह नहीं कि यदि समाजके दोनों पक्ष आपसमें मिलकर बिना शासकीय हस्तक्षेपके इस प्रश्नका कोई तर्कसंगत तथा सम्मानपूर्ण हल निकाल लें तो यह श्रेयस्कर होगा। दीवान साहबने तो कट्टरपन्थी लोगोंपर अपना मन्तव्य प्रकट कर ही दिया है। उन्होंने उनसे समयके साथ चलनेके लिए तथा समयकी भावना पहचाननेके लिए कहा है। मुझे आशा है कि मेरे कट्टरपन्थी मित्र उनकी दी हुई इस समुचित सलाहको सुनेंगे। कुछ भी हो अपनी ओरसे मैं उन्हें पूरा-पूरा विश्वास दिलाता हूँ कि चाहे वे कुछ भी सोचें, चाहे जैसा व्यवहार करें, मेरे प्रस्तावको स्वीकार करें या न करें, मैं तो केवल हिन्दू-धर्मके उस रूपके आदेशानुसार कार्य करूँगा, जिसे मैं जानता हूँ। मैं पृथ्वी-तलपर किसीको भी अपना दुश्मन नहीं समझता। इसलिए उनके और अपने बीच मतभेद होनेपर भी मैं उन्हें प्यार करूँगा। मैं हमेशा ईश्वरसे प्रार्थना करता रहूँगा कि वह उन्हें सही दिशामें चलनेकी प्रेरणा दे, उनके ज्ञान-चक्षु खोले और वे यह समझकर कि भविष्य कहाँ जा रहा है अपने इन पद-दलित देशभाइयोंके साथ न्याय करें। साथ ही मैं ईश्वरसे अत्यन्त दीनतापूर्वक यह प्रार्थना भी करता हूँ कि यदि मैंने हिन्दू शास्त्रोंको गलत पढ़ा है, यदि मैंने मानवताको गलत समझा है और यदि मैंने सत्याग्रहियोंको सलाह देनेमें गलती की हो तो वह मेरी भी आँखें खोले, मुझे अपनी गलती सुझाये और मुझे शक्ति और साहस प्रदान करे ताकि मैं अपनी गलती स्वीकार कर सकूँ और अपने कट्टरपन्थी भाइयोंसे क्षमा-याचना कर सकूँ।

एक बात और कहकर मैं अपना भाषण समाप्त करूँगा। जहाँ अस्पृश्यताके प्रश्नपर आपके और मेरे बीच मतभेद है, वहाँ मुझे आशा है कि दूसरे प्रश्नपर जिसका सम्बन्ध देशके गरीबसे-गरीब लोगोंसे है, मतभेद होनेका सवाल ही नहीं उठता। मेरा अर्थ चरखे और खद्दरसे है। देशके गरीब लोगोंके प्रति आपका कर्त्तव्य है कि

आप चरखेको निष्ठापूर्वक अपनाये और आपका उनके प्रति यह कर्त्तव्य भी है कि आप चरखेसे उपलब्ध खद्दरको पहने और इस तरह अपने देशके गरीबसे-गरीब स्त्री-पुरुषोके हाथमे दो पैसे पहुँचानेकी व्यवस्था करे। जैसा कि मैने बार-बार कहा है, मैं तबतक सन्तुष्ट नही हो सकता जबतक कि राजा और रक, वाइसराय और उसका अर्दली सिरसे पाँवतक हथकते और हथबुने कपडे न पहनने लगे।

तीसरी बातके बारेमे मुझे आपसे कहनेकी जरूरत नही। वह है हिन्दू-मुस्लिम एकता। इस सम्बन्धमे आपको भारतके शेष भागोको बहुत-कुछ सिखाना है। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि त्रावणकोरमे विभिन्न धर्म और जातियोके लोग बडे मेल-जोल और सौहार्दके साथ रहते है। मै कह सकता हूँ कि वास्तवमे है भी ऐसा ही। मुझे आशा है कि शेष भारत भी इसी प्रशसनीय भावनाका अनुसरण करेगा जो कि आप लोगोको प्रेरणा देती है। आपने धैर्यके साथ मेरा भाषण सुना है, उसके लिए मै आप सबको धन्यवाद देता हूँ। मै इस आशा और उत्कट प्रार्थनाके साथ अपना भाषण समाप्त करता हूँ कि वाइकोममे जो सघर्ष चल रहा है उसका अन्त केवल उसी प्रकार हो जिसे शोभनीय कहा जाये।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-३-१९२५

१५८. भाषण : वाइकोमके सत्याग्रह आश्रममें[1]

११ मार्च, १९२५[2]

वाइकोममे सत्याग्रह आश्रमके निवासियोके सामने मैने जो-कुछ कहा उसे लगभग ज्योका-त्यो नीचे दिया गया है। आश्रममें इस समय पचाससे ऊपर स्वयसेवक है जो वाइकोम मन्दिरके चार प्रवेश द्वारोकी रक्षाके लिए बनाई गई बाडोके सामने खडे रहकर या बैठकर धरना दे रहे है। धरना देनेवाली एक-एक टोली वहाँ छ घटे रहती है और सूत कातती है। दो दल बारी-बारीसे वहाँ भेजे जाते है। मै यह भाषण इस विचारमे यहाँ दे रहा हूँ कि आम लोग इसमे दिलचस्पी लेगे, समस्त सत्याग्रहियोमे भी मै यही आशा रखता हूँ। मो० क० गाधी।

मुझे दु:ख है कि मै आपसे पूरी और सन्तोषजनक ढगसे बातचीत किये बिना ही आज चला जाऊँगा। लेकिन लगता है कि इससे ज्यादा कुछ करना सम्भव नही है। मेरे कार्यक्रमकी व्यवस्था करनेवालोकी राय है कि उद्देश्यकी सफलताकी दृष्टिसे मुझे वाइकोमके अलावा और भी जगहे देखनी चाहिए। मैने उनकी सलाह मान ली है, लेकिन अपने विगत अनुभवोके आधारपर मेरी निश्चित धारणा यही है कि आन्दोलनकी सफलता किसी बाहरी सहायताकी अपेक्षा खुद आपपर ही अधिक निर्भर

१ यह "सत्याग्रहियोका कर्त्तव्य" शीर्षकसे **यंग इंडिया**में छपा था।

२, १४-३-१९२५के **हिन्दू**के अनुसार।

करती है। यदि स्वय आपमे कुछ शक्ति नही है, तो फिर मेरे थोडी देरके लिए यहाँ आ जानेमे चाहे कितना ही उत्साह क्यो न पैदा हो जाये, वह सब व्यर्थ ही है। और यदि मै यहाँ न आया होता और जनतामे भी कोई उत्साह न होता, परन्तु यदि आप अपने प्रति सच्चे रहे होते तो किसी बातकी कमी न रहती। इस तरहके उद्देश्यके लिए जितने उत्साहकी जरूरत होती, वह आपके कार्यमे पैदा हो जाता। मैने यहाँ जितना समय गुजारा है अगर उससे ज्यादा समयतक ठहर सकता तो और भी अच्छा होता। जो भी हो, अपने मित्रोकी सलाहके विरुद्ध मेरे लिए यहाँ और ठहरना सम्भव नही है।

इसलिए कमसे-कम शब्दोमे मै आपको बताना चाहता हूँ कि मै आपसे क्या अपेक्षा रखता हूँ। मै चाहूँगा कि आप कार्यक्रमके राजनीतिक पहलूको भूल जाये। इस सघर्षके राजनीतिक परिणाम भी है, लेकिन उनकी आप कोई चिन्ता न करे। अगर आप उसकी चिन्ता करेगे तो आप सच्चे फलसे तो हाथ धो ही बैठेगे, साथ ही राजनीतिक परिणामोसे भी वचित रह जायेगे। और जब सघर्ष अपनी चरम सीमातक पहुँचेगा तब आप उसके अयोग्य सिद्ध होगे। इसलिए भले ही आपको डर लगे, लेकिन मै आपके सामने सघर्षका सच्चा स्वरूप रखना चाहता हूँ। यह सघर्ष हिन्दुओके लिए एक अत्यन्त धार्मिक सघर्ष है। हम हिन्दू धर्मके सबसे बडे कलकको मिटानेकी कोशिश कर रहे है। जिस पूर्वग्रहके विरुद्ध हमे लडना है वह युगो पुराना है। मन्दिरके चारो तरफके रास्ते हमारी रायमे सार्वजनिक रास्ते है। इन्हे अन्त्यजोके लिए खुलवानेका यह सघर्ष तो बडे युद्धका एक छोटा-सा अग है। अगर वाइकोममे इन रास्तोके खुलनेके साथ ही हमारी लडाई खतम हो जानेवाली होती तो आप विश्वास रखे कि मै इसके बारेमे चिन्ता न करता। इसलिए अगर आप समझते हो कि वाइकोममे ये रास्ते अन्त्यजोके लिए खुलनेके साथ ही यह लडाई खत्म हो जायेगी तो आप भ्रममे है। रास्ता तो खुलना ही चाहिए, वह खुलकर ही रहेगा। लेकिन यह तो शुरुआत ही होगी। असली उद्देश्य तो सम्पूर्ण त्रावणकोरमे ऐसे सभी रास्ते अन्त्यजोके लिए खुलवानेका है। और केवल यही नही हम तो यह आशा करते है कि हमारी कोशिशोसे अछूतो और अन्त्यजोकी सामान्य दशामे भी सुधार होगा। इसके लिए जबरदस्त बलिदानकी जरूरत होगी। कारण, हमारा उद्देश्य विरोधियोके प्रति कोई भी हिंसात्मक कार्य करके कुछ प्राप्त करना नही है। वैसा करना तो हिंसासे या जबर्दस्तीसे मत परिवर्तन कराना होगा, और यदि हम धार्मिक मामलोमे जबरदस्तीका सहारा ले तो इसमे कोई शक नही कि वह आत्मघात होगा। इस सघर्षको हमे पूर्ण अहिंसासे, अर्थात् स्वय कष्ट सहन करते हुए चलाना है। यही है सत्याग्रहका अर्थ। सवाल यह है कि इस लक्ष्यकी ओर बढते हुए आपपर जो मुसीबते आयेगी वे तो आपके भाग्यमे है ही, पर क्या आपमे उन सभीको झेलनेकी सामर्थ्य है? कष्ट-सहन करते हुए भी आपके मनमे अपने विरोधियोके प्रति लेशमात्र भी कटुता नही होनी चाहिए। मै आपको बता देना चाहता हूँ कि यह कोई यन्त्रवत् करने-जैसा काम नही है। इसके विपरीत मै चाहता हूँ कि आप अपने विरोधियोके प्रति प्रेमका भाव रखे, और

इसका तरीका यह है कि आप उन्हे उनके उद्देश्यके प्रति उतना ही सच्चा होनेका श्रेय दे जितना सच्चा होनेका आप स्वय दावा करते है। मै जानता हूँ कि यह काम कठिन है। मै स्वीकार करता हूँ कि मै कल जब उन लोगोसे जो अन्त्यजोको मन्दिरके रास्तोसे दूर रखनेके अपने अधिकारका आग्रह करते है, बाते कर रहा था तब मुझे वैसा करना कठिन लग रहा था। मै मानता हूँ कि उनकी बातोके पीछे स्वार्थ-भावना थी। यदि यह सच हो तो मै उन्हे उद्देश्यके प्रति ईमानदारीका श्रेय कैसे दे सकता हूँ? मै इसके बारेमे कल सोचता रहा और आज सुबह भी मैने सोचा। मैने अपने आपसे सवाल किया "उनकी स्वार्थ-भावना या उनका अपना हित आखिर किस बातमे है? यह सच है कि उनके अपने कुछ हित है, जिन्हे वे सिद्ध करना चाहते है। लेकिन उसी तरह हमारे हित भी है, जिन्हे हम पूरा करना चाहते है। अन्तर इतना ही है कि हम अपने हितको शुद्ध और इसलिए निःस्वार्थ मानते है। लेकिन इस बातका फैसला कौन करेगा कि किस जगह निःस्वार्थ भाव समाप्त होता है और स्वार्थभाव आरम्भ हो जाता है। हो सकता है कि निःस्वार्थभाव स्वार्थभावका ही शुद्धतम रूप हो।" यह बात मै केवल तर्कके लिए ही नही कह रहा हूँ बल्कि मै यह बात सचमुच महसूस करता हूँ। मै उनके मनकी स्थितिका उन्हींके दृष्टिकोणसे विचार कर रहा हूँ, न कि अपने दृष्टिकोणसे। अगर वे हिन्दू न होते तो उन्होने कल जिस ढगसे बात की, उस ढगसे न करते। और ज्यो ही हम किसी चीजके बारेमे उस ढगसे विचार करने लगते है, जिस ढगसे हमारे विरोधी करते है, त्यो ही हम उनके साथ पूरा न्याय करने योग्य बन जाते है। मै जानता हूँ कि इसके लिए तटस्थ मनःस्थिति आवश्यक है, और ऐसी मनःस्थितितक पहुँचना बहुत ही कठिन है। तथापि एक सत्याग्रहीके लिए यह सर्वथा अनिवार्य है। अगर हम अपने विरोधीकी स्थितिमे अपनेको रखकर उसके दृष्टिकोणको समझे तो दुनियामे से तीन-चौथाई दुःख और गलतफहमिया समाप्त हो जायेगी। तब हम अपने प्रतिपक्षीकी बातसे जल्दी ही सहमत हो जायेगे या उसके प्रति उदार हो जायेगे। इस मामलेमे तो अपने प्रतिपक्षियोके साथ जल्दी सहमत होनेका कोई सवाल ही नही है, क्योकि हमारे आदर्श एक दूसरेसे बिलकुल भिन्न है। लेकिन हम उनके प्रति उदार हो सकते है और यह मान सकते है कि उनका वास्तवमे वही अभिप्राय है जो वे कहते है। वे अन्त्यजोके लिए रास्ते नही खोलना चाहते। वे स्वार्थकी वजहसे वैसा कहते हो या अज्ञानके कारण, हमारा विश्वास तो यही है कि ऐसा कहना उनकी गलती है। इसलिए हमारा काम यह है कि हम उन्हे दिखा दे कि वे गलतीपर है, और यह काम हमे अपने कष्ट-सहन द्वारा करना चाहिए। मैने पाया है कि जहाँ पूर्वग्रह युगो पुराने हो और तथाकथित धार्मिक प्रमाणोपर आधारित हो, वहाँ केवल तर्क द्वारा समझानेकी कोशिश बेकार जाती है। तर्कको कष्ट-सहन द्वारा मजबूत करना होगा और कष्ट-सहन विवेकको जगा देता है। इसलिए हमारे कार्योमे जबरदस्ती लेश-मात्र भी नही होनी चाहिए। हमे अधीर नही बनना चाहिए और हम जो तरीके अपना रहे है उनमे हमारी अडिग आस्था होनी चाहिए। जो तरीका हम इस समय अपना रहे है वह यह है

कि हम चारो बाडो तक जाये और रोके जानेपर वही बैठ जाये और कताई करे। यही क्रम रोज चलता रहे। हमे विश्वास करना चाहिए कि इस तरीकेसे वे रास्ते खुल जायेगे। मै जानता हूँ कि यह एक कठिन और धीमी प्रक्रिया है। किन्तु यदि आपको सत्याग्रहकी प्रभावकारितामे विश्वास है तो आप इस तिल-तिल होनेवाली यन्त्रणा और कष्ट-सहनमे भी आनन्दका अनुभव करेगे — और प्रतिदिन चिलचिलाती धूपमे वहाँ जाकर बैठनेमे जो तकलीफ होती है, उसे अनुभव नही करेगे। यदि आपको अपने उद्देश्यमे, अपने साधनमे और ईश्वरमे आस्था है तो तपता हुआ सूरज आपके लिए शीतल बन जायेगा। आप थककर यह न कहे कि 'और कबतक', और न कभी झुँझलाये। जिस पापके लिए हिन्दू धर्म उत्तरदायी है, उसके लिए आपके प्रायश्चित्तका यह तो एक छोटा-सा अंश है।

आप लोगोको मै इस अभियानमे सिपाहियोकी तरह मानता हूँ। आप हर चीज-पर स्वय विचार करके निष्कर्षपर नही पहुँच सकते। आपको आश्रमकी व्यवस्थामे विश्वास है इसीलिए आप इसमे आये है। इसका मतलब यह नही कि आपको मुझमे विश्वास है। मै तो व्यवस्थापक नही हूँ। जहाँतक आदर्शो और मोटे-मोटे निर्देशोका सवाल है, बस उसी हदतक मै आन्दोलनका सचालन कर रहा हूँ। इसलिए आपका विश्वास उनमे होना चाहिए जो इस समय इसके प्रबन्धक है। आश्रम आनेसे पहले पसन्द-नापसन्द करनेका अधिकार आपको था। लेकिन एक बार फैसला करने और आश्रम आ जानेके बाद शका उठानेका अधिकार आपको नही है। अगर हमे एक शक्तिशाली राष्ट्र बनना है तो आपको समय-समयपर जो निर्देश दिये जायें उनका पालन करना चाहिए। यही एक तरीका है जिससे राजनीतिक या धार्मिक जीवनका निर्माण हो सकता है। आपने अपने लिए कुछ सिद्धान्त निर्धारित किये होगे और उन्ही सिद्धान्तोके अधीन होकर आप इस सघर्पमे शामिल हुए होगे। जो लोग आश्रममे रुके रहते है वे भी सघर्षमे उतना ही हिस्सा ले रहे है जितना वे जो नाकेबन्दियो-पर जाकर सत्याग्रह करते है। सघर्पके सिलसिलेमे किया जानेवाला प्रत्येक काम समान रूपसे महत्वपूर्ण है, और इसलिए आश्रममे सफाई रखनेका काम भी उतना ही जरूरी है जितना कि नाकेबन्दियोपर जाकर सूत कातनेका। और यदि इस स्थानपर टट्टियो और अहातेकी सफाईका काम कताईकी तुलनामे अधिक अरुचिकर है, तब तो उसे और भी महत्वपूर्ण और हितकर समझना चाहिए। व्यर्थकी बातचीतमे एक क्षण भी बर्बाद नही करना चाहिए, बल्कि हमारे सामने जो काम है उसीमे हमे पूरे मनोयोगसे लगे रहना चाहिए, यदि हममे से हरएक इसी सच्ची भावनासे काम करेगा तो आप देखेगे कि काममे कितना आनन्द मिलता है। आश्रममे हर वस्तुको आप अपनी सम्पत्ति समझे, ऐसी सम्पत्ति न समझे जो इच्छानुसार व्यर्थ ही बर्बाद की जा सकती है। आपको अन्नका एक दाना, कागजका एक टुकडा भी बर्बाद नही करना चाहिए और इसी प्रकार अपने समयका एक क्षण भी। यह समय हमारा नही है। हमारे समयपर राष्ट्रका अधिकार है, और हम राष्ट्रके न्यासियोके रूपमे उसका उप-योग करे।

मै जानता हूँ कि आपको यह सब बहुत दुश्वार मालूम होगा। बातको प्रस्तुत करनेका मेरा तरीका कठोर प्रतीत हो सकता हे, लेकिन इमे किसी ओर ढगसे प्रस्तुत करना मेरे लिए सम्भव नही है। अगर मै इसे आसान चीज मानकर आपको धोखा दूँ, तो मै गलत काम करूँगा।

हमारा धर्म बहुत विकृत हो गया है। राष्ट्रके रूपमे हम अकर्मण्य हो गये है और समयका महत्त्व भूल गये है। हमारे हर कामके पीछे स्वार्थ रहता हे। हममे जो बडेसे-बडे लोग हैं उनमे भी परस्पर ईर्ष्याभाव हे। हम एक दूसरेके प्रति अनुदार भाव रखते है। जिन चीजोकी ओर मैने आपका ध्यान खीचा हे, अगर मै वैसा न करूँ तो इन बुराइयोसे पिण्ड छुडाना हमारे लिए सम्भव नही होगा। सत्याग्रह तो सत्यकी अनवरत खोज हे, सत्यको खोजनेका दृढ सकल्प हे। मै तो केवल आशा ही कर सकता हूँ कि आप जो-कुछ कर रहे है, उसका अर्थ समझेगे। यदि आप उसका अर्थ समझ लेगे तो आपका रास्ता आसान हो जायेगा — आसान इसलिए कि आप कठिनाइयोमे भी आनन्दका अनुभव करेगे ओर जब हर आदमी निराश होगा उस समय भी आपके मनमे आशाका उत्साह बना रहेगा। ऋषियो और कवियोने धार्मिक पुस्तकोमे जो दृष्टान्त दिये है, मुझे उनपर विश्वास हे। उदाहरणार्थ, खौलते तेलमे डुबोये जाते समय सुधन्वाका मुस्कराना एक ऐसी घटना है जिसकी सम्भावनामे मुझे अक्षरश विश्वास है। कारण, सुधन्वाके लिए उबलते तेलमे डाले जानेसे भी बडी यन्त्रणा थी अपने रचयिताको भूलना। और यदि हममे इस आन्दोलनमे सुधन्वाकी-सी आस्थाका एक कण भी हो तो वैसा ही यहाँ भी एक छोटे पैमानेपर हो सकता है।[1]

इसके बाद कार्यकर्त्ताओने महात्माजीसे बहुतसे प्रश्न किये। श्री टी० आर० कृष्णस्वामी अय्यरने पूछा कि यह सघर्ष कितने दिनोतक जारी रखा जाना चाहिए। महात्माजीने कहा

मै नही जानता। यह कुछ दिनोमे ही समाप्त हो जा सकता हे और हमेशा चलता भी रह सकता है। दक्षिण आफ्रिकाका सघर्ष आरम्भ करते समय मैने सोचा था कि वह एक महीनेमे समाप्त हो जायेगा, लेकिन वह आठ सालतक जारी रहा।

यह पूछे जानेपर कि बडे-बडे जत्थे नाकेबन्दियोपर क्यो न भेजे जायें, उन्होने कहा कि इससे उपद्रव और गलतफहमी होगी, और दूसरे इसके लिए हमारे पास काफी आदमी नहीं हे। मेरी रायमें जनमत तैयार करनेके लिए काफी काम करना चाहिए। आपका दावा है कि जनमत आपके पक्षमें है, जो कुछ हदतक ठीक हे। लेकिन अभी जनमत प्रभावशाली नहीं हुआ हे। इसके लिए जबर्दस्त सगठनकी आवश्यकता, है जो आपके पास नहीं हे। मुझे सघर्षको और तेज करनेमें कोई लाभ नजर नहीं आता। कार्यकर्त्ताओको मे तीन महीनेमें हिन्दी, और साथ ही सस्कृत भी सीखनेकी सलाह देता हूँ। उन्हे ऐसे काममें लगना चाहिए जिससे यह आश्रम आगे चलकर आत्मनिर्भर बन जाये। यदि केरल और त्रावणकोरके बाहर अन्य जगहोसे

१ इसके बादका अंश हिन्दूसे लिया गया है।

चन्दा माँगा गया तो लोग ढीले पड जायेंगे। चम्पारनमें मुझे सभी सूत्रोसे आर्थिक मददके प्रस्ताव आये, लेकिन अपने एक निजी दोस्तके अलावा मैंने और किसीकी मदद लेनेमे इनकार कर दिया। इसी प्रकार अहमदाबादमें मजदूरोकी हडतालके दौरान मैंने एक व्यक्ति द्वारा हजारो रुपयेकी मददके प्रस्तावको अस्वीकार कर दिया था। खेडाकी लडाईमें मैंने निजी दोस्तोंकी कुछ मदद जरूर स्वीकार की, लेकिन जो धन मिला उसका आधा भी खर्च नहीं हुआ। दक्षिण आफ्रिकामें भी एकत्रित राशिमें से तीन-चार लाख रुपये बच गये थे। मैंने जितनी भी लडाइयाँ लडी है उनमें से एकमें भी प्राप्त रकमसे अधिक खर्च करना पडा हो, ऐसा याद नहीं आता। और जो धन-राशि हर सघर्षमें मिली वह बिना कठिनाई या दौडधूपके मिली।

[अंग्रेजीसे]
यग इडिया, १९-३-१९२५
हिन्दू, १४-३-१९२५

१५९. राष्ट्रीय शिक्षा

एक राष्ट्रीय सस्थाके उपाचार्यने लिखा है[1]

> सरकारी स्कूलोकी युवा-पीढीमें दासताकी जो मनोवृत्ति पैदा हो जाती है उससे उनको बचानेके लिए इस शताब्दीके प्रथम दशकमें देशमें बडे पैमानेपर राष्ट्रीय शिक्षाका आन्दोलन आरम्भ किया गया था। उसका उद्देश्य केवल ऐसे स्कूल खोलना था जिनमें 'राष्ट्रीय आधारपर और राष्ट्रीय नियन्त्रणमें' शिक्षा दी जाती हो।. . .उसके फलस्वरूप कार्यकर्त्ताओका एक ऐसा दल सामने आया जिसमें से बहुतोने स्वतन्त्रताके सघर्षमे जोरदार भाग लिया। फिर भी इस बातसे इनकार नही किया जा सकता कि विशुद्ध शिक्षा सम्बन्धी आन्दोलनके रूपमे उसका न तो मूल ही पृथक था और न अस्तित्व ही। . .
>
> असहयोग आन्दोलनसे राष्ट्रीय शिक्षाके उद्देश्यको दूसरी बार प्रोत्साहन मिला और वह वास्तवमे एक जबरदस्त प्रोत्साहन था। देश-भरमे एकाएक सैकडो स्कूल खुल गये। उनका उद्देश्य क्षेत्रकी दृष्टिसे सीमित था। उनका मुख्य उद्देश्य असहयोगी छात्रोको केवल एक वर्षतक पढानेकी व्यवस्था करना ही था। लडकोको स्वराज्यके सैनिक अर्थात् उन्हे असहयोगके विभिन्न कार्यक्रमोको चला सकने योग्य बनाना उनका उद्देश्य था। शिक्षा आन्दोलनका राजनैतिक आन्दोलनसे अलग अस्तित्व नही था। जब राजनैतिक आन्दोलन कमजोर पड़ा तब शिक्षा आन्दोलन भी अशक्त हो गया।

१. अशत उद्धृत।

इसका परिणाम यह हुआ कि राष्ट्रीय शिक्षाको हमेशा कार्यक्रममें दूसरे दर्जेका या गौण स्थान दिया गया और किसी भी नेताने उसपर कभी शास्त्रीय ढगसे विधिवत् स्वतन्त्र विचार नहीं किया। ऐसा लगता है कि आपको भी इस आन्दोलनसे उतना प्यार नहीं है जितना आपको खद्दरसे है, अथवा यह भी हो सकता है कि आपकी दृष्टिमें खद्दर और राष्ट्रीय शिक्षा एक ही वस्तु हो। स्वराज्यवादी लोगोको केवल कौंसिलोसे ही मोह है। इन वातोपर विचार करते हुए क्या इस आन्दोलनकी कुछ भी प्रगति सम्भव है? और यदि यह आन्दोलन वार-वार असफल होता है तो क्या अधिकाश लोगोपर इसका प्रभाव निरुत्साहजनक और शोचनीय नहीं होगा?

शिक्षाका उद्देश्य वच्चोकी शारीरिक और मानसिक शक्तिका विकास करना है, जिससे वे देशके योग्य नागरिक वन सके। यह उनकी माध्यमिक स्कूलोकी अवधिमें ही सम्भव है। उससे पहले वे वहुत छोटे होते हैं और उसके वाद उनका चरित्र विशिष्ट दिशामें मुड चुका होता है। और फिर उसे अभीष्ट दिशामें मोडना कठिन होता है। आपके मतानुसार माध्यमिक स्कूलोमें वच्चोको मुख्यत सूत कातने, कपडा वुनने और उनसे सम्वन्धित दूसरे सभी कामोमें लगना चाहिए। विभिन्न रुचियो और विभिन्न योग्यताके छात्रोको एक ही ढाचेमें ढालनेकी कोशिशमें क्या शिक्षा अस्वाभाविक नहीं हो जायेगी और क्या उससे वच्चोके मनोपर वोझ नहीं पडेगा? सूत कातना और कपडा वुनना पाठ्यक्रमका एक अग हो सकता है, लेकिन वह पूरा पाठ्यक्रम नहीं वन सकता और उसे ऐसा वनाया भी नहीं जाना चाहिए। क्या राष्ट्रीय शिक्षाके कुछ व्यापक वुनियादी और निश्चित सिद्धान्त स्थिर करना और प्रत्येक सस्थाको अपनी आवश्यकता और सामर्थ्य तथा छात्रोकी शक्ति और विवेकके अनुसार कार्य करने देना अधिक अच्छा नहीं है?

पिछले लगभग ४० वरसोमें राष्ट्रीय शिक्षाके क्षेत्रमें कुछ प्रयोग किये गये हैं। क्या आप कमसे-कम एक ऐसी सस्था वता सकते हैं जिसको आदर्श मानकर उसका अनुकरण करनेके लिए हम गर्वपूर्वक सरकारसे कह सके?

भौतिक सभ्यतामें, जिसके विना हम निश्चय ही पिछड जायेंगे, सारा ससार प्रगति कर रहा है। अव यह एक निश्चित तथ्य हो गया है कि भारत पश्चिमी राष्ट्रोके अधीन इसलिए हुआ कि उसकी वैज्ञानिक और भौतिक उन्नति पर्याप्त नहीं थी। हमने इतिहाससे यह शिक्षा ली है और इसकी उपेक्षा नही की जा सकती। लेकिन ऐसा लगता है कि आप भौतिक विज्ञान और रसायन-शास्त्र-जैसे विषयोको अधिक महत्व नहीं देते। क्या यह अजीव वात नहीं है?

मुझे यह नही मालूम कि सन् १९०६ मे स्थितियाँ क्या थी, लेकिन १९२१ मे हालत कैसी थी यह मै जानता हूँ। यदि राष्ट्रीय शिक्षाको हमे सच्चे अर्थोमे राष्ट्रीय

बनाना हो तो उसमें राष्ट्रकी तत्कालीन दशा प्रतिबिम्बित होनी चाहिए। और चूंकि इस समय राष्ट्रीय दशा अनिश्चित है, अत राष्ट्रीय शिक्षा भी न्यूनाधिक अनिश्चित रहेगी। जहाँ आक्रमण हुआ है और जिस स्थानको शत्रुने घेर लिया है, वहाँके बच्चे क्या करते है? क्या वे घेरा डालनेवालोको पीछे हटानेमे अपनी सामर्थ्यके अनुसार भाग नही लेते और अपने आपको बदली हुई परिस्थितियोके अनुकूल नही बना लेते? क्या वह उनकी सच्ची शिक्षा नही है? क्या शिक्षा, पढनेवाले बच्चोमे पूर्ण मनुष्यता-का विकास करनेकी कलाका नाम नही है? वर्तमान शिक्षा-प्रणालीका सबसे बडा दोष यह है कि उसपर वास्तविकताकी छाप नही है, बच्चोमें देशकी विभिन्न आव-श्यकताओकी प्रतिक्रिया नही होती। सच्ची शिक्षा आसपासकी स्थितियोके अनुरूप होनी चाहिए और यदि वह वैसी नही है तो उसमे स्वस्थ विकास नही होगा। इस प्रति-क्रियाकी आवश्यकता है, इसी उद्देश्यपूर्तिके लिए शिक्षामे असहयोग दाखिल किया गया है। यह सच है कि हमने आदर्शके अनुकूल आचरण नहीं किया है। इसका कारण है हमारी सीमाएँ और इसका कारण यह है कि हम अपनी परिस्थितियोके मोहक प्रभावसे मुक्त होनेमे असमर्थ रहे हैं।

लेकिन ऐसा कहनेका अर्थ यह नही कि हमारी शिक्षा सस्थाएँ कताई और बुनाईकी सस्था-मात्र बन कर रह जाये। मै कताई और बुनाईको किसी भी राष्ट्रीय शिक्षा प्रणालीका आवश्यक अग समझता हूँ। किन्तु मेरा उद्देश्य यह नही है कि बच्चोका सारा समय इसीमे लग जाये। एक कुशल चिकित्सककी भाँति मेरा ध्यान रोगीके रोग-पीडित अगपर केन्द्रित रहता है और मै उसीका उपचार करता हूँ। मै जानता हूँ कि अन्य अगोकी सार-सँभाल करनेका सबसे अच्छा तरीका भी यही है। मै बच्चेके हाथोका, दिमागका और आत्माका विकास करना चाहता हूँ। उसके हाथ लगभग निश्चेष्ट हो गये है। उसकी आत्मा नितान्त उपेक्षित रही है। मै इसीलिए समय और असमय हमारी शिक्षाके इन गम्भीर दोषोको दूर करनेका अनुरोध करता रहता हूँ। क्या प्रति दिन आधा घटा सूत कातना हमारे बच्चोके लिए कोई बहुत भारी काम है? क्या इससे उनका मस्तिष्क कुण्ठित हो जायेगा?

मै विभिन्न विज्ञानोकी शिक्षाको महत्व देता हूँ। हमारे बच्चे भौतिक विज्ञान और रसायनशास्त्रका अत्यधिक अध्ययन नही कर सकते। और जिन सस्थाओमे मेरी दिलचस्पी मानी जाती है उनमे यदि इन विषयोकी ओर ध्यान नही दिया गया है तो इसका कारण यह है कि हमारे पास इन विषयोके लिए प्राध्यापक नही है और दूसरे इन विज्ञानोके प्रयोगात्मक शिक्षणके लिए बहुत महँगी प्रयोगशालाओकी आवश्य-कता होती है, जिनको हम वर्तमान अनिश्चित और आरम्भिक अवस्थामे बनानेमे समर्थ नही हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-३-१९२५

१६०. दक्षिण आफ्रिका

दक्षिण आफ्रिकामें स्थिति स्पष्ट रूपसे बिगड़ती जा रही है और उसका अन्त कहाँ होगा, यह नहीं कहा जा सकता। सत्तारूढ़ सरकारने दो अलग-अलग विधेयक प्रस्तुत किये हैं, इन विधेयकोंमें 'एशियाइयों' के विरुद्ध भेद-भाव किया गया है और उनको 'रंगदार' लोगोंके वर्गमें न रखकर 'वतनी' लोगोंके वर्गमें रखा गया है। जो लोग कभी दक्षिण आफ्रिका नहीं गये हैं, उनके लिए यह समझना कठिन है कि इस भेदभावका अर्थ क्या है। समझनेकी बात यह है कि अधिकांश वतनीलोग बिलकुल ही अनपढ़ हैं। दूसरी ओर 'रंगदार' लोग (अर्थात् वे लोग जिनमें थोड़ा-सा भी यूरोपीय खून है) कुल मिलाकर काफी साक्षर लोग हैं। ऐसा लगता है कि नई सरकारकी नीति, जिसके कर्णधार जनरल स्मट्स और हर्टजोग हैं, 'एशियाइयों' को और भी अधिक दबानेकी और 'रंगदार' लोगोंका दर्जा ऊँचा करनेकी है।

एक और विधेयक भी बनाया जानेवाला है। इसके अनुसार दक्षिण आफ्रिकाकी नागरिकता केवल उन विशुद्ध गोरे लोगोंतक ही सीमित रहेगी जो दक्षिण आफ्रिकामें पैदा हुए हैं और वहीं पले-पुसे हैं। जो अंग्रेज इंग्लैंडसे सीधा आयेगा वह इंग्लैंडमें जन्म लेने और वहाँका मूल निवासी होनेके आधार पर दक्षिण आफ्रिकाकी नागरिकताका अधिकार नहीं माँग सकेगा। उसको दक्षिण आफ्रिकाकी नागरिकता प्राप्त करनेके लिए प्रमाणपत्र लेने पड़ेंगे। दक्षिण आफ्रिकाके प्रमुख समाचारपत्रोंका यह कहना है कि मजदूर दल (जो अंग्रेज मजदूरोंके मतोंपर निर्भर है) और राष्ट्रवादी दल (जो मुख्यत डचोंके मतोंपर निर्भर है) के बीच इस मान्यताके आधारपर समझौता हो गया है कि राष्ट्रवादी एक जबर्दस्त एशियाई-विरोधी मजदूर नीतिका समर्थन करेंगे बशर्ते कि मजदूर दलके सदस्य उनकी जबर्दस्त "बर्गर" (नागरिकता सम्बन्धी) नीतिका समर्थन करनेको तैयार हों।

इसके अतिरिक्त हमें यह खबर भी मिली है कि पृथक्करण सम्बन्धी एक नये विधेयकका मसविदा जो पिछले 'वर्गक्षेत्र विधेयक' से भी ज्यादा कड़ा होगा, तैयार किया जा रहा है। पाठकोंको स्मरण होगा कि नेटालके जिस नगरपालिका मताधिकार अधिनियमसे भविष्यमें भारतीयोंको नगरपालिका मताधिकारसे वंचित रखा गया है, वह अधिनियम अब पारित हो गया है और उसपर गवर्नर जनरलने स्वीकृति दे दी है। यदि जातिभेद मूलक पृथक्करण अधिनियम भी पारित कर दिया गया तो यह जानना कठिन है कि हमारे

उन निहित अधिकारोंमें से क्या रह जायेगा जिनका १९१४के स्मट्स-गांधी समझौतेके अनुसार पूरी तौरपर पालन होना था।

ट्रान्सवालमें सभी भारतीय व्यवसायोंका बहिष्कार और उनके विरुद्ध धरना देना फिर आरम्भ कर दिया गया है। इस बार जबकि वातावरण बहुत उत्तेजनापूर्ण है, यह कुछ-कुछ सफल भी हो गया है। नेटालमें 'भरती करनेवाले' सरकारी कर्मचारियोंके द्वारा भारतीयोंको स्वदेश वापस भेजनेका काम अब भी चल रहा है। मद्रासमें जो लोग लौटे हैं, उनसे खुद मैंने पूछताछ की है। उन्होंने मुझे बताया है कि उनको भारतमें धन्धा नहीं मिल सका है। इसलिए बड़े अर्थसंकट और अनेक कष्टोंको सहन करनेके बाद ये लोग मलायाके प्रवासी-डिपोमें जाकर इस बातकी अनुमति माँग रहे हैं कि उन्हें भारतसे बाहर संयुक्त मलाया राज्यके रबर बागानोंमें भेज दिया जाये। निःसन्देह दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंकी स्थिति इतनी गई बीती हो गई है कि वहाँ साहसीसे-साहसी भारतीयका भी हौसला पस्त हो गया है और उसे अपना भविष्य अन्धकारमय दीख रहा है। लेकिन एक ऐसी बात भी है जिससे कुछ राहत मिलती है। उसकी झलक हमें भारत पहुँच रही हर नई खबरसे लगातार मिल रही है। वहाँ हिन्दू-मुसलमानोंकी कोई समस्या नहीं है। इस समान संकटमें सब भारतीय एक हैं। वे मन और प्राणसे एक हैं और वे एक ही देशको अपनी जन्मभूमि मानते हैं।[1]

दक्षिण आफ्रिकाकी स्थितिके उपरोक्त निराशाजनक ब्यौरेको ध्यानमें रखते हुए इन स्तम्भोंमें गत सप्ताह जनरल स्मट्सका जो कथन[2] उद्धृत किया गया था, वह और भी दिलचस्प हो जाता है। श्री एन्ड्रयूजने जिस धरनेका उल्लेख किया है, वह प्रच्छन्न दबावके अतिरिक्त कुछ नहीं है। जब १९२१ में सब तरहकी सावधानी बरतनेपर भी धरना भारतमें शान्तिपूर्ण नहीं रहा, तब दक्षिण आफ्रिकामें वह शान्तिपूर्ण कैसे रह सकता है, इस बातको वे लोग ही समझ सकते हैं जो वहाँके गोरे लोगोंके स्वभावसे परिचित हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-३-१९२५

१. यह लेख श्री सी० एफ० एन्ड्रयूज द्वारा लिखा गया था।

२. देखिए "टिप्पणियाँ", ५-३-१९२५ के अन्तर्गत उपशीर्षक "दुर्भाग्यपूर्ण प्रतिबन्ध"।

१६१. स्वदेशी और राष्ट्रीयता

नीचे दिया गया पत्र बहुत दिनोंसे मेरे कागजोंमें रखा हुआ था

निःसन्देह आपने एम० रोमा रोला द्वारा रचित 'महात्मा गाधी' नामक पुस्तक पढी ही होगी। उसके पृष्ठ १७६[1] पर लिखा है, "यह राष्ट्रीयताकी अत्यन्त सकुचित और विशुद्धतम विजय नहीं तो और क्या है? घरके अन्दर बने रहो, सब दरवाजे बन्द कर लो, किसी चीजमें परिवर्तन न करो, हर बात-पर जहाँके-तहाँपर चिपके रहो। किसी वस्तुका निर्यात न करो, किसी वस्तुका आयात न करो, देह और आत्माको शुद्ध और उन्नत बनाते रहो।" निश्चय ही यह मध्ययुगीन साधुओंकी ही सीख है। और उदारचेता गाधी इस पुस्तकके साथ अपना नाम जुडने देते हैं। (द० बा० कालेलकरके 'स्वदेशी धर्म'की भूमिकाके तौरपर), चूंकि यह वचन आपके एक बडे प्रशसकके लिखे हुए हैं, इसलिए इसके सम्बन्धमें आपको उत्तर देना चाहिए। य० इ० के २७ नवम्बरके अकमें एन्ड्रयूज साहबके "राष्ट्रवादके सम्बन्धमें सचाई" नामक लेखके[2] नीचे आपकी एक टिप्पणी इस आशयकी प्रकाशित हुई है कि भारतकी स्वदेशी भावना अशुद्ध या जातिद्वेष-मूलक नहीं बन सकती। क्या आप किसी अगले अकमें इस आशय-को और स्पष्ट करके इस अद्‌भुत पुस्तकके लेखक और उसके असख्य पाठको-की आशका दूर करनेकी कृपा करेंगे?

जहाँतक श्री कालेलकरकी पुस्तिकाका सवाल है, स्थिति इस तरह है। वह गुजराती पुस्तिकाका अग्रेजी अनुवाद है। मैंने प्रस्तावना मूल पुस्तकके लिए लिखी थी। श्री कालेलकर मेरे आदरणीय साथी हैं। इसलिए मैंने पुस्तकको गौरसे देखे बिना ही पाच छ सतरें प्रस्तावनाके तौरपर गुजरातीमें लिख दी। मैंने उसके कुछ वाक्य इधर-उधरसे देख लिये थे। मैं स्वदेशी-सम्बन्धी उनके विचारोंको जानता था। इस कारण मुझे उनके साथ एकमत होनेमें कोई कठिनाई नहीं थी। लेकिन एन्ड्रयूजके कहने पर मैंने अग्रेजी अनुवादको पढा और मैं मानता हूँ कि उसमें कहीं-कहीं सकीर्णता आ गई है। मैंने श्री कालेलकरसे भी उसकी चर्चा की और वे भी इस बातको मानते हैं कि अनुवादमें सकीर्णता दिखाई देती है, पर उसके लिए वे जिम्मेवार नहीं हैं। जहाँतक मेरे विचारोंकी बात है मेरे 'यग इडिया'के लेख इस बातको अच्छी तरह स्पष्ट कर देते हैं कि मेरी स्वदेशी, और इस कारण श्री कालेलकरकी स्वदेशी वैसी सकुचित नहीं है जैसा कि उस पुस्तिकाको पढनेसे लगता है।

यह तो हुआ पुस्तिकाके बारेमें।

१ यहाँ पृष्ठ सख्या ११५ होनी चाहिए।
२ ट्रुथ अबाउट नेशनलिज्म।

मेरी स्वदेशीकी व्याख्या सभी लोग जानते हैं। मैं अपने नजदीकी पड़ोसीकी हानि करके दूरवर्ती पड़ोसीकी सेवा नही करूँगा। इसमे प्रतिशोध या दण्डकी बात जरा भी नही है। वह सकुचित किसी भी अर्थमे नही है, क्योकि मुझे अपनी उन्नति या विकास-के लिए जिन-जिन चीजोकी जरूरत पड़ती है वे सब मैं दुनियाके हर हिस्सेसे खरीदता हूँ। किन्तु मैं किसीसे भी कोई ऐसी चीज लेनेसे इनकार करता हूँ — फिर वह कितनी ही नफीस और खूबसूरत क्यो न हो — अगर वह मेरी या उन लोगोकी उन्नतिमे, जिनकी सार-सभाल करना कुदरतने मेरा पहला फर्ज बताया है, बाधा डालती हो या नुकसान पहुँचाती हो। मै उपयोगी और स्वस्थ साहित्य ससारके प्रत्येक भागसे खरीदता हूँ। मैं शल्यचिकित्साके औजार इग्लैंडसे, पिन और पेन्सिले आस्ट्रियासे और घड़ियाँ स्विट्जरलैंडसे मँगाता हूँ। पर मैं उम्दासे-उम्दा एक इच कपड़ा भी इग्लैंडसे, जापानसे या दुनियाके और किसी हिस्सेसे न खरीदूंगा — क्योकि उससे भारतके लाखो लोगोको हानि पहुँच चुकी है और बराबर पहुँच रही है। भारतके लाखो कगाल और जरूरतमन्द लोगोके द्वारा कते-बुने कपड़ोको न खरीदकर विदेशी कपड़ेको खरीदना मैं पाप मानता हूँ — फिर भले ही वह भारतके हाथ-कते कपड़ेसे बढ़िया क्यो न हो। अतएव मेरी स्वदेशी-का मध्यबिन्दु प्रधानत हाथकती खादी है और उसकी परिधिमे वे सब चीजे आ जाती है जो हिन्दुस्तानमे बनती हैं या बनाई जा सकती है। मेरी राष्ट्रीयता वहीतक है जहाँ मेरी स्वदेशी भावनाको आँच नही आती। भारतके उत्थानकी कामनाके पीछे मेरी यह कामना निहित है कि सारे ससारको लाभ हो। मैं यह नही चाहता कि भारत दूसरे राष्ट्रोका विनाश करता हुआ प्रगति करे। यदि भारतवर्ष सशक्त और समर्थ होगा तो वह दुनियाको अपनी कलात्मक वस्तुएँ और स्वास्थ्यप्रद मसाले भेजता रहेगा और अफीम या नशीली चीजे भेजनेसे इनकार करेगा — भले ही उनके व्यापारसे उसको बहुत बड़े आर्थिक लाभ होनेकी सम्भावना क्यो न हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-३-१९२५

१६२. सन्तति नियमन

निहायत झिझक और अनिच्छाके साथ मैं इस विषयमे कुछ लिखनेको प्रवृत्त हुआ हूँ। जबसे मैं भारतवर्ष लौटा हूँ तभीसे पत्र-लेखक कृत्रिम साधनो द्वारा सन्तति नियमन-के प्रश्नपर मुझे लिखते रहे हैं। मैं खानगी तौरपर ही अबतक उनको जवाब देता रहा हूँ। किन्तु अभीतक सार्वजनिक रूपसे मैंने उसकी चर्चा नही की है। आजसे कोई पैंतीस साल पहले जब मैं इग्लैंडमे पढ़ता था तब इस विषयकी ओर मेरा ध्यान गया था। उस समय वहाँ एक सयमवादी और एक डाक्टरके बीच बड़े जोरका विवाद छिड़ा हुआ था। सयमवादी कुदरती साधनोके सिवा किसी दूसरे साधनोको माननेके लिए तैयार न था और डाक्टर कृत्रिम साधनोका हामी था। कुछ समयतक कृत्रिम साधनोकी ओर प्रवृत्त होनेके बाद उसी समयसे मैं उनका पक्का विरोधी हो गया।

अब मै देखता हूँ कि कुछ हिन्दी पत्रोमे कृत्रिम साधनोका वर्णन ऐसे भद्दे तथा कुरुचि-पूर्ण ढगसे और खुले तौरपर किया गया है कि उसे पढकर शिष्टताकी भावनाको आघात पहुँचता है। और मै यह भी देखता हूँ कि एक लेखकने तो सन्तति-नियमनके लिए कृत्रिम साधनोके समर्थकोकी सूचीमे मेरा नाम सम्मिलित करनेमे सकोच नही किया है। मुझे एक भी ऐसा मौका याद नही पडता जबकि मैने कृत्रिम साधनोके उपयोगके पक्षमे कोई बात कही या लिखी हो। मैने यह भी देखा है कि दो और प्रसिद्ध पुरुषोके नाम इसके समर्थकोमे दिये गये है। उनसे पूछे बिना मुझे उनका नाम प्रकट करनेमे सकोच हो रहा है।

सन्तति-नियमनकी आवश्यकताके बारेमे तो दो मत हो ही नही सकते, परन्तु इसका एक ही उपाय है आत्म-सयम या ब्रह्मचर्य, जो कि हमारी युगोकी विरासत है। यह रामबाण और सर्वोपरि उपाय है और जो उसका पालन करते है उन्हे लाभ ही लाभ होता है। डाक्टर लोगोका मानव-जातिपर बडा उपकार होगा, यदि वे सन्तति-नियमनके लिए कृत्रिम साधनोकी शोध करनेकी जगह आत्मसयमके साधनोकी खोज करे। स्त्री-पुरुषके मिलापका हेतु आनन्द भोग नही बल्कि सन्तानोत्पत्ति है। जब सन्तानोत्पत्तिकी इच्छा न हो तब सभोग करना अपराध है।

कृत्रिम साधनोकी सलाह देना मानो दुराचारको बढावा देना है। उससे पुरुष और स्त्री उच्छृखल हो जाते है। और इन कृत्रिम साधनोको जो मान्यता दी जा रही है उससे तो उस सयमके बन्धन समाप्त हो जायेगे जो लोकमतके कारण मनुष्य अपनेपर रखता है। कृत्रिम साधनोके अवलम्बनका कुफल होगा पौरुषहीनता और क्लीवता। यह दवा मर्जसे भी ज्यादा बदतर साबित होगी। किये गये कर्मके फलोको भोगनेसे बचनेकी कोशिश करना अनुचित है, अनीतिपूर्ण है। जो शख्स जरूरतसे ज्यादा खा लेता है उसके लिए यह अच्छा है कि उसके पेटमे दर्द हो और फिर उसे लघन करना पडे। रसनाको वशमे न रखकर खूब डटकर खा लेना और बादको पाचक दवाइयोका सेवन करके उसके नतीजोसे बचना अहितकर है। विषय-भोगमे रत रहना और फिर अपने इस कृत्यके परिणामोसे बचना इससे भी बुरा है। प्रकृति बडी कठोर शासिका है। वह इस प्रकारके नियमोल्लघनोका बदला पूरी तरह चुकाती है। नैतिक सयमके द्वारा ही हमे नैतिक फल मिल सकता है। दूसरे तमाम प्रकारके सयम-साधन अपने हेतुके ही विनाशक सिद्ध होगे। कृत्रिम साधनोके समर्थनके मूलमे यह युक्ति या धारणा रहती है कि भोग-विलास जीवनकी एक आवश्यक चीज है। इससे बढकर कोई दूसरा भ्रम हो ही नही सकता। अतएव जो लोग सन्तति-नियमनके लिए उत्सुक है, उन्हे चाहिए कि वे प्राचीन लोगोके बताये हुए उचित उपायोकी खोज करे, और इस बातकी कोशिश करे कि उनको किस तरह पुनर्जीवित किया जाये। उनके सामने बुनि-यादी काम प्रचुर मात्रामे मौजूद है। बाल-विवाह जनसख्याकी वृद्धिमे सहायक होते है। अबाध प्रजननकी बुराईका बहुत-कुछ सम्बन्ध हमारी वर्तमान जीवन-पद्धति है। यदि इन कारणोकी छानबीन की जाये और उनको दूर करनेका उपाय भी किया जाये तो समाज नैतिक दृष्टिसे बहुत ऊँचा उठ जायेगा। परन्तु यदि हमारे इन जल्दबाज और अति उत्साही लोगोने उनकी ओर ध्यान न दिया और यदि कृत्रिम साधनोका

ही दौर-दौरा रहा तो नैतिक अध पतनके अतिरिक्त कोई दूसरा परिणाम न निकलेगा। जो समाज पहले ही विविध कारणोसे नि सत्व हो रहा है, इन कृत्रिम साधनोके प्रयोगसे और भी अधिक नि सत्व हो जायेगा। इसलिए वे शख्स जो कि विना सोचे-विचारे कृत्रिम साधनोका प्रचार करते है, नये सिरेसे इस विषयका अध्ययन-मनन करे, अपनी हानिकर कृतियोसे बाज आये और क्या विवाहित और क्या अविवाहित दोनो ही ब्रह्मचर्यको लोकप्रिय बनाये। सन्ततिनियमनका यही उच्च और सच्चा तरीका है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इडिया, १२-३-१९२५

१६३. टिप्पणियाँ

और सदस्य

पिछले सप्ताहके बाद गुजरातमे प्राप्त आँकडो तथा इलाहाबादसे प्राप्त प० जवाहरलालके तारसे जो सूचना मिली है उसके अनुसार सदस्योकी कुल सख्या ७८५१ हो गई है। पिछले सप्ताह यह सख्या ६६४४ थी। पिछले सप्ताहसे इस सप्ताह सिर्फ पाँच सूबोमे वृद्धि दिखाई देती है। इस सप्ताहके अक मिलाकर अकोका ब्यौरा इस प्रकार है

	अ	ब	योग
१. गुजरात	१८४७	८०	१९२७
२ सयुक्त प्रान्त	१२९	२५४	१०९४
	(अवर्गीकृत अक भी शामिल है)		
३. बिहार	४१८	१४६	७३७
	(अवर्गीकृत अक भी शामिल है)		
४ महाराष्ट्र	४८	१२३	१७१
५ सिन्ध	तफसील प्राप्त नही		१६८
६ बर्मा	२६	३	२९

बर्मा उन छ प्रान्तोमे से एक है जिनकी रिपोर्ट पहली मार्चतक नही आई थी। अन्य पाँच प्रान्त है, तमिलनाड, केरल, दिल्ली, असम और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त। ऊपरके कुल जोडमे इन प्रान्तोका लेखा शामिल नही है।

जैसा कि पिछली रिपोर्टसे लगा था, अधिकाश प्रान्त अपने-अपने जिलोके अक इकट्ठा करनेका काम पूरा नही कर पाये है। उम्मीद है कि पूरे वर्गीकृत अक अगले सप्ताहतक 'यग इडिया' के कार्यालयमे आ जायेगे। यह सूचना हमे बुधवारकी सुबहसे पहले मिल जानी चाहिए।

सभासदोकी सूची

पिछले सप्ताह सभासदोकी जो सूची प्रकाशित की गई थी उसमे ऐसी बहुत-सी बाते नही है, जो होनी चाहिए थी। छ प्रान्तोने तो सूची भेजी ही नही। जिन्होने भेजी भी है उनमे से बहुतोने उसका वर्गीकरण ही नही किया है। कुछ सप्ताह पहले

सगसारी 'कुरान'में नहीं है।

मै नीचे डाक्टर मुहम्मद अली, सदर अहमदिया अजुमन इशाअते इस्लामका भेजा तार बडी खुशीके साथ प्रकाशित कर रहा हूँ

> कैसे भी गुनाहके लिए कुरानशरीफमें सगसारीकी इजाजत नहीं है। आपकी टिप्पणीसे इस्लाम और नबीके साथ अन्याय होता है और उससे इस्लामके खिलाफ दुनियामें जबरदस्त गलतफहमी पैदा होनेका अन्देशा है। मुझे यकीन है कि आपने यह राय सोच-विचार कर कायम नहीं की है, बल्कि इसे आपने यो ही लोगोसे सुनकर लिख दिया है। इस विषयपर 'कुरान' के मेरे अग्रेजी तरजुमेको आप देखेंगे तो आपको यकीन हो जायेगा कि जिन्होने आपको यह खबर दी है वे गलतीपर हैं। इसलिए आपसे यह प्रार्थना है कि आप इसपर विचार करे और इस गलतफहमीको दूर कर दें।

डा० मुहम्मद अली मेरी टीकाको ठीक-ठीक नही समझ सके है। मै यह जानता था कि कुछ लोग किन्ही खास हालतोमे 'सगसारी' की सजाको, 'कुरान' मे लिखी हुई समझकर, ठीक मानते है। मैंने इस बातपर कि 'कुरान' या 'हदीस' मे ऐसी सजा लिखी है या नही या यह प्रथा बहुत अर्सेमे चली आ रही है, अपनी राय जाहिर नही की है, मैंने तो सिर्फ इतना ही कहा था कि यदि 'कुरान' मे ऐसी सजा लिखी भी हो, तो भी उसका समर्थन नही किया जा सकता। मुझे बडी खुशी है कि डा० मुहम्मद अली मुझे इस बातका यकीन दिलाते है कि 'कुरान' मे सगसारी के लिए इजाजत नही दी गई है। मै यह जानना चाहता हूँ कि काबुलमे किस आधार-पर उसका समर्थन किया गया और हिन्दुस्तानमे मुसलमानोके एक वर्गने किस आधार-पर उसे ठीक माना। मै यह भी चाहता हूँ कि सब मुसलमान एक स्वरसे सगसारीकी सजाकी निन्दा करे। यदि ऐसा हो सका तो फिर इस्लामी दुनियामे ऐसी सजाका दुबारा कही भी दिया जाना नामुमकिन हो जायेगा।

एक खत

एक प्रसिद्ध भारतीय सार्वजनिक कार्यकर्त्ताने एक सुविख्यात अग्रेजको मुलाकातके लिए एक पत्र लिखा था। उस अग्रेजने जो जवाब दिया था वह नीचे दिया जाता है

> आपका पत्र मिला। मुझे अफसोस है; मैं आपसे नही मिल सकूँगा। इसका कारण सिर्फ यही है कि मेरी रायमें भारतीय प्रश्नकी आज जो स्थिति है उसको देखते हुए, आपका मुझसे मिलना फायदेमन्द नहीं होगा। मैं भारतीय नेताओके कामो और उनके इरादोको न तो समझ पाता हूँ और न उनके प्रति मेरी कोई सहानुभूति हो सकती है। आप लोगोको जिस जातिके लोगोसे वास्ता पड़ा है उसके स्वभावको थोड़ा-बहुत तो अवश्य जान लेना चाहिए। ब्रिटिश सरकारने आपको बहुत-कुछ दिया है। न्यायकी भावनासे जो-कुछ आपको दिया गया है क्या उसका आप पूरा-पूरा उपयोग नहीं कर सकते? मुमकिन है

आप मताधिकारकी शक्तिको सुव्यवस्थित करके, योग्य लोगोका चुनाव करके और उनमें जो सर्वोत्कृष्ट हैं उनके कार्योंकी समालोचना करके, क्रमश यह साबित कर सके कि आप नागरिकताकी जबरदस्त और गम्भीर जवाबदेहीका निर्वाह कर सकते हैं और अपने महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्योका पालन कर सकते हैं। मुझे यकीन है कि राजनीतिक सामर्थ्यका यह प्रमाण मिलनेपर मेरे समर्थतम देशवासी आपके भावी राजनीतिक विकासकी दिशामें आपका साथ देंगे और आपको उनकी सक्रिय सहानुभूति भी प्राप्त होगी। यदि आपका विश्वास अंग्रेजी राजनीतिक दलोंके साथ सौदा करनेमें हो तो उसका नतीजा निराशाजनक ही होगा।

मेरी समझमे नही आ रहा है कि लेखककी इस उद्धततापर अफसोस करे या अपने विचारोंके प्रति उसकी दृढ़ताकी सराहना। उसने तो अपने मनमे यह मान ही लिया है कि मुलाकात करनेवाले सज्जनसे उसे जानना कुछ भी नही है। उसे तो केवल देना ही देना है। ऐसे अंग्रेजको कौन सन्तुष्ट कर सकता है जो अपनेको चारो तरफसे बन्द रखता है और यह समझनेसे इनकार करता है कि बहस करनेकी प्रबल-से-प्रबल शक्तिका सम्पादन करने-भरसे हम नागरिकताकी गम्भीर जवाबदेही निभानेके काबिल नही हो सकते। ऐसे अंग्रेजको यह कौन समझाये कि नागरिकताकी जवाबदेही निभानेके लिए पहले आत्म-रक्षा करनेकी ताकतका होना आवश्यक है और वह ताकत वादविवादमे निष्णात होनेकी कला जाननेसे हासिल नही हो सकती। उसे यह कौन बताये कि खुद उसकी जातिने भी अपने देशकी रक्षा करनेकी ताकतको बढा कर ही स्वराज्यकी कला प्राप्त की है और अंग्रेजोको बहस करनेकी वर्तमान क्षमता स्वराज्य मिल चुकनेके बाद ही प्राप्त हुई है। इस लेखक और उसके हम-खयालोको यह कौन समझाये कि हम भारतीय यह नही मानते कि न्यायकी भावनासे हमे बहुत-कुछ दिया जा चुका है। बल्कि हम मानते हैं कि हमे जो-कुछ दिया गया है वह बहुत ही कम है और वह भी दिया गया है परिस्थितियोंके दबावके कारण। अन्तमे उनके मनमे यह बात कौन बैठा सकेगा कि हम लोग अंग्रेजोके "राजनीतिक दलोकी आपसी सौदेबाजी" मे नही, अपनी ताकतपर ही विश्वास रखते हैं। अंग्रेजोका ऐसा अज्ञान और उनका जानबूझकर अलग रहनेका रवैया बडे ही दुःखका विषय है। इस पत्रसे हमे एक सबक भी मिलता है। जिन्हे हम जानते नही है उनके साथ मुलाकात करनेका प्रयत्न करके हमे अपना अपमान नही कराना चाहिए। सारी दुनियाके साथ हमारे सम्बन्धोका क्या रूप होगा, यह हमारे अपने व्यवहारपर निर्भर है।

एक कार्यकर्त्ताको कैदकी सजा

मुझे कोचीनसे एक तार मिला है, जिसमे बताया गया है कि श्री कुरुर नम्बूद्रीपादको दो महीनेकी सादी कैदकी सजा दी गई है। यह सजा किस कारण दी गई है यह मैं नही जानता। श्री नम्बूद्रीपाद एक मजे हुए सैनिक और निष्ठा-वान् कार्यकर्त्ता हैं। मैं उनको इस कैदकी सजापर बधाई देता हूँ। मेरी रायमे जो

व्यक्ति सेवा करते हुए और बिना किसी नैतिक अपराधके कैदकी सजा पाता है वह भी देशकी सेवा करता है।

मैं राजनीतिज्ञ?

एक अंग्रेज मित्रने श्री एन्ड्रूयूजको एक पत्र भेजा है जिसे उन्होंने जवाब देनेके लिए मेरे पास भेज दिया है। उनकी समस्या यह है

> हाल ही के एक लेखमें श्री गांधीने सवर्णो और अछूतोंके बीच विवाहका विरोध किया है; उसे पढकर मुझे आश्चर्य हुआ। इस सवालको तो मैं एक कसौटी मानता हूँ। जिस प्रकार मैं उनसे यह नहीं कहूंगा कि वे इस बातका समर्थन करें कि अमुक व्यक्तिको अमुक व्यक्तिसे विवाह करना चाहिए उसी प्रकार मैं उनसे यह उम्मीद नहीं करूँगा कि वे यह कहें कि इस जाति और उस जातिके बीच विवाह-सम्बन्ध होना चाहिए। परन्तु यह तो निश्चित है कि जहाँ स्त्री-पुरुष समान विचारके होते हैं वहीं उत्तम दाम्पत्य सम्बन्ध पाये जाते हैं और सन्तान उत्तम होती है। क्या भारतमें श्री गांधीका यही लक्ष्य नहीं है? और जिस हदतक वे इस लक्ष्यको प्राप्त करेंगे उसी हदतक क्या भिन्न-भिन्न जातियोंमें अन्तर्विवाह वैसे ही सहज न हो जायेंगे जैसे एफिसस में यहूदियों और यूनानियोंके बीच?
>
> मैं जानता हूँ कि गांधी एक राजनीतिज्ञ हैं और मैं समझ सकता हूँ कि उन्होंने यह बात लोगोंकी नाराजगीसे बचनेके लिए लिख दी होगी। लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि राजनीतिक दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण होनेपर भी उनके इस वक्तव्यसे उनके प्रधान लक्ष्यको हानि पहुँचे बिना न रहेगी। यदि ब्राह्मण लोग भंगियोंको, महज जातिकी बिनापर, बराबरीके अधिकार देनेसे इनकार करें तो केनियाके यूरोपीय किसानोंसे यह उम्मीद कैसे की जा सकती है कि वे वहाँ हिन्दुस्तानी दुकानदारोंसे समुचित व्यवहार करेंगे?

मैंने जाति-भेद और अन्तर्विवाहके सम्बन्धमें अपने विचार अनेक बार व्यक्त किये हैं। मेरे नजदीक विवाह पति-पत्नीतककी पारस्परिक सौहार्दकी आवश्यक कसौटी नहीं है, फिर उनकी जातिकी तो बात ही क्या? मैं ऐसे किसी कालकी कल्पना नहीं कर सकता जब कि सारी मनुष्य-जातिका धर्म एक ही हो जायेगा। ऐसी अवस्थामें आम तौरपर धार्मिक भेद रहेंगे ही। लोग अपने अपने-धर्ममें विवाह करेंगे। उसी तरह क्षेत्रीय प्रतिबन्ध भी रहेंगे। जातीय प्रतिबन्ध उसी सिद्धान्तका व्यापक रूप है। यह एक प्रकारकी सामाजिक सुविधा है। किसी अभिजात कुलवाले अंग्रेज व्यक्तिका पुत्र आम तौरपर किसी पसारीकी लडकीसे शादी नहीं करता। आम तौरपर कुलकी बातको सोचकर ही वह ऐसी लडकीसे सम्बन्ध नहीं करेगा। मैं अस्पृश्यताके खिलाफ इसलिए हूँ कि उसके कारण सेवाका क्षेत्र संकुचित हो जाता है। विवाह कोई सेवा-कार्य नहीं है। वह तो एक ऐसा सुख-साधन है जिसे स्त्री या पुरुष अपने लिए चाहते

है। इसलिए यदि युवकका साथी चुननेका क्षेत्र सीमित कर दिया जाता है या विवाह जैसे महत्त्वपूर्ण जीवन परिवर्तनके लिए सोच-समझकर चुनाव किया जाता है तो मुझे उसमे कोई हानि नही दिखाई देती। अगर केनियाका कोई बाशिन्दा मेरा केनियामे रहना केवल इसी बिनापर बर्दाश्त नही कर सकता कि मै अपनी लडकीकी शादी उसके साथ नही करता या उसकी लडकीका पाणिग्रहण अपने लडकेके साथ नही होने देता, तो मुझे उसके लिए खेद होगा, पर मजबूर होकर ऐसे अनमेल या अनुपयुक्त रिश्ते करनेके बजाय मै केनियासे निकाल दिये जानेमे अधिक सन्तोष मानूँगा। मै तो यह भी कहूँगा कि केनियावासी तो मुझे ऐसी बात सोचने भी न देगा। और यदि मै ऐसा कोई दावा पेश भी करता हूँ तो वह मुझे वहासे हटाये जानेका एक और कारण बन जायेगा। यद्यपि यह विषय मेरी दृष्टिमे बहुत साफ है और सारी दुनियामे विवाह सम्बन्ध करनेके लिए जाति, वर्ण आदिकी मर्यादाओका पालन होता है, तथापि सम्भव है कि श्री एन्ड्रयूजके मित्रको मेरे उत्तरसे सन्तोष न हो। पर मै उन्हे यह आश्वासन दे सकता हूँ कि मैने किसीकी नाराजगीके खयालसे सवालको टाला नही है। लेखकने राजनीतिज्ञ शब्दका प्रयोग जिस सकुचित अर्थमे किया है उस अर्थमें मै राजनीतिज्ञ नही हूँ। मैने वही बात लिखी है, जिसे मै मानता हूँ। मैने किसी राजनीतिक लाभके लिए सिद्धान्तका नही छोडा है। यदि मै अन्तर्विवाहपर लगाये हिन्दू धर्मके सयम-विधान-को न मानूँ तो शायद मै उन लोगोमे अधिक लोकप्रियता प्राप्त कर लूँगा जिनसे मै मिलता-जुलता हूँ। और मेरा मुख्य लक्ष्य क्या है? मनुष्य-मात्रके साथ समान व्यवहार। और समान व्यवहारका अर्थ है समान सेवा। सेवा करनेके अधिकारसे किसीको वचित नही रखा जा सकता। विवाह-सम्बन्धमें गुण-शीलकी समानता होनी चाहिए। यदि कोई स्त्री किसी लाल बालवाले पुरुषसे विवाह करनेसे इनकार कर दे तो यह कोई गुनाह न होगा, पर अगर वह उसके लाल बालोके कारण उसकी सेवा करनेके अपने कर्त्तव्यकी अवहेलना करेगी तो वह पापकी भागिनी होगी। विवाह अपनी रुचिका विषय है। सेवा एक कर्त्तव्य है जिससे हम बच नही सकते।

एक क्रान्तिकारी

मुझे अदेशा है कि आपकी इस सलाहका पालन करना कि मै सार्वजनिक जीवनसे हट जाऊँ, आसान नही है। ऐसी सलाह देना आसान हो सकता है। मेरा दावा है कि मै भारतका और उसके माध्यमसे सारी मानव-जातिका सेवक हूँ। मै हमेशा जैसा चाहू वैसा नही हो सकता। अगर मौसम कभी मेरे अनुकूल रहा है तो मुझे प्रतिकूलताका भी मुकाबला करना चाहिए। जबतक मुझे लगता है कि अभी मेरी जरूरत है तबतक मुझे मैदान नही छोडना चाहिए। जब मेरा काम खतम हो जायेगा और मै एक असमर्थ या थका-हारा सिपाही रह जाऊँगा तब लोग मुझे अलग कर देंगे। तबतक मुझे अपना काम करते रहना हे और क्रान्तिकारी हलचलोके विषाक्त असरको खतम करनेके लिए जो-कुछ भी सम्भव हे उसे करना है। उस समय जब कि रोगीको अगूरका ताजा रस पिलानेकी जरूरत है यदि कोई डाक्टर उसे सखियाकी भस्म खिलाता है तो फिर उसका उद्देश्य चाहे कितना ही अच्छा क्यो न हो और वह

कितना ही आत्मत्यागी क्यो न हो, वह दूरसे ही नमस्कार कर लेनेके योग्य है। मेरा क्रान्तिकारियोसे कहना है कि वे अपने हाथो आत्मघात न करे और अनिच्छुक लोगोंको अपने साथ न घसीटे। यूरोपका रास्ता हिन्दुस्तानका रास्ता नही हो सकता। हिन्दुस्तान कलकत्ता या बम्बईमे नही है। हिन्दुस्तान तो अपने सात लाख गांवोमे बसा हुआ है। यदि क्रान्तिकारियोकी सख्या बहुत है तो वे उन गांवोमे फैल जाये और अपने देशकी लाखो अन्धेरी झोपडियोमे कुछ उजाला पहुँचाये। अग्रेज अधिकारियो तथा उनके अन्य सहायक लोगोके खूनके प्यासे बने रहनेकी अपेक्षा ऐसा करना उनकी महत्वाकाक्षा और देश-प्रेमके अधिक अनुरूप होगा। अधिकारियोको मार डालनेकी अपेक्षा उनके मनोभावको बदलनेकी कोशिश करना कही अच्छा है।

हिन्दुओकी ज्यादती

एक मुसलमान सवाददाताने, निजी सम्पत्तिपर कथित मस्जिद बनानेके सम्बन्धमे लिखे गये मेरे लेखपर नरम शब्दोमे मेरी भर्त्सना की है और हिन्दुओंकी कथित ज्यादतियोके कई उदाहरण दिये है किन्तु उनके सम्बन्धमे उसने कोई प्रमाण पेश नहीं किये है। अपने एक आरोपके समर्थनमे उसने कुछ तथ्य अवश्य दिये है। मैंने उससे कहा है कि वह अपने दूसरे आरोपोको भी सिद्ध करे। मैने वचन दिया है कि यदि वे उनके प्रमाण देगे तो मै उन्हे पूराका-पूरा छाप दूँगा और मामलेकी पूछताछ भी करूँगा। फिलहाल मैं नीचे उस एक आरोपको देता हूँ जो सवाददाताने सप्रमाण लगाया है

> **लोहानीके मुसलमान एक पुरानी कच्ची मस्जिदकी जगह एक पक्की मस्जिद बनाना चाहते है। बलशाली हिन्दू मुसलमानोंको अपने इस अधिकारका प्रयोग नहीं करने देते। हमारे ये भाई अपने देशवासियोके न्याय्य अधिकारोके विरुद्ध उसी बहिष्कार-अस्त्रका प्रयोग कर रहे हैं जिसका प्रयोग उन्हें विदेशी आक्रमणकारीके विरुद्ध करना सिखाया गया है। वहाँ नमाज और अजान बिलकुल बन्द है।**

यदि लोहानीके हिन्दुओंने, उनपर जो-कुछ करनेका आरोप लगाया गया है वह काम किया है तो निश्चय ही उन्होने ज्यादती की है। मेरा उनसे अनुरोध है कि वे अपना कथन प्रकाशनके लिए भेजे और यदि उनके विरुद्ध लगाये गये आरोप ठीक हो तो मेरा उनसे कहना है कि वे अपनी भूल तुरन्त सुधार ले। न्यायकी माँग करनेवालोको खुद निर्दोष रहना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-३-१९२५

१६४. केनियाके मैदान[1]

मैं अभी हालमें दिल्ली गया था। वहाँसे लौटकर मुझे लगा कि किसी-को जरा भी गलतफहमी न हो, इसलिए मुझे यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि केनियाके मैदानोंके जिस क्षेत्रमें भारतीयोंको बसानेके लिए बड़े पैमानेपर सरकारी जमीनें मुफ्त देनेका प्रस्ताव है उस क्षेत्रके सम्बन्धमें जाँच करनेके लिए सरकारी तौरपर भारतसे किसीको भेजे जानेपर मुझे प्रबल आपत्ति है।

पहली बात तो यह है कि ऐसे प्रस्तावको अस्थायी रूपसे भी मानना या उसको माननेके खयालसे उसपर विचार भी करना समस्त भारतीय स्थितिको हास्यास्पद बनाना है, क्योंकि भारतीयोंकी माँग यह नहीं है कि उन्हें किसी दूसरी जगह सरकारी जमीनें मुफ्त दी जायें, उनकी माँग तो यह है कि उनको वचन दिये जानेके बावजूद, केनियाके पहाड़ी प्रदेशोंमें जमीनें खरीदने और बेचनेका जो कानूनी अधिकार अवैध रूपसे उनसे छीन लिया गया है वह उन्हें फिर वापस दे दिया जाये। भारतीय नागरिकताके प्राथमिक अधिकारकी माँग कर रहे हैं। उनकी माँग यही है कि कानूनकी निगाहमें उन्हें दूसरे नागरिकोंके साथ बराबरीका दर्जा दिया जाये। इसलिए यह आसानीसे समझा जा सकता है कि यदि भारतीय केनियाके मैदानोंमें मुफ्त जमीनें पानेके प्रस्तावपर विचारतक करेंगे तो इससे निश्चित रूपसे यही समझा जायेगा कि उन्होंने अन्यत्र अपने कानूनी अधिकार एकदम छोड़ दिये हैं। मैं समझता हूँ कि मैंने यह बात बिलकुल साफ कर दी है कि मैदानोंमें किसी क्षेत्रकी जाँच करनेके लिए किसी भारतीय अधिकारीके भेजे जानेका अर्थ यही होगा कि भारतीयोंने केनियाके पहाड़ी प्रदेशोंमें अपने कानूनी अधिकार बिलकुल छोड़ दिये हैं।

दूसरी बात यह है कि केनियाके पहाड़ी प्रदेशोंमें गोरोंने वतनियोंकी १२,००० वर्गमील उपजाऊ जमीन तो ले ही ली है, और अब इसके सिवा यदि भारतीय इन मैदानोंके एक बड़े क्षेत्रको अंग्रेजी सैनिक शक्तिकी सहायतासे कब्जे-में ले और वतनियोंको इस नये प्रदेशसे भी वंचित करें तो यह अन्याय होगा। इस तरह भारत पहली बार वह कदम उठायेगा जिसका अर्थ होगा सम्भव दिखनेपर जमीनें हड़पनेकी साम्राज्यवादी नीतिपर अमल करनेके लिए उसका तैयार होना। यह कहनेकी जरूरत नहीं है कि आफ्रिकाके वतनी, जहाँतक उन्हें अपनी बात कहनेका अधिकार है, भारतीयों द्वारा जमीनें हड़पनेकी ऐसी किसी नीतिके विरुद्ध अत्यन्त प्रबल आपत्ति करेंगे। यदि उन्हें अपनी बात कहनेका

१ सी० एफ० एन्ड्रयूज द्वारा लिखित।

अधिकार प्राप्त नहीं है और वे शक्तिहीन है तव तो उनके साथ किया गया यह अन्याय और भी वडा अन्याय क़हलायेगा। यह याद रखना चाहिए कि केनिया कोई निर्जन देश नहीं है; वह ऐसा देश नहीं हे जिसमें वहांके मूलनिवासी न हो। यह एक वडा प्रदेश हे किन्तु उसमें वहुत थोडी जमीन ऐसी हे जहाँ सिचाईके लिए भरपूर साधन उपलब्ध है और जहाँ खेती की जा सकती है। अगर अपने स्वार्थ-साधनके लिए वतनियोको मजदूर वनाकर उनका शोषण न किया गया होता, ऐसा शोषण जिससे वतनियोका दिन-व-दिन अध पतन हो रहा हे, तो वतनी लोगोकी आवादी सारी कृषि योग्य भूमिमें फैल गई होती और उसने उसपर अधिकार कर लिया होता। आज भी इस शोषणके वावजूद वतनी लोगोके लिए 'रक्षित भूमि' वहुत कम पड रही हे। इसलिए यदि भारतीय, अग्रेज और भारतीय सैनिकोकी सगीनोके वलपर उस प्रदेशमें से, जो अव भी वतनियोके लिये खुला है, वडा भाग हथिया लेंगे तो यह उनके प्रति घोर अन्याय होगा।

तीसरी वात यह है कि केनिया और युगाण्डामें भारतीय अवाध प्रवासका दावा इसी आधारपर करते हैं कि वे वतनी लोगोकी उन्नतिमें सहायता दे रहे हैं और उनके मार्गमें रुकावटें नहीं डाल रहे हैं। इसके अतिरिक्त उनका कोई दूसरा दावा नही है। उनका कहना यह है कि पूर्वी आफ्रिका और भारतके वीच दो हजार सालसे व्यापार चल रहा है। भारतीय पूर्वी आफ्रिकामें वेरोक-टोक आते रहे और वहाँ उनका स्वागत किया गया, क्योकि वे वहाँ मेल-जोलसे रहनेके लिए गये — लड़नेके लिए नहीं, और क्योकि भारतीयो और वतनियोके वीच व्यापार और वस्तु-विनिमयका दोनोको फायदा हुआ है। इधरसे पूर्वी आफ्रिकाके लोग भी भारतमें इसी प्रकार अवाध रूपसे जा सके है। वहाँ भी इसी कारण उनका प्रेमपूर्वक स्वागत किया गया है। इस प्रकार दोनो ओरसे मुक्त प्रवासको वढावा दिया गया है और वह प्रवास लगातार चलता रहा है। लेकिन यदि दोनोके वीच एक नये ही सम्वन्धकी — विजेताकी भावनासे अधिकार करनेकी — वकालतकी जाती है (चाहे उसे कैसा ही शिष्ट रूप क्यो न दिया जाये) तो पूरी स्थिति ही वदल जाती है। भारतीयोका यह दावा कि वे वतनियोका सम्मान करते हैं और उन्हे लाभ पहुँचाते है, व्यर्थ सिद्ध हो जाता है। भारतीय आफ्रिकामें साम्राज्यवादी आक्रमणकारी वन जाते हैं और वे इस मामलेमें यूरोपीयोकी श्रेणीमें आ जाते हैं। यद्यपि वे स्वय गुलामीकी वेडियोमें जकडे हुये हैं फिर भी दूसरोको गुलाम वनानेके लिए तैयार हैं। वे पीडित और शोषितोके पक्षमें नहीं है, वल्कि अन्यायियोके साथी बन जाते हैं और लूटमें हिस्सा लेते हैं। उत्तरदायी भारतीय ऐसे कार्य करेगे और इतने वडे पैमानपर जैसा कि अव विचार किया जा रहा है, यह वात मै सोच भी नहीं सकता।

मैं श्री एन्ड्रचूजके इस विचारका पूरा समर्थन करता हूँ कि भारतीय लोगोको पहाड़ी प्रदेशोंसे हटाकर खास तौरसे मैदानोमें बसानेके विचारको मानना हर तरहसे अनुचित होगा, विशेषतया जब इसमें इन मैदानोको वतनी लोगोसे छीननेकी बात हो।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-३-१९२५

१६५. एम० वी० एन० से

मैं अस्पृश्यता और वर्ण या जातिमें बहुत बड़ा अन्तर मानता हूँ। अस्पृश्यताका कोई वैज्ञानिक आधार नही है। उसका समर्थन तर्कसे नही किया जा सकता। उसके कारण मनुष्य अपने साथियोंकी सेवा करनेके अधिकारसे वंचित हो जाता है और मुसीबतमें पड़े "अछूत" अपने इतर सह मनुष्योकी सेवा पानेके अधिकारी नही रहते। मेरी रायमें वर्ण-व्यवस्थाका आधार वैज्ञानिक है। विवेकसे उसका विरोध नही है। यदि इसमें हानियां हैं तो लाभ भी है। वर्ण-व्यवस्था किसी ब्राह्मणको अपने शूद्र भाईकी सेवा करनेसे नही रोकती। वर्णसे सामाजिक और नैतिक मर्यादा बंधी रहती है। वर्णके सिद्धान्तको इससे आगे नहीं बढ़ाया जाना चाहिए। मैं उसे चार वर्णतक ही सीमित मानता हूँ। उन्हें और बढ़ानेसे बुराइयाँ आयेंगी। मैं वर्णोंका सुधार करना और उनमें सचमुच जो बुराइयाँ आ गई हैं उन्हें दूर करना चाहता हूँ। किन्तु मुझे वर्णोको ही खत्म करनेका कोई कारण दिखाई नही देता। मेरी दृष्टिमें वहाँ ऊँच-नीचका कोई प्रश्न ही नही उठता। जो ब्राह्मण यह समझता है कि वह श्रेष्ठ प्राणी है और दूसरे वर्णोंका तिरस्कार करता है, वह ब्राह्मण नहीं है। यदि उसको वर्णोंमें अग्रगण्य स्थान मिलता है तो वह सेवाके अधिकारकी दृष्टिसे है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-३-१९२५

१६६. आर० एस० एस० आर० से

आपने अपना पता नही दिया है। यदि आपके मतसे 'गीता' के अन्य अध्यायोंमें हिंसाका समर्थन किया गया है, तो फिर आपने १२ वे अध्यायसे जो श्लोक उद्धृत किये हैं उनसे भी अहिंसाका अधिक समर्थन नही होता। लेकिन आपके इस कथनसे कि 'गीता'में कही भी हिंसाका समर्थन है और उसकी शिक्षा दी गई है, मैं सहमत नही हूँ। दूसरे अध्यायके अन्तके श्लोकोको देखिए। यद्यपि उस अध्यायके शुरूके श्लोकोंकी व्याख्या हिंसामूलक की जा सकती है, फिर भी मुझे लगता है कि उस अध्यायके अन्तमें जो श्लोक है उनका वैसा अर्थ नही किया जा सकता। सच तो यह है कि 'गीता' की शाब्दिक व्याख्या करनेसे पाठक विरोधोंके जालमें फँस सकता है। जैसा कहा गया है, "शब्द मारक होता है, भाव तारक होता है।"

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १२-३-१९२५

१६७. भेंटके सम्बन्धमें तार

१२ मार्च, १९२५

खेद है वर्तमान कार्यक्रममें भूतपूर्व महाराजासे[1] मिलनेके लिए दिन निकालना असम्भव[2]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १४-३-१९२५

१६८. भाषण : क्विलोनमें[3]

१२ मार्च, १९२५

अध्यक्ष महोदय, नगरपालिकाके पार्षदगण तथा मित्रो,

आपने जो सुन्दर अभिनन्दन-पत्र मुझे दिया है और उसमें जो भाव व्यक्त किये हैं उनके लिए मैं आपको हृदयसे धन्यवाद देता हूँ। मैं जानता हूँ कि मेरी ही तरह आपको भी मेरे मित्र मौलाना शौकत अलीकी अनुपस्थितिपर दुःख है। आम तौरपर ऐसे सभी दौरोंमें वे मेरे साथ रहते हैं। हुआ यह है कि कुछ विशेष कार्योंमें उलझे होनेके कारण दिल्लीसे उनका हटना सम्भव नहीं है, और फिर इस दौरेमें उनका मेरे साथ आना जरूरी भी नहीं था। जैसा कि आप जानते हैं, फिलहाल त्रावणकोरमें मैं एक विशेष काममें आया हुआ हूँ जिसमें उनकी उतनी दिलचस्पी नहीं है, जितनी कि हम हिन्दुओंकी है।

अस्पृश्यताकी समस्या अपनी सारी बुराइयोंके साथ मलाबारमें प्रकट हुई है। मैं स्वीकार करता हूँ कि वाइकोममें संघर्ष शुरू होनेसे पहले मुझे मालूम भी नहीं था कि अस्पृश्योंका किन्हीं विशेष स्थानोंमें प्रवेश कोई अपराध है। त्रावणकोर भारतके उन चन्द भाग्यशाली क्षेत्रोंमें से है जहाँ लगभग सभी लोग शिक्षित हैं। आप लोग एक ऐसे राज्यमें रहते हैं जो प्रगतिशील समझा जाता है, और मेरी रायमें ऐसा समझना ठीक ही है। मैं जानता हूँ कि इस राज्यने उन लोगोंके लिए बहुत-कुछ किया है, जिन्हें भ्रमवश नीच जातिका कहा जाता है। मैं उन्हें नीच जातिका कहना गलत मानता हूँ, उनके लिए सही शब्द होगा दलित जाति। स्वामी विवेकानन्दने हमें याद दिलाया था कि ऊँची जातिवालोंने ही अपनेमें से कुछ लोगोंको दलित किया था और इस प्रकार स्वयं नीच हो गये थे। आप अपने ही वर्गके मनुष्योंको नीचा

१. सर श्रीराम वर्मा, कोचीनके भूतपूर्व महाराजा।

२. १९-३-१९२५ के हिन्दूके अनुसार गांधीजी १८ मार्चको महाराजासे मिले।

३. यह भाषण क्विलोन नगरपालिका द्वारा भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें दिया गया था।

करके खुद ऊँचे नही वने रह सकते। यह वात अकल्पनीय लगती हे कि किसी मनुष्य-के लिए अर्द्ध-सार्वजनिक या सार्वजनिक सडकोका उपयोग करना निपिद्ध कर दिया जाये। जवसे मैने त्रावणकोरमे कदम रखा हे तवसे मै इस प्रकारके निषेधके पक्षमे जितने तर्क दिये जा सकते है, उन सभी तर्कोको धैर्य और नम्रताके साथ सुनता रहा हूँ, लेकिन मै आपसे कहना चाहता हूँ कि मै उनसे जरा भी प्रभावित नही हुआ हूँ —— इसलिए नही कि मै दूसरेकी वात समझनेके लिए तैयार नही हूँ वल्कि इसलिए कि कट्टरपन्थी लोगो द्वारा जो विरोध किया जा रहा है, वह मूलत गलत हे।

मैने उनके सामने तीन निश्चित प्रस्ताव रखे है। इस समय मै उनकी चर्चा नही करूँगा, लेकिन आप सवसे जो यहाँ इकट्ठा हुए है, मेरा निवेदन हे कि आप मुझे तथा इस अनुष्ठानको अपनी सक्रिय सहानुभूति और सहयोग प्रदान करे। (हर्षध्वनि) हिन्दू धर्ममे जो वुराई घुस गई हे, यदि आप उसे हृदयमे स्वीकार करते है तो मै इस नगरके प्रत्येक स्त्री और पुरुषमे सहयोग और सहानुभूति देनेका अनुरोध करूँगा। कृपया याद रखे कि इस ममय दुनियाके सभी धर्मामे अव्यवस्था और गडवडी फैली हुई है। अव वे केवल अपने धर्म-ग्रन्थोके प्रमाणोके सहारे ही नही खडे रह सकते। उन्हे अव तर्क और वुद्धिकी कडीसे-कडी परीक्षा पास करनी होगी। मै सनातनी हिन्दू होनेका दावा करता हूँ, फिर भी मैने जो वात कई मौकोपर पहले कही है उसे फिर दोहरानेमे मुझे हिचक नही है, और वह यह हे कि यदि 'वेदो' या 'पुराणो' मे मुझे ऐसी चीजे दिखाई पडे जो वुद्धिकी कसौटीपर खरी न उतरे तो उन्हे अस्वीकार करनेमे मै कोई आगा-पीछा नही करूँगा। लेकिन अपने सीमित समय और सीमित ज्ञानके अनुसार मै स्वय जितनी खोज कर सका हूँ, और भारतके वडेसे-वडे विद्वान् शास्त्रियोसे मुझे जितनी कुछ सहायता मिली है, उसके आधारपर मेरी यह दृढ धारणा वन गई है कि इस समय भारतमे अनुपगम्यता अथवा अस्पृश्यता जिस रूपमे प्रचलित है, उनके लिए शास्त्रोमे कोई भी प्रमाण नही मिलता। यह देश ज्ञानका भण्डार है और यदि आप मेरे कथनका खण्डन करना चाहते हो तो मै आपसे कहूँगा कि मेरी सहायता कीजिए ओर मुझे वे श्लोक दिखाइये जो आपकी रायमे कट्टरपन्थियोके मतका समर्थन करते है। मै आपको चेतावनी देता हूँ कि यदि आप समय रहते नही चेते —— यह वात मै यहाँ उपस्थित हिन्दू श्रोताओमे कह रहा हूँ —— तो हमारे धर्मके सर्वनाशका भय हे।

इम सुधारके वारेमे मुझसे धीरज रखनेको कहा जाता हे। मै अनुभवसे जानता हूँ कि धीरज एक गुण है। मैने पिछले ४० वर्षोसे अपने विनम्र ढगसे वहुत प्रयास-पूर्वक इस गुणको अपने भीतर पैदा किया है, लेकिन मै आपके सामने स्वीकार करता हूँ कि मै हिन्दू धर्मको कलकित करनेवाले इस अभिशापके प्रति धीरज नही रख सकता। मै तो आपसे कहूँगा कि आप इस अभिशापके प्रति अधैर्यको एक गुण समझे। मेरे शव्दोपर ध्यान दीजिए। मै कट्टरपन्थियोके प्रति अधैर्यको वरतनेको नही कहता, मेरा आपसे अनुरोध है कि आप अपने प्रति अधीरता वरते। देशको इस अभिशापसे जवतक मुक्त न कर ले, चैनसे न वैठे। अगर आप हलचल करे ओर अपनी रायको जोरदार ढगसे व्यक्त करे तो अन्धी कट्टरताका विरोध छिन्न-भिन्न हो जायेगा।

सत्याग्रह अपनी रायकी जोरदार अभिव्यक्तिके सिवा कुछ नही है। और जरूरत बातोपर जोर देनेकी नही है, कार्योंपर जोर देनेकी है, और कार्योंपर जोर देनेका मतलब है स्वय कष्ट सहन करना। मै चाहता हूँ कि आप इस कसौटीपर वाइकोममे चल रहे सघर्षको जाँचे और यदि आपको वहाँ सत्याग्रहियोमें हिंसाका लेश भी नजर आये तो आप उनकी कटुतम शब्दोमे निन्दा करे। किन्तु यदि आप पाये कि वाइकोमकी कट्टरपन्थी विचारधाराकी अवहेलना करनेवाले वे लोग ईमानदार है और वे कष्टोको सत्याग्रहियोकी भाँति सहन कर रहे है, यदि आप देखे कि इन लोगोके बारेमे मै जो-कुछ आपको बता रहा हूँ वह सच है, तो मै आपसे उनका समर्थन करनेका अनुरोध करता हूँ।

सत्याग्रहने अब एक चिरन्तन शक्तिका रूप ले लिया है। ससारकी कोई भी शक्ति उसका विनाश नही कर सकती। सत्याग्रह एक अमूल्य निधि है। वह सत्याग्रही और जिसके विरुद्ध सत्याग्रह किया जाये, दोनोका ही कल्याण करता है। इससे किसीको डरनेकी जरूरत नही है और मै चाहूँगा कि यहाँ रहनेवाले आप शिक्षित लोग सत्याग्रह और उसके समूचे फलाफलका अध्ययन करे, तब आप मुझसे सहमत होगे कि सत्याग्रहको यदि ठीकसे समझा जाये और ठीकसे प्रयोगमे लाया जाये तो यह एक लाजवाब तरीका है।

त्रावणकोरके दीवानके मानपत्रमे चरखेका उल्लेख देखकर मुझे बहुत हर्ष हुआ। आप लोगोने अपनी विधान सभामे एक प्रस्ताव पास किया है जिसके द्वारा राष्ट्रीय स्कूलोमे चरखेको अपनानेकी सिफारिश की गई है। मै विधान सभाको इस प्रस्तावके लिए बधाई देता हूँ, लेकिन त्रावणकोरके नगरो और कस्बोंकी यात्रा कर चुकनेके बाद मुझे अब आपसे यह कहना ही पडेगा कि आपके स्कूलोमे चरखेकी योजनाकी सफलताके बारेमे मुझे शक है। अगर मुझे ठीक याद है तो दीवान महोदयने एक कुशल कतैयेके लिए विज्ञापन निकलवाया है। मुझे त्रावणकोरमे एक भी कुशल कतैया मिलनेमे शक है। और अगर आपके पास पर्याप्त सख्यामे कुशल कतैये नही है तो मै नही जानता कि आप अपने स्कूलोके लिए कताई-शिक्षक कहाँसे लायेगे। लेकिन मै आपसे कहूँगा कि जब आपने प्रस्ताव पास कर दिया है तो उसे अब सफल बनाइए। आप विश्वास करे कि यदि भारतकी दिनोदिन बढती गरीबीकी समस्याको कोई चीज हल कर सकती है तो वह केवल चरखा ही है। समूचे भारतके कृषक वर्गके लिए किसी एक सहायक धन्धेकी जरूरत है। ऐसा सहायक धन्धा केवल चरखेसे ही मिल सकता है। यह कोई नई चीज नही है। आजसे सिर्फ सौ साल पहले भारतकी हर कुटियामे चरखा रहता था। चरखेको उसका पुराना स्थान देते ही आप देखेगे कि आपने गरीबीकी समस्या हल कर ली है।

मेरे मनमे त्रावणकोरकी स्त्रियोके प्रति ममता उत्पन्न हो गई है। उन्हे तन ढँकनेके लिए उतने लम्बे वस्त्रकी जरूरत नही पडती जितनी तमिलनाडकी स्त्रियोको पडती है। मुझे यह देखकर खुशी हुई है कि त्रावणकोरकी स्त्रियाँ अपना तन ढाँक लेनेमे ही पर्याप्त श्रृगार मानती है। उनका श्वेत परिधान मुझे बहुत प्रिय जान पडता है। मुझे आशा और विश्वास है कि यह श्वेत परिधान उनकी आन्तरिक पवित्रताका

द्योतक और प्रतीक है (हर्षध्वनि) लेकिन मुझे यह देखकर दु ख हुआ है कि वे मैंचेस्टर-का, और वहाँका नही तो अहमदाबादका ही बना वस्त्र पहनती हैं। मेरा अनुरोध है कि वे असमकी अपनी बहनोका अनुकरण करे। असमकी हर स्त्री बुनना जानती है, और असमके लगभग सभी घरोमे हाथकरघा होता है। मैं हर स्त्री-पुरुषसे हाथ-कता और हाथ-बुना खद्दर पहननेका अनुरोध करता हूँ। ऐसा करनेसे आपका देशके गरीबसे-गरीब व्यक्तिके साथ सीधा सम्पर्क होगा और यदि आप मेरी नम्र सलाहको कृपापूर्वक मान लेगे तो आप देखेंगे कि यह देश फिरसे समृद्ध हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १४-३-१९२५

१६९. भाषण: वर्कलामे[1]

१३ मार्च, १९२५

आपने कृपापूर्वक जो अभिनन्दन-पत्र मुझे दिया है, उसके लिए मैं आपका अत्यन्त आभारी हूँ। यह कहनेकी जरूरत नही कि मेरे मनमे यहाँ आनेकी बहुत इच्छा थी। मैं जानना चाहता था कि वे विभिन्न जातियाँ कौन-सी हैं जिन्हे वाइकोमकी उन सडकोपर जो सार्वजनिक या अर्धसार्वजनिक हैं, जानेकी मनाही है। इसलिए मेरा यहाँ आना और आप लोगोके साथ व्यक्तिगत रूपसे मिलना और बातचीत करना स्थितिके अध्ययनमे सहायक हुआ है। घटनाचक्रके अवलोकनसे अब मुझे यह प्रत्यक्ष दीख गया है कि यदि पूज्य स्वामीजी[2] वाइकोम जाकर नाकेबन्दीको लाघनेकी कोशिश करेंगे तो उनके साथ क्या व्यवहार होगा।

जैसा कि आप जानते हैं, मैं राजमातासे मिलनेवाला था, और पूज्य स्वामीजीसे भी भेट करनेवाला था। मैं कल दोनोसे मिला। यह मेरा सौभाग्य है कि मैं इन दोनो महान् व्यक्तियोसे मिल पाया। मैं आपको बता सकता हूँ कि जहाँतक राज-माताका व्यक्तिगत रूपसे सम्बन्ध है, उनकी सहानुभूति पूरी तरह न्यायकी माँग करने-वालोके साथ है। मैं आपको यह भी बतानेकी स्थितिमे हूँ कि उनकी रायमे वाइकोम और अन्य स्थानोकी सभी सडके सभी वर्गोंके लिए खुली होनी चाहिए (हर्षध्वनि), लेकिन राज्यकी प्रधान होनेके नाते वे अनुभव करती हैं कि जबतक उनके पीछे जन-मतका बल न हो, अर्थात् जबतक त्रावणकोरमे जनमत पूर्णत वैध, शान्तिपूर्ण और विधानसम्मत ढगसे सगठित नही हो जाता, और जबतक यह मत उतने ही वैध, शान्तिपूर्ण विधानसम्मत रूपमे, फिर वह कितना ही जोरदार क्यो न हो, व्यक्त नही किया जाता, तबतक वे उस छूटका आदेश देनेमे असमर्थ हैं, जो माँगी जा रही है। जहाँतक मेरा सवाल है, मैं उनकी बातको पूरी तरह स्वीकार करता हूँ। अब आपका

१ यह एजवाहों तथा अन्य अस्पृश्यों द्वारा भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमे दिया गया था।

२ स्वामी नारायण गुरु।

और मेरा कर्त्तव्य है कि हम अन्ध कट्टरताके विरोधको समाप्त कर दें। जवतक आप इन विरोधकी दीवारोको तोडनेमे स्वय मुख्य भाग नही लेगे तवतक आप मुक्ति और स्वतन्त्रताके आनन्दका अनुभव नही करेगे।

मै जिन कट्टरपन्थी भाइयोसे मिला, उन्होने वडे शुष्क ढगसे कर्मफलके भोगकी वात कही, और वह ठीक ही हे। कर्मके सिद्धान्तका जो भावार्थ मै देना चाहूँगा वह यह है कि हर व्यक्ति जिसके योग्य होता है वही पाता है, और हमें जो कुछ जन्मसे प्राप्त हुआ हे, हम उसके पात्र है। हिन्दू धर्म वश-परम्परामे विश्वास करता है, और वैज्ञानिक भी इसे मानते है। हिन्दू धर्म तो व्यवहारगत विज्ञान ही है। लेकिन यही विज्ञान, यही हिन्दुत्व हमे कर्मकी गतिको वदलना भी सिखाता है। कर्मकी गति वदली जाती है, पूर्वकृत कर्मोसे विलकुल विपरीत ढगके कर्म करनेसे। यदि अपने पूर्वजन्ममे मैंन ऐसा कोई काम किया है जो गलत है तो उस पूर्वकर्मके फलको मै उस पाप कर्मसे विलकुल उलटा कोई पुण्य कार्य करके समाप्त कर सकता हूँ। और जिस प्रकार हमारे लिये विगतकी अपेक्षा इस जन्ममे ज्यादा अच्छे कर्म कर सकना सम्भव है उसी प्रकार इन कट्टरपन्थियोके लिये सम्भव है कि वे इस जन्ममे वुरेपर-वुरे कर्म ही करते चले जाये और वादमे अपने कर्मोका कडवा फल चखे। कर्मका सिद्धान्त किसीके साथ पक्षपात या अन्याय नही करता, लेकिन मै आपसे कहूँगा कि आप कट्टरपन्थियोको उन्हीके हालपर छोड दीजिए। मनुष्य स्वय अपने भाग्यका निर्माता हे और इसीलिए मै आपसे कहता हूँ कि अपने भाग्यके निर्माता आप स्वय वनिए। मै इन कट्टरपन्थियो और उनकी कट्टरतासे पीडित लोगोके वीच सेतु वननेकी कोशिश कर रहा हूँ, अतएव मेरे लिए जहाँतक सम्भव है मै आप लोगोमे से ही एक वननेकी कोशिश कर रहा हूँ। और फिर, जैसा कि आज सुवह मैंने पूज्यपादको भी वताया था, मै अपनेको भगी कहता हूँ, और भगियोका स्थान दलित वर्गोमे सवसे नीचा है। मुझे अपनेको भगी कहनेमे लज्जा नही है और मैं भगियोसे कहता हूँ कि वे अपने पेशेपर लज्जाका अनुभव न करे। एक ईमानदार भगी तो स्वच्छता रखनेवाला व्यक्ति है। मै अपनेको वुनकर, कतैया और किसान भी कहता हूँ। कट्टरपन्थी कहते है कि दलित वर्गको अपनी जन्मजात वुराइयोके कारण दलितवर्गमे ही रहना चाहिए। हमारा और आपका यह काम है कि हम और आप दिखा दे कि मनुष्यमे कोई वुराई जन्मजात नही है। मनुष्यमे जो-कुछ जन्मजात है वे गुण ही है। अपनी सामर्थ्य और सम्भावनाओकी अनुभूति करते ही मनुष्य देवताके समान वन जाता है और मै चहता हूँ कि हममे से प्रत्येक व्यक्ति जो उसे वनना चाहिए वही वने, न कि वह जैसा है वैसा ही वना रहे।

मुझे आपके वीच इतने सारे शिक्षित लोग, वकील, डाक्टर और अन्य धन्धोके लोग देखकर खुशी तो होती है, लेकिन फिर भी मै यह कहूँगा कि केवल मेरे सन्तोपके लिए इतना ही काफी नही है। पढा-लिखा होना अच्छा तो है, लेकिन यही कुछ नही है। अन्तमे जो चीज काम आयेगी वह शव्दज्ञान नही वल्कि चरित्रवल है। इसलिए मै आपसे कहूँगा कि अपने अन्दरके सभी अच्छे गुणोका विकास कीजिए, और आप देखेगे कि चाहे जितनी दुर्धर्ष शक्तिसे पाला क्यो न पडे वह शक्ति उस

आन्तरिक बलके आगे नही टिक सकेगी जो आप अपनेमे पैदा कर लेगे। हिन्दुस्तान-भरमे ऐसे लोगोके असख्य उदाहरण है जो दलितवर्गके थे लेकिन जिन्होने अपनेको कुछ बनाकर दिखाया, यही नही वे बडेसे-बडे ब्राह्मणोसे सम्मानित हुए। मै चाहता हूँ कि इन विशिष्ट व्यक्तियोने आपसे पहले जो-कुछ कर दिखाया है आप उससे पीछे न रहे। मै आपसे कहूँगा कि आप अपनेको हिन्दू धर्मके कल्याणका न्यासी समझे। मै जानता हूँ कि इस समय त्रावणकोरमे ही नही, सारे हिन्दुस्तानके दलितवर्गोमे बेचैनी-की एक लहर दौड रही है। मै निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि इस प्रकार अधीर होना अनुचित है। आप धैर्य खोकर कोई स्थायी सुधार नही कर सकते। अधीर ही होना है तो हमे अन्यायीके विरुद्ध नही, अपने प्रति अधीर होना चाहिए। अंग्रेजोका हमारे प्रति जो रवैया है, उसके बारेमे भी मैने भारतके सामने यही उपाय रखा है, और मै आपके प्रति कट्टरपन्थियोके रवैयेके खिलाफ भी कोई दूसरा उपाय नही सुझा सकता। वे हममे जो-जो बुराइयाँ गिनाते है यदि हम उन सबको समाप्त कर दे तो आप देखेगे कि रूढिवादिताके पाँवोके नीचेकी जमीन खिसक जायेगी। आप पूछ सकते है, और ऐसा पूछना ठीक ही होगा कि एक सार्वजनिक सडकपर प्रवेशके सवालसे गुण और चरित्रका क्या सम्बन्ध है। लेकिन मै आपसे कहूँगा कि आप इस विषयपर जरा गहराईसे विचार करे। कट्टरपन्थियोके दिमागमे कुछ खास-खास सार्व-जनिक सडकोके इस्तेमालका सवाल धर्मसे बुरी तरह जुडा हुआ है।

कट्टरपन्थियोने जो स्थिति अपनाई है वह गलत, भ्रान्तिपूर्ण, अनैतिक और पाप-मय है। लेकिन यह मेरा और आपका दृष्टिकोण है—कट्टरपन्थियोका नही। एक समय था जब हमारे पूर्वज मानव-बलि चढाया करते थे। हम जानते है कि यह राक्षसी कृत्य था, अधर्म था, लेकिन हमारे पूर्वज ऐसा नही मानते थे। उन्हे यह ठीक ही लगता था और उन्होने इस दुर्गुणको गुण मान रखा था। अगर हम उन्हे आजके मापदण्डसे नापे तो यह उनके साथ घोर अन्याय होगा। अगर हम उनके साथ न्याय करना चाहते है, तो हमे अपनेको उनकी स्थितिमे रखकर यह देखना होगा कि मानवबलि देनेकी प्रथा समाप्त होनेपर उन्हे कितनी चोट लगी थी। यह बात उनके पिछले कृत्योको न्याय नही ठहराती। यह एक वस्तुस्थिति है कि वे इन कामोको सर्वथा ठीक समझते थे और उनका इसके अतिरिक्त कुछ न समझ सकना ऐसी बात है जो हमारे पूर्वजोके पक्षमे जाती है। मै चाहता हूँ कि आप आजके धर्मान्ध कट्टरपन्थियोको भी इसी दृष्टिसे देखे। उन्हे अपनी ही बात निर्दोष लगती है, मै यह बात कटु अनुभवसे कह रहा हूँ। मै यह बात अपने घरेलू-जीवनके अनुभवसे कह रहा हूँ। मै अपनी प्रिय पत्नीके चारो ओर पूर्वग्रहोकी खडी हुई दीवारको अभीतक हटा नही पाया हूँ, लेकिन मै उसके प्रति अधीर भी नही होता। उसके प्रति ज्यादासे-ज्यादा लिहाज, ज्यादासे-ज्यादा सौजन्य, और यदि अधिक स्नेह सम्भव हो तो अधिक स्नेहके बलपर उसे अपने विचारोसे सहमत करना मै अपना कर्त्तव्य मानता हूँ। अपने निजी आचरणके प्रति मै पूरी पूरी कठोरता बरतता हूँ, मुझे जहाँ अपने अन्दर पैठी हुई छोटीसे-छोटी अन्याय भावनाको भी सहन नही करना चाहिए वहाँ मुझे अपनी पत्नीके प्रति उदार होना

चाहिए। आप भी मुझसे किसी दूसरे व्यवहारकी अपेक्षा नही करेगे। इसी प्रकार मै आपसे अपेक्षा करता हूँ कि आप कट्टरपन्थियोके प्रति अन्यथा भाव नही रखेगे। यही सच्चे धर्ममय जीवनका रहस्य है। स्वामीजीने कल मुझसे कहा कि धर्म एक है। मैने इस विचारका विरोध किया और आज यहाँ भी मै उसका विरोध कर रहा हूँ। जबतक अलग-अलग मनुष्य है तबतक भिन्न-भिन्न धर्म रहेगे, लेकिन सच्चे धार्मिक जीवनका रहस्य एक-दूसरेके धर्मके प्रति सहिष्णुता बरतनेमे है। कुछ धार्मिक प्रथाओमे जो चीज हमे बुरी लग सकती है वह उस प्रथाको माननेवालोको भी बुरी लगे, यह जरूरी नही हे। मै वर्तमान मतभेदोकी तरफसे आँख बन्द नही करना चाहता, ऐसा करनेका साहस भी नही कर सकता। मै चाहूँ तो भी उन भेदोको मिटा नही सकता, लेकिन उन भेदोको जानते हुए, मै उन लोगोसे भी प्रेम करूँगा जो मुझसे भिन्न मत रखते है। आप इस नियमको सारी दुनियामे देख सकते है। हम जिस पेडकी छायामे बैठे है, उसकी कोई भी दो पत्तियाँ एक समान नही है, हालाँकि वे एक ही मूलसे उत्पन्न हुई है, लेकिन जिस प्रकार पत्तियाँ आपसमे पूरी तरह हिलमिल कर रहती है और कुल मिलाकर सघन वृक्षके रूपमे एक सुन्दर दृश्य प्रस्तुत करती है, उसी प्रकार हमारा मानव-समाज अपनी समस्त विभिन्नताओके साथ देखनेवालेको एक सुन्दर समष्टिके रूपमे दिखना चाहिए। यह तभी हो सकता है जब अपनी भिन्नताओके बावजूद हम एक-दूसरेके प्रति प्रेम रखना और परस्पर सहिष्णुता बरतना शुरू करे। अत यद्यपि मै विवेकशून्य कट्टरवादितामे निपट जडतापूर्ण अज्ञान देखता हूँ, फिर भी उस कट्टरताके प्रति असहिष्णु नही बनता, इसीलिए मैने दुनियाके सामने अहिसाका सिद्धान्त प्रस्तुत किया है। मै कहता हूँ कि जो व्यक्ति इस धरतीपर धार्मिक जीवन व्यतीत करना चाहता है और जो इसी जन्ममे इस पृथ्वीपर आत्मज्ञान प्राप्त करना चाहता हे उसे हर रूपमे, हर प्रकारसे और अपने हर कृत्यमे अहिसक रहना चाहिए। मै आपसे यहाँ यह कहने आया हूँ कि यदि वाइकोमका यह सत्याग्रह पूरी तरह अहिसात्मक भावनासे चलाया गया होता और यदि उसे आपसे जो समर्थन मिलना चाहिए वह मिला होता तो लडाई कबकी बन्द हो गई होती। मैने वाइ-कोमके सत्याग्रहियोकी तारीफ की है। उन्होने बहुत अच्छा काम किया है। वे मेरी प्रशसाके पात्र है, लेकिन यह तसवीरका एक ही पहलू है। अगर मै आपके सामने दूसरा पहलू न रखूँ तो आपके साथ अप्रामाणिकता होगी। लेकिन यह दूसरा पहलू रखते हुए भी अहिसाके सिद्धान्तके अनुसार मुझे उनकी निन्दा नही करनी है। जितना उनसे हो सकता था उन्होने जरूर किया है, लेकिन मै उनसे और आपसे और भी अच्छा काम कर दिखानेको कहता हूँ। उन्होने किसीपर प्रहार नही किया, लेकिन उनके विचार और उनके मनमे हिंसाकी भावना थी। उनसे बातचीतके दौरान भी मैने यह बात देखी। अस्पृश्यताका विरोध करनेवाले कट्टरपन्थियोके प्रति उनके मनोमे बडी कटुता है। वे उनसे क्रुद्ध है और उनकी नीयतपर शक करते है। वे सरकारकी नीयतपर भी शक करते है। मेरा कहना है कि ये सारी चीजे सत्याग्रहकी मर्यादाके विपरीत है। मै सरकारके वचनपर भरोसा करूँगा। कट्टरपन्थी यदि यह कहते है

कि जव मै उनकी सडकपरसे गुजरता हूँ तो इससे उनकी धार्मिक भावनाको चोट पहुँचती है तो मै उनकी इस वातका विश्वास करता हूँ, और जिस ईमानदारीका दावा मै स्वय करता हूँ उसी ईमानदारीका श्रेय उन्हे देकर मै उनके सन्देह और उनके विरोधको समाप्त कर देता हूँ। अपनेको उनके आदरका पात्र वनाकर मै स्थितिको अपने लिए वहुत अनुकूल वना सकता हूँ। और इस प्रकार मै आशा कर सकता हूँ कि मै उनके विवेकको जगा सकूँगा। मै चाहता हूँ कि आप भी मानसिक रूपसे यही रुख अपनाएँ, क्योंकि मेरा विश्वास है कि विचार कर्मकी अपेक्षा कही अधिक शक्तिशाली होते है। हमारे कर्म हमारे विचारोकी अधूरी-सी प्रतिकृति होते है, और किसी कार्यका विश्लेषण करके उसकी जडतक पहुँचनेमे मनोविज्ञानके जानकारोको कोई कठिनाई नही होती, और न यह खोज निकालनेमे ही कठिनाई होती है कि अमुक व्यक्ति कितना नेक और वीर है, लेकिन फिर भी कितनी वार वह नीचताके काम कर डालता है।

मेरा उद्देश्य आज इन मुख्य सिद्धान्तोको फिरसे दोहरा देना है कि हमे अपनी मुक्ति स्वय प्राप्त करनी चाहिए, हमे स्वावलम्वी वनना चाहिए, हमे डटकर उद्योग करना चाहिए। मै आपसे कहता हूँ कि आपके सामने जो भी दूसरे काम हो उन्हे आप एक तरफ रख दे और इस सत्याग्रहको सफलताके साथ पूरा करनेके लिए प्रयत्नशील हो। यह सघर्ष आपकी कसौटी है, इसपर पूरा उतरनेका यही तरीका है कि आप इन वीर सत्याग्रहियोंके दलकी जरूरतोको हर मानेमे पूरा करे। आपको इस प्रान्तसे वाहरके, वल्कि हो सके तो वाइकोमके वाहरके किसी आदमीसे या मुझसे पैसा लेनेमे लज्जा आनी चाहिए। आपको सत्याग्रहियोंके लिए पैसेका इन्तजाम तो करना ही चाहिए वल्कि आपको इस अनुष्ठानमे भी पूरी लगनसे लग जाना चाहिए। ध्यान रखे कि सत्याग्रहियोकी टोलियाँ आती रहे। कुछ थोडेसे नौजवान, वहादुर लडके, दिन-प्रतिदिन नाकेवन्दियोके सामने तेज धूपमें वैठकर सूत कातते रहे, आपको इतने ही मे सन्तुष्ट नही होना चाहिए, वल्कि आपको इस अनुष्ठानमे हिस्सा लेकर कष्ट सहन करना चाहिए, आपको भी इस कडी धूपमे धरना देकर तपश्चर्या करनी चाहिए, और इससे भी महत्त्वपूर्ण वात यह है कि चूँकि त्याग और वलिदान पवित्र गुण है, आपको यह काम पवित्र मनसे करना चाहिए। इसलिए आपका चरित्र सन्देहसे परे होना चाहिए, और आपको सत्यवादी और आत्मसयमी वनना चाहिए। कमसे-कम सत्याग्रहके दौरान आपको भोग विलाससे दूर रहना चाहिए, और अपनी आवश्यकताएँ न्यूनातिन्यून कर देनी चाहिए। कुछ दिनोके लिए आपको किसी सासारिक वन्धनमे नही पडना चाहिए। आप अपने वुजुर्गोकी आज्ञा लेकर फिर घर-द्वारकी ओर मुँह भी न करे। उनसे कह दे कि एक वार जव आप सत्याग्रहके लिए घरसे निकल पडे है तो जरूरत होनेपर भी वे आपकी सहायताकी अपेक्षा न करे। आप यह सव काम सच्चे मनसे कीजिए और फिर आप देखेगे कि आपने अपने लिए वह स्थान प्राप्त कर लिया है जिसे दुनियाकी कोई ताकत आपसे छीन नही सकती। ऐसा विशेष कार्य करनेका सौभाग्य तो सभीको नही मिल सकता, लेकिन अपने समाजमे सामाजिक सुधारका काम सभी कर सकते है। आपको अपने वीचसे अस्पृश्यता समाप्त

कर देनी चाहिए। आपके समाजमे अन्य कौन-कौनसे दुर्व्यसन है सो मै नही जानता, किन्तु आपको अपने बीचसे अस्पृश्यताको तो दूर ही कर डालना चाहिए। दलित वर्गोमे जो आपसे नीची जातिवाले है, उनके बीच आपको जाना चाहिए, उन्हे अपना मित्र बनाना चाहिए और जैसे बन वैसे उनकी सहायता करनी चाहिए।

कताई और खद्दरके सन्देशको अपना लीजिए। उसे हृदयगम कीजिये। मैने पूज्यपाद स्वामीजीसे इस कामको पूरी लगनसे उठानेका आग्रह किया है और आप सबसे भी मेरा निवेदन है कि आप कताई और बुनाईको अपनाइए और अपने श्रममे तैयार किया गया कपडा पहनिए। मुझे मालूम हुआ है कि बहुत समय नही हुआ जब आपमे से हर व्यक्ति, या कमसे-कम आपके समाजकी प्रत्येक स्त्री बहुत अच्छी कताई कर लेती थी। हजारो लोग बुनाईका काम जानते थे। ये दोनो ही गौरवपूर्ण धन्धे है। मेरा निश्चित मत है कि कताईमे ही भारतकी आर्थिक मुक्ति निहित है। हाँ, यह जरूर है कि वैयक्तिक स्तरपर कताई लाभदायक धन्धा नही है, लेकिन राष्ट्रीय स्तरपर यह अत्यन्त सम्मानपूर्ण और लाभजनक धन्धोमे से है। इसीलिए मैने कताईको भारतके लिए इस युगका यज्ञ कहा है। मुझे उस समय अपार हर्ष हुआ जब पूज्यपाद स्वामीजीने मुझसे कहा कि वे स्वय कताई करेगे (हर्षध्वनि) और उन्होने मुझे वचन दिया है कि वे अपने शिष्योसे कहेगे कि धवल खादीके वस्त्र पहनकर ही वे उनके सामने आ सकेगे, अन्यथा नही। मै चाहता हूँ कि आपमे से सभी शिक्षित लोग कताई करने और खादी पहननेमे गौरव अनुभव करे। मै आशा करता हूँ कि आप महिलाओके पास जायेगे और उनसे भी ऐसा ही करनेको कहेगे। मद्रास प्रान्तमे तमिल बहने जो भारी-भारी साडियाँ पहनती है, आप उनकी नकल न कीजिए। आप विविधता और रगोके पीछे न पडे। मै आपकी स्त्रियोके धवल परिधानपर मुग्ध हूँ। पुरुष या स्त्रीकी जरूरतके लिए कुछ गज कपडा काफी होता है। आप मैचेस्टर या अहमदाबादके बने कपडेपर निर्भर रहते है, यह आपके लिए शर्म और अपमानकी बात है, इसमे आपके गौरवकी हानि है। यदि आप इन चीजोकी ओर ध्यान देगे, तो राष्ट्रीय अनुष्ठान या वाइकोमके सत्याग्रहमे यही आपका योगदान होगा। वह लडाई लम्बी चलेगी, इसमे डरिए मत। स्वामीजीने कल मुझसे कहा कि हो सकता है कि शायद हम अपने जीवनमे, इस पीढीमे इस दु खका अन्त न देख सके, और सम्भवत मुझे इस दु खद स्थितिका अन्त देखनेका सुख अगले जन्मसे पहले न मिले। मैने आदर-पूर्वक उनसे असहमति प्रकट की। मै इसका अन्त इसी युगमे और अपने जीवनकालमे ही देखनेकी आशा रखता हूँ, लेकिन बिना आपकी सहायताके नही। आप अपनी सामर्थ्य-भर मेरी सहायता करे ताकि मै आपको दिखा सकूँ कि इस अन्यायका समय बीत चुका है। आप मर्दकी तरह अपना कर्त्तव्य करे, और मै जिम्मेदारी लेता हूँ कि मै हिन्दू समाजमे से पचम वर्ग समाप्त कर दूँगा। (हर्षध्वनि) ईश्वर स्वामीजीको शक्ति और सकल्प-बल प्रदान करे कि वे आपमे समुचित समझ पैदा कर सके, और ईश्वर आपको इस पुण्य कार्यको सम्पन्न कर सकनेकी बुद्धि और शक्ति दे।

मै सार्वजनिक रूपसे पूज्यपाद स्वामीजीको अपने प्रति दिखाई गई असीम कृपा और सत्कारके लिए धन्यवाद देता हूँ। आपने मुझे जो अभिनन्दन-पत्र दिया है और

जिस धैर्यके साथ मेरी बात सुनी है उसके लिए आपको एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ, लेकिन आप मुझे सबसे बड़ा पुरस्कार यही दे सकते हैं कि आपने जो-कुछ सुना है, उसे आप कर दिखायें। (जोरसे हर्षध्वनि)।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-३-१९२५

१७०. भाषण : महाराजा कालेज, त्रिवेन्द्रममें[1]

१३ मार्च, १९२५

भारतमें और जैसा कि मुझे यूरोप और अमेरिकासे प्राप्त होनेवाले पत्रोंसे विदित होता है, भारतके बाहर तो और भी अधिक व्यापक रूपसे यह भ्रममूलक धारणा फैली हुई है कि मैं विज्ञानका विरोधी हूँ, उसका शत्रु हूँ। इस तरहके आरोपसे अधिक मिथ्या कोई अन्य आरोप हो ही नहीं सकता। यह बिलकुल सच है कि जो बात मैं आपसे अभी कहनेवाला हूँ, अगर विज्ञानके साथ वह बात न हो तो मैं उस तरहके विज्ञानका प्रशंसक नहीं हूँ। मेरी रायमें अगर हम विज्ञानका उचित उपयोग करें तो विज्ञान हमारे लिए संजीवनी बूटी है। किन्तु संसारमें अपने भ्रमणके दौरान मैंने विज्ञानका इतना दुरुपयोग होते देखा है कि प्रायः कई बार मुझे ऐसी बातें कहनी पड़ी हैं या मैंने कही हैं जिनसे लोग सोच सकते हैं कि मैं विज्ञानका विरोधी हूँ। मेरी नम्र रायमें वैज्ञानिक शोधकी भी सीमाएँ हैं और वैज्ञानिक शोधकी जो सीमाएँ मैं मानता हूँ, वे मानवताके विचारसे मानता हूँ। अभी हाल हीमें मैं एक मित्रके साथ विज्ञानके उपयोगोंके बारेमें चर्चा कर रहा था। उस समय मैंने अपने जीवनका एक किस्सा उनको सुनाया। आपको भी सुनाता हूँ। उनसे मैंने कहा कि मेरे जीवनमें एक ऐसा समय भी आया था कि जब मैंने करीब-करीब डाक्टरी पढ़नेका निश्चय कर लिया था। और मैंने उन्हें यह भी बताया कि अगर मैंने डाक्टरी पढ़ी होती तो शायद मैं एक विख्यात चिकित्सक या विख्यात सर्जन, या दोनों ही हो गया होता। कारण मैं वास्तवमें डाक्टरीकी इन दोनों शाखाओंका प्रेमी हूँ, और मुझे लगता है कि मैं डाक्टरके रूपमें बहुत सेवा कर सकता था। लेकिन जब मेरे एक डाक्टर दोस्तने बताया — और वह एक अच्छे डाक्टर थे — कि मुझे चीर-फाड़ करनी पड़ेगी, तब मेरा मन घृणासे भर गया और उस तरफसे बिलकुल हट गया।

शायद आपमें से कुछ लोग मेरी इस बातपर हँसें, लेकिन मैं चाहता हूँ कि मैं जो कह रहा हूँ उसपर आप हँसें नहीं बल्कि ध्यानसे विचार करें। मुझे लगता है कि हम पृथ्वीपर इसलिए जन्मे हैं कि हम अपने स्रष्टाकी आराधना करें, अपनेको पहचानें, दूसरे शब्दोंमें आत्मानुभूति करें और इस तरह अपने प्रारब्धको जानें। मेरी

1. यह भाषण महाराजा कालेज ऑफ साइंसके विद्यार्थियों द्वारा भेंट किये गये अभिनन्दन पत्रके उत्तरमें दिया गया था।

रायमे चीर-फाड हमारे नैतिक उत्थानमे रत्ती-भर भी सहायक नही होता। चीर-फाडसे उस व्यक्तिको जिसके शरीरमे कोई कष्ट है, शायद कुछ राहत मिल सकती है। हालाँकि कई डाक्टरोने मुझे वताया है कि यह वात भी पूर्ण रूपसे सही नही है। लेकिन मै आपसे यह वात सच्चे दिलसे कहना चाहता हूँ कि मै शरीरको जीवित रखनेके उपायोपर प्रतिवन्ध लगानेमे विश्वास करता हूँ। शरीरका क्या भरोसा? वह क्षण-भगुर है। और किसी भी समय छूट जा सकता है। कर्नल मैडॉकके कुशल हाथो द्वारा किये गये उस ऑपरेशनमे तो चगा होकर मै निकल आया, लेकिन मेरे अच्छे हो जानेके वाद इस वातकी कोई गारटी नही थी कि विजली गिर जानेमे या किसी दुर्घटनामे पडकर मेरी मृत्यु नही हो जायेगी। ऐसी स्थितिमे मै समझता हूँ कि हमे इस वातका पता लगाना चाहिए कि हमारे लिए उचित क्या है—सयम रखना अथवा कोई वन्धन न मानना।

वैज्ञानिक अनुसन्धान और विज्ञानके उपयोगोके ऊपर मै जो सीमाएँ लगाना चाहूँगा, यह तो उसका मैने केवल एक उदाहरण ही दिया है। इसलिए मै सिर्फ इतना ही कहूँगा—जैसा कि मैने भारतके वहुत-सारे छात्रोसे कहा है, और चूँकि मुझे छात्र-जगतका विश्वास प्राप्त होने और भारत-भरमे हजारो-लाखो छात्रोके सम्पर्कमे आनेका सौभाग्य प्राप्त है, इसलिए मै उनसे कहनेमे सकोच नही करूँगा—कि उन्हे जीवनमे कमसे-कम एक चीजके वारेमे निश्चित होना चाहिए, अर्थात् इस वारेमे कि वे इस दुनियामे किसलिए आये है। मै यही विचार पूरी नम्रताके साथ प्रोफेसरो और शिक्षकोके सामने भी रखता हूँ, और यही कारण है कि मैने आधुनिक सभ्यताकी—मै पश्चिमी सभ्यता नही कहूँगा, हालाँकि वर्तमान स्थितिमे ये दोनो एक-दूसरेके पर्यायवाची वन गये है—भौतिकवादी प्रकृतिके वारेमे और उसके विरुद्ध अक्सर लिखा और कहा है। लेकिन एक दूसरा पहलू भी है जो मै आपके सामने रखना चाहूँगा। वहुत-से छात्र ज्ञानार्जनके लिए विज्ञान नही पढते वल्कि विज्ञान पढकर नौकरी मिलेगी, इसलिए पढते है। यह वात विज्ञानकी शिक्षा लेनेवाले कालेजोके छात्रोके वारेमे ही नही, वल्कि सभी कालेजोके छात्रोके वारेमे सच है। लेकिन यह देखते हुए कि विज्ञान उन कुछ चीजोमे से है जिसमे विचार और प्रयोगकी यथार्थतापर आग्रह रखना होता है, मै आपको जो चेतावनी देना चाहता हूँ वह औरोकी अपेक्षा आप ज्यादा अच्छी तरह समझ सकेगे।

मै चाहूँगा कि हमारे अपने देशमे जो दो महान् वैज्ञानिक हुए है, उन्हे आप सामने रखे। ये दोनो है डाक्टर जगदीश चन्द्र वोस तथा डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र राय। कम-से-कम विज्ञानके छात्रोके लिए तो ये जाने-माने नाम है। मेरा विश्वास है कि समस्त शिक्षित भारतके लिए ये नाम सुपरिचित है। इन दोनोने 'विज्ञानके लिए विज्ञान' का उद्देश्य निश्चित किया, और हम जानते है कि उनकी क्या उपलब्धियाँ है। उन्होने यह कभी नही सोचा कि विज्ञान पढकर उन्हे धन या यशके रूपमे क्या मिलेगा। उन्होने विज्ञानके ही लिए विज्ञानका अध्ययन किया। सर जगदीशचन्द्र वोसने एक वार मुझे वताया था कि विज्ञानके प्रति हमारा दृष्टिकोण क्या हो। उस सिल-

नि ेमे मैने जब कुछ नही कहा था, उससे बहुत पहले ही उन्होने अपनी हदतक विज्ञानकी सीमाएँ स्वीकार कर ली थी। मै उनके ही कथनके आधारपर कह रहा हूँ कि उनकी तमाम वैज्ञानिक खोजका उद्देश्य यही रहा है कि उसके सहारे हम अपने स्रष्टाके और निकट पहुँच सके।

लेकिन भारतमे छात्रोके सामने एक भारी समस्या है। इस तरहकी शिक्षा या उच्चतर शिक्षा पानेवाले छात्र मध्यवर्गके परिवारोमे आते है। यह हमारा और हमारे देशका दुर्भाग्य है कि मध्यवर्गके लोग अपने हाथका इस्तेमाल करना लगभग भूल चुके है। और मै मानता हू कि अगर कोई लडका अपनी आस्तीन चढाकर सडकपर काम करनेवाले किसी मामूली मजदूरकी तरह परिश्रम नही कर सकता तो उस लडकेके लिए विज्ञानके रहस्योको या वैज्ञानिक क्रिया-कलापोसे प्राप्त होनेवाले आनन्दको समझना असम्भव है।

जब मै रसायनशास्त्र पढता था उस समयकी मुझे अच्छी तरह याद है। मुझे वह सबसे नीरस विषय लगता था (हँसी)। अब मै जानता हूँ कि यह कितना दिलचस्प विषय है। हालाकि मै अपने सभी शिक्षकोका भक्त हूँ, लेकिन मै कहना चाहता हूँ कि इसमे गलती मेरी नही थी, मेरे शिक्षककी थी। उन्होने मुझसे बडे-बडे और विकट लगनेवाले नाम जबानी याद करनेको कहा — जबकि मुझे यह भी नही मालूम था कि उनके मतलब क्या है। विभिन्न धातुएँ भी उन्होने मुझे कभी नही दिखाई। मुझे बस हर चीज जबानी याद करनी पडी। वे अपने सावधानीसे लिखे गये बडे-बडे नोट्स लाते थे और हमारे सामने पढ देते थे। हमे उनको लिख लेना और याद करना होता था। मैने इसका विरोध किया और उसी एक विषयमे फेल हो गया (हँसी)। और स्थिति यह हुई कि वे तो शायद मैट्रिकुलेशन परीक्षामे बैठनेके लिए मुझे प्रमाणपत्र भी न देते। भाग्यवश मै उस समय बीमार था, उन्हे मुझपर दया आ गई और उन्होने प्रमाणपत्र दे दिया। अगर ऐसा न होता तो वे रसायनशास्त्रके पर्चेमें पास न होनेके लिए अपनेको दोष न देकर वास्तवमे मुझे दोष देते और मुझे परीक्षामे बैठनेसे रोक लेते।

अत प्रोफेसर और शिक्षक — श्रीमान्, मै आपको और आपकी जातिको इनमे शामिल नही करता — भारतीय शिक्षक और प्रोफेसर तथा छात्र सभी एक ही नाव-पर सवार है। विज्ञान मूलत उन चीजोमे से है जिसमे जबतक आपको व्यावहारिक ज्ञान न हो और आप उसका व्यावहारिक प्रयोग न करे, केवल सिद्धान्तका कोई महत्त्व नही है। मै नही जानता कि आप लोग किस हदतक व्यावहारिक प्रयोग करते है और उसमें किस हदतक आनन्द लेते है। अगर आप सही भावनासे विज्ञान पढते है तो मेरी रायमें हमारे विचार और कामको सटीक बनानेमे इससे अधिक महत्त्वपूर्ण व सहायक और कोई वस्तु नही है। जबतक हमारे दिमाग और हमारे हाथ मिलकर साथ-साथ नही चलेगे तबतक हम कुछ भी नही कर सकेगे।

दुर्भाग्यवश, हम कालेजोमे पढनेवाले लोग भूल जाते है कि असली भारत गावोमे है, नगरोमें नही।

भारतमे ७,००,००० गाँव है, और उदार शिक्षा प्राप्त करनेवाले आप-जैसे लोगोसे अपेक्षा की जाती है कि आप इस शिक्षाको, या इस शिक्षाके फलको गाँवोमे ले जायेगे। अपने वैज्ञानिक ज्ञानका प्रसार गाँवोके लोगोमे आप कैसे करेगे? क्या आप गाँवोको ध्यानमे रखते हुए विज्ञान पढ रहे है, और क्या आप इतने कुशल और व्यावहारिक बन सकेगे कि इतने शानदार, सामानवाले शानदार कालेजोमे जो ज्ञान आप प्राप्त करते है, उसका उपयोग गाँवोके लाभके लिए करे?

और अन्तमे मै एक ऐसे यन्त्रकी बात आपके सामने रखता हूँ जिसपर आप अपने वैज्ञानिक ज्ञानका प्रयोग कर सकते है, और वह यन्त्र है मामूली चीज — चरखा। भारतके सात लाख गाँव आज इसी सीधे-सादे यन्त्रके अभावमे दिन-प्रतिदिन विपन्न होते जा रहे है। सिर्फ एक सदी पहले भारतके घर-घरमे चरखा था, और उस समय भारत वैसा काहिल देश नही था, जैसा कि आज है। तब उसके किसान जो कुल जनसख्याके ८५ प्रतिशत है, सालमे कमसे-कम चार महीने बेकार रहनेको मजबूर नही थे। यह मै नही बता रहा हूँ, यह मेरी बनाई हुई बात नही है। यह एक अर्थशास्त्री श्री हिगिनबॉटमका[1] कथन है। उन्होने इधर कर-समितिके सामने वक्तव्य दिया है और उनका कहना है कि भारतकी बढती हुई गरीबी घटनेके बजाय तबतक बढती रहेगी जबतक कि भारतके करोड़ो लोगोके पास कोई सहायक धन्धा नही होगा। अब आप अपने वैज्ञानिक साधनोके सहारे पता चलाइए कि ऐसा कौन-सा सहायक धन्धा हो सकता है जो १,९०० मील लम्बे और १,५०० मील चौडे धरातलपर फैले हुए ७,००,००० गाँवोकी जरूरतोको पूरा कर सकता है। मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आप मजबूर होकर इस नतीजेपर पहुँचेगे कि केवल चरखा ही ऐसा कर सकनेमे समर्थ है।

आज चरखेका इस्तेमाल नही हो रहा है। जहाँ-कही मै जाता हूँ चरखेकी माँग करता हूँ और मुझे चरखेके नामपर जो चीज मिलती है वह तो एक खिलौना-भर है। इन खिलौनोसे मुझे वह सूत नही मिल सकता जो आपको अच्छी खादी दे सके। देशमे चरखेकी गूँज सुनाई दे, यह तो आपपर निर्भर है। मै आपके सामने बगाल कैमिकल वर्क्सके सस्थापक डा० प्रफुल्लचन्द्र रायका सुन्दर उदाहरण रखता हूँ। बगाल कैमिकल वर्क्स एक बढती हुई सस्था है, जिसने सैकडो छात्रोको काम दिया है। डा० राय वैज्ञानिकोमे भी अग्रगण्य है। वे भारतमे गाँववालोको अपने वैज्ञानिक ज्ञानका लाभ देना चाहते है। उन्होने खुलनाके अकालके समय काम करते हुए चरखेका रहस्य समझा, और आप जानते है कि आज वे अपना जीवन केवल चरखेके प्रचारमे लगा रहे है और उनके अधीन काम करनेवाले सभी कार्यकर्त्ता, जो सब वैज्ञानिक है, चरखे और चरखेके जरूरी उपसाधनोको अधिकसे-अधिक उन्नत बनानेकी कोशिशमे लगे हुए है। यह एक श्रेष्ठ कार्य है। यह वैज्ञानिकोके योग्य है। ईश्वर करे आपके मनमे भी इसके प्रति उत्साह उत्पन्न हो और वह स्थायी बने। आपने मुझे धैर्यपूर्वक सुना इसके लिए धन्यवाद। (हर्षध्वनि)।

१ इलाहाबादके कृषि-सस्थानसे सम्बद्ध।

प्रधानाचार्य महोदयने तब महात्माजीको माला पहनाई और एक सुन्दर गुलदस्ता भेंट किया। महात्माजीने कहा :

मैंने सोचा था कि माला हाथ-कते सूतकी होगी।

कारमें बैठते हुए उन्होंने कहा

अगली बार मैं आप सबको खद्दर पहने देखना चाहता हूँ, आपके अपने बुने हुए खद्दरमें।

'वन्दे मातरम्' और हर्षध्वनिके बीच महात्माजीने साइंस कालेजसे प्रस्थान किया।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-३-१९२५

१७१. भाषण: त्रिवेन्द्रमकी सार्वजनिक सभामें[1]

१३ मार्च, १९२५

महात्माजीने सभी अभिनन्दनपत्रोंका उत्तर एक साथ देते हुए त्रावणकोरकी राजमाताको तथा दीवान महोदयको सार्वजनिक रूपसे धन्यवाद दिया। महात्माजी उनसे वाइकोम संघर्षके सिलसिलेमें मिले थे और उन्होंने शिवगिरि मठमें स्वामी नारायण गुरुसे भी भेंट की थी। वहाँ उन्होंने कुछ पुलाया बालकोंको संस्कृत श्लोकोंका पाठ करते सुना था। महात्माजीने कहा कि एजवाहा लोग स्वच्छ हैं और देशकी किसी सर्वश्रेष्ठ जातिसे किसी प्रकार कम नहीं हैं। स्वामीजी वाइकोमकी निषिद्ध सड़कोंमें प्रवेश नहीं कर सकते यह देखकर मेरी धार्मिक, मानवीय और राष्ट्रीयताकी भावनाको ठेस लगती है।

वाइकोमके रुढ़िवादी लोगोंके साथ हुई अपनी बातचीतका[2] उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि मैंने उनके सामने स्वीकृतिके लिए तीन प्रस्ताव रखे। पहला यह था कि वाइकोममें या सम्पूर्ण त्रावणकोरमें केवल सवर्ण हिन्दुओंकी मतगणना करा ली जाये जिसे रुढ़िवादियोंके प्रतिनिधियोंने स्वीकार नहीं किया, बल्कि कहा कि जिनके अपने निश्चित विश्वास हैं वे लोग बहुमतका निर्णय माननेके लिए बाध्य नहीं हैं। दूसरा प्रस्ताव मैंने यह रखा कि रुढ़िवादियोंके निश्चित विश्वासोंके प्रामाणिक आधार भारतके विद्वान् शास्त्रियोंके सामने रखे जायें। इसके जवाबमें कहा गया कि प्रमाणोंकी प्रामाणिकता और व्याख्याके बारेमें शास्त्रियोंका निर्णय अपने अनुकूल न होनेपर वे उसे अस्वीकार करनेको स्वतन्त्र होंगे। तीसरा प्रस्ताव मैंने यह रखा कि सत्याग्रहियोंकी ओरसे मैं एक शास्त्रीको पंच नामजद करूँगा और विरोधी लोग अपना एक पंच

१ त्रावणकोरके नागरिकों, केरल हिन्दू सभा, मानवदया संघ, स्थानीय कांग्रेस कमेटी तथा खिलाफत कमेटी और हिन्दीके विद्यार्थियों द्वारा दिये गये अभिनन्दन-पत्रोंके उत्तरमें।

२ देखिए "वाइकोमके सवर्ण हिन्दू नेताओंके साथ बातचीत", १०-३-१९२५।

नामजद करे। इन दोनोंके बीच मध्यस्थके पदपर दीवान महोदय रहेंगे। मैंने कहा कि पंच और मध्यस्थका जो निर्णय होगा उसे मैं अपने लिए बाध्यकारी मानूंगा। ये तीनों प्रस्ताव अब भी कायम हैं। सवर्ण हिन्दुओं और समस्त हिन्दू समाजसे मेरा अनुरोध है कि वे वाइकोममें कट्टर पन्थियोंके पूर्वग्रहको मिटा दें और जनमतके भारी दबावसे इन रास्तोंको अस्पृश्यों और अन्त्यजोंके लिए खुलवा दें। राजमाता और दीवान, दोनोंने मेरे प्रस्तावोंको पसन्द किया और सुधारकोंके साथ अपनी सहानुभूति प्रकट की, और दोनोंने वादा किया है कि वे इस समय कोई कानून तो नहीं बनायेंगे लेकिन अन्य सभी तरीकोंसे सुधार-आन्दोलनकी अपनी सामर्थ्य-भर सहायता करेंगे। मुझे विश्वास है कि संगठित जनमत कानूनी कदम उठाकर भी सुधारकोंकी सहायता करेगा। मैंने राजमातासे मतगणना करानेको कहा है, लेकिन वे वैसा कर सकें या न कर सकें, जनमत संगठित करनेसे तो आपको कोई नहीं रोक सकता। विवेक-शून्य कट्टरता स्थानीय जन-आलोचनाका तेज नहीं सह सकेगी, बशर्ते कि यह आलोचना सहानुभूतिपूर्ण, अहिंसक और विनम्र हो। मलाबारमें ६० हजार ब्राह्मणोंके मुकाबिले आठ लाख अब्राह्मण और १७ लाख अस्पृश्य हैं। उनमें शिक्षाका प्रसार देख कर मुझे खुशी होती है; लेकिन उन्हें सामान्य अधिकारोंसे भी वंचित नहीं किया जाना चाहिए। सभामें काफी संख्यामें उपस्थित महिलाओंसे खद्दर पहननेकी अपीलके बाद महात्माजीने अपना भाषण समाप्त किया।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १४-३-१९२५

१७२. भाषण: अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें[1]

१४ मार्च, १९२५

अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें महात्माजीने कहा:

त्रावणकोरमें मैंने जो कुछ देखा है, उसके आधारपर मैं, आपके द्वारा त्रावणकोर राजपरिवारके प्रति मानपत्रमें व्यक्त किये गये उदारभावोंका हार्दिक समर्थन कर सकता हूँ। जैसा कि मैंने अपने साथी मित्रोंको बताया है, त्रावणकोरके राजपरिवारकी सादगीपर मैं मुग्ध हो गया हूँ। मैं भारतके बहुतसे राजाओं और उनके रहन-सहनसे परिचित हूँ। और मैं स्वीकार करता हूँ कि मैंने त्रावणकोरके राजघरानेमें इस सादगीसे भरे जीवनको देखनेकी बिलकुल आशा नहीं की थी। मुझे लगा कि जिस चीजने मुझे इतना विमोहित किया है यदि उसे सार्वजनिक रूपसे व्यक्त न करूँ तो यह अशिष्टता, यहाँतक कि सत्यको छिपाना होगा।

१. यह अभिनन्दन-पत्र त्रिवेन्द्रम नगरपालिका द्वारा दिया गया था।

मोटरसे आते हुए मार्गमें उन्होने त्रिवेन्द्रमकी दो गन्दी बस्तियाँ देखी थीं, उनका उल्लेख करनेके बाद महात्माजीने कहा कि मेरी रायमें नगरपालिकाका सदस्य अपने पदके योग्य तभी है जब वह अपनेको उन नागरिकोके स्वास्थ्यका जिम्मेदार माने जिनका वह प्रतिनिधित्व करता है। नगरोमें ज्यादातर बीमारियाँ धूल, कूडा-कचरा और गन्दी हवासे पैदा होती है। उन्होने तिरुचिनापल्लीका दृष्टान्त दिया जहाँ कावेरी नदीके तटपर ही, जिसका जल लोग पीते है, लोग मलमूत्र त्यागने बैठ जाते है। उन्होने कहा कि तिरुचिनापल्ली एक बडा नगर है लेकिन वहाँके नागरिको द्वारा जल-व्यवस्थाकी घोर उपेक्षा की जाती है, लेकिन त्रिवेन्द्रममें यहाँकी स्वच्छता और सफाई देखकर मै दग रह गया हूँ। लोग बडे नगरोमें काल कोठरियो-जैसे मकानोमें रहकर घुटते रहते है, जहाँ ताजी हवा भी नही मिल सकती। लेकिन मुझे यह देखकर खुशी हुई है कि समूचे त्रावणकोरमें लोग दूर-दूर बने मकानोमें रहते है। नागरिक जीवन पसन्द होनेके कारण मैंने कई नगर-निगमोकी गतिविधियोका अध्ययन किया है, और मै इसे अपना दुर्भाग्य समझता हूँ कि मै अपना जीवन नगरपालिकाके काममें नहीं लग सका।

इसके बाद महात्माजीने कहा कि हालाँकि दक्षिण आफ्रिकामें हमारे देशभाई कुछ निर्योग्यताओंसे पीडित है जो मेरी समझमें अस्थायी है, लेकिन दक्षिण आफ्रिकामें बहुत अच्छे लोग है जो दुनियाके रुखको समझते है। रगके विषयमें उनके विचार जो भी हो, लेकिन जिस ढगसे वे अपने नगर-निगमोका प्रबन्ध करते है उससे मैंने बहुत-कुछ सीखा है। उन्होने गन्दे और असुन्दर स्थानोको सुरम्य बना दिया है। जोहानिसबर्गको जो पहले एक रेतीला मैदान था उन्होने एक सुन्दर उद्यानमें बदल दिया और उस नगरको रमणीक बनानेमें बहुत धन खर्च किया। जब जोहानिसबर्गमें प्लेग फैला तब उन्होने पैसा पानीकी तरह बहाया और २४ घटेके अन्दर ही नगरको इस बीमारीसे मुक्त कर दिया। उन्होने प्लेगसे आक्रान्त सारे क्षेत्रको शेष भागोसे अलग कर दिया और सफाई इन्स्पेक्टरकी रिपोर्टपर सरकारने एक खूबसूरत बाजारको जला कर राख कर दिया। आनेवाले सकटके उपाय पहलेसे ही सोच रखना और समय रहते तत्परतासे कदम उठाना नगरपालिकाकी मितव्ययिता कही जाती है।

भारत-भरमें नगरपालिकाओको राजनीतिसे अलग रहना चाहिए। उन्हे अपना सारा ध्यान नागरिकोके स्वास्थ्य, उनके समुचित आहार और उनकी समुचित शिक्षा-पर लगाना चाहिए। मै एक क्षणको भी यह नहीं मानता कि नगरपालिकाएँ केवल प्राथमिक शिक्षाकी व्यवस्था ही करे। मेरे विचारसे उन्हे चाहिए कि वे अपनी देख-रेखमें बडे होनेवाले बच्चोकी उच्चतम शिक्षाका प्रबन्ध भी करे। दो बडे नगरनिगमोके अनुभवसे मेरा यह मत दृढ हो गया है कि अपने नगरोकी सडकोकी रोशनी और नगरकी सफाईके इन्तजामके अलावा नगरपालिकाओके हाथमें पुलिसका प्रबन्ध भी होना चाहिए। गाधीजीने उक्त नगरपालिकाके सदस्योको अपनी एक बैठकमें सूत

कातनेके पक्षमे प्रस्ताव पास करनेके लिए बधाई दी। गांधीजीने कहा कि आप लोग इस सम्बन्धमें सच्चे दिलसे और लगनके साथ कार्य करे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-३-१९२५

१७३. भाषण: लॉ कालेज, त्रिवेन्द्रममें

१४ मार्च, १९२५

फोर्ट हाइस्कूल और महिला मन्दिरमें थोड़ी-थोड़ी देर रुकनेके बाद महात्माजी लॉ कालेज पहुँचे जहाँ कालेजके कार्यवाहक प्रधानाचार्य श्री एम० के० गोविन्द पिल्लैने उनका स्वागत किया। कालेजके छात्रोकी ओरसे एक अभिनन्दनपत्र भेंट किया गया। उसका उत्तर देते हुए महात्माजीने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा, इंग्लैंडकी पहली यात्रा आदिकी चर्चा की और बताया कि किस प्रकार ४० वर्ष पहले उन्होने उस समय जबकि पहले ही वकीलोकी भरमार थी, वकालतके पेशेमें पैर रखा था। उन्होने वकालतका इरादा रखनेवाले छात्रोको सलाह दी कि उनके लिए तथ्योकी पूरी जानकारी और मानव-स्वभावकी समझ जरूरी है और जो भी मामला उनके सामने आये उसका पूरा-पूरा अध्ययन करनेके बाद अगर लगे कि मामला न्यायसम्मत है तो वे उसे हाथमें ले, वरना छोड़ दें। वकीलोंकी हैसियतसे उन्हे पैसेके लिए अपनी आत्मा नहीं बेच देनी चाहिए। जब कोई ठीक और सही मामला उनको मिले, तो फिर उन्हे मुवक्किलके मामलेको अपना मामला समझकर पैरवी करनी चाहिए। जो सवालात ठीक लगें उनके आधारपर मुवक्किलकी बातोंमें आये बिना उन्हे सभी तथ्य मालूम कर लेने चाहिए।

गांधीजीने कहा:

आप जानते है कि मैंने वकीलो और उनके तरीकोकी बहुत कडी और कटु आलोचना की है। लेकिन अगर मै ऐसा न करूँ तो कौन करेगा, क्योकि मैं वकालतके पेशेकी अच्छाइयो, बुराइयो और पेचीदगियोसे परिचित हूँ। इसीलिए इस पेशेके सम्बन्धमे मेरे मनमे जो-कुछ था उसे मैंने साहसके साथ कहा है।

स्वर्गीय सर फीरोजशाह मेहता और बदरुद्दीन तैयबजी वकीलोकी हैसियतसे सबसे श्रेष्ठ तो नही थे, लेकिन राष्ट्रके लिए उनकी सेवाएँ अमूल्य थी। स्वर्गीय मनमोहन घोष गरीबोके मित्र थे और जब किसी गरीबका मुकदमा उनके हाथमे आता तो वे फीस नही लेते थे। बंगालमे नील-बागानोसे सम्बन्धित उपद्रवोके[1] समय उन्होने बहुमूल्य सेवा की।

१ मनमोहन घोषने हिन्दू पैट्रियटमें नील बागानोके बारेमें लिखकर आन्दोलन खड़ा किया था, जिसके फलस्वरूप एक आयोग नियुक्त किया गया।

श्री घोष-जैसे वकीलोंके जीवनका अध्ययन करनेकी सलाह देते हुए महात्मा गांधीने कहा कि इन महान् वकीलोंने भावी वकीलोंके लिए जो विरासत छोडी है, उससे ही आप सन्तुष्ट न हों, बल्कि मैं चाहता हूँ कि आगेकी पीढियां उनसे भी ज्यादा अच्छे काम कर दिखायें। उन्हें हर अर्थमें गरीबोंका मित्र बन जाना चाहिए और तभी वे वकालतके पेशेका औचित्य सिद्ध कर सकेंगे। उन्होंने कहा कि आपका लक्ष्य जरूरतसे ज्यादा पैसा या जीवनमें मान कमाना नहीं, बल्कि मातृभूमिकी सेवा करनेके लिए मानवताकी सेवा करना है। आप लोगोंको झगडे बढ़ानेके लिए वकील नहीं बनना है। आप जो शिक्षा प्राप्त करते हैं वह आजीविका कमाने-जैसे तुच्छ कामके लिए नहीं होनी चाहिए। बल्कि उसका उपयोग नैतिक उत्थानके उद्देश्यसे होना चाहिए ताकि आप अपने-आपको पहचान सकें और समझ सकें कि आपके ऊपर आपका सिरजनहार बैठा सब-कुछ देख रहा है, वह आपके नेक और बद सब विचारोंका लेखा रखता है। आप जो ज्ञान प्राप्त करते हैं उसका उपयोग कठोर आत्मविश्लेषणके लिए है, न कि पैसा कमाने भरके लिए।

अन्तमें महात्माजीने छात्रोंको चरखेका सन्देश दिया और कहा कि आप याद रखें कि न तो कानूनकी किताबोंसे और न मंचोंसे दिये गये भाषणों ही से बल्कि केवल चरखेसे आप भारतकी स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकते हैं।

पिछले दिनकी सार्वजनिक सभामें एकत्र किये गये ५०० रुपये महात्माजीको भेंट किये गये।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-३-१९२५

१७४. ज्ञानकी शोधमें

१५ मार्च, १९२५

फ्रांसके एक लेखकने एक कहानी लिखी है। उसका शीर्षक 'ज्ञानकी शोधमें' रखा जा सकता है। लेखक कितने ही विद्वानोंको भिन्न-भिन्न देशोंमें ज्ञानकी शोधके लिए भेजता है। शोधकोंका एक दल हिन्दुस्तान आता है और उस दलके सदस्य ब्रह्मज्ञानियों, शास्त्रियों, दरबारियों, इत्यादिके दरवाजे खटखटाते हैं, परन्तु ज्ञान उन्हें कहीं नहीं मिलता। उक्त शोधक-दल ज्ञानका अर्थ ईश्वरकी खोज मानता है। अन्तमें वे एक अन्त्यजके घर पहुँचते हैं। वहाँ वे भक्तिकी पराकाष्ठा देखते हैं। वहाँ उन्हें पहली बार सरलता, सादगी तथा निष्कपटता देखनेको मिलती है। वहाँ उन्हें ईश्वरका साक्षात्कार होता है और वे इस निश्चयपर पहुँचते हैं कि जो व्यक्ति अनायास ईश्वरसे साक्षात्कार करना चाहता है उसे ईश्वरकी खोज गरीब और तिरस्कृत लोगोंमें करनी चाहिए।

यह वार्ता तो कल्पित है, परन्तु हमारे शास्त्र इसी बातका साक्ष्य देते हैं। सुदामाको भगवान् सहजमे मिल गये। और मीराबाई जब रानी नही रही तब भगवान्से मिल पाई। दुर्योधन कृष्णके सिरहाने जाकर बैठा तो उसे भगवान्ने केवल अपनी सेना दी। वे सारथि तो हुए पैरोके पास बैठनेवाले अर्जुनके।

ये विचार मेरे मनमे नीचे लिखे पत्रको पढकर उत्पन्न हो रहे हैं[1]

इस पत्रका लेखक निर्मल-हृदय है। वह ज्ञानकी शोधमे है। पर ज्यो-ज्यो वह ज्ञानको खोजता है त्यो-त्यो उसे ज्ञान दूर भागता हुआ दिखाई देता है। जो चीज बुद्धिके द्वारा नही प्राप्त हो सकती उसके लिए वह बुद्धिका प्रयोग कर रहा है। फिर ईश्वरको प्राप्त करनेके लिए वह जो अक्ल लडा रहा है उसका फल देखनेके लिए भी बहुत व्याकुल है। कर्मके फलकी आशा न रखनेका अर्थ यह नही कि फल मिलेगा ही नही बल्कि कर्म तो कोई भी निष्फल नही जाता, और ससारकी विचित्र रचना ऐसी रहस्यमयी है कि यही समझमे नही आता कि इस वृक्षका तना कौनसा है और शाखा कौनसी। तब फिर अनेक मनुष्योके अनेक कर्मोके समुदायके सम्मिलित फलमेसे एक व्यक्तिके कर्मके फलको कौन छाँट ले सकता है? और इसका हमे अधिकार भी क्या है? एक राजाके सिपाहीको भी अपने किये कर्मका फल जाननेका अधिकार नही होता तो फिर हमे, जो कि इस ससारके सिपाही हैं, अपने कर्मके फलको जानकर क्या करना है? क्या यही ज्ञान काफी नही है कि कर्मका फल अवश्य मिलता है?

पर इस लेखकके हृदयमे न तो राम-नाममें और न ईश्वरमे ही श्रद्धा है। उसे मेरी सलाह है कि वह करोडोके अनुभवपर श्रद्धा रखे। ससार ईश्वरके होनेसे कायम है। राम-नाम ईश्वरका एक नाम है। राम-नाम न रुचे तो वह ईश्वरकी उपासना अपनी मर्जीके किसी दूसरे नामसे कर सकता है। अजामिलका उदाहरण झूठ है, ऐसा माननेका कोई कारण नही। सवाल यह नही है कि अजामिल हुआ था या नही, बल्कि यह है कि ईश्वरका नाम लेता हुआ वह पार हो गया या नही। पौराणिकोने मनुष्य जातिके अनुभवोका जो वर्णन किया है उनकी अवहेलना करना इतिहासकी अवहेलना करना है। मायाके साथ सघर्ष तो चल ही रहा है। अजामिल-जैसोने युद्ध करते हुए नारायण-नामका जप किया है। मीराबाई उठते-बैठते, सोते-जागते, खाते-पीते, गिरिधरका नाम जपती थी। युद्धके बदलेमे राम-नाम नही लिया जा सकता बल्कि युद्ध करते हुए उसका जप युद्धको पवित्र बनाता है। राम-नाम लेनेवाला, द्वादश मन्त्र जपनेवाला व्यक्ति मायाके साथ सघर्ष करते हुए नही थकता, बल्कि मायाको ही थका देता है। इसीसे कविने गाया है—

'माया मोहित करे सभीको, हरिजनसे वह हारी रे।'[2]

१. यह पत्र यहाँ नही दिया जा रहा है। इसमें २५ वर्षीय एक नवयुवकने धर्म सम्बन्धी अपनी कुछ शकाएँ व्यक्त की थीं।

२ माया सहुने मोह पमाडे हरिजन थी रहि हारी रे।

राम-रावणका दृष्टान्त तो शाश्वत है। इससे सन्तोष न होनेका अर्थ इतना ही है कि असन्तुष्ट होनेवालेने राम-रावणको ऐतिहासिक पात्र मान लिया है। ऐतिहासिक राम-रावण तो चले गये। परन्तु मायावी रावण आज भी मौजूद है और जिनके हृदयमें रामका निवास है वे रामभक्त आज भी रावणका सहार कर रहे हैं।

जो बात मृत्युके बाद ही जानी जाती है उसको आज जान लेनेका लोभ रखना कितना जबरदस्त मोह है? यदि पाच सालका कोई बालक पचासवें वर्षमे क्या हो जायेगा, यह जाननेका लोभ रखे तो उसकी क्या स्थिति होगी? परन्तु जिस तरह छोटा बालक औरोंके अनुभवसे अपने सम्बन्धमें कुछ अनुमान कर सकता है उसी तरह हम भी औरोंके अनुभवसे मृत्युके बादकी स्थितिका कुछ अनुमान करके सन्तुष्ट रह सकते हैं।

अथवा मृत्युके बाद क्या होगा, यह जाननेसे क्या लाभ? क्या इतना जान लेना काफी नहीं है कि सुकृतका फल मीठा और दुष्कृतका कडवा होता है? सर्वोत्तम सुकृतका फल मोक्ष है। मैं मोक्षकी यह व्याख्या उक्त पत्र-लेखकको बताना चाहता हूँ।

लेखक महोदय मूर्तिका स्थूल अर्थ करके भ्रमात्मक उपमाका सहारा लेते हुए खुद ही भुलावेमें पड़ गये हैं। मूर्ति परमेश्वर नही है। बल्कि लोग मूर्तिमे परमेश्वर-का आरोप करके उसकी आराधनामें तल्लीन होते हैं। हम लकडीके मनुष्य बनाकर लकडीके उन पुतलोंसे मनुष्यका काम नही ले सकते। लाखो सुपुत्र और सुपुत्रियाँ चित्र रखकर अपने माता-पिताओंकी स्मृति ताजा बनाये रखते हैं, तो इसमे क्या बुराई है? परमेश्वर सर्वव्यापक है। नर्मदाके एक पत्थरमे भी उसका आरोप करके परमेश्वरकी भक्ति सम्भव है।

अन्तमे, लेखक महोदय यदि यह मानते हो कि देहातमें रहकर चरखेके द्वारा देहातियोंकी सेवा करनेमें उन्हें सन्तोष होगा तो उन्हे देहातमे चले जानेकी तैयारी फौरन करनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-३-१९२५

१७५. 'नवजीवन' के सम्बन्धमें

'नवजीवन' के एक ग्राहकने एक लम्वा शिकायतनामा भेजा है। उसका आशय इस प्रकार है

१ 'नवजीवन' मासिक-पत्रोके ढगका पत्र हो गया है क्योकि उसमे केवल चरखे और खादीके सम्बन्वमे नीरस और निराशा-भरे लेख रहते है।

२. 'नवजीवन' मे महादेव मेरे दौरोका दैनिक विवरण लगभग डायरीके रूपमे देते है और फिर उसीको लेकर लिखते चले जाते है।

३ 'नवजीवन' के परिशिष्टाकमे, जिसके बारेमे यह माना गया है कि वह शिक्षा, सम्वन्वी वातोके लिए ही है, जो शिक्षा-सम्वन्वी समाचार प्रकाशित हुए है, उन्हे पढकर निराशा ही होती है और उसमे शिक्षाकी कोई योजना भी नही दी गई है।

४ 'नवजीवन' मे अन्य लेख तो दिए ही नही जाते है। यह तो हद ही हो गई।

५ 'नवजीवन' जैसा महँगा साप्ताहिक दुनियामे कदाचित् ही कोई दूसरा होगा। कागजका दाम कम हो जानेपर भी 'नवजीवन' का दाम अभीतक वही बना हुआ है।

इन तर्कोमे कुछ सत्य है। ग्राहक महोदयका आग्रह है कि मै इस विषयकी चर्चा 'नवजीवन' मे करूँ।

मै ग्राहकोको 'नवजीवन' का हिस्सेदार मानता हूँ। जवतक वे एक निश्चित सख्यामे 'नवजीवन' खरीदते रहेगे तवतक मै उसका प्रकाशन अवश्य करूँगा। मुझे 'नवजीवन' को ग्राहकोके द्वारा भेजे गये वार्षिक चन्देके बलपर ही चलाना है, विज्ञापनोका सहारा लेकर नही। इसलिए ग्राहक यदि चाहे तो उसका प्रकाशन बन्द हो जा सकता है।

यह बात बिलकुल सच है कि 'नवजीवन' ताजी खबरे छापनेवाला पत्र नही, बल्कि इसमे कुछ निश्चित विचारोका प्रतिपादन किया जाता है। फिर वह इन विचारोकी कसौटी भी करता है और यह दो तरीकेसे, एक तो समय-समयपर उनपर बहसको स्थान देकर और दूसरे यह मालूम करके कि उन विचारोका समर्थन करनेवाले लोग कितने है।

'नवजीवन' स्वराज्य प्राप्तिके उपायोकी खोज करता है और उन्हे जनताके सम्मुख प्रस्तुत करता है। इसलिए 'नवजीवन' एक नई वस्तु देता है। दूसरे अख-बार जो देते है उसे देनेका प्रयत्न 'नवजीवन' नही करता। जिसे दूसरे पत्र नही देते उसको 'नवजीवन' निरन्तर देता है। इससे उसकी नवीनता अथवा विशिष्टता बनी रहती है। 'नवजीवन' का दूसरे पत्रोसे स्पर्धा करनेका इरादा नही है।

'नवजीवन' मे जो रोचकता पहले थी वह आज नही है, यह स्पष्ट है। एक समय था जब 'नवजीवन' के लगभग ४०,००० ग्राहक थे, किन्तु आज तो ६,००० ग्राहक

ही रहे हैं। स्वामी आनन्दको लगता है कि इसका कारण यह है कि मैं आजकल 'नवजीवन'के लिए कम और 'यंग इंडिया'के लिए अधिक लिखता हूँ। मैं इस बातको नहीं मानता, क्योंकि इस समय जैसी शोचनीय स्थिति 'नवजीवन' की है वैसी ही 'यंग इंडिया'की भी है। उसकी ग्राहक संख्या कभी ३०,००० थी, किन्तु आज वह भी लगभग 'नवजीवन'के बराबर ही रह गई है।

फिर भी 'नवजीवन'में और अधिक लिखनेकी मेरी कामना तो है ही। यदि ईश्वरकी इच्छा होगी तो मेरी यह कामना पूरी होगी और तब स्वामीकी शंका दूर हो जायेगी।

लगता यह है कि मैं इस समय लोगोंके सम्मुख जिस चीजको रख रहा हूँ उसमें उन्हें किसी प्रकारकी उत्तेजना या जोश नहीं मिलता। फिर स्वराज्य जल्दी मिलनेकी आशा भी नहीं है। 'नवजीवन'में स्वराज्य प्राप्त करनेके नये-नये साधन प्रस्तुत नहीं किये जाते। प्रत्युत वह उन्हीं उपायोंको नये ढंगसे लोगोंके सम्मुख रखनेका प्रयत्न करता है। 'नवजीवन'का रस उसकी इस नीरसतामें ही है। यह तो स्वराज्यका पोषक है इसलिए जिनका चरखे और इसी प्रकारके अन्य साधनोंमें विश्वास है, वे ही 'नवजीवन' खरीदते हैं। मुझे इतनेसे ही सन्तोष है। जबतक एक निश्चित संख्याके ग्राहकोंको इससे सन्तोष मिलता रहेगा यह पत्र चलता रहेगा।

जो लोग चरखेको स्वराज्य प्राप्तिका एक सबल साधन मानते हैं और जो इसे भारतकी गरीबीको दूर करनेके लिए रामबाण मानते हैं, वे 'नवजीवन'से नहीं ऊबेंगे। जिनमें धैर्य है, श्रद्धा है, वे इस साधनकी शक्तिको आज नहीं तो कल अवश्य समझ जायेंगे। मुझे इस सम्बन्धमें कोई शंका नहीं है और आशा है कि 'नवजीवन'के पाठकोंको भी नहीं होगी।

भाई महादेव देसाई मेरे दौरेकी दैनन्दिनी देते हैं, इस कारण किसीको शिकायत नहीं होनी चाहिए। मैं भ्रमण अपने मनोरंजनके लिए नहीं, सेवाके लिए करता हूँ। इसलिए पाठकोंको मेरे भ्रमणका परिणाम जाननेका अधिकार है और उसको किसी न किसी रूपमें देना मेरा कर्तव्य है। कई बार महादेवकी दैनन्दिनीमें मेरी प्रशंसा रहा करती है। यह दोष तो उसमें है ही। किन्तु लगता है कि यह दोष तो उसके लिए लगभग अनिवार्य हो गया है। मेरा सचिव जो यात्रामें मेरे साथ रहता है और मेरे चारों ओर जुटा रहता है, मेरी आलोचना शायद ही कर सके। वह तो केवल प्रेम या मोहसे प्रेरित होकर ही मेरे साथ घूमता है। उसके लिए वेतनके लोभका तो सवाल हो ही नहीं सकता। उसकी स्तुतिपर मैं अंकुश लगा सकता हूँ, किन्तु उसे बिलकुल बन्द नहीं कर सकता। मेरे बारेमें मेरे निकटतम साथियोंके दिलोंमें जो प्रशंसाका भाव है उससे मैं फूल नहीं उठता, मैं उस स्तुतिको एक बोझ मानता हूँ और उसके योग्य बननेका विशेष प्रयत्न करता हूँ, जबतक मैं इस प्रकारका प्रयत्न करता हूँ, तबतक यह प्रशंसा हानिकर सिद्ध नहीं हो सकती।

फिर भी मैं उस आलोचनाके बारेमें विशेष तौरपर कुछ कहना चाहता हूँ। स्तुतिमें कुछ भय हमेशा रहता है। यदि बेटा बापकी स्तुति निरन्तर करता रहे तो वह अपने बापको भ्रमित करनेके पापका भागी बन जा सकता है। इसलिए वह पुत्र

जो अपने पिताके प्रति प्रेमभाव रखता है, पिताकी प्रशसा नही किया करता। उसी प्रकार यदि बाप बेटेकी तारीफ हर समय किया करे तो उस बापसे बेटेका भला होनेके बजाय बुरा ही होनेकी सम्भावना है; इसी प्रकार मित्र यदि मित्रकी स्तुति करता है तो वे दोनो एक दूसरेके लिए गड्ढा खोदते है।

इसलिए महादेवको मेरी सलाह है कि वे उक्त लेखककी आलोचनाके सारको समझे और तदनुसार कार्य करे। मै भी और सावधान रहनेका प्रयत्न करूँगा।

इसमे भी एक कठिनाई तो रहती है। वह यह कि मै महादेवके सब लेखोको 'नवजीवन' मे छपनेसे पहले पढ नही सकता, और बादमे भी पढनेका समय नही मिलता, इस कारण कुछ बाते ऐसी छप जाती है जिन्हे मै समयपर पढ पाऊँ तो निकाल दूँ। इस स्थितिमे यदि 'नवजीवन' अन्यथा उपयोगी सेवा कर रहा हो तो इस ग्राहक-जैसे पाठकगण कृपया उक्त दोषको, जिस हदतक वह अनिवार्य हो उस हदतक दरगुजर करे।

'नवजीवन' का शिक्षा-सम्बन्धी अक भी सेवाके निमित्त ही निकाला गया है। यह निश्चय किया गया कि विद्यापीठ अपनी शिक्षा-सम्बन्धी मासिक पत्रिका 'नवजीवन' के परिशिष्टाकके रूपमे निकाला करे तो व्ययकी काफी बचत हो सकती है। यह अक उस निश्चयके बाद निकाला गया है। उससे भी लोगोको राष्ट्रीय शिक्षाकी सही तस्वीर मिलती है, इसलिए इससे ग्राहकोका हताश होना स्वाभाविक ही है। यदि सत्य नीरस हो, कष्टप्रद हो तो भी उपयुक्त अवसर आनेपर उसे व्यक्त करना ही पडता है। इस समय राष्ट्रीय शिक्षाकी गतिविधि शिथिल है, इसलिए उससे सम्बन्धित लेखे-जोखेमे निराशाजनक समाचार ही हो सकते है। किन्तु इस अन्धकारपूर्ण निराशामे आशाकी किरणे दिखाई देने लगी है। उनमे कितने बालक पढते है, इस बातकी ओर पाठक ध्यान न दे। किन्तु जिन कठिनाइयोके बीच हमारी राष्ट्रीय शिक्षाकी नौका आगे बढ रही है, पाठक उनकी ओर ध्यान दे। आज राष्ट्रीय शिक्षा द्वारा बालकोको जो सिखाया जा रहा है उससे उनमे निर्भयता और स्वराज्य लेनेकी योग्यता आयेगी एव उनकी शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति होगी।

'नवजीवन' का मूल्य क्यो नही घटाया जा सकता, अब यह बतानेकी आवश्यकता नही रहती। फिर भी मै यह तो कह ही दूँ कि 'नवजीवन' के ग्राहक 'नवजीवन' के मालिक है, इतना ही नही बल्कि जो लाभ होता है उसका कोई निजी उपयोग नही किया जाता, वह भी लोकोपयोगी सम्पत्ति है। 'नवजीवन' मासिक नही बनाया जा सकता है, क्योकि उसमे केवल लेख ही नही होते, स्वराज्यकी प्रगतिका साप्ताहिक विवरण भी रहा करता है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-३-१९२५

१७६. अहिंसाका मर्म

एक सज्जन नीचे लिखे सवाल करते हैं:

१ क्या यह बात सच है कि विदेशी चीनीमें हड्डियाँ तथा खून आदि अपवित्र चीजें डाली जाती हैं?

२ अहिंसा-व्रतका पालन करनेवाला मनुष्य क्या विदेशी चीनी खा सकता है?

३ जो शख्स अहिंसाकी दृष्टिसे खादी पहनते हैं वे क्या स्वराज्य मिलनेके बाद भी खादी पहनते रहेंगे या दूसरे कपड़े पहन सकेंगे?

४ खादी पहनना अहिंसाका सवाल है या राजनीतिका? हिंसाकी दृष्टिसे मिलके कपडेमें अधिक हिंसा है या विलायती कपडेमें; बने तो वे दोनो ही मशीनके हैं।

५ अहिंसा-व्रतका पालन करनेवाला चाय पी सकता है? यदि नहीं पीनी चाहिए तो उसे पीनेमें हिंसा कहाँ है?

ऐसे सवालोका जवाब देते हुए मुझे सकोच होता है, क्योकि ऐसे सवाल अज्ञान-सूचक हैं। परन्तु चूँकि कितने ही पाठक ऐसे सवाल किया करते है इसलिए उनका निर्णय कर डालना उचित मालूम होता है। इन सवालोके जवाबके निमित्त मैं अहिंसा-तत्त्वको भी जिस तरह समझता हूँ, स्पष्ट कर देना चाहता हूँ।

विदेशी चीनीके अन्दर हड्डियाँ आदि नही डाली जाती, हाँ, ऐसा सुना है कि उनका उपयोग चीनी साफ करनेमे किया जाता है। यह माननेका भी कोई कारण नही कि ऐसा प्रयोग देशी चीनीके लिए नही किया जाता।

इस कारण अहिंसाकी दृष्टिसे शायद दोनो प्रकारकी चीनी त्याज्य है। यदि लेना ही हो तो वह कहाँ-कैसे बनती है, इसकी जाँच-पडताल करनी चाहिए। स्वदेशी-को प्रोत्साहन देनेके लिए विदेशी चीनीका त्याग करना उचित है। अहिंसाकी एक सूक्ष्म दृष्टिमे तो चीनीका ही त्याग कर देना चाहिए। प्रत्येक प्रक्रियामे हिंसा होती है। इसलिए जिस खाद्यपदार्थपर जितनी कम प्रक्रिया होती हो वह उतना ही अच्छा है। गन्ना चूसना सबसे उत्तम है, गुड खाना उससे कम अच्छा है और चीनी खाना उससे भी कम। परन्तु मैं सर्व-साधारणके लिए इतना बारीकीमे जानेकी बिलकुल जरूरत नही समझता।

खादी पहननेवाला अहिंसा और स्वराज्य दोनो दृष्टियोसे स्वराज्य मिलनेके बाद भी खादी ही पहनेगा। स्वराज्य जिन साधनोके बलपर मिलेगा उन्ही साधनोके बल-पर वह कायम रह सकेगा। जो राष्ट्र अपनी जरूरतोके लिए विदेशोपर मुनहसिर रहता है, या तो वह गुलाम बन जाता है या औरोको गुलाम बनाता है।

खादी पहननेमे अहिंसा, राजनीति और अर्थशास्त्र तीनोका समावेश हो जाता है। पूर्वोक्त नियमके अनुसार खादीकी प्रक्रियाएँ अपेक्षाकृत कम हैं, इसलिए उसमें हिंसाका समावेश कम है।

अब विदेशी या स्वदेशी मिलके कपडेका मुकाबला करे तो भले ही दोनोमे एक ही प्रकारकी मशीनोका उपयोग होता है, स्वदेशी मिलके कपडे पहननेमे कम हिंसा है। क्योकि ऐसा करते हुए हमारे हृदयमे अपने देश-भाइयोके प्रति प्रेम रहता है। परन्तु विदेशी कपडेका इस्तेमाल करनेमे प्रेमका अभाव होता है। यही नही, बल्कि बिलकुल स्वच्छन्दता, स्वार्थ या अपनी ही सुख-सुविधाका सवाल रहता है और परमार्थका, प्रेमका अर्थात् अहिंसाका अभाव रहता है।

अहिंसा-व्रतका पालन करनेवाला चाय पी भी सकता है और नही भी पी सकता है। चाय [के पौधे] मे भी प्राण है। वह निरुपयोगी वस्तु है। इस कारण उसे पीनेमे होनेवाली हिंसा अनिवार्य नही है। अतएव उसका त्याग इष्ट है। जहाँ-जहाँ चायके बगीचे है, वहाँ-वहाँ गिरमिटिया लोगोसे मजूरी कराई जाती है। गिरमिटिया लोगोके दु खोमे हिन्दुस्तान वाकिफ है। जिस पदार्थके उत्पादनमे मजदूरोको कष्ट मिलता हो वह भी अहिंसाकी दृष्टिसे त्याज्य है। व्यवहारमे हम इतनी छोटी-मोटी बातोका खयाल नही करते। इस कारण जिस तरह दूसरी चीजोको अहिंसाकी दृष्टिसे निर्दोष समझते है उसी तरह चायको भी मान सकते है। वैद्यककी दृष्टिसे चायमे गुणकी अपेक्षा दोष अधिक है, खासकर तब जबकि वह उबाल ली जाती है।

इन प्रश्नोसे यह प्रकट होता है कि अहिंसाकी बाते करनेवालोको अहिंसाके बारेमे कितना कम मालूम है। अहिंसा एक मानसिक स्थिति है। जो इस स्थितिको नही पा सका वह चाहे कितनी ही चीजोको त्याग दे तो भी उसे उसका फल शायद ही मिल सकेगा। रोगी, रोगके कारण अनेक चीजोसे परहेज करता है। उसके इस त्यागका फल रोग दूर करनेके अतिरिक्त और कुछ नही होता। अकाल पीडितको यदि भोजन न मिले तो इससे उसे उपवासका फल नही मिलता। जिसका मन सयमी नही है उसकी कृतिमे भले ही सयम दिखाई दे, पर वह सयम नही है। खाद्य-अखाद्यके विषयमे अहिंसाका समावेश नही होता। अहिंसा क्षत्रियका गुण है। कायर उसका पालन कर ही नही सकता। दया तो शूरवीर ही दिखा सकते है। जिस कार्यमे जिस अशतक दया है उस कार्यमे उसी अशतक अहिंसा हो सकती है। इसलिए दयामे ज्ञानकी आवश्यकता है। अन्ध प्रेमको अहिंसा नही कहते। अन्ध प्रेमके अधीन होकर जो माता अपने बालकको अनेक तरहसे लाड करती है उसमे अहिंसा नही बल्कि अज्ञानजनित हिंसा है। मै चाहता हूँ कि लोग खाने-पीनेकी मर्यादाओको ज्यादा महत्त्व न दे और उनका पालन करते हुए भी अहिंसाके विराट् रूपको, उसकी सूक्ष्मताको, उसके मर्मको समझे। रिवाजके अनुसार चलनेवाला पश्चिमका कोई साधु पुरुष गोमास खानेपर भी रूढि रिवाजके अनुसार गोमासको छोडनेवाले एक पाखण्डी क्रूर मनुष्यसे हजार गुना अधिक अहिंसक है। मै चाहूँगा कि मुझसे प्रश्न पूछनेवाले अपने आपसे यह कहे कि मै विदेशी चीनी, विदेशी कपडे और चायको छोड भी दूँ पर अपने पडोसीके प्रति दयाभाव न रखूँ, दूसरोके लडकोको अपने लडकेके बराबर न मानूँ, अपने व्यवसायमे सचाईका पाबन्द न बनूँ, अपने नौकरो-चाकरोको अपना कुटुम्बी मानकर उनके साथ प्रेम-भाव न रखूँ तो मेरी खाने-पीनेकी मर्यादाका कुछ मूल्य नही है, मेरी यह मर्यादा आडम्बर-मात्र है और अज्ञानजनित दिखावा है। नरसिंह

मेहताका पवित्र वचन है कि "ज्या लगी आतमा तत्व चीन्ह्यो नही त्या लगी सावना सर्व झूठी।" आत्म-तत्त्वको पहचाननेके मानी है अहिंसामय होना। अहिंसामय होनेका अर्थ है विरोवीके प्रति भी प्रेमभाव रखना, अपकारीका भी उपकार करना, वुराईका वदला भलाईसे देना और ऐसा करते हुए यह मानना कि यह कोई अनोखी वात नही है, यह तो हमारा कर्त्तव्य है।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-३-१९२५

१७७. टिप्पणी

एक शिक्षकका दु.ख

एक शिक्षक लिखते है[1]

उक्त शिक्षकने जो प्रश्न पूछे है उनका उत्तर भी उन्होने स्वय दे दिया है। इससे मेरा काम कुछ हलका हो गया है। मेरे कहनेका आशय यह तो माना ही नही जा सकता कि दस शिक्षक या एक शिक्षक केवल एक ही वालकको पढाकर आराम करने लग जाये, मेरा अभिप्राय तो यह है कि दस नही यदि वीस शिक्षक भी हो और विद्यार्थी एक ही हो तो भी वे शालाका त्याग न करे वरन् विद्यार्थियोकी सख्या वढानेका प्रयत्न करे। जव विद्यार्थी पर्याप्त सख्यामे मिलने लगे तो शिक्षक अपनी आजीविका-भरके लिए वेतन ले, पर प्रतिकूल परिस्थितिमे कुछ भी वेतन न लेनेमे उनकी सच्ची कसौटी है, भले ही वे स्वय और उनके आश्रित जन भी भूखो मरे। ऐसा शिक्षक अपने कार्यके निमित्त अपने सगे-सम्वन्धियो, माँ-वाप, वाल-वच्चो और अपने सर्वस्वकी आहुति दे देता है। जव लोग दूसरे धन्धोमे अपनी पूँजी गँवा वैठते है, तव वे क्या करते है? यथाशक्ति प्रयत्न करनेपर भी जव मनुष्यको कोई काम-काज नही मिलता तव वह अपना और अपने वाल-वच्चोका भूखो मरना सहन कर लेता है। राष्ट्रीय शालाओके शिक्षकोके विपयमे भी यही वात लागू होनी चाहिए। इससे उनके आश्रित भी पेट भरने लायक पैसा कमानेके लिए काम करने लगेगे। जिन दिनो शिक्षक विद्यार्थियोके न होनेके फलस्वरूप वेकार रहे उन दिनो वे अवश्य दूसरा काम उठा ले सकते है, किन्तु तव भी उनको शालाओके उद्धारका प्रयत्न करते ही रहना चाहिए। दूसरा काम खोज लिया जाये, इसका अर्थ यही है कि यदि विद्यार्थी न हो और समय व्यर्थ जा रहा हो तो उसमे शिक्षक धुनाई या वुनाईका काम करके अपना गुजारा करे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, १५-३-१९२५

१. यह नही दिया जा रहा है।

१७८. भाषण : कोट्टयममें[1]

१५ मार्च, १९२५

मुझे ईसाई मतावलम्बी लोगोके मुख्य केन्द्र कोट्टयममे आ सकनेसे खुशी हुई है। दुनियाके सभी देशोमे मेरे बहुतसे ईसाई दोस्त हैं, और मैं भारतके ईसाइयोसे बहुत उम्मीद रखता हूँ। मैंने देशके सामने जो कार्यक्रम रखनेका साहस किया है, उसमे ऐसी कोई भी चीज नही है जिसमें ईसाई लोग हार्दिक सहयोग न दे सकते हो। मैं तो यहाँतक कहनेको तैयार हूँ — और विनम्रतापूर्वक यही निवेदन करूँगा कि यदि कोई ईसाई इस रचनात्मक कार्यक्रममे सच्चे दिलसे भाग नही लेता तो वह सही अर्थमे ईसाई धर्मका पालन नही करता। अगर ईसाई लोग, जो इस देशमे जन्मे और बडे हुए है और जिनके लिए यह भूमि उसी प्रकार मातृभूमि है जिस प्रकार मेरी या मुसलमानोकी है, अगर वे लोग इस देशके विकासमे सहायक नही बनते तो मैं कहूँगा कि वे उस हदतक ईसाइयतसे विमुख होते है। ऐसा नही हो सकता कि आप ईश्वरकी सेवा तो करे और अपने पडोसीकी सेवा करनेसे इनकार करे। जो व्यक्ति अपने पडोसीकी उपेक्षा करता है वह हिन्दू, ईसाई या मुसलमान कोई भी हो, अपने ईश्वरसे विमुख होता है। इसलिए मैं अपने ईसाई मित्रोसे कहूँगा कि वे अपनी शक्ति-भर भारतकी सेवा करना अपना विशेष सौभाग्य और विशेष कर्त्तव्य माने।

हमारे जुदा-जुदा धर्म हो सकते हैं, ईश्वरके बारेमे हमारी कल्पनाएँ भिन्न-भिन्न हो सकती है, और मुक्तिके विषयमे हमारे विचार भिन्न हो सकते है। लेकिन एक चीज है जो सभी भारतीयोको इस देशकी धरतीसे बाँधती है। एक चीज है जो सभी भारतीयोको अटूट बन्धनमे बाँधती है, और वह चीज है चरखा और उससे बननेवाला खद्दर। मैं समय-असमय खद्दर और चरखेकी बात कहता ही रहता हूँ, क्योकि म जानता हूँ कि खद्दरमे ही, चरखेमे ही भारतकी आर्थिक मुक्तिकी कुजी है। चरखा एक प्रतीक है, जनसाधारण और उच्च वर्गोको आपसमे बाँधनेवाले बन्धनका। जनसाधारणका श्रम ही उच्च वर्गोका जीवनाधार है, और उच्च वर्गोसे मेरी विनती है कि वे जनसाधारणसे जो-कुछ पाते है उसके बदले कुछ थोडा-सा प्रतिदान दे। इसलिए मैं प्रत्येक भारतीयसे, भारतमे निवास करनेवाले अंग्रेजोसे भी, बल्कि भारतसे अपनी आजीविका प्राप्त करनेवाले प्रत्येक व्यक्तिसे कहता हूँ कि वह खद्दरको अपनाये। अपने घरमे वह सिरसे पैरतक खद्दर ही पहने और इस प्रकार जनसाधारणको प्रतिदान दे। (हर्षध्वनि)

मैं कोट्टयम और आसपासके इलाकोकी महिलाओसे और पुरुषोसे कहता हूँ, "अगर आप चरखेको अपने घरोमे पुन प्रतिष्ठित करेगे तो आप देखेगे कि इस

१ यह भाषण कोट्टयम नगरपालिका और हिन्दी छात्रोकी ओरसे दिये गये अभिनन्दन-पत्रोंके उत्तरमें दिया गया था।

तरह आपने भारतकी कोटि-कोटि भूखी मानवताको आशा और सान्त्वनाका सन्देश दिया है।"

अस्पृश्यताका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा:

आपकी राजमाता और दीवान महोदयने मुझे विश्वास दिलाया है कि उनकी सहानुभूति सुधारकोंके साथ है, और मैंने अगर उन्हें ठीक समझा है तो मैं जानता हूँ कि उन कष्टको दूर करनेके लिए वे इसी बातका इन्तजार कर रहे हैं कि जनताकी ओरसे सवर्ण हिन्दू लोग उसके पक्षमें जोरदार, सुस्पष्ट और संयमित आवाज उठायें। यदि हिन्दू लोग अपने धर्मके प्रति सच्चे हैं और स्वयंको अपने धर्मकी गरिमाका रक्षक मानते हैं, और यदि अस्पृश्यताके विरुद्ध उनकी भावना उतनी ही तीव्र है जितनी कि मेरी है तो वे तबतक चैनसे नहीं बैठेंगे जबतक कि राजमाता और दीवान महोदयको इस बातका यकीन नहीं दिला देते कि त्रावणकोरकी सारी जनता इस सुधारकी माँग करती है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-३-१९२५

१७९. अखिल भारतीय गोरक्षा मण्डल

[१६ मार्च, १९२५][1]

पाठकोंको याद होगा कि पिछले दिसम्बरमें बेलगाँवमें जो अनेक परिषदें हुई थीं, उनमें एक गोरक्षा परिषद् भी थी। अनिच्छा होते हुए भी प्रेमके वश होकर मैंने उसका अध्यक्ष बनना स्वीकार किया था। मेरी यह मान्यता है कि इस युगमें हिन्दू धर्मके माननेवालोंके लिए गोरक्षा महत्त्वपूर्ण और एक आवश्यक कर्त्तव्य है। मेरी यह भी नम्र मान्यता है कि मैं अपने तरीकोंसे उस कार्यको वर्षोंसे कर रहा हूँ। इस बातको तो सारा हिन्दुस्तान जानता है कि मैं जो जानबूझकर मुसलमानोंके साथ मैत्रीभाव बढ़ा रहा हूँ उसके पीछे गोरक्षा एक प्रबल कारण है। लेकिन मैं यह नहीं मानता कि मुसलमानोंके हाथसे गायको बचाना गोरक्षाका सबसे बड़ा अंग है। उसका सबसे बड़ा अंग तो हिन्दुओंसे गायकी रक्षा करना ही है। गोरक्षाकी मेरी व्याख्यामें गाय-बैलोंपर किये जानेवाले जुल्मोंसे उनकी रक्षा करना भी शामिल है।

लेकिन इस महान् कार्यमें अभीतक मैंने खुद बहुत भाग नहीं लिया है। ऐसा कार्य करनेकी योग्यता प्राप्त करनेके लिए मैंने तपश्चर्या की है, लेकिन पूरी योग्यता अभी प्राप्त नहीं हुई है। इसलिए अध्यक्ष बननेमें मुझे संकोच होता था, फिर भी मैंने अध्यक्ष बनना स्वीकार कर लिया। परिषद्में एक प्रस्ताव यह भी पास हुआ था कि एक स्थायी मण्डल स्थापित किया जाये। इस कार्यमें भी तो मेरा योग देना जरूरी

१ कन्या कुमारीकी यात्राके उल्लेखसे पता लगता है कि यह लेख गांधीजीने १६ मार्चको लिखा होगा।

था। इसलिए मैं दिल्ली गया। गत जनवरी मासके आखिरी सप्ताहमें परिषद् द्वारा नियुक्त समितिकी बैठक हुई।[1] उसमें अखिल भारतीय गोरक्षा मण्डल स्थापित करनेका निश्चय किया गया। संगठनका संविधान तैयार किया गया, और उसे समितिने मंजूर किया। यह मण्डल जितना-कुछ कर पाया है, इसका मुख्य श्रेय वाईके प्रख्यात गोसेवक चोंडे महाराजको है। उन्हींकी इच्छा और साहससे प्रेरित होकर मैं यह काम कर पा रहा हूँ। दादासाहब करन्दीकर,[2] लाला लाजपतराय, बाबू भगवानदास, श्री केलकर, डाक्टर मुंजे[3], स्वामी श्रद्धानन्दजी इत्यादि इस समितिके सदस्य हैं। परन्तु भारत भूषण मालवीयजीके बिना इस मण्डलके अस्तित्वको मैं असम्भव मानता हूँ। इसलिए मैंने यह निवेदन किया कि उसे जनताके सामने लानेके पहले उनकी स्वीकृति प्राप्त कर लेना आवश्यक है। इसे सबने स्वीकार किया और उन्हें इस संस्थाके विधि-विधानको दिखानेका काम मेरे जिम्मे पड़ा। उन्हें वह दिखाया गया और उन्होंने इसे पसन्द किया।

लेकिन इसे प्रकाशित करनेमें मुझे संकोच होता है, क्योंकि उसका अध्यक्ष अभी तक मैं ही हूँ। मूल संस्थापकोंकी इच्छा यह है कि मैं ही उसका अध्यक्ष बना रहूँ। मुझे अपनी योग्यताके बारेमें शंका रहती है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जबतक इस महान् कार्यमें अगुआ गिने जानेवाले हिन्दुओंकी सहमति न होगी तबतक इसमें विशेष प्रगति न हो सकेगी। मुझे अपने दिलमें हमेशा यह भय बना रहता है कि कहीं मेरे अस्पृश्यता-सम्बन्धी दृढ़ विचारोंके कारण मेरा अध्यक्ष होना इसके लिए हानिकारक साबित न हो। मैंने अपनी यह आशंका चौंडे महाराजजीपर प्रकट की। उनका खयाल है कि मेरे अस्पृश्यता-विषयक विचारोंका इस कार्यसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं है और यदि सम्बन्ध है, इस विचारसे कोई उससे अलग रहता है तो भी यह जोखिम उठाकर इस कार्यको आगे बढ़ाना हमारा धर्म है।

यह धर्म है या नहीं सो मैं नहीं जानता। लेकिन समितिने जिस विधानको स्वीकार किया है, उसे मैं जनताके समक्ष रख रहा हूँ। मुझे आशा है कि मैं २६को बम्बई पहुँच जाऊँगा। तब इस नियमावलीको मंजूर करानेके लिए एक सभा बुलानेकी तारीख तय की जायेगी। तारीख तय हो जाये तो सभा बुलाई जायेगी।

हे द्रौपदीके सहायक! तू मेरी सहायता कर। तू ही मुझ अनाथका नाथ बन। यह तू ही जानता है कि मुझे गोरक्षासे कितना प्रेम है। यदि यह प्रेम शुद्ध हो तो तू इस अयोग्य सेवकको योग्य बना लेना। तेरी डाली हुई अनेक जिम्मेदारियोंको मैंने उठा रखा है। उसमें यदि यह एक और बढ़ानी हो तो बढ़ा देना। मेरी शर्म तो तू ही ढँक सकता है।

पाठक, मेरे हृदयकी पीड़ा आप नहीं समझ सकेंगे। यह मैं बड़े तड़के लिख रहा हूँ और लिखते हुए मेरे हाथ काँप रहे हैं। आँखोंमें आँसू हैं। कल ही कन्या-

१ बॉम्बे सीक्रेट एब्सट्रैक्ट्स, १९२५ के अनुसार यह बैठक २४ जनवरीको हुई थी।

२ रघुनाथ पाण्डुरंग करन्दीकर, (१८५७-१९३५), सुप्रसिद्ध वकील और सार्वजनिक कार्यकर्ता।

३ नागपुरके प्रख्यात नेत्रचिकित्सक, हिन्दू महासभाके नेता, १९३० के गोलमेज परिषद्के सदस्य।

कुमारीके दर्शन करके लौटा हूँ। जो विचार हृदयमे उमड रहे है, यदि समय मिला तो उन्हे आपके सामने रखूँगा। जिस प्रकार किसी बालकको खूब खानेकी इच्छा तो हो पर खानेकी शक्ति न होनेके कारण वह फूट-फूट कर रोता है, मेरी स्थिति भी कुछ वैसी ही है। मै लोभी हूँ। मै धर्मकी विजय देखने और उसे ससारके सामने रखनेके लिए बडा आतुर हूँ। इसके लिए आवश्यक कार्य करनेकी मुझे बडी अभिलाषा रहती है। मुझे हिन्द-स्वराज्य भी इसीलिए चाहिए। गोरक्षा, चरखा-प्रचार, हिन्दू-मुस्लिम एकता, अस्पृश्यता-निवारण, और मद्यपान-निषेध सब इसीलिए चाहिए। इनमे से मै क्या करूँ और क्या न करूँ? तूफानी समुद्रमे मेरी अभिलाषा-रूपी नैया डोल रही है।

एक समय समुद्रमे एक बडा भयकर तूफान आया। सब यात्री व्याकुल हो गये। सबने नरसिंह मेहताके इष्ट देवको स्मरण किया। मुसलमान अल्लाह-अल्लाह पुकारने लगे। हिन्दुओंने राम-राम जपना शुरू किया। पारसी भी अपने धर्मग्रन्थका पाठ करने लगे। मैंने सभीके चेहरोंपर चिन्ता देखी। तूफान शान्त हुआ और सबके-सब खुश हो गये। खुश होनेपर वे ईश्वरको भूल गये और ऐसा व्यवहार करने लगे मानो कभी तूफान आया ही न हो।

मेरी स्थिति विचित्र है। मै तो हर क्षण तूफान ही में रहता हूँ और इसलिए सीतापतिको नही भूल सकता। लेकिन जब कभी बहुत बडे तूफानके बीच फँस जाता हूँ तब तो मै अपने उन साथियोंसे भी अधिक विकल हो जाता हूँ और "पाहि माम् पाहि माम्" पुकार उठता हूँ।

इतनी प्रस्तावना लिखनेके बाद मै गोमाताका स्मरण करके, परमात्माका ध्यान करके, इस मण्डलके सविधानको जनताके समक्ष रखता हूँ।[1]

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-३-१९२५

१८०. पत्र : कल्याणजी वि० मेहताको

सोमवार [१६ मार्च, १९२५][2]

भाई कल्याणजी,

तुम्हे तार देनेकी इच्छा हुई थी, किन्तु लोभके वश होकर पैसेकी बचत करनेका निश्चय किया। मैंने तुम्हारी रिहाईकी खबर आज ही 'नवजीवन' मे पढी है। रिहा हो गये, अच्छा हुआ। मै २७ तारीखको आश्रममे पहुँचूँगा। तुम मुझे आश्रममे मिलोगे ही। आशा है तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा हो गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती पत्र (जी० एन० २६७८) की फोटो-नकलसे।

१ यहाँ नहीं दिया गया है। देखिए "अ० भा० गोरक्षा मण्डलके सविधानका मसविदा", २४-१-१९२५।

२ साबरमती जेलसे कल्याणजीकी रिहाईकी खबर १५-३-१९२५ के **नवजीवन**में छपी थी।

१८१. पत्र : डब्ल्यू० एच० पिटको

अलवाई
१८ मार्च, १९२५

प्रिय श्री पिट,[1]

वाइकोममे मन्दिरको जानेवाली सडकपर सत्याग्रहियोको सीमा-रेखा पार करनेसे रोकनेके लिए वनाई गई नाकेवन्दियो और पुलिस दलको हटानेकी सम्भावना और वाछनीयतापर हमारी जो वातचीत[2] हुई थी उसे देखते हुए स्थितिको जैसा मैने समझा है वह इस प्रकार है सरकार और सुधारक दोनोका एक यही उद्देश्य है कि तथाकथित अछूतो द्वारा सडकोका उपयोग करनेपर लगाई गई पावन्दी हटा ली जाये। आपका विचार है कि यदि मै सत्याग्रहियोको यह सलाह दूँ कि वे नाके-वन्दियो और पुलिस दलके न रहते हुए भी अन्तिम निर्णय होनेतक सीमा-रेखाको पार न करे तो मै जो-कुछ चाहता हूँ वह और भी जल्दी हो जायेगा। आप मुझसे कहते है कि कट्टरपन्थी लोगोको नाकेवन्दियो तथा पुलिस दलकी उपस्थितिसे वल मिलता है क्योकि वे यह गलत अनुमान लगा लेते है कि नाकेवन्दियाँ खडा करने और पुलिस दल वैठानेका उद्देश्य उनके मनके अनुसार स्थिति वनाये रखनेमे सहायता पहुँ-चाना है। आपके साथ हुई वातचीतसे मुझे ऐसा लगा कि यदि मैं आपके सुझाये हुए ढगपर सीमा-रेखाका उल्लघन न करनेका वादा करूँ तो आप उन आदेशोको जिनके अधीन आप कार्रवाई कर रहे है, वापस करा सकेगे। यद्यपि मै सहज ही यह विश्वास नही कर पाता हूँ कि यदि सत्याग्रही आपके वताये हुए तरीकेको उपयोगमे लाये तो कट्टरपन्थियोका दिल पसीज जायेगा और उनकी स्थिति कमजोर हो जायेगी, फिर भी आपके सुझावके पीछे जो भावना है उसकी मै कद्र करता हूँ। इसलिए मैं परीक्षणके तौरपर आपके दिये हुए सुझावको स्वीकार करनेकी सलाह देनेके लिए तैयार हूँ। आखिर सत्याग्रही यही तो चाहते है कि जनताकी सक्रिय तथा जवरदस्त राय उनके पक्षमे हो जाये। उनका उद्देश्य कट्टरपन्थियोको नाराज करनेका नही है वल्कि उन्हे अपने पक्षमे लानेका है। इसके अतिरिक्त उनका उद्देश्य इस आन्दोलनको चलाकर किसी प्रकार भी सरकारको परेशान करना नही है, वल्कि जहाँतक सम्भव हो, उसकी सहानुभूति और उसके समर्थनको प्राप्त करना है। इसलिए आपकी ओर से यह जानकारी मिलनेपर कि इस पत्रमे उल्लिखित प्रतिषेधात्मक आदेश वापस ले लिया गया है, मै आपके सुझावपर तुरन्त अमल करनेके लिए तैयार हूँ। इसका असर यह होगा कि सत्याग्रही वहुत कम सख्यामे जो कि वर्तमान सख्यासे ज्यादा नही होगी अपने उद्देश्यके समर्थनमे सीमा-रेखातक जायेगे और जाकर खडे रहेगे या

१ त्रिवेन्द्रमके पुलिस कमिश्नर।

२ १० मार्चको त्रिवेन्द्रममें।

चरखा कातेंगे, जैसा कि वे सीमा-रेखापर अब कर रहे हैं। जबतक यह समझौता रहेगा तबतक वे सीमा-रेखाको कदापि पार नहीं करेंगे। मैं आशा करता हूँ कि यदि कभी उस तथाकथित अधिकार या प्रथाके विरुद्ध, जिसके अन्तर्गत तथाकथित अस्पृश्योंको मन्दिरके आसपासकी सड़कोंका उपयोग करनेसे रोका गया है, अदालतमें मुकदमा चलानेकी जरूरत पड़ेगी तो वह मुकदमा त्रावणकोरके आम फौजदारी कानूनके अन्तर्गत ही चलाया जायेगा। किन्तु मुझे आशा है कि त्रावणकोर सरकारकी सहायतासे जनमतको इस प्रकार सुगठित किया जायेगा कि वह दुर्निवार हो जाये और दोनों पक्षों द्वारा कानूनकी शरण लिये बिना सार्वजनिक या अर्ध सार्वजनिक सड़कोंका उपयोग करनेसे किसी भी व्यक्तिको, फिर वह किसी भी जातिका क्यों न हो, रोका न जा सके। मैंने आपके सामने जो तीन प्रस्ताव रखे थे उनपर मैं आपसे पहले ही बातचीत कर चुका हूँ। वे प्रस्ताव हैं चुने हुए क्षेत्रोंमें सवर्ण हिन्दुओंका मत लेकर जनमत जानना, पंच निर्णय या हिन्दू शास्त्रोंके उन प्रमाणोंकी व्याख्या और परीक्षण करना जिनको कट्टरपन्थी कुछ मन्दिरोंके आसपासकी सड़कोंके उपयोगके सम्बन्धमें अपने समर्थनमें उद्धृत करते हैं। इनमें से एक या सभी सुझावोंको स्वीकार करनेमें कोई कठि-नाई नहीं होनी चाहिए।

इस पत्रको समाप्त करते हुए त्रावणकोरके मेरे दौरेमें बहुत ही अच्छा प्रबन्ध करनेके लिए मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देना चाहता हूँ।[1]

हृदयसे आपका,

अंग्रेजी पत्र (एस० एन० १३२६७) की माइक्रोफिल्मसे।

१८२. भाषण: परूरमें[2]

१८ मार्च, १९२५

महात्माजीने उत्तर देते हुए कहा कि आप जिस बातका निश्चय करते हैं उसका अक्षरशः पालन भी करते हैं, यह आपकी परम्परा ही है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि नगरपालिकाके सदस्योंने आजसे चरखा चलाने और खद्दर पहननेका अपना जो निश्चय व्यक्त किया है उसको वे तत्परताके साथ पूरा करेंगे। मुझे इस बातका दुःख है कि त्रावणकोरमें अस्पृश्यता और अनुपगम्यता बहुत बुरी तरहसे फैली हुई है। आप लोगोंका अपनी मातृभूमि एवं हिन्दू धर्मके प्रति यह कर्त्तव्य है कि उसे दूर कर दें। मैं देखता हूँ, आप लोगोंकी रुचि इतनी सादी है कि बहुतसे कपड़े

१ पुलिस कमिश्नरके उत्तरके लिए देखिए "तार डब्ल्यू० एच० पिटको", २४-३-१९२५ की पाद-टिप्पणी।

२ यह भाषण परूर नगरपालिका, नागरिकों और एजवाहों द्वारा दिये गये अभिनन्दन पत्रके उत्तरमें दिया गया था।

पहनना न तो पुरुष सभ्यतापूर्ण समझते है और न स्त्रियाँ ही। मै विदेशी या मिलके बने कपडोको पहनना लज्जाजनक और अपमानजनक समझता हूँ। एजवाहा लोग एक समय बुनकर थे और वे अपने कपडे स्वयं तैयार करते थे। एक ईसाई महोदयने मुझे लिखा है कि खद्दर पहनना असम्भव है। मुझे इस बातपर विश्वास नहीं होता कि कोई लाट पादरी या रोमन कैथोलिक पादरी अपने धर्मावलम्बियोको शुद्ध हाथ बुना खद्दर न पहननेका आदेश दे सकता है। अपने खद्दर पहननेके वादेको पूरा करनेके लिए आपको संगठन तथा विशेषज्ञकी सहायताकी आवश्यकता है, इसलिए मै आपसे अपील करता हूँ कि आप तमिलनाडके मित्रोकी सहायता ले।

[अग्रजीसे]

हिन्दू, १९-३-१९२५

१८३. भाषण: अलवाईके यूनियन कालेजमे

१८ मार्च, १९२५

गाधीजीने उत्तर देते हुए एशियाके महाकवि[1] द्वारा छात्रावासके उद्घाटनपर और शानदार जगहके लिए कालेजको बधाई दी। उन्होने कहा कि बौद्धिक ज्ञान द्वारा जीविकोपार्जन करना शिक्षाका दुरुपयोग है। मेरा खयाल है कि आप लोग हृदय और शरीरकी संस्कृतिकी उपेक्षा कर रहे हैं। भाषण समाप्त करते हुए महात्माजीने छात्रोंसे कहा कि वे खद्दर और चरखेके सम्बन्धमें उदासीन रहनेमें ही उदारता मानकर सन्तुष्ट न हो जायें। मैं आपके सामने डा० प्रफुल्लचन्द्र रायका अनुकरणीय उदाहरण रखना चाहता हूँ जिन्होंने गरीबोंको राहत पहुँचानेके लिए अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया है।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-३-१९२५

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुर।

१८४. भाषण : अलवाईके अद्वैताश्रममे

[१८ मार्च, १९२५][१]

आपने मुझे जो सुन्दर मानपत्र दिया है और जिसे एक अन्त्यज छात्रने पढा है, मै उसके लिए आपका आभारी हूँ। खेद है कि मै इसका उत्तर सस्कृतमे नही दे सकता। फिर भी, यदि मै सस्कृतका विद्वान् होता तो भी इसका उत्तर सस्कृतमे न देता क्योकि हम हिन्दू आज सस्कृतके अध्ययनके प्रति उदासीन हो गये है। इसलिए सामान्य वर्गकी जनतासे सस्कृत समझनेकी आशा नही की जा सकती। किन्तु मै यहाँके सस्कृतमय वातावरणकी अनुकूलताका खयाल करके हिन्दीमे बोल सकता तो कदाचित् मै हिन्दीमे बोलता। किन्तु आप उसे भी नही समझ पाते है। यह हमारी दु खद स्थितिका सूचक है। मै चाहता हूँ कि आश्रमके सचालक ऐसी व्यवस्था करे जिससे आश्रमका प्रत्येक छात्र हिन्दी समझ सके। यह जरूरी है कि हम अपनी मर्यादाओको समझ ले। आज हमारे लिए अपने जीवनको इतना सस्कृतमय बना देना कि हम अपना समस्त व्यवहार सस्कृतमे चला सके, अपनी सामर्थ्यसे बाहर है। किन्तु हमारे लिए हिन्दीमे व्यवहार चलाना कठिन नही है।

आपका आदर्श 'एक जाति, एक धर्म और एक ईश्वर' से है। चूँकि मैने इस बारेमे नारायणगुरु स्वामीसे बातचीत की थी और आपने अपने मानपत्रमे इसका उल्लेख सबसे पहले किया है, इसलिए मै भी इसकी चर्चा करनेके लिए बाध्य हूँ। मुझे लगता हे कि इस आदर्शमे उल्लिखित उद्देश्यको प्राप्त करना भी हमारे सामर्थ्यके बाहर है। मै 'एक ईश्वर' के सिद्धान्तको समझ सकता हूँ। हम इस एक ईश्वरकी उपासना करोडो रूपोमे करते है, फिर भी हमारी भक्ति उसतक पहुँचती है। किन्तु मै अनुभव करता हूँ कि जबतक मानव जातिका अस्तित्व रहेगा तबतक विविध मत-मतान्तरो और धर्मोका अस्तित्व भी रहेगा, क्योकि यह मानव-जाति एकमति नही, अनेक मति हे। यदि हम प्रकृतिको देखे तो हमे वह भी बेहद विविधतासे भरी दिखाई देगी। ईश्वर इस विविधताके द्वारा सहज ही बहुरूप बन जाता हे। मुझे लगता है कि मानव-जातिके इतिहासमे ऐसी अवस्था आनेकी आशा रखना प्रकृति-नियमके विरुद्ध ही होगा कि जब यह समस्त जगत एक धर्मावलम्बी या एक मतावलम्बी हो सके। मैने जो भी थोडा-सा श्रवण, मनन और निदिध्यासन किया है उसके फलस्वरूप मेरा मत तो यह बना है कि मानव-जातिका काम, वर्णाश्रम धर्मके बिना चल ही नही सकता। इसलिए मुझे विविध मत-मतान्तर और धर्म भी अनिवार्य लगते है। इस स्थितिमे हमारा लक्ष्य होना चाहिए सहिष्णुता। यदि हम सब एक मत हो जायेगे तो इस उदात्त गुणको अवकाश ही कहाँ मिलेगा? किन्तु सब लोगोका एकमत होना व्यर्थकी आशा है। इसलिए हम एक दूसरेके मतके प्रति सहिष्णु बने, यही एक बात सम्भव

१ १९-३-१९२५ के हिन्दूके अनुसार।

जान पडती हे। मेरे मुसलमान मित्रोका मत है कि मै तो जन्मजात मूर्तिपूजक हूँ और अवतारवाद और पुनर्जन्मम विश्वास करता हूँ, इसलिए मुझे अपने भीतर मूर्ति-पूजा, अवतारवाद और पुनर्जन्मम आस्था न रखनेवाले मुसलमानोके प्रति सहिष्णुताका भाव विकसित करना चाहिए। मै अवतारोमे विश्वास रखता हूँ, अत यह नही मानता कि ईसा ही एकमात्र ईश्वर अथवा ईश्वरका पुत्र है। परन्तु मुझे अपने ईसाई मित्रो-का ईसाको ईश्वर-रूप मानना सहन करना चाहिए और इसी प्रकार मेरे ईसाई और मुसलमान मित्रोको भी मेरा कन्याकुमारी और जगन्नाथको प्रणिपात करना सहन करना चाहिए। एक-दूसरेके धर्मके प्रति सहिष्णुताका यह भाव मै अपने ही इस युगमें आता हुआ देख रहा हूँ, क्योकि अहिंसा धर्मके मूलमे यह भाव निहित ही हे। यही भाव सत्य धर्मके मूलमे भी निहित हे। जैसे ईश्वर सहस्र रूप है, वैसा ही सहस्र रूप सत्य भी है। अत सत्य क्या है, इस सम्बन्धमे मेरा मत ही सत्य हे और अन्य सबका असत्य, मै यह दुराग्रह नही कर सकता। इसीलिए मुझे लगता हे कि एक दूसरेके प्रति सहिष्णुता और प्रेमभाव रखनेका युग समीप आता जाता है। इसलिए यदि मै श्री नारायणगुरु स्वामीसे अपने इस सहिष्णुताके आदर्शको नही मनवा सकता तो उनके उपर्युक्त आदर्शकी अपनी व्याख्या करके ही सन्तोष कर लूँगा।

किन्तु हम अब इस सूक्ष्म विवेचनको छोडकर स्थूल बातोपर आते है। यदि हम अपने सम्मुख 'एक जाति, एक धर्म और एक ईश्वर' का आदर्श नही रख सकते तो अपने देशके कल्याणार्थ एक नित्य नियमित कार्यका आदर्श तो रख ही सकते है। हम खादी पहनना सीखकर देशके अत्यन्त निर्धन वर्गसे एकरूपता कब स्थापित करेगे? हम इस एक मन्त्रकी साधना तो कर ही सकते है कि निर्धनोका और हमारा हित समान होना चाहिए। यदि हम विश्व प्रेमकी बाते करनेके बजाय अहमदाबाद, जापान या इग्लैडका बना कैलिको कपडा पहनना बन्द करके अपने प्रान्तके इन भाइयो और बहनोके द्वारा कात-बुनकर तैयार किया गया कपडा पहनकर उसमे निहित सहज प्रेमको अनुभव कर सकेगे तो इतना पर्याप्त है। मुझे श्री नारायण गुरु स्वामीने विश्वास दिलाया है कि वे स्वय सूत कातेगे और अपने खादी न पहन कर आनेवाले अनुयायियोसे मिलना बन्द कर देगे।

हमे अहिंसा-धर्म और प्रेम-धर्मका पालन एक दूसरे मामलेमे भी करना है। हम अपने भाइयोको अस्पृश्य मानते है और दुरदुराते है, हमे अपने देशको इस पापसे मुक्त करना ही होगा। एक सवर्ण हिन्दू मेरे पास आये थे। उन्होने मुझे बताया कि एजवाहा अपनेसे निम्न वर्गके अन्त्यजोको अस्पृश्य मानते है। यह दोष दूर किया जाना चाहिए। उन्होने मुझे यह भी बताया कि एजवाहा और पुलाया मद्यपान करना त्याग दे तो अस्पृश्यताकी समस्या स्वत ही हल हो जायेगी। मै इस तर्कसे अस्पृश्यता-का समर्थन करना उचित नही मानता। किन्तु हमे उनकी इस सलाहका लाभ उठा-कर जो-कुछ करना चाहिए वह तो करना ही होगा। हम इसका यह उत्तर अवश्य ही नही दे सकते कि सवर्ण हिन्दू भी लुक-छिपकर मद्यपान करते है। हम तो अपने दोष देखे और दूर करे, हमारे लिए इतना पर्याप्त है। आशा है, इस सस्कृतमय वातावरणमे आपने अभी सक्षेपमे जो-कुछ कहा है, उसे अपने हृदयमे बिठा लेगे और

श्री नारायण गुरु स्वामीने धर्मका जो आदर्श सम्मुख रखा है, उसकी ओर द्रुत गतिसे अग्रसर होंगे।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, ५-४-१९२५ (परिशिष्टांक)

१८५ भाषण: त्रिचूरमें[1]

१८ मार्च, १९२५

मुझे इस रमणीय प्रदेशमें और अधिक न ठहर सकनेका दुःख है। अब मुझे इसे छोड़कर जाना पड़ेगा। नहीं जानता फिर अब यहाँ कब आ सकूँगा। मुझे यहाँ जो अगाध प्रेम मिला है उसके बीचसे जाना मेरे लिए कठिन हो रहा है। यहाँ चारों तरफ मैंने जो मनोरम दृश्य देखे हैं उन सबकी याद मेरे मनमें सदा बनी रहेगी, किन्तु इन सभी सुखद अनुभवोंके साथ एक कटु अनुभव भी मेरे मन में खटकता रहेगा। मैंने देखा कि यह सुन्दर प्रदेश अस्पृश्यता और अनुपगम्यताके अभिशापसे ग्रस्त है। किन्तु एक बातकी ओर मेरा ध्यान अभी दिलाया गया है कि इन दो बातोंके अतिरिक्त इस प्रदेशमें "अदृश्यता" का शाप भी है, यहाँ लोगोंको देखनेसे भी पाप लगता है। यदि इसीको हिन्दू धर्म कहते हैं तो मैं आज ही उसे छोड़नेको तैयार हूँ। लेकिन मैं अपनेको सनातन हिन्दू मानता हूँ, और मेरा पालन-पोषण रूढ़िवादी परिवारमें हुआ है, इसलिए मैं जानता हूँ कि आज अस्पृश्यता, अनुपगम्यता तथा अदृश्यताको जिस रूपमें माना जा रहा है वह हिन्दू धर्मका अंग नहीं है। लेकिन मैं यह आशा लेकर इस प्रदेशसे जा रहा हूँ कि वे सभी लोग, जो इस प्रकारकी सभाओंमें शामिल हुए हैं और अभिनन्दन-पत्रोंमें जाति-प्रथाके विरुद्ध व्यक्त की गई भावनाओंसे सहमत हैं, इस कलंकको त्रावणकोर और कोचीनसे दूर करनेका प्रयत्न करेंगे।

मैंने त्रावणकोर और कोचीनमें हजारों बहनोंको देखा है। उन्हें सुन्दर श्वेत वेशभूषामें देखना मेरे लिए एक लुभावना और भव्य दृश्य रहा है। किन्तु मुझे यह देखकर उतना ही दुःख भी हुआ कि वे खद्दरके स्थानपर मिलके बने कपड़े पहनती हैं। यदि आप खद्दर पहनना चाहते हैं तो आप सभी स्त्री-पुरुष बिना किसी कठिनाई और विलम्बके ऐसा कर सकते हैं। यह बहुत दिनोंकी बात नहीं है जबकि मलाबारके प्रत्येक घरमें चरखा होता था। मैं आपसे कहता हूँ कि आप प्रत्येक घरमें फिरसे चरखेकी स्थापना करें। आपके पास अब भी हजारों एजवाहा बुनकर हैं, जो सुन्दर कपड़ा बुनते हैं। आप कताई करें और वे आपके काते सूतसे आपके लिए कपड़ा बुनेंगे। यदि आप केवल इतना ही करें तो आपको मालूम हो जायेगा कि आपने अपने देशके लिए लाखों रुपये बचा लिये हैं। त्रावणकोर और कोचीन दोनोंको मिला-

१ यह भाषण नगरपालिका, नम्बूद्री योग क्षेम सभा तथा त्रिचूरके छात्रों द्वारा तेक्किकाड मैदानमें आयोजित सभामें अभिनन्दन-पत्र भेंट किये जानेपर दिया गया था।

कर यहाँकी जनसख्या लगभग ७० लाख है। यदि मै कातने और बुननेकी लागतका हिसाव लगाऊँ तो यह औसतन प्रति व्यक्ति ३ रुपया आयेगी। इसका मतलव है लगभग २ करोड १० लाख रुपये। जरा सोचिए तो सही कि इस देशके लिए इसका क्या महत्त्व हो सकता हे, और फिर खद्दर पहननेके लिए आपको कोई मेहनत भी नही करनी पडती।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-३-१९२५

१८६. टिप्पणियाँ

वाइकोम सत्याग्रह

मै यहाँ त्रावणकोरके दीवान द्वारा वहाँकी जनसभामे दिये गये भाषणका वाइकोम सत्याग्रह सम्वन्धी पूरा अश[1] देना चाहता हूँ। वाइकोम सत्याग्रहको अधिक स्थान देनेके लिए मुझे पाठकोसे क्षमायाचना करनेकी आवश्यकता नही हे। इससे पाठक गण सत्याग्रहियोके एक दल द्वारा चलाये जा रहे उस वीरतापूर्ण सघर्षको समझने और उसका मूल्याकन करनेमे समर्थ हो जायेगे। साथ ही इससे पाठक उस उद्देश्यके महत्त्वको भी समझ सकेगे जिसके लिए सत्याग्रह चलाया जा रहा है। जहाँतक त्रावणकोर और इसी तरह जहाँतक मलाबारका सम्वन्ध है, वाइकोम सत्याग्रह एक कसौटी है। इस सत्याग्रहका असर त्रावणकोरकी जनसख्याके छठे भागके आम अधिकारोपर पडता है। इसलिए जो लोग अस्पृश्यताके अभिशापको दूर करनेमे रुचि रखते हैं वे दीवानके भाषणको दिलचस्पीके साथ पढे विना नही रह सकते। इस सप्ताह इसपर टिप्पणी करनेका मेरा इरादा नही है, क्योकि इसके प्रकाशनसे पहले ही मुझे उनसे मिलनेका अवसर मिलेगा और साथ ही चूँकि मैंने लिखनेके समयतक अपनी जाँच-पडताल पूरी नही की है, मेरे लिए इसपर कुछ कहना अनुचित होगा। किन्तु मैं दीवान वहादुर टी० राघवय्याके इस मन्तव्यकी पुष्टि किये विना नही रह सकता कि

> **सत्याग्रहका उपयोग शिक्षाके साधनके रूपमें तथा सरकारपर या सरकारके जरिये कट्टरपन्थी हिन्दुओपर दबाव डालनेके साधनके रूपमें करनेमें एक बहुत बड़ा अन्तर है। सत्याग्रहियोंका लक्ष्य यह होना चाहिए कि वे उन कट्टरपन्थियोंका हृदय-परिवर्तन करे जिनके लेखे अस्पृश्यता धर्मका ही एक अंग है।**

मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि वाइकोमके सत्याग्रहका प्रारम्भसे ही यह उद्देश्य रहा है कि उसका शिक्षाके साधनके रूपमे उपयोग किया जाये। उसका उद्देश्य कट्टरपन्थियोपर दवाव डालना कभी नही रहा। इसीलिए कट्टरपन्थियोके विरुद्ध किया जानेवाला उपवास त्याग दिया गया। इस विपयमे सावधानी वरती गई है कि नाके-

१ देखिए परिशिष्ट १।

वन्दियोको न लाँघा जाये जिससे सरकारपर अनुचित दवाव न पडे। इसी कारणसे तो पुलिसको चकमा देनेकी कोशिश नही की गई। यह वात स्वीकार कर ली गई है कि सुधारकोके लिए जो चीज स्पष्टत एक पापपूर्ण अन्धविश्वास है वही कट्टरपन्थियो-के लिए उनके धर्मका एक अग है। इसलिए सत्याग्रहियोकी अपील कट्टरपन्थियोकी विवेक-भावनासे है। किन्तु अनुभव यह है कि जिनकी अपनी सुनिश्चित धारणाएँ है उनकी विवेक-भावनाके प्रति अपील करनेसे उनपर कोई प्रभाव नही पडता। उनकी समझकी आँखे दलीलोसे नही वल्कि सत्याग्रहियोके कष्ट सहनसे खुलती है। सत्याग्रही हृदयके मार्गसे विवेक भावनातक पहुँचनेकी कोशिश करता है। हृदयतक पहुँचनेका तरीका जनमतको जागृत करना है। व्यक्तियोको जनमतकी परवाह होती है, इसलिए जनमत वारूदमे भी अधिक शक्तिशाली होता है। वाइकोम सत्याग्रहने अपने आपको न्यायसगत सावित कर दिखाया है, क्योकि उसने सारे भारतका ध्यान अपने उद्देश्य-की ओर आकर्षित किया है, और उसीके कारण त्रावणकोर विधान सभामे उस याचित सुधारके पक्षमे एक असाधारण वाद-विवादके समय एक प्रस्तावपर विचार किया गया और अन्तमे इसीके कारण त्रावणकोरके दीवानने अपना सुविचारित उत्तर दिया। यदि सत्याग्रही केवल धैर्य धारण करे और कष्ट सहनकी भावनाको वनाये रखे तो मुझे विश्वास है कि विजय निश्चित है।

मनुष्यकी मनुष्यके प्रति वर्वरता

ताड वृक्षोकी इस भूमि (त्रावणकोर) मे, जहाँसे मै इन टिप्पणियोको लिख रहा हूँ, अपने लगातार किये जानेवाले इस दौरेमे मै एक अविस्मरणीय दृश्यका उल्लेख किये विना नही रह सकता, जो मुझे कोचीनमे देखना पडा था। कोचीनमे जापानसे वहुत-सी रिक्शाएँ मँगाई गई है जिनका उपयोग यहाँके समृद्ध नागरिक अपनी सुविधाके लिए करते है। इन रिक्शाओको पशु नही, मनुष्य खीचते है। मेरे पाससे जितने रिक्शाचालक निकले मैने उन सवको वहुत ध्यानसे देखा। मुझे उनमे से किसीकी भी तन्दुरुस्ती ठीक नही लगी। उनकी पिण्डलियाँ या छाती या वाहे ऐसी सुगठित नही थी कि वे इस तेज धूपमे और पसीना-पसीना कर देनेवाली गर्मीमे इस भारी वोझको खीचनेका कठिन काम कर सके। ये रिक्शाएँ केवल एक यात्रीको ले जानेके लिए वनाई जाती है। मेरी रायमे किसी स्वस्थ और पूरे अगवाले मनुष्यके लिए यह वहुत वुरा है कि उसे कोई मनुष्य खीचकर ले जाये, लेकिन जव मैने कुछ रिक्शाओमे दो-दो या तीन-तीन यात्री लदे देखे तो मुझे अपने इन भाइयोपर शर्म आई और वेहद दु ख हुआ। रिक्शा-चालकने एकसे ज्यादा व्यक्तियोको ले जानेसे इनकार नही किया, यह नि सन्देह उसकी गलती थी। लेकिन उन लोगोके लिए क्या कहा जाये जो अपने थोडेसे पैसे वचानेके लिए एक साथ दो या तीन एक ही रिक्शामे चढ जाते है, जव कि रिक्शा-चालक उनमे से एकको भी खीचनेके लायक नही है। मुझे आशा है कि कोचीनमे ऐसा कोई कानून होगा जिसके अनुसार इन रिक्शाओमें एकसे अधिक सवारीका वैठना निषिद्ध है और यदि ऐसा कानून है तो मै आशा करता हूँ कि कृपालु नागरिक उसका पूरा-पूरा पालन करनेका ध्यान रखेगे। यदि वहाँ कोई ऐसा

कानून नही है तो मैं आशा करता हूँ कि ऐसा कानून वना दिया जायेगा जिससे इन रिक्शाओमे एकसे अधिक सवारी न बैठाई जा सकेगी। यदि मेरे हाथमे सत्ता होती तो मै रिक्शाओको वन्द कर देता। लेकिन मै जानता हूँ कि मेरी यह आशा केवल कोरी आशा ही रहेगी। लेकिन क्या यह भी नही हो सकता कि जो लोग इन रिक्शाओको चलाते हैं उनकी कडी डाक्टरी परीक्षा की जाये और यह देखा जाये कि वे इस भारी कामको करनेके योग्य है या नही?

सहभोज

एक सज्जन मुझे लिखते है "क्या विभिन्न जातियोके वच्चोको जो एक ही छात्रावासमे रहते हो, एक ही भोजन-कक्षमे साथ-साथ वैठाकर भोजन कराना चाहिए?" यह प्रश्न ठीक तरहसे नही रखा गया, लेकिन जैसा यह प्रश्न है उसका उत्तर तो यही होगा कि वच्चोको साथ-साथ वैठाकर भोजन नही कराया जा सकता। किन्तु यदि यह कहा जाये कि किसी भी छात्रावासका मालिक ऐसे नियम वना सकता है जिनके अनुसार उसमे रहनेवाले लडकोके लिए एक साथ बैठकर भोजन करना आवश्यक हो, तो यह माँग भी उतनी ही अनुचित होगी जितनी एक साथ वैठकर भोजन करनेकी शर्त किये विना भरती किये गये बच्चोको दूसरी जातियोके वच्चोके साथ वैठकर भोजन करनेके लिए विवश करना। जवतक इसके विरुद्ध कोई नियम नही वनाया जाता तवतक मेरा खयाल है, यही माना जायेगा कि अलग-अलग भोजनकी व्यवस्थाके सामान्य नियम लागू रहेंगे। एक साथ बैठकर भोजन करनेका यह प्रश्न एक टेढा प्रश्न है और मेरी रायमे इस बारेमे कोई निश्चित नियम नही वनाये जा सकते। मुझे स्वय इस वातका विश्वास नही है कि एक साथ बैठकर भोजन करना कोई आवश्यक सुधार है, किन्तु साथ ही मै यह स्वीकार करता हूँ कि इस प्रतिवन्धको बिलकुल तोड देनेकी ओर प्रवृत्ति वढ रही है। मै इस प्रतिबन्धके पक्षमे और विपक्षमे प्रमाण दे सकता हूँ। मै कोई उतावली करना नही चाहता। यदि कोई आदमी किसी दूसरेके साथ वैठकर खाना नही खाता तो मै इसे पाप नही समझता और यदि कोई एक साथ बैठकर खाना खानेका समर्थन करता है और खाना खाता है तो मै इसे भी पाप नही मानता। लेकिन यदि इसमे किसीको आपत्ति हो तो उसकी उपेक्षा करके इस प्रतिबन्धको तोडनेके प्रयत्नका मै विरोध करूँगा। बल्कि मै तो उनके द्वारा उठाई गई आपत्तियोका आदर करूँगा।

अवधके किसान

फैजावादके श्री मणिलाल डाक्टरने मेरे पास प्रकाशनार्थ यह पत्र भेजा है

> मै हजारों किसानोंके प्रार्थना करनेपर गयासे फैजाबाद लाया गया हूँ।
>
> विहारमें — चम्पारनमें मेरा भ्रम टूट चुका है। खेतोमे काम करनेवाले मजदूरोंके लिए भारतमें कोई सुखकी सेज नहीं है। कुलियोको असम, कलकत्ता, कानपुर, अहमदावाद, वर्मा और दूर-दूरके उपनिवेश अपनी ओर खींच सकते हैं, इसमें आश्चर्यकी बात नही है। अवधकी हालत तो और भी खराब है।

यहाँ माँग है कि "हमें विदेशी शासनसे मुक्त होने दो तब मजदूरोंको अपना प्राप्य मिल जायेगा।" मुझे विश्वास नहीं होता कि ब्रिटिश सरकारकी जगह जिन लोगोंके आनेकी सम्भावना है, वे मजदूरों और किसानोंके साथ न्याय करेंगे।

कुछ भी हो, जिस स्थितिमें मैं काम करनेके लिए तैयार हुआ हूँ वह इस प्रकार है मजदूरों और किसानोंको भारतीय पूँजीवादियों या ब्रिटिश सरकारके हाथोंका खिलौना नहीं बनना चाहिए। उन्हें अपने हितोंकी देखभाल स्वयं करनी चाहिए और जहाँतक उनके हितोंमें हो केवल वहींतक उनको 'सहयोग' या 'असहयोग' करना चाहिए। उन लोगोंमें चरखेका प्रचार अवश्य किया जाना चाहिए और यदि वे सालके खाली महीनोंमें मुकदमेबाजी करनेके बजाय अपने कपड़े बनानेके लिए सूत कातें तो ज्यादा अच्छा होगा क्योंकि उनकी आजीविका तो वर्षाके ४ महीनोंपर पूरी तरह निर्भर है। उष्ण कटिबन्धके उपनिवेशोंकी तरह नहीं जहाँ साल-भर वर्षा होती है।

भारत एक अच्छा देश है, लेकिन उसे देशी और विदेशी लोगोंने मिलकर नरक बना दिया है! हे भगवान, यह दशा कबतक रहेगी!

मुझे आशा है कि श्री मणिलाल डाक्टरको गाँवोंमें किसानोंके हर घरमें चरखा पहुँचाने और ऐसा करते हुए उन्हें इन लोगोंकी आर्थिक स्थितिकी पूरी-पूरी जाँच करनेमें सफलता मिलेगी। हमें जरूरत इस बातकी है कि हम भारतके कुछ गाँवोंको चुनकर उनका धैर्यपूर्वक और ठीक-ठीक अध्ययन करें। जैसा कि डाक्टर मैनने[1] दक्षिणके कुछ गाँवोंके सम्बन्धमें कुछ साल पहले किया था और उसकी रिपोर्ट प्रकाशित की थी।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-३-१९२५

१८७. कठिन समस्या

आन्ध्रके एक पत्र-लेखकने अपनी मुश्किलोंका इस प्रकार वर्णन किया है

गत सप्ताहके 'यंग इंडिया'में एक बंगाली सज्जनके अस्पृश्यता-विषयक पत्रके जवाबमें आपने कहा है, "जब हम शूद्रोंके हाथका पानी पी लेते हैं तब हमें अस्पृश्योंके हाथका पानी लेलेनेमें संकोच नहीं होना चाहिए। 'हम' से मतलब सवर्ण हिन्दुओंसे है। मैं उत्तर भारतमें प्रचलित रिवाजोंको नहीं जानता। लेकिन क्या आप यह जानते हैं कि आन्ध्रमें और हिन्दुस्तानके दक्षिणके दूसरे भागोंमें केवल इतना ही नहीं कि ब्राह्मण लोग अब्राह्मणों (दूसरे तीन वर्णों) के हाथका पानी नहीं पीते बल्कि जो लोग अधिक कट्टर हैं वे तो अब्राह्मणोंके साथ एकदम अछूतोंका-सा व्यवहार करते हैं।

1. सर हैरोल्ड एच० मैन, सुप्रसिद्ध रसायनशास्त्री, तथा समाज-सेवी। बम्बई प्रान्तके कृषिसंचालक।

> आपने अक्सर यह बात कही है कि आप जातिगत ऊँच-नीचके मिथ्या भावको दूर करनेके लिए रोटी-व्यवहार रखनेकी आवश्यकताको जरूरी नहीं मानते हैं। एक बार आपने इस बातको साबित करनेके लिए मालवीयजीका उदाहरण भी पेश किया था और कहा था कि परस्पर आदर और सद्भाव होनेपर भी यदि मालवीयजी आपके हाथका पानी या दूसरी कोई चीज पीने या खानेसे इनकार कर दें तो आपके खयालसे यह आपका तिरस्कार न होगा। मैं यह मानता हूँ कि उनके ऐसा करनेके पीछे तिरस्कारकी भावना न होगी, लेकिन क्या आप जानते हैं कि इस प्रान्तके ब्राह्मण, १०० गजके फासलेसे भी यदि कोई अब्राह्मण उनका खाना देख ले तो उसे न खायेंगे -- खाना छू जानेकी बात तो दूर रही। मैं आपको बता देना चाहता हूँ कि राह चलता कोई शूद्र यदि एक-आध शब्द भी कह दे तो भोजन करते हुए ब्राह्मणको उतनेसे ही गुस्सा आ जायेगा और फिर वह दिन-भर कुछ न खायेगा। यदि यह तिरस्कार नहीं तो फिर क्या है? क्या यह ब्राह्मणोंकी अहमन्यता नहीं है? क्या आप इस विषयपर प्रकाश डालेंगे? मैं स्वयं एक ब्राह्मण युवक हूँ और इसलिए अपने अनुभवसे ही ये बातें लिख रहा हूँ।

अस्पृश्यता बहुमुखी दानव है। यह धर्म और नीतिकी दृष्टिमें बड़ा ही गम्भीर प्रश्न है। मेरी दृष्टिमें रोटी व्यवहार एक सामाजिक प्रश्न है। निश्चय ही वर्तमान अस्पृश्यताकी ओटमें मनुष्य-जातिके कुछ लोगोंके प्रति तिरस्कार भाव छिपा हुआ है। यह एक घुन है जो समाजको अन्दर-ही-अन्दरसे खोखला कर रहा है। मनुष्यको अछूत मानना उसके बुनियादी हकोंसे इनकार करना है। रोटी व्यवहार न रखना और अस्पृश्यता एक ही चीज नहीं है। समाज सुधारकोंसे मेरी प्रार्थना है कि वे इन दोनोंको एक-जैसा न मानें। यदि वे ऐसा करेंगे तो वे "अस्पृश्यों और अनुपगम्यों" के हितको हानि पहुँचायेंगे। इस ब्राह्मण पत्र-लेखककी कठिनाई सच्ची कठिनाई है। इससे मालूम होता है कि यह बुराई कितनी गहरी पैठ गई है। ब्राह्मण शब्द तो नम्रता, अहंविस्मृति, त्याग, पवित्रता, साहस, क्षमा, और सत्यज्ञानका पर्यायवाची होना चाहिए, जैसा वह एक समय था। लेकिन आज तो यह पवित्रभूमि ब्राह्मण-अब्राह्मणके आपसी वैमनस्यसे अभिशप्त है। बहुत बातोंमें ब्राह्मणोंने अपनी उस श्रेष्ठताको खो दिया है जिसका उन्होंने दावा कभी नहीं किया था, लेकिन जो उन्हें सेवाके बलपर प्राप्त थी। ब्राह्मण लोग जिसका आज दावा नहीं कर सकते, वे उसी श्रेष्ठताको फिरसे पानेके लिए जी-तोड़ प्रयत्न कर रहे हैं और इससे हिन्दुस्तानके कुछ भागोंमें अब्राह्मणोंको उनके प्रति ईर्ष्या हो गई है। हिन्दू धर्म और देशके सद्भाग्यसे पत्र लेखक-जैसे ब्राह्मण भी हैं जो इस भयंकर कुप्रवृत्तिके खिलाफ अपनी पूरी ताकतके साथ लड़ रहे हैं और अब्राह्मणोंकी निस्वार्थ भाव और लगनसे बराबर सेवा कर रहे हैं। यह उनकी महान् परम्पराके अनुरूप है। जहाँ-कहीं देखें आज ब्राह्मण ही सबसे आगे आकर अस्पृश्यताके विरुद्ध संघर्ष कर रहे हैं और अपने पक्षके समर्थनमें शास्त्रोंकी साक्षी देते हैं। पत्र-लेखकने दक्षिण-

के जिन ब्राह्मणोका जिक्र किया है, उनसे मेरी प्रार्थना है कि वे समयको पहचाने और ऊँच-नीचकी गलत धारणाको मनमे निकाल दे तथा इस वहमको भी छोड दे कि अ-ब्राह्मणको देखने-मात्रसे पाप लगता है और उनकी आवाज सुनकर उनका भोजन अपवित्र हो जाता है। ब्राह्मणोने ही ब्रह्मको सर्वत्र देखनेकी ससारको शिक्षा दी है तो फिर वाहर अपवित्रता कहाँसे आयेगी। वह तो मनका विकार है। आज ब्राह्मण यह सन्देश फिर दोहराये कि अस्पृश्यताका विचार, कुविचार है। उसीने ससारको यह शिक्षा दी है "आत्मैव ह्यात्मनो वन्धुरात्मैव रिपुरात्मन" मनुष्य स्वय ही अपना उद्धारक है और स्वय अपना शत्रु तथा नाशक भी वही है।

इस आन्ध्र पत्र-लेखकने जिन वातोका उल्लेख किया हे, उनसे अब्राह्मणोको क्षुव्व नही होना चाहिए। इम पत्र-लेखक-जैमे कितने ही ब्राह्मण उनके सघर्पमे उसी तरह भाग लेगे जिस तरह वे खुद ले रहे है। कुछ लोगोके पापोके कारण ब्राह्मणोकी सारी जातिको ही नही धिक्कारना चाहिए। मुझे डर है कि यह वृत्ति वढ रही है। अब्राह्मण इतने उदार वने कि अभद्र व्यवहार करनेवालोसे अच्छे व्यवहारकी आशा ही न करे। कोई राहगीर यदि मेरी तरफ नही देखता हे अथवा वह मेरे छूनेमे या मेरी उपस्थितिसे या मेरी आवाजसे अपनेको अपवित्र हुआ समझता है तो इसको मै अपना अपमान नही मानूंगा। इतना ही काफी है कि उसके कहनेसे मै अपने रास्तेसे न हटूं, या वह सुन लेगा इस डरसे वोलना वन्द न करूँ। जो अपनेको उच्च मानता है उसके अज्ञान और अन्धविश्वासपर मुझे दया आ सकती है लेकिन मै उसपर क्रोव और उसका तिरस्कार नही कर सकता। क्योकि यदि मेरा तिरस्कार किया जायेगा तो मुझे भी वुरा लगेगा। सयम खो देनेसे तो अब्राह्मणोका मामला ही विगड जायेगा। सवसे महत्त्वकी वात तो यह है कि कही हदसे आगे वढकर वे अपने ब्राह्मण समर्थकोको दिक्कतमे न डाल दे। ब्राह्मण तो हिन्दू धर्म और मानवताका सवसे अधिक महकता-दमकता प्रसून हे। मै ऐसा एक भी काम न करूँगा जिससे वह मुरझा जाये। मै यह जानता हूँ कि वह अपनी रक्षा करनेमे समर्थ हे। वह पहले भी वहुत-सी आँधियोका सामना कर चुका है। लेकिन अब्राह्मण यह कहनेका मौका न दे कि उन्होने इस प्रसूनकी सुवास और सौन्दर्यको मसल देनेका प्रयत्न किया हे। मै नही चाहता कि ब्राह्मणोको वरवाद करके अब्राह्मण ऊँचे उठे। मै यह जरूर चाहता हूँ कि वे उस ऊँचाईको पहुँच जाये जहाँ अवतक ब्राह्मण पहुँचे हुए थे। ब्राह्मण जन्मसे होते है लेकिन ब्राह्मणत्व जन्मसे नही होता। यह तो वह गुण है जिसको हममे से छोटेसे-छोटा आदमी भी अपनेमे विकसित कर सकता है।

[अग्रेजीसे]

यग इडिया, १९-३-१९२५

१८८. टिप्पणियाँ

"पागल या महात्मा"

एक मित्रने निम्नलिखित उद्धरण "माई मेगजीन" से नकल करके मेरे पास भेजा है। उनका कहना हे कि यह बच्चोके लिए लिखा गया है और उन्होने मुझसे कहा है कि मै इसका उत्तर दूँ

> १९१८में उसकी आत्माको कुछ हो गया, जो उसकी शक्तिके लिए घातक सिद्ध हुआ। वह न तो महात्मा बना और न राजनीतिज्ञ ही; बल्कि वह एक हठधर्मी बन गया . . . ब्रिटेनके वचनमें आस्था खोनेके साथ-साथ गाधीने अपना मानसिक सन्तुलन भी खो दिया है।
>
> यूरोपीय सभ्यताके प्रति अपने रोषके कारण वह सम्पूर्ण विज्ञान और सम्पूर्ण संस्कृतिकी निन्दा करनेकी चरम सीमातक पहुँच गया है। उसके विचारसे न अध्यापक, न डाक्टर तथा न इंजीनियरकी जरूरत है। यह रोगाणु शास्त्री तथा निर्माता दोनोको उपयोगी नहीं मानता हे। किसीको कुछ सीखना नहीं है। आदमीके शरीरको अनन्त कर्मण्यतामें रहना होगा और आत्माको ईश्वरकी आवाज सुननेके सिवा और कुछ नहीं करना होगा।
>
> हम उसकी बात उचित ठहरानेकी कोशिश कर सकते हैं, और कह सकते हैं कि यूरोपीय सभ्यता एक बीमारी है। हम बीमारी और हड़ताल, गन्दी बस्ती और गरीबी, पापाचरण और निर्लज्ज विषयभोगकी आलोचना भले ही कर सकते हैं। लेकिन तथ्य तो यही है कि इंजीनियरोने ही भारतके रेगिस्तानोको सींचा है, डाक्टरोने ही प्लेगसे संघर्ष किया है और स्कूलके अध्यापकोने ही भारतीयोके मस्तिष्कको जागरूक बनाया है। वैज्ञानिकके निरन्तर परिश्रम किये बिना बीमारियोंके कारण भारत नष्ट हो जायेगा और बिना ब्रिटेनकी सुरक्षाके वह जापानका गुलाम बन जायेगा।
>
> गांधीका विश्वास है कि मानवोको अतीतकी उसी स्थितिमें वापस जाना चाहिए जब शान्ति और प्रेमका ही राज्य था। हमारा विश्वास है कि बर्बरता और अकर्मण्यताको छोडकर आत्माको ज्ञान, शक्ति और प्रभुत्वकी ओर आगे बढ़ना चाहिए। गांधीके विचारमें हम गलत रास्तेपर हैं; हम सोचते हैं कि हमारा रास्ता कठिन होते हुए भी वह हमें श्रेष्ठतर जीवनकी ओर ले जाता है। गांधीका विचार है कि मनुष्यको उसकी आत्मा ही ऊँचा उठाती है और हमारा विचार है कि कभी सन्तुष्ट न होनेवाला मस्तिष्क ही सर्वोत्कृष्ट ढंगसे आत्माको ऊँचा उठा सकता है। हम कर्म, ज्ञान और ऐश्वर्यमें विश्वास करते हैं। गांधी अप्रतिरोध, अज्ञान और अकर्मण्यतामें विश्वास करता है।

यूरोपीय सभ्यताके खिलाफ लगाये गये आरोपोमें कुछ दम जरूर है, लेकिन हमें यही नहीं मानना चाहिए कि भारत सौन्दर्य, शान्ति और सौजन्यकी भूमि है और यहाँके लोग ईश्वर प्रेममें मग्न रहते है। भारतमें कुछ ऐसी भयानक चीजें है कि जिनका नाम भी नहीं लेना चाहिए। यहाँ ऐसी गन्दी बस्तियाँ है, जैसी यूरोपमें कहीं नहीं मिलेगी। यदि हमारी सभ्यता आध्यात्मिक जीवनके लिए खतरनाक है तो भारतीय सभ्यता उसके लिए घातक है। आदमीके मस्तिष्कको निद्रालु होने दिया जाये तो वह नष्ट हो जायेगा।

यह सोचना अशिष्टता नहीं है कि यदि गाधी हमारी सभ्यतामें जो बुराइयाँ है उन्हे नहीं बल्कि जो अच्छाइयाँ है उन्हे जाननेकी शिष्टता-मात्र दिखाये तो हम उसकी सहायता कर सकते है।

एक निन्दात्मक लेख

ऐसा माना गया है कि जिस लेखमे ये उद्धरण लिये गये है वे मेरे तथाकथित उद्देश्यके आलोचनात्मक विवेचनके लिए लिखा गया है और उसका शीर्षक हे "एक असाधारण व्यक्ति—क्या वह पागल है या महात्मा?" मैंने अकसर कहा है कि सत्यकी खोजके पीछे पागल हुए व्यक्तिको ही असाधारण कहना ठीक नही हे और मै असाधारण मानव होनेका दावा नही करता। जिस अर्थमे प्रत्येक ईमानदार आदमीको पागल होना चाहिए उस अर्थमें, सचमुच मै पागल हूँ। मैंने महात्माकी पदवीको अस्वीकार किया है, क्योकि मै अपनी सीमाओको और अपूर्णताओको जानता हूँ। मै भारतका सेवक होनेका और उसके जरिये मानवताका सेवक होनेका दावा करता हूँ।

उक्त लेखका लेखक ईमानदार है, लेकिन साथ ही अनभिज्ञ भी है। फिर भी वह ऐसे विश्वासके साथ लिखता है जो आश्चर्यजनक हे। तरस इस बातपर आता है कि आधुनिक साहित्यमे इस प्रकारका लेख लिखना कोई नई बात नही है। यदि समकालीन पुरुषो और महिलाओके बारेमे जो स्पष्ट ही असत्य है उसे जनताके सामने रखा जा सकता हे तो यह सोचकर मन काँप जाता है कि उन व्यक्तियोके मरनेके वर्षों बाद वह असत्य किस प्रकार विकृत हो कर लोगोके सामने आयेगा।

अब हम देखते है कि इस लेखके लेखकके हाथो सत्यकी कितनी छीछालेदर हुई हे। लेखक कहता है, "यूरोपीय सभ्यताके प्रति अपने रोषके कारण वह सम्पूर्ण विज्ञान और उसकी सम्पूर्ण सस्कृतिकी निन्दा करनेकी चरम सीमातक पहुँच गया है।" यद्यपि मैंने नि सन्देह यूरोपीय सभ्यताके खिलाफ जोरदार शब्दोमे कहा और लिखा है, फिर भी मुझे याद नही है कि मैंने कभी "सम्पूर्ण विज्ञान और उसकी सम्पूर्ण सस्कृति"की निन्दा की हो। इस अपमानजनक लेखके खिलाफ मेरा सारा जीवन एक जीवन्त उदाहरण है। इसके बादका प्रत्येक वाक्य सत्यके बिलकुल विपरीत है। लेखकने यह निष्कर्ष कहाँसे निकाला हे, यह मै नही जानता। कि मै स्कूलके अध्यापको और इजीनियरोको बिलकुल समाप्त कर देना चाहता हूँ कोई भी व्यक्ति जिसे मेरे बारेमें जरा भी जानकारी है, जानता हे कि मै शारीरिक अकर्मण्यतासे घृणा करता हूँ।

मैं स्वीकार करता हूँ कि मेरे चारो ओर प्रकृति निरन्तर गतिशील है और उससे सहयोग करनेके लिए मै अपनेको तथा अपने साथी कार्यकर्त्ताओको निरन्तर ऐसे शारीरिक कार्योमे लगाये रखता हूँ, जिन्हे मै लाभदायक मानता हूँ। लेखकका कहना है कि "ब्रिटेनके सरक्षणके विना भारत जापानका गुलाम वन जायेगा।" यदि किसी स्कूलके छात्रसे कहा जाये कि वह वताये कि उक्त वक्तव्यमे गलती कहाँ हे तो वह भी यही कहेगा कि ब्रिटेनकी गुलामी न रहनेपर भारत एक स्वतन्त्र राष्ट्र हो जायेगा और वह जापान तथा अपने दूसरे एशियाई पडोसियोके साथ शान्ति और मेलसे रहेगा। लेखकका विचार है कि भारतीय सभ्यता आध्यात्मिक जीवनके लिए घातक है। जहाँतक मै जानता हूँ किसी यूरोपीय विद्वान्ने ऐसा वक्तव्य नही दिया। चाहे भारतमे ओर कुछ न हो लेकिन उसमे एक वात अवश्य हे। वह आध्यात्मिक ज्ञानका सवसे वडा भण्डार है। वह आध्यात्मिक जीवनका सर्वोत्कृष्ट प्रतिनिधि हे। वह अपने मस्तिष्कको एक क्षणके लिए भी निद्रालु नही होने देता।

"कैसे रहना चाहिए"

'यग इडिया'मे श्री एन्ड्रयूजका लेख पढकर एक व्यक्तिने निम्नलिखित समस्या उन्हे लिखकर भेजी थी और उन्होने उत्तर देनेके लिए कुछ मास पूर्व उसे मुझे दे दिया था।

> मै गाँवमें पैदा हुआ और पाला-पोसा गया। मेरे पिता जब अपने मित्रोके साथ धार्मिक विषयोपर वातचीत करते थे तव वे अक्सर कहा करते थे, 'अहिसा परमोधर्म.'। जैसा कि आप कहते है कि अहिंसा मूल सत्य अद्वैतका ही फलितार्थ है, मै इस सत्यको वास्तविक रूपमे स्वीकार करता हूँ। मै यह भी स्वीकार करता हूँ कि अद्वैत सम्पूर्ण आध्यात्मिक जीवनकी एकतातक ही सीमित नही है। जैसा कि आपका विचार मालूम होता है अद्वैतका मतलव है विश्वकी सभी वस्तुओकी एकता। इसमे किसी तरहका कोई अपवाद नही है।
>
> जिस क्षण आदमी अद्वैतको अपना मार्गदर्शक स्वीकार करनेके योग्य वन जाता है उसी क्षण उसकी प्रगति निश्चित हो जाती है। सभी भेदभाव दूर हो जाने चाहिए। हम सव एक है। यदि मै उसे जो कि स्वय मेरा ही अग है आघात पहुँचाऊँ तो मुझे कैसे उचित ठहराया जा सकता है। किन्तु यहाँ-पर सन्देह सिर उठाने लगता है। क्या अहिंसाको तर्कसिद्ध अन्तिम सीमा तक व्यवहारमें लाया जाये? यदि ऐसा किया जाये तो क्या तव भी वह सद्गुण रहेगी?
>
> मेरे पिता 'अहिंसा परमोधर्म.' कहा करते थे। फिर भी जव हमारे परिवारकी भैंस दूध देनेके लिए सीधे खडे नही रहती थी तव वे डण्डा लेकर उसे खूब पीटते थे। वे ऐसा अपने वच्चोके लिए दूध प्राप्त करनेके लिए करते थे। क्या उनका यह कार्य उचित था?

हिन्दू रामको धर्मावतार कहते हैं। रामने रावणको मारा। क्या यह अनुचित कार्य था? रामने वालिको मारा और वालिके विरोध करनेपर रामने कहा :

> अनुजवधू भगिनी सुतनारी।
> सुन सठ ये कन्या सम चारी॥
> इनहिं कुदृष्टि विलोकहिं जोई।
> तेहि वधे कछु पाप न होई॥[1]

यहाँपर यह सिद्धान्त कि 'मारना, हत्या करना नहीं है' धर्मके साक्षात् अवतारके मुहसे कहलाया गया है।

उसके बाद हम भगवान् कृष्णके समयमें आयें। उस कालकी हमारे पास 'भगवद्गीता' है। आखिर अर्जुनके जो-जो सम्बन्धी हैं, उन्हें वह मारनेके लिए तैयार नहीं। भगवान् कृष्ण उसे लड़ने और मारनेके लिए विवश करते हैं। इसलिए यहाँ अहिंसाका सिद्धान्त ताकमें रख दिया गया है।

इसलिए मनुष्यको यह पूछना ही पड़ता है कि अहिंसापर अमल करनेके लिए क्या कोई सीमा है। एक लड़कीपर बलात्कार हो रहा है। क्या यह उसके लिए सही नहीं है कि वह उस राक्षसको मारकर अपनेको उसके पंजेसे छुड़ा ले? क्या उसे अहिंसाका पालन करना चाहिए?

मछली पकड़ना हिंसा है, सब्जीके रूपमें उपयोग करनेके लिए पौधोंको उखाड़ना हिंसा है। बीमारीके कीटाणुओंको मारनेके लिए कीटाणुनाशक औषधियोंका उपयोग करना हिंसा है, फिर किस प्रकार जीवित रहा जाये?

एक ब्राह्मण

यदि पिता उन भैंसका दूध न निकालते तो दुनियाकी कोई हानि नहीं होती। तुलसीदासने रामके मुँहसे बहुत-सी बातें कहलाई हैं, जो मेरी समझमें नहीं आतीं। वालिका मारा उपाख्यान भी उसी प्रकार है। जो पंक्तियाँ रामके मुँहसे कहलाई गई हैं उनके शाब्दिक अर्थको माननेवाला आदमी फाँसीपर भले ही न चढ़ाया जाये, वह मुसीबतमें तो पड़ ही जायेगा। 'रामायण' या 'महाभारत'में किसी नायकसे जो-कुछ कहलाया गया है मैं उसे शाब्दिक अर्थमें नहीं लेता और न मैं यह समझता कि ये पुस्तकें ऐतिहासिक दस्तावेज हैं। वे विविध ढंगसे हमें मूलभूत सत्यका साक्षात्कार कराती हैं। जैसा इन दो महाकाव्योंमें वर्णित है, मैं यह नहीं मानता कि राम और कृष्ण दोषोंसे परे हैं। वे अपने युगके विचारों और महत्वाकांक्षाओंको व्यक्त करते हैं। केवल एक दोषाक्षम व्यक्ति ही दोषाक्षम व्यक्तियोंका सही चित्रण कर सकता है। इसलिए आदमीको केवल इन महान् रचनाओंमें निहित भावनाको ही पथ-प्रदर्शकके रूपमें ग्रहण करना चाहिए। शब्द तो आदमीका गला घोंट देंगे और सारी

१ किष्किंधा काण्ड, तुलसीकृत **रामचरित मानस**।

प्रगतिको वन्द कर देगे। जहाँतक 'गीता'का सम्बन्ध है मैं इसे ऐतिहासिक विवरण नही मानता। यह आध्यात्मिक सत्यको हृदयमे वैठानेके लिए भौतिक उदाहरणका आश्रय लेती है। यह चचेरे भाइयोके वीच होनेवाली लडाईका नही वल्कि हममें रहनेवाली दो प्रकृतियो — अच्छाई और वुराई — के वीच होनेवाली लडाईका वर्णन हे। मैं 'ब्राह्मण' को सुझाव देता हूँ कि वह उन घटनाओको जो उसने उद्धृत की हैं, एक ओर रख-कर स्वय अहिसाके सिद्धान्तका परीक्षण करे। 'अहिसा परमोधर्म' यह जीवनके सर्वोच्च सत्योमे से है। उसके पालनसे तनिक भी चूकना पतन मानना चाहिए। हो सकता हे यूक्लिड द्वारा परिभापित सीधी लकीरे खीची न जा सके। किन्तु कार्य न होनेसे परि-भापाको नही वदला जा सकता। यदि इस कसौटीपर कसा जाये तो पौधोको उखा-डना भी एक वुराई है। और कौन ऐसा हे जो सुन्दर गुलावके फूलको तोडनेमे पीडा अनुभव नही करता? हम घासपातको उखाडनेमे पीडा महसूस नही करते किन्तु इससे सिद्धान्तपर कोई प्रभाव नही पडता। इससे मालूम होता है कि हम यह नही जानते कि घासपातका प्रकृतिमे क्या स्थान हे। किसी भी तरहका आघात पहुँचाना अहिसाके सिद्धान्तका उल्लघन करना है। अहिसाके पूर्ण उपयोगसे जरूर जीवन असम्भव हो जाता है। तव सत्यको ही कायम रहने दिया जाये, चाहे हम सव न रहे। प्राचीन शिक्षक इस सिद्धान्तको आखिरी तर्कसिद्ध सीमातक ले गये हैं और उन्होने लिखा है कि भौतिक जीवन एक पाप है, एक उलझन है। इसलिए मोक्ष भौतिक जीवनसे ऊपरकी स्थिति है, जिसमे शरीरका अस्तित्व नही होता। उसमे न तो खाना होता है, न पीना और इसीलिए न भैसका दूव निकालना होता है और न घासपातका उखाडना ही। हो सकता है कि हमारे लिए सत्यको ग्रहण करना या उसका मूल्याकन करना कठिन हो। विलकुल उसके अनुसार आचरण करना असम्भव हो सकता है, और है भी। फिर भी मुझे सन्देह नही कि यही सत्य है। हम इसके अनुरूप अपने जीवनको ढालने-का भरसक प्रयत्न करे यही ठीक है। सच्चे ज्ञानका मतलव है, आवी विजय। जिस सीमातक हम इस महान् सिद्धान्तको अपने वास्तविक जीवनमे उतारते हैं उसी सीमा-तक वह जीने और प्रेम करने योग्य वनता है। तव हम शरीरके शाश्वत गुलाम वने रहनेकी अपेक्षा शरीरको ही अपना गुलाम वना कर रखते हैं।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, १९-३-१९२५

१८९. कोहाटकी जॉच[1]

तिरुपुर
१९ मार्च, १९२५

कोहाटकी दुर्घटनाके सम्बन्धमे मै अपना और मौलाना शौकत अलीका वक्तव्य अब प्रकाशित कर पा रहा हूँ। इससे पहले उसे प्रकाशित करना सम्भव नही हुआ, क्योकि मै और मौलाना दोनो सफरमे रहे और हम दोनोकी ठहरनेकी जगह भी हमेशा एक नही होती थी। मै यह निश्चित रूपसे नही कह सकता कि इस अवसर-पर इन वक्तव्योको प्रकाशित करनेसे सिवा इसके कि इससे मेरा वादा पूरा होगा और कोई वडा लाभ होगा या नही। लेकिन इनके प्रकाशनसे एक फायदा जरूर होगा। एक-से ही तथ्योसे हम लोगोने जो अनुमान लगाये है, उनमे भारी भेद है। गवाहोकी गवाहीपर भी किसने कितना विश्वास किया इसमे भी फर्क है। जब हमने इस मतभेदको महसूस किया तो हमे दु ख हुआ और इस मतभेदको जितना भी हो सके दूर करनेकी हम दोनोने कोशिश की। अपने इस मतभेदको हमने हकीम साहब और डा० असारीके सामने भी पेश किया और उनकी सलाह मॉगी। सौभाग्यसे जब हम इसपर विचार कर रहे थे, पण्डित मोतीलालजी भी वहाँ मौजूद थे। इस विचार-विमर्शमे हमे कोई वात ऐसी न मिली जिससे हमारे दृष्टिकोणमे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आता। यह वहस दिल्लीमे हुई थी। हमने फिर यह निश्चय किया कि कुछ घटे हम दोनो साथ-साथ सफर करे और अपने हृदयकी इस दृष्टिसे परीक्षा करे कि हम अपने वक्तव्योको वदल सकते है या नही। कुछ वातोको हम लोगोने वदला जरूर लेकिन हमारे मतभेद दूर नही हो सके। हम लोगोने हकीम साहवके इस सुझाव-पर भी, जिसका कुछ अशमे पण्डित मोतीलालजीने भी समर्थन किया था, विचार किया है कि हमारा वक्तव्य प्रकाशित ही न किया जाये। लेकिन हम, कमसे-कम मै तो इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि जनताको जो मुझे और अली भाइयोको कुछ सार्व-जनिक प्रश्नोपर हमेशा एक मानती थी, यह भी जान लेना चाहिए कि कुछ प्रश्नो-पर हममे भी मतभेद हो सकता है। इस मतभेदके वावजूद हमारे मनमे यह शका नही आई कि हममे से किसीने जानवूझकर पक्षपात किया है या सत्य प्रमाणोको तोड-मरोडकर उससे अपना मतलब निकाला है और न इससे हमारे आपसी प्रेममे कोई फर्क ही आया है। हम यदि खुले तौरसे अपने मतभेदोको स्वीकार कर लेगे तो वह जनताके लिए आपसी सहनशीलताका एक पदार्थपाठ वन सकेगा। मै यह कह देना चाहता हूँ कि इस मतभेदको दूर करनेके प्रयत्नमे मैने या मौलाना साहवने कोई वात उठा नही रखी है। लेकिन अपनी रायको छिपानेकी भी हम लोगोकी कोई

१ इसका मसविदा (एस० एन० १०६७६ आर०) गाधीजीने रावलपिण्डीसे लौटते हुए तैयार किया था। देखिए "कोहाटके हिन्दू", ९-२-१९२५।

मशा नही थी। अपने मूल वक्तव्यमे हमने कुछ रद्दोबदल किया है लेकिन दोनो अपने-अपने निश्चित मतपर कायम ही रहे। किसीको बुरा न मालूम हो इसलिए हम दोनोने कुछ जगहोमे भाषा नरम कर दी है, लेकिन इसके सिवा मूल वक्तव्योमे कोई बडा परिवर्तन नही किया गया है।

मो० क० गाधी

श्री गाधीका वक्तव्य

तिरुपुर
१९ मार्च, १९२५

मौलाना शौकत अली और मैं कोहाटके हिन्दू आश्रितो और कुछ मुसलमानोसे मिलनेके लिए ४ तारीखको रावलपिडी पहुँचे। इन मुसलमानोको मौलानाने पत्र लिख कर निमत्रित किया था और ये लोग रावलपिडी आनेवाले थे। एक दिन बाद लाला लाजपतराय भी आ पहुँचे। लेकिन दुर्भाग्यसे वे बुखार ले कर ही आये थे और जब-तक हम लोग रावलपिडीमे रहे उन्हे विस्तरपर ही रहना पडा।

जिन मुसलमानोकी हमने गवाही ली उनमे मौलवी अहमद गुल और पीर साहब कमाल मुख्य थे। हिन्दुओके पास तो लिखा और छपा हुआ वक्तव्य था। उन्हे उससे अधिक कुछ नही कहना था। कोहाटमे जो मुस्लिम कार्यवाहक समिति काम कर रही है वह न तो गवाही देना चाहती थी और न उसने दी। उसने मौलाना साहबको इस मतलबका तार भेजा

> **हिन्दू और मुसलमानोमें पहले ही समझौता हो गया है। हमारी रायमें इस सवालको फिर छेडना उचित नही है। इसलिए यदि मुसलमान लोग अपने प्रतिनिधि रावलपिंडी न भेजें तो उन्हे आप क्षमा करेगे।**

मौलवी अहमद गुल और जो दूसरे सज्जन उनके साथ रावलपिंडी आये थे वे इस कार्यवाहक समितिके सदस्य थे। लेकिन उन्होने कहा कि वे खिलाफत समितिके सदस्यकी हैसियतसे आये है, कार्यवाहक समितिके सदस्यकी हैसियतसे नही।

ऐसी स्थितिमे मोकेपर जाकर पूरा निरीक्षण किये बिना और अन्य दूसरे गवाहोकी गवाही लिये बिना, छोटी-छोटी तफसीलोके सम्बन्धमे निष्कर्षपर पहुँचना बडा ही मुश्किल था। हम लोग यह नही कर सके, न हम कोहाट ही जा सके। हमारा यह इरादा भी नही था कि छोटी-छोटी बातोपर ध्यान देकर गडे मुर्दे उखाडे। हमारा मकसद तो यही था कि यदि मुमकिन हो तो दोनो दलोमे समझौता करा दे। इसलिए हमने जितना बन सका मुख्य-मुख्य बातोको ही स्पष्ट करनेकी कोशिश की।

मौलाना साहबके साथ इन सब बातोके बारेमे मशविरा किये बिना ही मैं यह लिख रहा हूँ इसलिए इसमे सिर्फ मैने अपना ही निर्णय दिया है। मौलाना ठीक समझे तो इसका समर्थन करे अथवा अपना वक्तव्य अलग प्रकाशित कराये।

९ सितम्बर और उसके बाद जो घटनाएँ हुईं उनके कई कारण थे। उनमे एक यह भी था कि हिन्दू पुरुष और विवाहित स्त्रियोके धर्मान्तर (मेरी रायमे ऐसे

धर्मान्तरको वास्तविक धर्मान्तर नही कह सकते) से हिन्दू लोग बिगडे और उन्होने उसके विरुद्ध जो कार्रवाई की उससे मुसलमान लोग उससे भी ज्यादा बिगड उठे। दूसरा कारण था कोहाटके हिन्दू व्यापारियोको निकाल देनेकी पराचाओ (मुसलमान व्यापारी) की इच्छा।[1] और तीसरा कारण मुसलमानोका इस अफवाहसे उत्तेजित होना था कि सरदार माखनसिहजीके पुत्रने किसी विवाहित मुसलमान लडकीका हरण किया है।[2]

इन सव कारणोका परिणाम यह हुआ कि दोनो कौमोके वीच वडा तनाव आ गया। इस आगके एकदम भडक उठनेका कारण हुई सनातन धर्म सभाके मन्त्री श्री जीवनदासकी मशहूर पत्रिकाकी एक कविता। यह पत्रिका रावलपिंडीमे प्रकाशित होकर कोहाटमे पहुँची। उसमे श्रीकृष्ण और हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यकी तारीफमे कितनी ही कविताएँ और भजन थे। लेकिन उसमे वह अपमानजनक कविता भी थी, जो जानवूझ कर मुसलमानोके दिलोको दुखानेके लिए लिखी गई थी। वह श्री जीवनदासकी लिखी हुई नही थी और न वे उस पत्रिकाको मुसलमानोको चिढानेके लिए कोहाट लाये थे। जैसे ही सनातन धर्म सभाका इस वातकी ओर ध्यान खीचा गया, उसने उस कविताके लिए लिखित माफी माँगी और वची हुई प्रतियोमे से उसे निकलवा दिया। उससे मुसलमानोको सन्तोष हो जाना चाहिए था लेकिन उन्हे सन्तोष नही हुआ। वची हुई प्रतियाँ जो मुसलमानोके मुताविक ५०० से कुछ अधिक और हिन्दुओके मुताविक ९०० से कुछ अधिक थी टाउन हालमे लाई गई और डिप्टी कमिश्नर और मुसलमानोकी एक वडी भीडके सामने सार्वजनिक तौरपर जला दी गईं। पत्रिकाके मुख्य पृष्ठपर श्रीकृष्णकी तस्वीर भी थी। श्री जीवनदासको गिरफ्तार किया गया। यह घटना ३ सितम्वर, १९२४को हुई। ११ तारीखको वे अदालतमे पेश किये जानेवाले थे। हिन्दुओने अदालतसे वाहर ही आपसमे निपटारा करनेकी कोशिश की। इसके लिए पेशावरसे खिलाफतवालोका एक शिष्टमण्डल भी आया था। मुसलमान लोग शरीयतके मुताविक जीवनदासका इन्साफ करना चाहते थे। हिन्दुओने इससे इनकार किया लेकिन खिलाफतवालोके निर्णयको माननेके लिए वे राजी हो गये। लेकिन सव कोशिशे वेकार गई। इसलिए हिन्दुओने श्री जीवनदासको रिहा करनेके लिए अर्जी दी। ८ सितम्वरको जमानत लेकर और इस शर्तपर कि वे कोहाट छोडकर चले जायेगे, उन्हे छोड दिया गया। उन्होने तो कोहाट एकदम छोड दिया। लेकिन मुकदमेसे पहले उनके इस प्रकार छूट जानेके कारण मुसलमानोका क्रोध भडक उठा। ८ सितम्वरकी रातमे उनकी एक सभा हुई जिसमे वडे जोशीले व्याख्यान हुए। उसमे यह निर्णय हुआ कि वे सव मिलकर डिप्टी कमिश्नरके पास जाये और जीवनदासको फिर गिरफ्तार करनेके लिए और सनातन धर्म सभाके कुछ और सदस्योको भी गिरफ्तार करनेकी माँग करे। और डिप्टी कमिश्नरके यह वात न माननेपर हिन्दुओसे पूरा-पूरा वदला लेनेकी धमकी

१ मूल मसविदेमें वाक्य इस प्रकार है "(३) टर्कीके विजय सम्बन्धी समारोहोंमें हिन्दुओंके भाग न लेनेके कारण मुसलमान नाराज थे।"

२ मूल मसविदेमें यह वाक्य भी है "यह मामला झूठा सावित हुआ है।"

भी दी गई थी। आसपासके गाँवोको सन्देश भेजे गये कि लोग सुबह इस सभामे आ कर शामिल हो। पीर कमाल साहबके मुताबिक दूसरे दिन गुस्सेसे भरे हुए कोई दो हजार मुसलमान टाउन हालकी तरफ रवाना हुए। डिप्टी कमिश्नरने उनसे प्रार्थना की कि उनमे से कुछ थोडे लोग आकर उनसे मिले। लेकिन लोग न माने और उन्हे मजबूरन बाहर आकर इतनी बडी भीडका सामना करना पडा। उन्होने उनकी माँग स्वीकार कर ली, और अपनी जीतपर खुश भीड तितर-बितर हो गई।

पिछले हफ्तेमे हिन्दू लोग डरके मारे घबडा गये थे। उन्होने ६ सितम्बरको एक पत्र लिखकर मुसलमानोमे फैले हुए जोशकी डिप्टी कमिश्नरको खबर दी। लेकिन उनकी हिफाजतके लिए डिप्टी कमिश्नरने कोई कदम नही उठाये। ८ तारीखको रातमे जो सभा हुई थी उसकी उन्हे खबर थी। उन्होने ९ तारीखकी सुबह अपना भय अधिकारियोपर प्रकट करनेके लिए, कितने ही तार भेजे और श्री जीवनदासको फिर गिरफ्तार न करनेका अनुरोध किया। अधिकारियोने फिर भी कुछ ध्यान न दिया। टाउन हालसे वापस आकर भीडने क्या किया इसपर बडा ही मतभेद है। मुसलमान कहते है कि हिन्दुओने ही पहले गोली चलाई थी। उससे एक मुसलमान लडका मर गया और दूसरा घायल हो गया। इससे उस भीडका गुस्सा भडक उठा जिसके फलस्वरूप लूटमार और आगजनी आदि वारदाते हुईं। हिन्दुओका कहना है कि मुसलमानोने ही पहले गोली चलाई थी और हिन्दुओने बादमे आत्मरक्षा करनेके लिए गोलियाँ चलाई। वे कहते है कि यह लूटना, आग लगाना इत्यादि कार्रवाइयाँ पहले ही से निश्चित योजनाके अनुसार और इशारेपर की गई थी।

इसका कोई ठीक प्रमाण नही मिलता है इसलिए मै कोई निश्चित निर्णयपर नही पहुँच सका हूँ। मुसलमानोका कहना है कि यदि हिन्दुओने पहले गोली न चलाई होती तो कुछ भी नुकसान न होता। मै इसे नही मान सकता। मेरा खयाल तो यह है कि हिन्दुओने गोलियाँ चलाई होती या न चलाई होती, कुछ नुकसान तो जरूर ही होना था।

किसीने भी पहले गोली क्यो न चलाई हो, मै अच्छी तरह जानता हूँ कि गोली चलनेके पहले ही भीडने सरदार माखनसिहका बाग उजाड दिया था और उनके मकानमे आग लगा दी थी। इसमे भी कोई शक नही कि हिन्दुओने किसी समय गोलियाँ जरूर चलाई थी। जिनसे कुछ मुसलमान मारे गये और कुछ जख्मी हुए थे। मेरा खयाल यह है कि अपनी विजयपर इतराती हुई वह भीड जब चारो तरफ बिखरने लगी तब जाते-जाते उसने हिन्दुओके घरो और दुकानोके सामने कुछ उत्तेजनात्मक प्रदर्शन जरूर ही किये होगे। जैसा कि मै ऊपर कह चुका हूँ हिन्दू घबडा ही रहे थे और उन्हे हरदम उपद्रव मचनेका डर लगा हुआ था। इसलिए कोई आश्चयकी बात नही यदि वे उनके प्रदर्शनोको देखकर काँप उठे हो और उनमे से किसीने गोली चलाकर भीडको भगा देना चाहा हो। लेकिन मुसलमानोका गुस्सा तो इससे जरूर ही बढता, क्योकि उन्हे हिन्दुओकी तरफसे मुकाबलेकी आदत ही न थी। जैसा कि पीर साहब कहते है कि सीमा प्रान्तके मुसलमान अपनेको 'नायक' (रक्षक) और हिन्दुओको

'हमसाया' (रक्षित) मानते है। इसलिए हिन्दुओने जितना अधिक डटकर मुकावला किया उतना ही अधिक उस भीडका क्रोध वढता गया।

इसलिए इस घटनाके लिए कौन कितना जिम्मेदार है इसका निर्णय करते समय मेरी दृष्टिमे पहले गोली किसने चलाई, इस प्रश्नका कुछ अधिक महत्त्व नही है। इसमें शक नही कि यदि हिन्दुओने आत्मरक्षाके लिए भी उनका सामना न किया होता अथवा उन्होने पहले गोली न चलाई होती -- यदि मान लें कि उन्होने चलाई ही थी -- तो मुसलमानोका उपद्रव जल्दी ही शान्त हो गया होता। लेकिन जिन हिन्दुओके पास हथियार थे और जो उनको थोडा-वहुत चलाना भी जानते थे उनसे यह आशा नही की जा सकती थी कि वे मुसलमानोका सामना न करते। मुसलमान गवाहोको इस वातमे भी शका है कि ९ तारीखको कुछ हिन्दू मारे गये या जख्मी हुए। लेकिन मै यह निश्चय मानता हूँ कि उस रोज मुसलमानोके हाथ कुछ हिन्दू जरूर मारे गये या जख्मी हुए थे। हताहतोकी कुल सख्या देना मुश्किल है। मुझे यह लिखते समय खुशी है कि कुछ मुसलमानोने हिन्दुओके दोस्त वनकर उन्हे आश्रय दिया था।

यह तो आमतौरपर स्वीकार कर लिया गया है कि १० सितम्वरको मुसलमानो के क्रोधकी कुछ सीमा न थी। नि सन्देह हिन्दुओके हाथो वहुतसे मुसलमानोके मारे जानेकी अफवाहे वढा-चढाकर फैलाई गई और आसपासके कवाइली मुसलमान दीवारें तोडकर या दूसरे रास्तोसे कोहाटमे घुस आये। सारे शहरमें कत्ल और लूट शुरू हो गई, पुलिसने भी इसमे खुलकर हिस्सा लिया और अधिकारी जो इसे रोक सकते थे, खडे तमाशा देखते रहे। अगर हिन्दुओको उनके घरोसे हटाकर छावनीमें न पहुँचाया गया होता तो उनमें से शायद ही कोई वच पाता। इस वातपर भी वडा जोर दिया जा रहा है कि मुसलमानोका भी नुकसान हुआ है। कवाइली मुसलमानोपर तो जव एक मर-तवा लूटनेका भूत सवार हो गया फिर उन्होने यह नही देखा कि यह हिन्दूका माल है या मुसलमानका। हालाँकि यह वात सच है, फिर भी मै यह नही मानता कि हिन्दुओके मुकावलेमें मुसलमानोको कुछ भी नुकसान पहुँचा है। और मै सादर यह भी कहना चाहता हूँ कि खिलाफतके कुछ स्वयसेवकोने, जिनका कर्त्तव्य ऐसे समयमें हिन्दुओको अपना भाई मानकर उनकी रक्षा करना था, अपना फर्ज अदा नही किया। वे सिर्फ लूटमें ही शामिल नही हुए वल्कि लोगोको शुरूमे उकसानेमें भी उन्होने हिस्सा लिया।

लेकिन सवसे ज्यादा वुरी वात तो अभी कहनी वाकी ही है। झगडेके दिनोमें मन्दिरोको भी, जिनमें एक गुरुद्वारा भी शामिल था, नुकसान पहुँचाया गया था और मूर्तियाँ तोड दी गई थी। वहुतसे लोगोने जवरन धर्मपरिवर्तन या कहनेको धर्मपरि-वर्तन किया अर्थात् अपनी जान वचानेके लिए इस्लाम अपनानेका दिखावा किया।[1] दो

1 २६-३-१९२५ के **यंग इंडिया**में प्रकाशित वक्तव्यमें शौकत अलीने लिखा था जहाँतक दंगोंके दिनोंमें हुए इन तथाकथित वलात् धर्मपरिवर्तनोंका सवाल है, मेरी स्थिति स्पष्ट है। मुझे वलात् धर्मपरिवर्तनसे सख्त नफरत है। ऐसा करना इस्लामकी भावनाके खिलाफ है। यदि ऐसा किया गया हो तो वह घोर निन्दाके लायक है, पर सचमुचमें ऐसा हुआ है इसका मुझे विश्वास नहीं है।

हिन्दुओको सिर्फ इसलिए बुरी तरहसे कत्ल किया गया था क्योकि उन्होंने (एकने निश्चय ही, दूसरेने अनुमानत) इस्लामको स्वीकार करनेसे इनकार कर दिया था। ऐसे धर्मपरिवर्तनका एक मुसलमान गवाह इस प्रकार वर्णन करता है·

> हिन्दू मुसलमानोके पास आये और उनसे अपनी शिखा काट लेने और जनेऊ तोड़ डालनेके लिए कहा। अथवा जिन मुसलमानोंके पास आश्रय पानेके लिए गये उन्होने उनसे कहा, "यदि तुम अपनेको मुसलमान घोषित कर दो और हिन्दू धर्मके चिह्न निकाल फेंको तो तुम्हारी रक्षा की जायेगी।"

यदि हिन्दुओके कहनेपर विश्वास किया जाये तो सत्य इससे भी अधिक कटु है। इन मुसलमान मित्रके साथ न्याय करनेके लिए मुझे यहाँ यह कह देना चाहिए कि उन्होने ऐसे कार्योको धर्मपरिवर्तन नही माना। इसके बारेमे कमसे-कम इतना तो कहा ही जा सकता है कि यह हिन्दू-मुसलमान दोनोके लिए शर्मकी बात है। मुसलमानोने यदि उन नामर्द हिन्दुओको हिम्मत दी होती और हिन्दू बने रहने और हिन्दू धर्मके चिह्न रखनेपर भी उनकी रक्षा की होती तभी मैं उन्हे काबिले-तारीफ मानता। हिन्दुओने भी यदि सिर्फ जिन्दा रहनेके लिए, चाहे वह ऊपरी दिखावेके लिए ही क्यो न हो, अपने धर्मका परित्याग करनेके बजाय मर जाना अधिक पसन्द किया होता तो सिर्फ हिन्दू ही नही सारी मानव-जातिकी भावी पीढियाँ उन्हे वीर और शहीद मानकर पूजती और उनपर गर्व करती।

मुझे अब सरकारके बारेमे भी कुछ कहना है। स्थानीय अधिकारियोने अपने कर्त्तव्यके प्रति शर्मनाक उदासीनता, अयोग्यता और कमजोरी दिखाई है।

उस अपमानजनक कविताके निकाल देनेके बाद पत्रिकाका जलाना भूल थी।

श्री जीवनदासको गिरफ्तार कर लेना ठीक था लेकिन उन्हे ११ तारीखके पहले छोड़ देना एक भूल थी।

छोड देनेके बाद उन्हे फिर गिरफ्तार करना एक जुर्म था।

६ सितम्बरको और फिर ९ तारीखको हिन्दुओकी इस चेतावनीपर कि उनकी जान व माल खतरेमे है, ध्यान न देना जुर्म था।

आखिरकार जब दगा हुआ उस समय उनकी रक्षा न करना भी बडा जुर्म था।

आश्रितोको वहाँसे हटानेके बाद उनके खानेकी व्यवस्था न करना और रावलपिडी पहुँचानेके बाद उनको अपने ही भरोसे छोड देना एक अमानवीय काम था।

भारत सरकारने इस मामलेकी, और इससे सम्बन्धित अधिकारियोकी जाँचके लिए एक निष्पक्ष आयोग नियुक्त न करके अपने कर्त्तव्यके प्रति बडी लापरवाही दिखाई है।

अब रही भविष्यकी बात। मुझे अफसोस है कि वह भी कुछ अधिक उजला नही दिखाई देता। यह बडे दु खकी बात है कि मुस्लिम कार्यवाहक समितिने हमारी जाँचके समय अपना प्रतिनिधि नही भेजा। जिस समझौतेका जिक्र किया गया है वह समझौता दोनो कौमोके खिलाफ मुकदमे चलानेकी धमकी देकर करवाया गया है। यह समझमे नही आता कि ऐसी शक्तिशाली सरकारने ऐसा समझौता करानेमे भाग

कैसे लिया। यदि इस डरसे कि कवाइली मुसलमान फिर दगा मचायेंगे, सरकार मुकदमे नही चलाना चाहती थी तो उसे यह वात साफ-साफ कह देनी चाहिए थी और मुकदमे चलानेसे इनकार कर देना था, और वादमें सरकारको दोनो कौमोमें वाइज्जत सुलह व मैत्री करानेका प्रयत्न करना चाहिए था।

यह समझौता मूलत गलत है, क्योकि इसमें खोये और नष्ट मालकी क्षतिपूर्तिका कोई उल्लेख नही है। और यह इसलिए भी वुरा है कि इसके अनुसार श्री जीवनदासपर, जिन्हे वेकार ही वलिका वकरा वनाया जा रहा है, अभी मुकदमा चलाया जानेवाला है।

इसलिए यदि सचमुच दिलोसे द्वेप दूर करना है और सच्ची सुलह करनी है तो यह आवश्यक है कि मुसलमान हिन्दू आश्रितोको वुलाकर उन्हे उनकी हिफाजतका यकीन दिलाये और उनके मन्दिरो और गुरुद्वारोको फिरसे वनानेमें मदद करनेका वचन दे।

लेकिन सवसे वडा आश्वासन तो उन्हे इस वातका देना होगा कि जवरदस्ती किसीका भी धर्म परिवर्तन नही किया जायेगा और दोनो कौमे ऐसे धर्म परिवर्तनोको कवूल भी न करेगी।। सिर्फ वही धर्म परिवर्तन माना जायेगा जिसके साक्षी दोनो कौमके अगुआ रहेगे और जिसका धर्म परिवर्तन हो रहा हो वह यह अच्छी तरह समझता हो कि वह क्या कर रहा है। मै स्वय तो यही पसन्द करूँगा कि धर्मान्तर और शुद्धि सव, पूरी तरह वन्द कर दिये जाये। हर व्यक्तिका धर्म उसका अपना निजी मामला है। वालिग स्त्री या पुरुष जव या जितनी दफा चाहे अपना धर्म वदल सकते हैं। किन्तु यदि मेरा वस चलता तो मै मनुष्यके अपने व्यक्तिगत आचरणसे दूसरेको प्रभावित करनेके अलावा और सभी प्रकारके प्रचार-कार्य वन्द कर देता। सीमा प्रान्तमें किसी सच्चे धर्म परिवर्तनके होनेकी वात भी मै सोच नही सकता। हिन्दू लोग वहाँ सिर्फ ऐसे व्यापारकी गरजसे रहते है, सख्यामे वहुत ही कम और हथियार चलाना न आने पर भी वे ऐसे वहुसख्यक लोगोके साथ रहते है जो शारीरिक शक्तिमे और हथियार चलानेमे उनसे कही वढकर हैं। ऐसी परिस्थितिमे दुर्वल हृदयके मनुष्यका सासारिक लाभके लिए इस्लामको अगीकार करनेके लोभसे वचना कठिन होता है।

ऐसा आश्वासन उनकी ओरसे मिले या न मिले, हृदयका सच्चा परिवर्तन सम्भव हो या न हो, मुझे तो जो रास्ता अपनाना चाहिए वह स्पष्ट दिखाई दे रहा है। जवतक यह विदेशी सत्ता कायम रहेगी उसके साथ कही-न-कही सम्वन्ध रखना भी अनिवार्य होगा। लेकिन जहाँ मुमकिन हो वहाँ उससे सव प्रकारके ऐच्छिक सम्वन्ध तोड देने चाहिए, यही एक रास्ता है जिससे कि हम लोग आजादी महसूस कर सकते है और उसका विकास कर सकते है। जव एक वहुत वडी सख्यामे लोग आजादी महसूस करने लगेगे, हम स्वराज्यके लिए तैयार हो जायेगे। स्वराज्यके सन्दर्भमे ही मै ऐसे सवालोके जवाव सुझा सकता हूँ। इसलिए मै भविष्य के राष्ट्रीय लाभकी वेदीपर वर्तमान व्यक्तिगत लाभोका वलिदान करना चाहूँगा। यदि मुसलमान हिन्दुओकी ओर मित्रताका हाथ वढानेसे इनकार करे और कोहाटके हिन्दुओको सव-कुछ खोना पडे,

तो भी मैं यही कहूँगा कि जवतक उनमें और मुसलमानोमे पूरी तरह सुलह नही हो जाती और वे यह महसूस नही करते कि वे ब्रिटिश सगीनोकी मददके बिना उनके साथ चैनसे रह सकेंगे तबतक, उन्हे कोहाट वापस लौटनेका विचार भी न करना चाहिए। लेकिन मैं यह जानता हूँ कि यह तो आदर्शकी बात है और यह सम्भव नही कि हिन्दू उसके अनुसार चल सकें। फिर भी मैं कोई दूसरी सलाह नही दे सकता। मैं तो सिर्फ यही एक व्यावहारिक सलाह दे सकता हूँ। यदि वे इसकी कद्र नही कर सकते तो उन्हे अपने ही मनके अनुसार काम करना चाहिए। वे ही अपनी शक्तिको अच्छी तरह जानते है। वे देशभक्त या देशसेवककी हैसियतसे तो कोहाट नही गये थे और न ही वे अब देशसेवककी हैसियतसे वहाँ वापस लौटना चाहते है। वे तो अपने माल-पर फिर कब्जा पानेके लिए ही वहाँ जाना चाहते है। इसलिए वे वही काम करेंगे जो उन्हे लाभदायी और सम्भव मालूम होगा। उन्हे सिर्फ दो बाते एक साथ नही करनी चाहिए, अर्थात् एक ओर मेरी सलाहपर अमल करनेकी कोशिश करना और साथ-ही-साथ सरकारसे सुलहकी शर्तोंके लिए लिखा-पढी करना। मैं जानता हूँ कि वे असहयोगी नही है। उन्होने अंग्रेजोकी मददपर हमेशा भरोसा रखा है। मै तो उन्हे परिणाम-भर बता सकता हूँ। आगे अपना रास्ता वे खुद पसन्द करे।

मुसलमानोके लिए भी मेरी सलाह वैसी ही सीधी-सादी है।

जबरदस्ती किये गये या ऐसे ही नाम-मात्रके धर्म परिवर्तनसे हिन्दुओको उद्वेग हो या कुछ हिन्दू अपनी खोई हुई पत्नियोको वापस लानेका प्रयत्न करे तो इसमें मुसलमानोके नाराज होनेकी कोई बात नही है।

मै यह जानता हूँ कि सरदार माखनसिंहका पुत्र अदालतसे अपहरणके दोषसे बरी होकर छूट गया तो भी बहुतसे मुसलमान उसे दोषी ही मानते है। लेकिन यदि यह मान भी ले कि उसने यह कसूर किया था तो भी उस एकके दोषके कारण सारी जातिसे ऐसा भयकर बदला लेना उचित नही है।

उस पत्रिकाको, जिसमे वह अपमान करनेवाली कविता छपी थी, मँगाना, खासकर कोहाट जैसी जगहमें बेशक बुरा था। परन्तु सनातन धर्म सभाने लिखित माफी माँगकर उसका काफी प्रायश्चित्त कर लिया था। मुसलमानोको उससे सन्तोष न हुआ और उन्होने उस पत्रिकाको श्रीकृष्णकी तस्वीरके साथ ही जला देनेपर सभाको मजबूर किया। उसके बाद उन्होने जो-कुछ भी हिन्दुओके साथ किया वह जरूरतसे कही ज्यादा था। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, मै यह निश्चित रूपसे नही कह सकता कि पहले गोली किसने चलाई थी। लेकिन यदि यह मान भी ले कि हिन्दुओने ही पहले गोली चलाई थी तो उन्होने डरकर, घबराकर आत्मरक्षाके लिए ही गोली चलाई थी। इसलिए यद्यपि इसे उचित नही कह सकते तो भी वह क्षम्य तो अवश्य था। उसके बाद जो ज्यादतियाँ की गई, सब अनुचित और अनावश्यक थी। मुसलमानोका स्पष्ट कर्त्तव्य है कि इस स्थितिमें वे जितना बन पडे हिन्दुओके नुकसानकी भरपाई करे। मुसलमानोको हिन्दुओसे अपनी हिफाजतके लिए सरकारी मददकी कोई जरूरत नही है। यदि हिन्दू चाहे तो भी उन्हे कुछ नुकसान नही पहुँचा सकते। लेकिन यहाँ भी मेरी

स्थिति मजबूत नही है। मुझे अभीतक कोहाटके उन मुसलमानोमे परिचय करनेका भी सौभाग्य प्राप्त नही हुआ है जो मुसलमान-जनताके सलाहकार है। इसलिए इस बातका तो वे अच्छी तरह निर्णय कर सकेंगे कि मुसलमानोके लिए और हिन्दुस्तानके लिए क्या हितकर होगा।

यदि दोनो पक्ष सरकारका बीच-बचाव चाहते है तो मेरी सेवाएँ व्यर्थ है, क्योकि मुझे ऐसे बीच-बचावकी आवश्यकतामे विश्वास ही नही है, और सरकारके साथ समझौतेके लिए जो बातचीत की जायेगी उसमे मै कोई भी भाग न ले सकूँगा। यह सच है कि मुसलमानोसे अच्छा व्यवहार पाने और मांगनेका हिन्दुओको हक है। लेकिन दोनो कौमोको सरकारसे बचकर रहना चाहिए क्योकि उसकी तो नीति ही यही है कि एकको दूसरेसे भिडा दे। सीमाप्रान्तकी हुकूमत खुदमुख्तार है। अधिकारीकी इच्छा ही वहाँ कानून है। इस स्थितिमे दोनो कौमोको मिलकर प्रतिनिधि सरकार बनानेका प्रयत्न करना चाहिए और उसमे अपना गौरव मानना चाहिए। लेकिन जबतक दोनो कौमें एक-दूसरेपर विश्वास नही करती और प्रतिनिधि सरकार बनानेकी इच्छा दोनोकी महत्वाकाक्षा नही बन जाती तबतक यह सम्भव नही है।

[अंग्रेजीसे]

यंग इंडिया, २६-३-१९२५

१९०. भाषण : पोदनूरमें[1]

१९ मार्च, १९२५

महात्माजीने उत्तर देते हुए कहा कि मुझे यह सुनकर प्रसन्नता हुई है कि यहाँ सभी जातियोके लोग परस्पर शान्ति और सद्भावसे रहते हैं और यहाँ अस्पृश्यता या हिन्दुओं और मुसलमानोका कोई झगडा नहीं है। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप देशके लिए प्रतिदिन आधा घंटा चरखा कातें और खद्दर पहनें। यदि मौलाना शौकत अली मेरे साथ होते तो वे यह सुनकर खुश होते कि मजदूरोंमें कोई साम्प्रदायिक द्वेष नहीं है। अन्तमें मैं आप लोगोको यही सलाह देता हूँ कि आप शराबकी लत छोड दें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-३-१९२५

१ यह भाषण पोदनूरके रेलवे मजदूरो द्वारा दिये गये अभिनन्दन पत्रके उत्तरमें दिया गया था।

१९१. भाषण : तिरुपुरमें[1]

१९ मार्च, १९२५

भाइयो,

इन सब अभिनन्दन-पत्रोके लिए मै आप सबका बहुत आभार मानता हूँ। मुझे दु ख है कि मुसलमान मित्रो द्वारा दिये गये अन्तिम अभिनन्दन-पत्रका अनुवाद न होनेके कारण मै उसे समझ नही सका। किन्तु मेरा खयाल है कि इसमे भी अधिकतर वही भावनाएँ होगी जो कि अन्य अभिनन्दन-पत्रोमे व्यक्त की गई है। मेरे साथ आपको भी इस बातसे दु ख होगा कि इस बार दोनो अलीभाई या उनमे से कोई एक भी मेरे साथ नही है। दिल्ली और बम्बईमे पहलेसे ही व्यस्त रहनेके कारण दोनोमे से एक भी मेरे साथ नही आ सका।

नगरपालिकाके अभिनन्दन-पत्रमे इस नगरको खद्दरकी राजधानी और मुझे खद्दर-का बादशाह कहा गया है। ऐसा कहकर आपने मेरी बहुत बडी प्रशसा की है। मुझे लगता है कि यदि कोई स्थान खद्दरकी राजधानीके योग्य है तो वह तिरुपुर ही हो सकता है। किन्तु मै अपनी सीमाओको भलीभाँति जानता हूँ। मै अनुभव करता हूँ कि मै खद्दरका कितना गरीब बादशाह हूँ। (हँसी)। क्योकि इस खद्दरकी राजधानीमे १० हजारसे अधिक चरखे और हजारसे अधिक करघे नही है। बिक्री भी तीन, साढे तीन लाखके आसपास है। जब आपको मालूम होगा कि खद्दरके बादशाहकी क्या महत्वा-काक्षा है तब आप समझ सकेंगे कि इन आँकडोको सुनकर वह कितनी हीनताका अनुभव करता है। मुझे बताया गया है कि यद्यपि इस जिलेमे प्रतिवर्ष ५० लाख रुपयेकी कीमतका खद्दर बनाया जा सकता है फिर भी यहाँ उसकी १० प्रतिशत-से अधिककी खपत नही हो सकती। जब मै इस सभामे अपने चारो ओर आप सब लोगोको, स्त्री और पुरुषो दोनोको देखता हूँ तो मुझे लगता है कि उक्त कथन कितना सत्य है।

जब मै इस नगरके कुछ खद्दर भडारोको देखनेके लिए गया तब खादी मण्डल भडारने मुझे नमूनोकी यह पुस्तक दी। मै नही जानता कि आप सबको यह बात मालूम है या नही कि तिरुपुरमे आपको कितना अच्छा खद्दर मिल सकता है। यहाँ आपके पास कपडेमे विभिन्न प्रकारके चौखानोके नमूने है। कपडोमे रग भी कई मिलते है। यहाँ मिलनेवाला सभी प्रकारका खद्दर इतना मोटा भी नही होता। इस जलवायुमे बारीक सूत भी बुना जा सकता है। यहाँ ऐसी महिलाएँ है जो बीस अकका या उससे भी महीन सूत कात सकती है। आपको यहाँ कई प्रकारकी छीट और उजला सफेद खद्दर भी मिल सकता है। जो लोग किनारी पसन्द करते है उन्हे कई किस्मकी किनारियाँ मिल सकती है। इसमे कोई सन्देह नही कि खद्दरका मूल्य प्रति गज मैनचेस्टर, जापान या

१. नगरपालिका द्वारा दिये गये अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें।

बम्बई तथा अहमदाबादके कपडेसे अधिक है। किन्तु जब आप इस खद्दरकी मजबूतीकी तुलना मैंचेस्टरके मालसे करेंगे, तब मुझे विश्वास है कि आपको यह खद्दर उस कपडेसे सस्ता लगेगा। मैं आपको सदा खद्दर पहननेवालोंका सामान्य अनुभव बता सकता हूँ। उनकी रुचि इतनी सुसंस्कृत और इतनी सादी हो गई है कि जबसे उन्होंने खद्दर पहनना शुरू किया है, थोडे कम कपडोंसे ही उनका काम चलने लगा है। इसके अतिरिक्त क्या इस जिलेमें रहनेवाले गरीब स्त्री-पुरुषोंके प्रति आपका यह कर्त्तव्य नही है कि आप उनका कपडा मैंचेस्टर या जापान और यहाँतक कि बम्बई और अहमदाबादके बने कपडेसे कुछ महँगा होनेपर भी खरीदें। आपको विदेशी मालके बजाय अपने देशका माल खरीदना चाहिए। यद्यपि सभी आपके पडोसी है, फिर भी यदि आप दूरस्थ पंजाबके लिए, चाहे पंजाब भारतमे ही क्यो न हो अपने निकटतम पडोसियोकी उपेक्षा करते है तो आपको देशसे सच्चा प्रेम नही है। यदि आप सब अपने-अपने पडोसियोका ध्यान रखें तो आप पायेंगे कि देशकी सभी समस्याएँ और कठिनाइयाँ दूर हो गई है। आप सब इस बातसे सहमत है कि खद्दरका यह सन्देश महान् सन्देश है। इसलिए मैं आप सबसे कहता हूँ कि यदि आपने अभीतक खद्दरको न अपनाया हो तो आप उसे तुरन्त अपना लें। मैं आपसे यह भी कहता हूँ कि आप प्रत्येक घरमें चरखेकी पुन स्थापना करें, क्योंकि जबतक सैकडो, हजारो लोग स्वेच्छया कताईको नही अपनाते तबतक उतना महीन सूत नही काता जा सकता और न ही खद्दरको उतना सस्ता बनाया जा सकता है जितना कि हम चाहते है। चरखेकी अनन्त सम्भावनाओके कारण ही मैंने प्रत्येक कांग्रेसीको यह सुझाव देनेका साहस किया कि मताधिकारमें कताई-परीक्षाको शामिल किया जाये। आज बहुत-सी बहनोको चरखा कातते देखकर मुझे बडी प्रसन्नता हुई।

मैं आदर्श गांवके बुनकरोंके पास भी गया। यदि आपने उन महिलाओको चरखा कातते देखा हो और यदि आपने देखा हो कि चरखा उनके घरोंमें कैसी खुशी ले आया है तो आप खद्दरके सन्देशपर जल्दी ही अमल करने लगेंगे। मुझे मालूम हुआ कि आपका सरक्षण न मिलनेके कारण ही खादी मण्डल हजारो कातनेवाली महिलाओको काम देनेमें असमर्थ है। नगरपालिकाके सदस्यो और यहाँके नागरिकोसे मेरा अनुरोध है कि वे इन केन्द्रोमें जायें और जो-कुछ मैं कह रहा हूँ उसकी सचाई स्वय देखें।

मुझे इस बातकी खुशी हुई है कि आप लोगोके सामने अस्पृश्यता या अनुपगम्यताकी समस्या नही है, जैसे कि दक्षिणके कुछ भागोमें है। किन्तु मुझे आशा है कि यदि अब भी कही अस्पृश्यता या अनुपम्यताकी समस्या है तो उसे नि सकोच दूर कर दिया जायेगा। मुझे इस बातका पूरा विश्वास है कि वह हिन्दू धर्मका अग नही है।

तीसरी जिस बातका उल्लेख मैंने बार-बार किया है, वह है हिन्दू-मुस्लिम एकता। जबतक हम अपने देशकी सभी जातियोमें एकता स्थापित करनेके महत्त्वको नही समझते तबतक विकासकी उस चरम स्थितितक नही पहुँच सकते जहाँतक पहुँचनेकी हममें सामर्थ्य है। चौथी बात है, नशाबन्दी। त्रावणकोर और कोचीनकी सम्पूर्ण यात्रामें मुझसे जोर देकर यह कहा गया कि शराबकी लतसे बहुतसे घर बरबाद होते जा रहे

है। यदि यहाँ की जनताको शराबकी लत है तो मैं आशा करता हूँ कि आप उस समस्याको भी हल करेंगे। (जोरोंसे और देरतक हर्षध्वनि)।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २०-३-१९२५

१९२. भाषण: पुदुपालयमकी ग्रामीण सभामें

२१ मार्च, १९२५

भाइयो,

जहाँ पहुँचना मुश्किल है ऐसे स्थानपर पहुँचकर और आप सबसे मिलकर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई। जब मेरी नजर आपके वाद्योंपर पड़ी तब मेरी इच्छा हुई कि मैं स्वाभाविक रूपमें गाये हुए आपके कुछ गीत सुनूं। मैं जानता हूँ कि राष्ट्रीय जीवनके विकासमें गीतोंका महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। गीत-गीतमें अन्तर होता है और विभिन्न प्रकारके गीतोंमें जमीन-आसमानका फर्क होता है। ऐसे भी गीत होते हैं जो मनुष्यको ऊँचा उठाते हैं और ऐसे भी गीत होते हैं जो उसे गिराते हैं। जब आपको सचमुचमें कोई अच्छा गीत मिले, जो भक्ति और ओजसे भरपूर हो, तब वह आपको ऊँचा उठाता है। हमारे कुछ प्राचीन गीत इसी प्रकारके हैं। वे सारे भारतमें पाये जाते हैं। प्राचीन कालमें हमारे अपने तारवाले वाद्य होते थे, किन्तु आज हारमोनियमने उन श्रेष्ठ वाद्योंका स्थान ग्रहण कर लिया है। मैं चाहता हूँ कि हम उन तारवाले वाद्योंको फिरसे अपना लें। उनका संगीत अधिक मधुर होता है। हारमोनियमकी अपेक्षा मुझे उनके संगीतसे अधिक शान्ति प्राप्त होती है।

जब मैं आप सबपर और यहाँ उपस्थित सभी बहनोंपर निगाह डालता हूँ तब मैं देखता हूँ कि आपमें से अधिकांश विदेशी वस्त्र पहने हुए हैं। मैं चाहूँगा कि आप थोड़ी देरके लिए इस बातपर विचार करें कि विदेशी वस्त्र पहननेका मतलब क्या है। एक सौ वर्षोंसे अधिक समय नहीं बीता जबकि आपके पूर्वजों — स्त्री और पुरुषों — के घरोंमें चरखे थे। जिस प्रकार आज हर घरमें रसोईघर और चूल्हा रहता है उसी प्रकार हर घरमें चरखा भी होता था, जिसपर महिलाएँ सूत काता करती थीं। जो सूत हमारी बहनें कातती थीं उसे गाँवके बुनकर बुनते थे और वही कपड़ा हम पहनते थे। मान लीजिए हममें से प्रत्येक साल-भरके लिए अपने कपड़ोंपर ८ रु० खर्च करता है और इस गाँवकी आबादी ५,००० है तो हम प्रतिवर्ष ४०,००० रु० की बचत करते। आज हम अपने गाँवसे करीब ४०,००० रु० मैनचेस्टर, जापान या बम्बईको भेज रहे हैं। किसी भी हालतमें यह ठीक नहीं है।

प्राचीन कालमें हम वही काम करते थे जो उचित थे, जिनसे देशका हित होता था और भुखमरी दूर रहती थी। अब हम ऐसा नहीं करते हैं, इसलिए जब यहाँ दुर्भिक्ष पड़ता है तब हमारी समझमें नहीं आता कि हमें क्या करना चाहिए। इसलिए मैं

चाहूँगा कि आपमें से हर व्यक्ति आजसे हाथकती और हाथबुनी खादीके सिवा और कुछ न पहननेका वादा करे।

मैं आपसे यह भी कहना चाहूँगा कि जिनके घरमें अभीतक चरखा न आया हो वे चरखा खरीदें। चरखा हमारे लिए कामधेनु होगा। यह जानकर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि हमारे मित्र रत्नसभापति गोडरने[1] अपने परिवारके लिए एक नही बल्कि कई चरखे लिए हैं। मुझे जब कल उनके घर जानेका अवसर मिला तब घरकी महिलाओको कातते हुए देखना मुझे बहुत अच्छा लगा। श्री गोडरने उनके द्वारा कते हुए सूतसे बुने कपडे पहन रखे थे। वे और उनका सारा परिवार सिर्फ खद्दरके ही कपडे पहने हुए था। ईश्वरकी कृपासे उनके पास खूब धन है, लेकिन उन्होने धनके लिए चरखे और खद्दरको नही अपनाया बल्कि देशके लिए, धर्मके लिए ऐसा किया है, किन्तु हम लोगोको, जो गरीब है, खुद अपने लिए ऐसा करना चाहिए।

मुझे एक सज्जनने कुछ रुपये दिये है कि मैं भोजन खरीदकर गरीबोमें बाँटूं। गरीबसे-गरीब व्यक्तिमे भी अपनी रोटी कमानेकी सामर्थ्य है। मै मुफ्त रोटी देनेमे विश्वास नही करता। और न मैं इस बातपर विश्वास करता हूँ कि जो लोग कमा सकते है उन्हे वस्त्र दिये जाये। मेरे विचारमें जब धनी लोग बिना सोचे-समझे गरीबोको पैसा देते है तब वे गलत ढगसे दान करते है। ऐसा वे केवल अपने सन्तोषके लिए करते है। इस प्रकारका दान तो केवल उन्ही लोगोको देना चाहिए जो कि अपग है, लगडे या अन्धे है या किसी और कारणसे काम करनेमे असमर्थ है।

इसलिए श्रीयुत च० राजगोपालाचारीके साथ विचार-विमर्श करके मै इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि इस धनसे कपडा खरीदकर उसे इस गाँवके या यहाँ बैठे हुए गरीबोको बाजार भावसे कुछ सस्ते दामोपर बेच दिया जाये। साधारण तौरपर मुझे स्वीकार करना होगा कि प्रति गजके हिसाबसे देखा जाये तो बाजारमें बेचे जानेवाले कपडेसे खद्दर महँगा है, और बहुतसे गरीब लोगोने मुझसे कहा है कि यदि खद्दर बाजारके कपडेके भावसे बेचा जाये तो वे खुशी-खुशी उसे पहनेंगे। इसलिए मै आपके सामने यह प्रस्ताव रखता हूँ कि आप लोगोमे जो सचमुच गरीब है और जो अधिक पैसा खर्च नही कर सकते वे अपना नाम दर्ज करायें और वादा करे कि इसके बाद वे केवल खद्दर पहनेंगे। ऐसे लोगोको बाजारके मुकाबले सस्ते दामोपर खद्दर मुहैया किया जायेगा। और यदि यहाँ गरीबोकी सख्या इतनी ज्यादा है कि सबको इस दानसे खद्दर मुहैया न किया जा सके तो मै अधिक दाम प्राप्त करनेका प्रबन्ध करूँगा, बशर्ते कि आप लोग जो यहाँ मौजूद है, केवल खद्दर पहननेका वादा करें। इस अच्छी वस्तुका हमने त्याग कर दिया था। इसे हमें अब फिरसे अपनाना चाहिए। अब मै आपसे उस बुरी बातके बारेमे कहना चाहता हूँ जिसे छोडनेसे हम इनकार करते है।

वह बुरी चीज है अस्पृश्यता। यह एक घोर अभिशाप है जो हमारे देश और हमारे धर्मका सर्वनाश कर रहा है। सनातनी हिन्दू होनेके नाते मै आपको बता सकता हूँ कि जिस रूपमें अस्पृश्यताका व्यवहार आज हो रहा है, हमारा धर्म उसकी पुष्टि

१. पुदुपालयमके जमींदार।

नहीं करता। यदि 'भगवद्गीता' हमारा धर्मग्रन्थ है तो मेरे विचारमें अस्पृश्यता एक पाप है। वर्ण केवल चार होते है, पाँच नही। इसमे कोई शक नही कि स्मृतियोमे कुछ ऐसे श्लोक है जिनमे अस्पृश्यताका उल्लेख है, लेकिन आज-जैसी अस्पृश्यताका नही। वह अस्पृश्यता कुछ व्यवसायो और कुछ अवस्थाओ — अस्थायी अवस्थाओ — तक सीमित है। हो सकता है कि मासिक धर्मके दिनोमे अपनी माँ, वहन अथवा पत्नीको मै न छुऊँ। जब मेरी माँ अपने दूसरे छोटे वच्चोको साफ करती हे तब वह स्नान कर लेने तक अछूत रहती है। इसी प्रकार वह भगी भी जो मेरी टट्टी साफ करता है तबतक अछूत है जबतक कि वह टट्टी साफ करनेके बाद अपनेको साफ नही कर लेता। अस्पृश्यता एक अस्थायी अवस्था है जिसका व्यवहार केवल ऐसे व्यवसायोके साथ किया जाता है जो गन्दे कामसे सम्बद्ध है। किन्तु किसी व्यक्तिको इसलिए अछूत समझना पाप और अपराध है कि वह किसी विशेष जातिमे पैदा हुआ है। आखिर शास्त्र भी हमे क्या आदेश देते है, यही कि किसी खास आदमीको छूनेपर हम स्नान करे। किन्तु आजकी अस्पृश्यताने हिन्दू जातिके एक पचमाशको नीच बना दिया है। इसके कारण हम अपने देशके लोगोको दलित कर रहे है। इससे ऊँच-नीचके भेदभाववाली व्यवस्था खडी हो गई है। तथाकथित सवर्ण हिन्दू, ब्राह्मण और अब्राह्मण अछूतो और पचम जातिके साथ घृणा और अवज्ञाका व्यवहार करते है। वे उन्हे बुरा और गन्दा खाना देकर पाप करते है। वे सार्वजनिक सडकोका उपयोग करनसे उन्हे मना करके पाप करते है। वे हर तरहसे उनका अपमान करते है। मै यह कहनेका साहस करता हूँ कि अपने वन्धुओ-के साथ इस प्रकारके अमानवीय व्यवहार करनेका हमारे शास्त्रोने हमे कोई अधिकार नही दिया है। यह कहना कि सवर्ण हिन्दुओको साँप या विच्छू द्वारा काटे गये अछूत-की सेवा नही करनी चाहिए, मानवीयता और उस धर्म, अहिंसा धर्मके विरुद्ध है जिसके अनुयायी होनेका हम दम भरते है। इसके विपरीत मेरा धर्म, हिन्दू धर्म, मुझे सिखाता है कि यदि मेरे अपने पुत्र और एक अछूतको साँपने काटा हो और मेरे सामने सवाल यह हो कि दोनोमे से पहले किसको वचाना चाहिए तो उस स्थितिमे अपने पुत्रको छोड-कर अछूतको वचाना ही मेरा परम कर्त्तव्य है। यदि मै उस अछूत बालकको छोड दूँगा तो ईश्वर मुझे कभी क्षमा नही करेगा। सम्पूर्ण रूपसे आत्मोत्सर्गके सिवा आत्मज्ञानका और कोई मार्ग नही है। इसलिए मै आपसे कहता हूँ कि यह वुरी प्रथा कितने वर्षोसे चली आ रही है इसका खयाल किये विना आप इसे छोड दे।

तीसरी चीज है मद्यपानका अभिशाप। मै जानता हूँ कि इस दक्षिणी प्रदेशमे वहुतसे लोगोको मद्यपानकी लत है। मै आशा करता हूँ कि इस सभामे वैठा प्रत्येक व्यक्ति, जिसे मद्यपानकी लत है, उसे एकदम छोड देगा। मद्यपानसे मनुष्य अपनेको भूल जाता हे। वह कुछ समयके लिए मानव नही रहता। वह जानवरसे भी वदतर हो जाता है। उसका अपनी जुवान और अपने हाथ-पैरोपर कोई नियन्त्रण नही रहता। मद्यपानसे कभी किसीका भला नही होता। इसलिए मुझे आशा है कि आप मद्यपानकी इस बुराईके विरुद्ध अपनी पूरी शक्ति लगाकर सघर्ष करेगे।

अस्पृश्यता तथा मद्यपानकी वीमारीके विरुद्ध सघर्ष करने एव लोगोमें खद्दर तथा चरखेको लोकप्रिय वनानेके लिए श्रीयुत च० राजगोपालाचारी आपके वीच डटकर काम कर रहे है।

उनके पास सहायताके लिए ऐसे नवयुवक है जो योग्य, बुद्धिमान तथा आत्मत्यागी है। श्री गोडरने अपना सुन्दर वाग उनको दे दिया है। वे सभी अपने लाभप्रद व्यवसायो को छोडकर, आपके वीच, आपकी सेवा करने आये है। इन कुछ ही महीनोके अन्दर सैकडो चरखे पुन स्थापित किये जा चुके है। प्रति सप्ताह सैकडो महिलाओको रुई दी जा रही है। वे उसका सूत कातकर प्रति सप्ताह लाती है और सूतका मूल्य ले जाती है। इसी सूतको वुना जाता है, और उससे वुनी खादी आप खरीद सकते है। किन्तु जवतक आप उनसे सहयोग नही करते तवतक वे और उनके थोडेसे कार्यकर्त्ता आपकी ज्यादा सहायता नही कर सकते। यह एक गरीव जिला है जिसमे गत तीन चार सालसे दुर्भिक्ष पड रहा है और मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि दुर्भिक्षके विरुद्ध कोई भी उपाय इतना प्रभावशाली नही, जितना चरखा है।

और आप कई प्रकारसे उन्हे सहायता दे सकते है। आपमे से जो अच्छे खाते-पीते लोग है लेकिन ज्यादा पैसा नही दे सकते, वे प्रतिदिन आधा घटा कताई कर सकते है। आप यहाँ आश्रममे कातना और धुनना सीखे और प्रति सप्ताह रुई लाकर उसका सूत कातकर उसे मुफ्त आश्रमको दे। इससे श्रीयुत राजगोपालाचारी खादीको आजकी अपेक्षा सस्ते दामोपर वेच सकेगे। आपमे से जो लोग रुई नही दे सकते, वे नकद दे। आश्रम सार्वजनिक सम्पत्ति है। आप जव चाहे तव उसे जाकर देख सकते है। वह आपके पासमें है। जवतक आप समझते है कि आश्रमके कार्यकलाप उपयोगी है और आपके जिलेके लिए लाभकारी है तवतक हर प्रकारसे उसकी सहायता करना आपका परम कर्त्तव्य है।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-३-१९२५

१९३. भाषण : पुदुपालयमके आश्रममे[1]

२१ मार्च, १९२५

मैने अभिनन्दन-पत्रका अनुवाद वडे ध्यानसे पढा है। स्वभावत आप लोगोसे मेरी पूरी सहानुभूति है। मै सवसे पहले कोकोनाडामे, इन लोगोके[2] सम्पर्कमे आया और तवसे उनकी समस्याओ और कठिनाइयोमे मेरी गहरी दिलचस्पी हो गई है। धर्मके नामपर जो-कुछ हम रोजाना कर रहे है, वह एक अत्यन्त भयकर चीज है। मै इससे सहमत हूँ कि जवतक ऐसे आदमी है जो स्त्रियोके सतीत्वके साथ खिलवाड करते है और जवतक ऐसी स्त्रियाँ है जो पैसेके लिए अपना सतीत्व वेचनेको तैयार रहती है तवतक इस समस्याको सुलझाना वडा कठिन है। जवतक ऐसे लोग रहेगे तवतक यह चलता ही

१ कोयम्बटूर जिला सेनगुन्थर महाजन सगमके सदस्यो द्वारा दिये गये अभिनन्दन पत्रके उत्तरमें।

२ अभिप्राय देवदासियोंसे है।

रहेगा। किन्तु एक काम हम कर सकते हैं, वह यह कि इस पेशेको गर्हित घोषित कर दे और उसकी जो प्रतिष्ठा इस समय है उसे नष्ट कर दे। उसकी प्रतिष्ठाके प्रत्येक चिह्नको मिटा दे। ऐसा करनेके लिए हम इस प्रथाकी घोर निन्दा करे।

मै आपको सलाह दूंगा कि आप ऐसे प्रत्येक परिवारकी गणना करे जहाँ एक लडकीको वेश्यावृत्तिके लिए अलग रखनेकी प्रथा है। हमे लोगोको समझाना होगा कि उनका ऐसा करना सर्वथा अनुचित है। दूसरी वात यह है कि हमे इन अभागी स्त्रियोके मामलेको अपने हाथमे लेना होगा और उनके लिए उपयुक्त रोजगार ढूंढने होगे। मैने बगालमे बारीसालकी ऐसी स्त्रियोके साथ इस मामलेपर दो घटेसे अधिक समयतक बातचीत की थी। इन स्त्रियोकी काफी आय है। हम उनसे यह वादा नही कर सकते कि दूसरे किसी रोजगारसे उनको उतनी ही आय होगी, जितनी कि इस पापपूर्ण पेशेसे होती है। यदि वे अपना जीवन सुधार लेती है तो उन्हे उतनी आयकी आवश्यकता भी नही होगी। कताईसे उनकी आजीविका नही चल सकती। वे इसे केवल मन बहलाने और आत्मत्यागकी भावनासे अपनाये। कताई करनेका मेरा यह सुझाव केवल उनकी आत्मशुद्धिके लिए है। किन्तु उनके लिए धन्धे भी ढूंढे जा सकते है, जिन्हे कि वे आसानीसे सीखकर अपना काम चला सकती है। वे धन्धे है, बुनाई, सिलाई या खद्दरपर किया जानेवाला कशीदेका काम। कुछ पारसी महिलाएँ रग-विरगी सुन्दर बुनाईका काम कर रही है। गोटेका काम, कशीदाकारी और ऐसी दूसरी दस्तकारियाँ भी है, जिनसे वे सरलतापूर्वक १२ आनेसे लेकर डेढ रुपयातक प्रतिदिन कमा सकती है। देवदासियोकी सख्या ज्यादा नही है। इस कारण उनके लिए ५-६ दस्तकारियोको ढूंढ निकालना कठिन नही होगा। हमे ऐसे स्त्री-पुरुषो, विशेषकर स्त्रियोकी आवश्यकता है जो इन दस्तकारियोमे प्रशिक्षित हो और जो पवित्र जीवन बिताती हो, वे अपनी इन पतित बहनोके सुधारका कार्य अपने हाथमे ले। आप ऐसे ही उद्देश्यसे स्थापित अन्य सस्थाओका अध्ययन करके उनका अनुकरण भी कर सकते है। उद्धारके इस पुण्य कार्यके लिए एक जानकारकी आवश्यकता है जो इसके लिए अपना जीवन अर्पित कर सके।

भाषण समाप्त होनेपर जब महात्माजीने लोगोंसे प्रार्थना की तब सार्वजनिक कार्यके लिए उन्हे लक्ष्मण मुदलियरने कानोके बुन्दे और अँगूठी दी। उन्होने उन्हे श्री लक्ष्मण मुदलियरको वापस देकर कहा कि देवदासियोके सुधारके लिए हम जो कोष इकट्ठा करनेवाले है उसके लिए इसे प्रथम दान माना जाये।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-३-१९२५

१९४. भाषण : तिरुच्चंगोड़में[1]

२१ मार्च, १९२५

भाइयो,

मैं इन अभिनन्दन-पत्रोंके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं देखता हूँ कि खद्दरसे सम्बन्धित मेरी गतिविधियोंका आप समर्थन करते हैं। जितना अधिक चरखे और खादीकी सम्भावनाओंके बारेमें मैं विचार करता हूँ उतना ही मेरा विश्वास दृढ़ होता जाता है कि हमारे देशमें फैले व्यापक संकटका यही एकमात्र हल है। और जैसा कि मैंने आज सुबह देखा, बूढ़े स्त्री-पुरुष एकके-बाद-एक आश्रममें आ रहे थे और बूढ़ी स्त्रियोंको रुई दी जा रही थी, यह देखकर मुझे लगा कि उनके समान लाखों अन्य स्त्री-पुरुषोंके लिए चरखेके सिवा कोई दूसरा पेशा न तो है, न हो सकता है। यदि हम अपने जीवनको सुखी मानकर उससे संतुष्ट न रहते और भारतकी कंगालीका ध्यान करते तो हमारे लिए जीवन असह्य भार हो जाता। यदि कल्पना करें कि भारतकी आबादीके दसवें भागको केवल एक जून खाना नसीब होता है, वह सूखी रोटी और चुटकी-भर नमकपर जी रहा है, तब आप भारतमें फैली गरीबीका कुछ अन्दाज लगा सकेंगे। यह तसवीर, मेरी कोरी कल्पना नहीं है, बल्कि यह उन तथ्योंपर आधारित है जिन्हें भारतके पितामह दादाभाई नौरोजीने अपने अटूट प्रयत्नोंसे एकत्र किया था। उन्होंने ही सबसे पहले अंग्रेजी प्रशासकों द्वारा तैयार किये गये आँकड़े हमारे सामने रखे और इन आँकड़ोंसे हमें यह अहसास कराया कि भारत दिन-प्रतिदिन दरिद्र होता जा रहा है।

अब इस कष्टको दूर करनेका उपाय हमारे अपने हाथमें है। इस कष्टके लिए हम जिम्मेवार हैं। हमने वह कपड़ा पहनना छोड़ दिया जिसे हमारी अपनी लाखों बहनों द्वारा काते गये सूतसे हमारे अपने बुनकर तैयार करते थे। हमने मैनचेस्टर, और जापान और हालमें ही बम्बई तथा अहमदाबादकी मिलोंके बने कपड़ोंको अपनाया है। और ऐसा करते हुए हमने इस बातकी जरा भी परवाह नहीं की कि हमारे अपने पड़ोसियोंपर क्या गुजरी है। हमने यह भी नहीं सोचा कि मिलके बने कपड़ेके उपयोगसे चाहे वह मिल कहींकी भी क्यों न हो, हम गरीब खेतिहर मजदूरोंको उस आयसे वंचित कर रहे हैं जो उन्हें अपने खाली समयमें काम करके मिलती थी। अपने इस अपराधके लिए हमें भारी हर्जाना भरना पड़ा है और अब भी हम उसे भर रहे हैं। किन्तु खुशकिस्मतीसे अब भी ज्यादा देर नहीं हुई। यदि हम अपने देशके स्त्री-पुरुषोंके कष्टोंके प्रति क्रूर और उदासीन होना छोड़ दें तो हम आज ही इसका उपाय कर सकते हैं और अपने देशसे गरीबी दूर कर सकते हैं।

१ तिरुच्चंगोड़ संघ, स्थानीय कांग्रेस कमेटी तथा वलीवा स्वराज्य संगमके सदस्यों द्वारा दिये गये अभिनन्दन-पत्रोंके उत्तरमें। डा० टी० एस० एस० राजनूने भाषणका अनुवाद किया।

मै दक्षिणके खद्दर केन्द्रोमे गया हूँ। वहाँ मुझे बताया गया है कि यदि इस प्रदेशके लोग खद्दर खरीदकर लोगोको सरक्षण दे या कहिये कि उनके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करे तो इन हजारो स्त्री और पुरुषोको दो चार पैसे और मिल जायेगे। हर जगह वे लोग शिकायत करते है कि उन्हे वहुत-सी स्त्रियोको जो रुई लेनेके लिए उनके पास आती है, खाली हाथ वापस भेजना पडता है, क्योकि वे उनके बनाये सारे खद्दरको बेच नही पाते। इसलिए मै प्रत्येक स्त्री और पुरुषसे जो मेरी पुकार सुन सकते है, अपील करता हूँ कि आप जो मिलके कपडे पहने हुए है, उन्हे जल्दी त्याग दे और खद्दर पहने। उससे आपकी गरीब बहनो और भाइयोको सहायता मिलेगी। आप अपनी मातृभूमिकी यही सबसे बडी सेवा कर सकते है। यदि आप केवल यहाँ बननेवाले खद्दरको पहनकर सन्तुष्ट रहेगे तो आप देशकी सेवा करेगे। महीन खद्दर बनाने लायक महीन सूत प्राप्त करनेके लिए तथा उस खद्दरको गरीब और अमीर सभीको मैनचेस्टरके कपडोके बराबर ही सस्ते भावोपर मुहैया करनेके लिए मै आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप प्रतिदिन आधा घटा कातनेमे लगाये। यही उस समस्याका जिसमे हमारे देशके सर्वश्रेष्ठ लोग एक अरसेसे उलझे हुए है, बहुत ही सरल और निश्चित समाधान है। अब आप यह शिकायत नही कर सकते कि कताई सीखने और खद्दर प्राप्त करनेके लिए कोई साधन नही है। आप लोगोके बीच एक आश्रम स्थापित कर दिया गया है। इस आश्रममे रहकर देशके कुछ सर्वोत्कृष्ट प्रतिभाशाली नवयुवक अपनी सारी शक्ति खद्दरके प्रचार और प्रसारमे लगा रहे है। आपको केवल वहाँ जाना होगा। आप वहाँ मुफ्त कताई सीख सकते है, अच्छे चरखे उपलब्ध कर सकते है और अपनी इच्छानुसार खद्दर आपको मिल सकता है।

यदि हमे अपने धर्मकी सेवा करनी है तो अस्पृश्यताका प्रश्न भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। मै तो बार-बार कहूँगा कि अस्पृश्यता एक अभिशाप है। आज हम इसपर जिस रूपमे अमल करते है, उसके लिए हमारे शास्त्रोमे कोई प्रमाण नही है। यह मानवीयता और विवेक दोनोके प्रतिकूल है। ऐसा करना ईश्वरके अस्तित्वसे इनकार करना है। ईश्वरने मनुष्यको इसलिए नही बनाया कि वह दूसरे मनुष्यको अछूत समझे। मै आपको किसी भी व्यक्तिके साथ खानेके लिए नही कहता। मै आपसे यह नही कहता कि आप अपनी लडकियोका विवाह ऐसे व्यक्तियोसे करे जो आपको इस योग्य नही लगते। किन्तु मै आपसे यह जरूर कहूँगा कि आप किसी व्यक्तिके साथ केवल इसलिए अस्पृश्यताका व्यवहार न करे कि वह किसी एक खास जातिमे पैदा हुआ है। क्या ईश्वर किसीके मस्तकपर 'नीच' लिखकर जन्म देता है? जिस दिन वह ऐसा करेगा उस दिन वह ईश्वर नही रहेगा। आप आश्रममे जाये और आप उन पचम बालकोको देखे जिनका कि पालन-पोषण वहाँ हुआ है और मै दावेके साथ कहता हूँ कि आप पचम बालको और ब्राह्मण या सवर्ण हिन्दू बालकोके बीच भेद नही कर सकेगे। थोडी-सी करुणा, थोडी-सी मानवता और प्रेमके स्पर्शने उन्हे आश्रममे रहनेवाले प्रत्येक व्यक्ति-जैसा बना दिया है। वे उसी प्रकार प्रतिभाशाली, शिष्ट और प्रिय है, जैसा कि आश्रममे रहनेवाला कोई दूसरा व्यक्ति। वे उसी प्रकार साफ-

सुधरे रहते हैं और ईश्वरसे डरते हैं जैसे कि आश्रमका सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण। इसलिए हम समयपर सचेत हों और अपना अहंकार छोड़कर हिन्दू धर्मको उस विपत्तिसे बचायें जो कि उसके सिरपर मँडरा रही है।

मद्यपान एक और समस्या है जिसे तुरन्त सुलझाना होगा। यह बहुतसे घरोंको नष्ट कर रही है और मुझे आशा है कि आपमें जो लोग देशभक्त हैं, जो अपनेको देशका सेवक समझते हैं, वे उन लोगोंके बीच जायेंगे जिन्हें कि पीनेकी लत है और उन्हें राहपर लानेकी कोशिश करेंगे। आप श्री रत्नसभापति गौंडरके शानदार उदाहरणका अनुसरण करें और मद्यपानके अभिशापसे नष्ट हो रहे देशको बचानेके लिए, वे जो-कुछ कर रहे हैं वही आप भी करें। जब कुछ ही मास पूर्व उनके चचेरे भाईने मेरे सामने यह पवित्र प्रतिज्ञा की कि वे शराबबन्दी तथा खद्दरके कार्यमें जी-जानसे लग जायेंगे तो मुझे बहुत सतोष हुआ और खुशी भी। उनकी पत्नीको चरखा कातते हुए देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। उन्हें पैसेकी आवश्यकता नहीं है। वे अपने देशके लिए कताई करती हैं। मैं प्रत्येक स्त्री-पुरुषसे आजसे ही कातना शुरू कर देनेके लिए कहता हूँ।

मैं आपके अभिनन्दन-पत्रके लिए एक बार फिर आपको धन्यवाद देता हूँ और आशा करता हूँ कि जो-कुछ मैंने कहनेका साहस किया है आप उसे याद रखेंगे और इन तीन कामोंको करनेके लिए भरसक प्रयत्न करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-३-१९२५

१९५. जहाँ मद्यपान हो, वहाँ क्या करें?

एक भाईने दुःखित हृदयसे यह पूछा है[1]

उद्यान-भोजमें शराब दी गई थी, इसकी जानकारी मुझे नहीं है। किन्तु यदि मुझे यह पता चल जाता कि उसमें शराब दी जायेगी, तो भी मैं उसमें जाता। जिस दिन यह उद्यान-भोज था उसी दिन मुख्य दावत भी थी। इस दावतमें शराब दी गई थी, फिर भी मैं उसमें बैठा रहा। मुझे तो इन दोनोंमें से कुछ खाना ही नहीं था। दावतमें मेरे एक ओर एक महिला बैठी थी और दूसरी ओर एक भद्रपुरुष। महिलाके शराब लेनेके बाद बोतल मेरे पास आती और मैं उसे उक्त सज्जनको दे देता। उन सज्जनको बोतल देना मेरा कर्त्तव्य था। मैंने सोच-समझकर इस कर्त्तव्य-का पालन किया। यह हो सकता था कि मैं इस बोतलको नहीं छू सकता, यों कहकर मैं उसे आगे न बढ़ाता, किन्तु ऐसा करना मैंने अनुचित समझा।

१ पत्र यहाँ उद्धृत नहीं किया गया है। इसमें राजकोटके ठाकुर साहब द्वारा १७ फरवरीको दिये गये एक उद्यान-भोजका जिक्र किया गया है। इसमें अतिथियोंको शराब दी गई थी।

अब प्रश्न दो रहते हैं। जहाँ शराब दी जाती हो, क्या वहाँ मेरे-जैसे लोगोंका जाना उचित है? यदि जाना उचित भी हो तो क्या शराबकी बोतलको एकसे लेकर दूसरेको देना उचित है? जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, दोनो प्रश्नोका मेरा उत्तर यह है कि मेरे लिए वहाँ जाना और शराबकी बोतल पहुँचाना — दोनो ही बाते उचित थी। लेकिन किसी दूसरेके लिए यही बात अनुचित हो सकती हे। ऐसे मामलोमें राजमार्ग क्या हो सकता है सो मुझे नही मालूम। यदि कोई राजमार्ग हो तो वह यही हो सकता है कि हम ऐसे आयोजनो और दावतोमे बिलकुल न जाये। यदि हम शराबपर बन्धन लगाते हैं तो मॉसपर बन्धन क्यो न लगाये? यदि हम माँसपर बन्धन लगाये तो फिर अन्य अभक्ष्य पदार्थोंपर बन्धन क्यो न लगायें? इसलिए यदि हम कुछ परिस्थितियोमे ऐसे समारोहोमे जाना अनिष्टकर मानते हो, तो मुझे सर्वोत्तम मार्ग यही जान पडता है कि हम किसी भी समारोहमे न जाये।

तब मै वहाँ क्यो गया था? मै वहाॅ इसीलिए गया था कि मै ऐसे समारोहोमे बरसोसे जा रहा हूँ और इस अवसरपर न जानेका मेरे लिए कोई विशेष कारण नही था। मै स्वय ऐसे समारोहोमे कुछ खाता नही, खाता ही हूँ तो केवल फल। मै इससे अपने मनको समझा सकता हूँ कि जिस प्रकार मै इनमे भाग लेता हूँ उसमे कुछ अनुचित नही है। मै जानता हूँ कि मेरे इस प्रकार भाग लेनेसे कुछ लोगोने मद्यपान और कुछ लोगोने माँसाहार छोड दिया है। किन्तु इन समारोहोमे जानेके पक्षमे यह तर्क नही दिया जा सकता। मै यह बताता हूँ कि मैने स्वय अपने मनको कैसे समझाया। यदि जैसा मै करता हूँ वैसा ही सब करे तो मुझे लेशमात्र भी चिन्ता न हो। किन्तु मै जानता हूँ कि मेरा अनुकरण करके उसमे दूसरे लोग उपस्थित होगे, इतना ही नही बल्कि भय यह भी है कि वे खाद्य-अखाद्य और पेय-अपेयका विवेक भी छोड बैठेंगे। मै यह भी जानता हूँ कि ऐसा हुआ है। अब तीसरा प्रश्न यह उठता है कि तब हम इस भयसे कबतक अपने ऊपर रोक लगाये रखे? ऐसे प्रश्न सदा ही धर्म सकट उपस्थित करते है। और उनका निर्णय सबको अपने-अपने विवेकके अनुसार कर लेना चाहिए। इस सम्बन्धमे मेरी सलाह यह है कि जब कोई ऐसे मामलोमे किसी निश्चित मार्गका निर्णय न कर सके और मेरे व्यवहारसे विरुद्ध व्यवहार करना उचित मालूम होनेके बावजूद वह मेरी सलाहपर चलना चाहता हो तो मेरा अपना व्यवहार चाहे कैसा भी क्यो न हो, उसे जैसा मै कहूँ वैसा व्यवहार करना चाहिए। मै जैसा करता हूँ, वैसा करनेमे जोखिम है। इसलिए जहाँ मद्य और मास परोसे जाते है वहाँ मै भले ही जाता होऊँ, लोगोके लिए वहाँ न जाना ही उचित है।

मेरे खादीके आग्रहमे और मद्यपानके उदाहरणमे कोई सम्बन्ध नही है। जिन जगहोमें खादी नही पहनी जाती वहाँ मै नही जाता होऊँ सो बात भी नही है। जिन सभा सस्थाओपर मेरा अकुश होता है, उनमे अथवा जहाँ मेरी खादी सम्बन्धी दृढताका अर्थ विपरीत नही समझा जा सकता, वहाॅ मै खादीके व्यवहारके सम्बन्धमे दृढ रहता हूँ। राजकोटके दरबारमे सभी लोग खादीधारी नही थे, फिर भी मै वहाँ गया था। विवाह और ऐसे ही अन्य उत्सवोमे जाना मुझे अच्छा नही लगता। इस-

लिए यदि कोई मुझसे उनमें आनेका आग्रह करता है और मैं खादीके कपडोकी शर्त मनवा सकता हूँ तो मनवा लेता हूँ।

इन सभी प्रश्नोंमें विवेक और प्रेमकी बात आती है। जो बात एक अवसरपर उचित होती है वही दूसरे अवसरपर अनुचित हो सकती है। मनुष्य तो चेतन प्राणी है, यन्त्रवत् जड नही। इसी कारण हर मनुष्यके कार्यमें भिन्नता, नवीनता और विरोधाभास आदि होते ही है। किन्तु जहाँ सत्य और प्रेमरूपी दो दिव्य मार्गदर्शक हो, वहाँ सूक्ष्मदर्शी पुरुष भिन्नतामें अभिन्नता, विरोधमे अविरोध और अनेकतामे एकताके दर्शन किये बिना नही रहता। जिस प्रेममें सहिष्णुता नही है, वह प्रेम ही नही है। मेरे लिए पूजनीय गौको मारनेवाले मुसलमानके गोवधको मै सहन कर लेता हूँ; इसीसे मुझे उसने गोवध न करनेका विनयपूर्वक अनुरोध करनेका अधिकार प्राप्त होता है। माननीय ठाकुर साहबके समारोहमे शराबके दिये जानेको सहन करके ही मुझे उनसे विनयपूर्वक मद्यपान निषेधकी बात कहनेका अधिकार प्राप्त होता है। कोई पूछे कि यदि आप उनके भोजमे न जाते तो क्या माननीय ठाकुर साहब आपको मद्य-निषेधकी बात कहनेसे रोक सकते थे? इसका उत्तर यह है कि ठाकुर साहब शिष्टतावश सुनेंगे अवश्य, किन्तु वे उसे सुनकर भी उसपर ध्यान नही देंगे। किन्तु यदि मै उनके समारोहमें भाग लेनेपर भी उनसे मद्य-निषेधकी बात कहूँ तो वे उसे ध्यानपूर्वक सुनेंगे और मेरी सहिष्णुताको निष्फल नहीं जाने देंगे।

अन्तमे मुझे इस विषयको समाप्त करते हुए कहना चाहिए कि इस सम्बन्धमें मेरा अनुकरण करना हानिकर हो सकता है। इसलिए मेरे साथ रहनेवाले लोगोको ऐसा अनुकरण करते हुए सावधान रहना चाहिए।

[गुजरातीमे]

नवजीवन, २२-३-१९२५

१९६. एक शिक्षककी उलझन

जो शालाएँ खादी-प्रचारको स्वराज्य प्राप्तिके लिए आवश्यक मानती है उनमें खादी अनिवार्य करनेके विरुद्ध एक शिक्षक नीचे लिखी दलीले देते है[1]

> १ आसपासके कुटुम्बियो और पडोसियोके रग-बिरगे विलायती कपडोसे मोहित होकर नासमझ बच्चे खादीको आफत समझकर ही अपना पाते है और इस तरह बचपनसे ही ढोंगी बनना सीखते है। अगर आपका यह कहना है कि जिस स्कूलमें अधिकाश विद्यार्थी खादी पहनते हो, वहाँ ऐसे बच्चे भी स्वय खादी पहनना ही पसन्द करेंगे, तो नासमझ बच्चोके लिए खादी पहनना अनिवार्य बना कर उसे अप्रिय बनानेके बजाय स्कूलमें भरती होनेके बाद उन्हे स्वत खादी पसन्द करने दी जाये। और इसके लिए थोड़े दिन धीरज रखना पडे तो वह ज्यादा अच्छा रहेगा।

१ इन्हें सक्षिप्त रूपमें दिया जा रहा है।

अनिवार्य शब्दका यहाँ अनर्थ हुआ है। अगर राष्ट्रीय स्कूलमे आना अनिवार्य हो और उसके लिए खादी पहननेका नियम भी अनिवार्य हो, तो खादीका इस्तेमाल शायद बेजा तौरपर 'अनिवार्य' बनाया हुआ माना जा सकता है। मै यहाँ 'शायद' शब्दका उपयोग इसलिए करता हूँ कि अनिवार्य शिक्षा होनेपर भी स्कूलमे भरती होनेकी कुछ शर्ते तो होगी। उन शर्तोको बेजा कहना मुश्किल है। वहाँ बच्चोको कुछ खास विषय पढने होगे। साथ ही उनका साफ होकर आना, मैले कपडे न पहनना, नगे न आना, रग-बिरगे हास्यजनक कपडे पहनकर न आना भी अनिवार्य होगा। ये सभी नियम होगे, अत उन्हे कोई अनुचित कहनेकी हिम्मत नही कर सकता।

मुझे ऐसा जान पडता है कि खादीकी आवश्यकताके बारेमे जिन्हे पूरा यकीन नही हुआ है, उन्हीके सामने मर्जी-बेमर्जीका सवाल खडा होता है। माँ-बापको अच्छा लगे या न लगे, पडोसियोका बर्ताव अनुकूल हो या प्रतिकूल, कुछ बाते ऐसी है जिनके बारेमे बच्चोपर पाबन्दी लगाये बिना काम नही चलेगा। जैसे, जगलसे आया हुआ बच्चा बिलकुल नगा होगा तो हमे उसे कपडे पहनाने पडेगे, भले ही वह अपने घर जाकर फिर कपडे उतार दे। बच्चा गन्दी भाषाका उपयोग करेगा तो हमें उसे रोकना ही होगा। हरएक शिक्षक ऐसे कई अनिवार्य प्रतिबन्ध ठीक समझकर लगा सकता है और उनके विरुद्ध ऊपरके शिक्षककी एक भी दलील काम नही आयेगी। यानी जो नियम समाजमे घर कर चुके है, वे अनिवार्य होनेपर भी अनिवार्य नही माने जाते।

बात यह नही है कि लोगोको स्वेच्छासे खादी पहनानेका हमारा प्रयत्न विफल हो गया है इसलिए खादीको अनिवार्य बनाया जा रहा है। बल्कि मुझे और अन्य कुछ लोगोको लगता है कि अब खादीको अनिवार्य बनाने लायक वातावरण तैयार हो गया है, इसलिए राष्ट्रीय पाठशालाओमे खादी और कताईको अनिवार्य बनाया जा रहा है। अकसर समाजका मन तैयार हो जाता है, पर शरीर तैयार नही होता, इसलिए समाज अनिवार्य बन्धनोको स्वीकार कर लेता है। इस तरह हम अनिवार्य शब्दका अर्थ समझ ले तो बहुत-सी परेशानियाँ हल हो जाये। 'अनिवार्य' प्रतिबन्ध तो वे है जो सत्ता या हुकूमत बलपूर्वक प्रजापर लगाती है और अगर प्रजा उन्हे नही मानती तो उसे सजा दी जाती है। अगर यह व्याख्या मान ली जाये तो अनिवार्य प्रतिबन्धोके बारेमे उपरोक्त शिक्षकने जो चर्चा की है उसका कोई आधार नही रह जाता।

२ः समझानेसे, प्रेमसे और होडसे पहनी हुई खादी ज्यादा दिन पहनी जायेगी . . .। क्या पहले ही दिनसे खादी अनिवार्य करनेके बजाय थोड़े दिन धीरज रखना मूल उद्देश्यके लिए कम सहायक है?

खादी अनिवार्य बना देनेमे समझाना, प्रेम और होड वगैरा तो है ही। खादीको अनिवार्य बनानेका भार शिक्षकोपर है, बच्चोपर नही। शिक्षकको सिपाहीकी तरह हुक्म नही देना है, बल्कि जिस प्रकार भी हो उसे बच्चोका मन जीतनेका प्रयत्न करना चाहिए। यहाँ प्रश्न 'पहले ही दिन' खादी पहनानेका नही है पर चार बरस

वाद खादी पहनानेका है। "अनिवार्य" शब्दकी पावन्दी शिक्षकपर है। वह शिक्षकको उसके कर्त्तव्यकी याद दिलाता है। इस तरह "धीरज रखना" मूल उद्देश्यके लिए कम सहायक है या ज्यादा, यह सवाल ही खडा नही होता। धीरज तो शिक्षकका गुण है ही या होना ही चाहिए।

३. खादीको अनिवार्य वनाना क्या इस वातका ढिंढोरा नहीं है कि लोगोने उसे स्वेच्छासे नहीं अपनाया है? . .

इस शकाका जवाव ऊपर दे दिया गया है।

४ क्या अनिवार्य खादीके नियमसे पाठशालामें प्रवेश पानेके लिए ही खादी पहननेवाले ढोंगियोकी तादाद नहीं वढेगी?

अगर ढोगका डर वच्चोके वारेमे हो तो उसे मै नही मानता। वच्चे ढोग नही कर सकते। शिक्षकके वारेमे ऐसा अन्देशा हो सकता है। लेकिन जहाँ थोडा वहुत नियम-पालन होता है, वहाँ ढोग तो आ ही जाता है। उसका उपाय वातावरणको शुद्ध वनाना है, नियमोको आसान वनाना नही।

५ . . अनिवार्य खादीके खयालसे तो राष्ट्रीय शालाएँ उनके लिए हैं जिन्होने स्वराज्यकी शर्तें पूरी की हो, तो फिर जिन्हे अभी उसकी शिक्षा देनी है, उनके लिए कौन-सी पाठशाला है?

राष्ट्रीय स्कूलोके अस्तित्वके दो कारण हैं एक तो जिनपर राष्ट्रीयताका रग चढा है उनके लिए सुविधाएँ प्रदान करना, और दूसरा, जिनपर रग नही चढा उनके लिए खुद उदाहरण प्रस्तुत कर उन्हे प्रभावित करना। जिनपर रग नही चढा, उनके लिए नियमोको आसान वनाकर उन्हे लुभानेका हमारा उद्देश्य नही है। जैसे-जैसे राष्ट्रीय स्कूलोके शिक्षको और लडकोके चरित्रका विकास होगा और लोग उन्हे देखेगे वैसे-वैसे वे इन शालाओमे प्रवेश पानेके लिए उत्सुक हो उठेगे।

६ नियम जालके समान वन जाते हैं। . .

नियमोका जाल वनना या न वनना, नियम चलानेवालेपर निर्भर है। उनका सहज पालन कराना भी नियामकपर निर्भर है। प्राथमिक पाठशालाएँ कोमल डालियाँ हैं। उन्हे जिधर मोडिये उधर ही मुड जायेगी। हमारे हाथसे वे सीधी दिशामें मुडनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-३-१९२५

१९७. टिप्पणियाँ

निर्दयता

मै इन टिप्पणियोको कोचीन त्रावणकोरमे लिख रहा हूँ। वाइकोमके स्टीमरमे सवार होनेको जाते समय रास्तेमे, वहुत सुन्दर दृश्योके बीच वाइकोममे मैने जो एक असह्य दृश्य देखा उसकी स्मृति मनसे नही जाती। कोचीनके लोग घोडागाडियो और मोटरोका उपयोग वहुत कम करते है, वे गाडी खीचनेमे मनुष्यका उपयोग करते है। वहाँ जापानी ढगकी रिक्शा सर्वत्र दिखाई देती है। रिक्शाओको देखकर तो मुझे अधिक आघात नही लगा, क्योकि वे तो मैने डर्वनमे वहुत देखी थी। किन्तु जब मैने देखा कि तीन-चार लोग एक साथ रिक्शामे लदे हुए है तो मेरी इच्छा हुई कि मै अपनी गाडीमे से उतर कर रिक्शा कुलीकी सहायता करूँ। मुझे अपने रास्तेपर आगे वढ़ना था और मेरा इस प्रकार उतर कर सहायता करना सम्भव नही था। किन्तु मनमे इसका घाव रह गया है। यह रिक्शा एक ही मनुष्यके वैठनेके लायक वनाई गई है। हो सकता है कि यदि रिक्शा कुली इनकार करे तो उसमे इतने लोग न चढे। किन्तु इससे सवारियोके मनमे दयाभाव नही है, मेरा यह विचार नही कटता। जरूरतमन्द आदमी न करने योग्य हजारो काम करता है। वह पेटके वल रेंगता है और जाने क्या-क्या काम करता है। किन्तु जो इन कामोको अविचलित भावसे देखते रहते है, उनके सम्वन्धमे क्या कहा जाये? जो उन्हे ऐसा करनेके लिए विवश करते है, उनके वारेमे तो कहना ही क्या है? हो सकता है कोचीनमे रिक्शामे एकसे अधिक सवारी न वैठानेका नियम भी हो। यदि ऐसा हो तो सवारियाँ दोहरा अपराध करती है। कोचीनमे गुजराती बहुत रहते है। वे प्रभावशाली लोग है। मैने रिक्शामे जो लोग वैठे देखे, वे लोग मलावारी थे। गुजराती भी ऐसा करते है या नही यह मै नही जानता। किन्तु मुझे आशा है कि गुजराती इतनी निर्दयता न करते होगे। मै तो उनको कोचीनकी सेवाका ध्यान दिलाना चाहता हूँ। वे कोचीनमे ऐसा लोकमत तैयार करे कि कोई भी मनुष्य रिक्शेका दुरुपयोग कदापि न करे। मै तो उनको रिक्शेका उपयोग वन्द करनेकी सलाह भी दूंगा। रिक्शेका उपयोग वन्द करनेसे उन्हे जो थोडा वहुत श्रम करना होगा, उससे उनका स्वास्थ्य भी सुधरेगा। जवतक कोई मनुष्य रोगी या अशक्त न हो तवतक उसका दूसरे मनुष्यपर चढकर चलना पाप है। हम मनुष्यका उपयोग पशुकी तरह कैसे कर सकते है? जिस कामको स्वय हम करनेके लिए तैयार न हो उसे किसी दूसरेसे कैसे करा सकते है?

पतिका कर्त्तव्य

एक भाई प्रश्न करते है कि यदि पत्नी सयम-धर्मके पालनमे पतिकी सहायता न करे तो पतिको क्या करना चाहिए? मेरा अनुभव तो यह कहता है कि सयमके पालनमे एकोक दूसरेकी अनुमतिकी जरूरत नही। भोगके लिए दोनोकी रजामन्दी

होनी चाहिए। त्याग तो प्रत्येकका परम धर्म है। परन्तु ऐसी बातोंमें विवेककी बहुत आवश्यकता रहती है। संयमको सच्चा संयम होना चाहिए। पुरुषको चाहिए कि वह अपने मनको सब जीत ले। विवेक और शुद्ध प्रेमसे पति पत्नीको अपने संकल्पसे सहमत कर सकता है। हां, यह सम्भव है कि पतिने जितना ज्ञान प्राप्त किया है उतना पत्नीने न किया हो। उस पतिका धर्म है कि वह पत्नीको भी अपने ज्ञानमें भागी बनाये। इस तरह जहां गृहस्थी विवेकपूर्वक चलती हो वहां संयमके पालनमें कठिनाई नहीं पड़ती। मेरा यह अनुभव है कि संयमके पालनमें स्त्री ही आगे रहती है। पति ही उसमें बाधा डालता है। इस कारण यह प्रश्न मुझे बेतुका मालूम होता है। फिर भी जवाब देना उचित समझकर यहां कुछ संकोचके साथ ही लिखा है।

पिता-पुत्र भेद

पिता धनवान् है और भोगी है। पुत्र त्यागी है और सादा जीवन बिताना चाहता है। पिता रोकता है। पुत्रको क्या करना चाहिए? अपनी अल्पमतिके अनुसार मुझे तो यही लगता है कि पुत्र अपने त्यागभावको न छोड़े। वह विनयके साथ पिताको समझाये। मैं मानता हूं कि जहां पुत्रमें विवेक और दृढ़ता दोनों गुण होते हैं वहां पिता बाधक नहीं होता। बहुत बार पुत्रके उद्धत होनेके कारण त्याग भी स्वच्छन्दताका रूप ले लेता है, जिससे पिता चिढ़ जाता है। मैं ऐसे त्यागको त्याग नहीं मानता। शुद्ध त्यागमें इतनी नम्रता होती है कि पिताको वह दिखाई भी नहीं देगा। त्यागको बाह्य स्वरूप देनेकी आवश्यकता नहीं होती। जब मनुष्यके जीवनमें सच्चा त्याग प्रवेश करता है तब पहले उसका ढोल नहीं पीटा जाता। वह चुपचाप आता है और किसीको उसकी खबर तक नहीं होती। ऐसा त्याग ही शोभा पाता है और अन्ततक टिकता है। ऐसा त्याग किसीको भार नहीं लगता और दूसरोंको प्रभावित भी करता है।

अन्त्यजोंका शिक्षक

इस प्रश्नका[1] उत्तर सुगम है। यदि अन्य वर्णोंके लिए ६० रुपयेसे ७५ रुपये तक पर शिक्षक रखा जा सकता है तो वह उतने वेतनपर अन्त्यजोंके लिए भी रखा जा सकता है। किन्तु बहुत-कुछ तो शिक्षकके चरित्रपर निर्भर है। कोई विद्यापीठका स्नातक हो जानेसे ही इतने वेतनका पात्र हो जाता है, ऐसा मैं नहीं मानता। मैं चाहता हूँ कि सभी स्नातक चरित्रवान हों। किन्तु ऐसा नहीं होता, यह मैं जानता हूँ। अन्त्यजोंको बुनाईके अतिरिक्त बढ़ई आदिका काम भी सिखाया जा सकता है। किन्तु मैं यथासम्भव बुनाईके धन्धेको ही अधिक विकसित करना चाहता हूँ। अधिकांश अन्त्यज बुनाईका काम करते हैं। अन्त्यज बालकोंको इस धन्धेमें पूरी तरह निपुण बनानेमें बहुत समय लग सकता है। अन्त्यज बुनकर बारीक सूत अधिक नहीं बुनते। वे बड़ा पना भी नहीं बुन पाते। डिजाइन तो शायद ही बुनते हैं। हमारा काम अन्त्यजोंको बुनाईकी समस्त कला सिखाना है। किन्तु हम ऐसा नहीं कर सकते, क्योंकि

१ यहां उद्धृत नहीं किया गया है।

हम स्वय इतना नही सीख पाये है। हम अपनी ही इस अपूर्णताको दूर करे। क्योकि वही हमारी सच्ची कठिनाई है। क्या सिखाना चाहिए, यह हमे मालूम हो गया है। किन्तु हममे उसे सिखानेकी योग्यता अभी नही आई है।

राष्ट्रीय शालाओमे कितने विद्यार्थियोके लिए कितने शिक्षक होने चाहिए इस सम्वन्धमे कोई नियम आज वनाना कठिन है। आदर्श शालाओमे छात्र कम तो होगे ही। इन शालाओको वालकोसे भरनेमे समय लगेगा। तवतक हम कोई निश्चित सख्या तय नही कर सकते।

हमारी मर्यादा

वही शिक्षक लिखता है .[1]

यदि राजा लोग अपने शिक्षा विभाग हमे सौपते है तो हमे उनको अवश्य हाथमे लेना चाहिए। पर उसके लिए हमारी शर्तें तो होगी ही। खादी, सूत आदिके सम्वन्धमे हमारे नियम उन्हे स्वीकार होने चाहिए। जिस शिक्षा-विभागमे अन्त्यजोके प्रवेशपर रोक हो वह हमारे लिए अस्पृश्य ही होना चाहिए। यदि हम धीरे-धीरे सुधार कर पानेकी आशासे उन्हे हाथमे लेगे तो हम उनमें ही खप जायेगे। किसी कामको हाथमे लेनेके वाद उसे छोडना वहुत मुश्किल होता है। हम जिन नियमोको आवश्यक मानते है उनके पालनके सम्वन्धमे हमे एक क्षण भी उदासीन नही रहना चाहिए।

[गुजरातीसे]

नवजीवन, २२-३-१९२५

१९८. पत्र : कुँवरजी खेतसीको

फाल्गुन वदी १३ [२२ मार्च, १९२५][2]

चि० कुँवरजी,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। चि० रामीको[3] तुम्हारे हाथमे सौप देनेके वाद मैंने उसकी चिन्ता छोड दी है। तुमपर मुझे पूरा विश्वास है। रोग तो देहके साथ जुडे है। वे तो आयेगे और जायेगे। तुम्हारे पत्रके वाद चि० वलीका[4] पत्र मिला। उसमे रामीकी अवस्थामे सुधार होनेका समाचार था। रामीसे उसकी शक्तिके अनुसार काम लेना। इससे उसका शरीर ठीक रहेगा। मै २७ तारीखको आश्रम पहुँचूँगा। रामीसे कहना कि वह मुझे पत्र लिखे।

बापूके आशीर्वाद

१. इसे उद्धृत नही किया जा रहा है।
२. गांधीजी वाइकोम, मद्रास अन्य स्थानोका दौरा करके आश्रममें २७ मार्च, १९२५ को पहुँचे थे।
३. हरिलाल गाधीकी पुत्री।
४. हरिलाल गाधीकी साली।

चि० कुँवरजी
द्वारा
पारेख गोकलदास त्रिभुवन
मोरवी, काठियावाड

मूल गुजराती पत्र (सी० डब्ल्यू० ६७८) से।
सौजन्य नवजीवन ट्रस्ट

१९९. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

फाल्गुन कृष्ण १३ [२२ मार्च, १९२५][1]

भाई घनश्यामदासजी,

आपके दो पत्र मीले है।

मुस्लीम युनिवरसिटीके बारेमे आपने मुझको निश्चित कर दीया है। मैं यह तो हरगीज नहि चाहता हु कि आपके दामसे आप भाइयोमे कुछ भी विखवाद हो। आपका नाम मैं प्रकट नहि करूगा।

आपने जो जमीन छोटा नागपुरमे ली है उसको नौकरोके मृत्युके कारण छोडनेकी सलाह मैं नही दुगा। धातुरूप और जमीन रूप द्रव्य मैं बडा फरक नही है। द्रव्यके कारण झगडा होना, खुन भी होना अनिवार्य है। आपके धर्म सकटका एक ही इलाज है। मीलकीयत छोड देना। यह तो आप इस समय करना नहि चाहते हैं। हा, एक बात तो मैंने कही है। क्योकि मिलकीयत फसादोका कारण बनती है औ[र] हमारे पास अकर्त्तव्य भी करवाती हे, उसे छोड देना और जबतक उसको हम सम्पूर्णतया छोडनेके लिये तैयार नही है तबतक उसका व्यय पारमार्थिक भावसे — ट्रस्टीकी हैसियतसे — करना और अपने भागोके लिये उसका कमसे-कम व्यय करना। एक बात और सभवित है। जो सज्जन झगडा करता हे उसको मीलनेकी कुछ कोशीश हुई है? उसकी अशातिका कारण क्या है? क्या उसकी मूर्खता भले हो परन्तु उसकी जमीन पानीके दामसे तो नहि मीली है? दुष्ट पुरुष भी अपनी मीलकत फेंक देना नहि चाहता है। यह तो दूसरा तात्विक प्रश्न मैंने छेडा है।

आपकी धर्मपत्नीका स्वास्थ्य कुछ ठीक है क्या?

मै मद्रास २४ तारीखको छोडुगा।

आपका,
मोहनदास गाधी

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ६१०७) से।
सौजन्य घनश्यामदास बिडला

१ २१ फरवरी, १९२५ को लिखे अपने पत्रमें गाधीजीने श्री बिड़लासे ५०,००० रुपये अलीगढ यूनिवर्सिटीको दान देनेका अनुरोध किया था।

२००. भाषण : मद्रासमें[1]

२२ मार्च, १९२५

मद्रास अहातेमे अपने दौरेके इस हिस्सेकी शुरूआत इस समारोहके साथ करते हुए मुझे वडी ही खुशी हो रही है। अभी एक मानपत्र पढा गया। आपने उसमें यहाँ आनेकी दावत मजूर करनेपर मेरा शुक्रिया अदा किया हे। लेकिन शुक्रिया तो आपको मेरा, एक कैदीका नही, वल्कि मुझे कैद करनेवाले, मेरे जेलर, श्री एस० श्रीनिवास आयगरका अदा करना चाहिए। (हँसी)। यहाँ मेरे सारे वक्तके वँटवारेका काम उन्हीके हाथमे था। अस्पृश्यता-निवारणकी लगन उनमे उतनी ही है जितनी हममे से किसीमे भी हो सकती है। आपने समाज-सेवाके प्रति नई पीढीके लोगोके उपेक्षा भावका जिक्र किया है। मै एक हदतक इसकी ताईद करता हूँ। यह सच हे कि नई पीढीके लोग काम नही चाहते, जोश चाहते है। पर मै आपको यह भी वतला दूं कि अभी ऐसे सैकडो लोग पडे है जिनको दुनिया नही जानती और जिनकी कही भी शोहरत नही, परन्तु जिन्होने इस तरहकी समाजसेवामे अपनी योग्यता सिद्ध कर दी है, जो अभी-अभी आपकी वताई समाज-सेवासे भी वहुत कठिन है। यहाँ मद्रासमे आपको उस व्यवस्थाकी सुख-सुविधाएँ प्राप्त है, जो सभ्यता कही जाती है। (हँसी)। मै आपसे जिन युवकोकी वात कर रहा हूँ और जिनके नाम मेरे दिमागमे है, उन्होने अपना सारा समय गाँवोमे रहकर समाज-सेवा करनेमे लगाया है। वाहरकी दुनियासे उनका कोई सम्पर्क नही। वे अखवार नही पढते। उनकी कितावमे जोश नामका कोई शब्द नही। वे जनताके वीचमे रहे है। और उनका जीवन विलकुल जनताकी तरह है। मै चाहता हूँ कि आप उनकी मौन सेवाओपर ध्यान दे। इतने मनोयोग और इतने आत्म-त्यागपूर्ण ढगसे की गई उनकी इस सेवाको आप अन्य नवयुवको द्वारा की जानेवाली उपेक्षाका प्रायश्चित्त माने और शेष नवयुवक जो वास्तविक सेवाका अर्थ नही जानते, उनकी इस आत्म-त्यागपूर्ण सेवासे प्रेरणा ले।

मेरी रायमे तो यह सेवा ही हमारी शिक्षाका सवसे अच्छा अश है। हमारे वेशुमार स्कूलोमें जो शिक्षा दी जा रही है, मै उसका विरोधी नही हूँ। लेकिन मै जिस तौर-तरीकेके जीवनका हामी हूँ, उसमे इस प्रकारकी शिक्षा दोयम दर्जेपर आती है। यदि यह शिक्षा हमे राष्ट्रका सेवक नही वना सकती तो मै इसकी उपयोगिताको नही मान सकता। मुझे तो लगता है कि हमारे नगरोमे आमतौरपर जिस ढगकी समाज-सेवा की जाती है वह गोखलेके[2] मतानुसार मनोरजनका रूप ले लेती है। यदि हमे समाज-सेवाको जिन लोगोकी हम सेवा करते है, उनके लिए और राष्ट्रके लिए प्रभावकारी और उपयोगी

१. सोशल सर्विस लीग द्वारा दिये गये मानपत्रके उत्तरमें।
२. गोपाल कृष्ण गोखले।

बनाना है तो हमारे रोजानाके कामकाजमे उसका मुख्य स्थान होना चाहिए। जिस समाज-सेवामे सरपरस्तीका भाव हो, वह सेवा नही होती।

आप जिस महान कार्यमे लगे हुए है, मै उसके लिए आपको हार्दिक बधाई देता हूँ। हाँ, मुझे लगता है कि वह अपने-आपमे अधूरा है और उसमे बहुत सुधार किया जा सकता है। मेरी रायमे तो इस देशकी दशाको देखते हुए, कोई भी सेवा तबतक पूर्ण नही है जबतक उसकी नीव चरखे और खद्दरपर न रखी गई हो। आप चाहे तो इसपर हँस सकते है, पर समय आ रहा है जब यह बात समाज-सेवाका आधारभूत सूत्र बन जायेगी कि कोई भी समाज-सेवी तबतक समाज-सेवी नही माना जाये जबतक वह ऊपरसे नीचेतक केवल खद्दर न पहने हो और कातना न जानता हो। मैं आपको इसका कारण बतलाता हूँ। समाजके सबसे निचले वर्गके लोगोकी सेवाका काम शुरू करके आपने उचित ही किया है। तब क्या इसके सम्बन्धमे मैं आपको एक तथ्यकी, एक ऐसे तथ्यकी याद दिलाऊँ जिसकी सचाईमे शका नही की जा सकती? वह तथ्य यह है कि हमारे समाजके सबसे निचले वर्गके लोग शहरोमे नही, देहातोमे रहते है। मैं आपको एक दूसरा तथ्य भी बता दूँ, जिसे मेरे जैसे मनुष्यने नही इतिहासज्ञोने प्रस्तुत किया है। तथ्य यह है कि भारतमें जनसख्याका दसवाँ भाग आधे पेट खाकर रहता है। साथमे यह भी स्वीकार किया जाता है कि उनको आधे पेट इसलिए रहना पडता है कि सालमे लगभग चार महीने उनके पास कोई काम नही रहता। इसलिए एक ऐसा सार्वत्रिक धन्धा होना चाहिए जिसे देशका हर आदमी अपना सके। चरखा चलाना ही ऐसा एकमात्र धन्धा है।

मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप इसपर व्यक्तिकी दृष्टिसे नही, समूचे राष्ट्रकी दृष्टिसे विचार करे। तब आपके सामने तुरन्त स्पष्ट हो जायेगा कि इससे राष्ट्रको केवल कुछ लाख रुपयोकी नही, बल्कि करीब १२० करोड रुपयोकी बचत होगी। जिस सेवाका पुरस्कार उसके साथ जुडा हुआ रहता है, ऐसी असन्दिग्ध यही एक सेवा है। यदि हम सरपरस्तीका भाव लेकर जनताके बीच सेवा करने जाये, तो यह सेवा असम्भव है। हम जब स्वय उनके बीच खद्दर पहनकर जाये, तभी उनसे खद्दर पहननेके लिए कह सकते है और तभी उनकी ऐसी सेवा कर सकते है। यदि हम खुद आज ही कताई शुरू नही करते तो जनता चरखेकी ओर आकर्षित नही होगी। और चूँकि हमने चरखा चलानेकी कला भुला दी है, इसलिए हम जबतक चरखे-जैसे सीधे-सादे यन्त्रकी सभी बारीकियोको समझ नही लेते और चरखेकी सँभाल और मरम्मतमे सिद्धहस्त नही बन जाते, तबतक मनुष्यके लिए जनतातक चरखेका सन्देश पहुँचाना असम्भव है। केवल यही एक सेवा ऐसी है जिसमे हमारा एक भी प्रयत्न बेकार नही जाता। इसमे निराशाकी गुजाइश ही नही है। जैसे किसान द्वारा उपजाई हुई छोटीसे-छोटी चीज भी देशकी सम्पदाकी अभिवृद्धि करती है, वैसे ही देशकी खातिर काता हुआ एक-एक गज सूत देशकी सम्पदाकी अभिवृद्धि करता है। उससे चाहे एक पाई भी मिले, वह करोडोकी तादादमे भूखो मरती जनताकी जेबमे ही पहुँचती है। इसीलिए मै विनम्रतापूर्वक आशा करता हूँ कि आप (श्री टी० वी० शेषगिरि अय्यरकी ओर

मुडकर) कार्यकर्त्ताओकी इस टोलीके नेताकी हैसियतसे इस समस्याके सभी पहलुओका अध्ययन करेंगे और अपनी सारी सूझ-बूझ और बुद्धि इसे हल करनेमे लगायेंगे। मुझे यह भी पक्का भरोसा है कि इस अध्ययनके फलस्वरूप आप भी महान् प्रफुल्लचन्द्र रायकी तरह इसी निष्कर्षपर पहुँचेगे कि भारतकी मेहनतकश जनताका उद्धार केवल चरखेसे ही हो सकता है।

आज मेरे पास काम बहुत और समय थोडा है। मेरे जेलरने मुझपर एक बहुत ही व्यस्त कार्यक्रम लाद दिया है। ये जेलर तो यरवदाके जेलरसे भी अधिक कठोर काम लेनेवाले है। (हँसी)। मै आपके सम्मुख समाज-सेवाकी कई और शाखाओकी भी चर्चा करना चाहता था। पर मै चरखेके इस सन्देशपर ही बस करता हूँ। आशा है कि मुझे अगली बार जब आपसे मिलनेका अवसर मिलेगा तब आप सभी सिरसे पैर-तक खद्दर पहने दिखाई पडेगे। मै आपको अपनी लीग द्वारा किये गये कार्यके लिए फिर बधाई देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-३-१९२५

२०१. भाषण: मद्रासकी महिला सभामे[1]

२२ मार्च, १९२५

बहनो और मित्रो,

इस सुन्दर अभिनन्दन-पत्रके लिए मै आपका आभारी हूँ। इस कताई-प्रतियोगिता-के सिलसिलेमे यहाँ आकर मुझे बडी खुशी हुई है। लेकिन एक बातसे मुझे दुःख पहुँचा है और उसे मै आपसे छिपा नही सकता। वह यह है कि यहाँ बहुत-सी बहने ऐसी है जो खद्दर नही पहने है। भारतकी स्त्रियोकी मुट्ठीमे ही इस देशका भाग्य है। जबतक भारतीय स्त्रियाँ, पुरुषोके साथ कन्धेसे-कन्धा मिलाकर पूरी शक्तिसे काम नही करती, तबतक वह स्वराज्य स्थापित नही किया जा सकता, जिसका मै स्वप्न देखता हूँ। स्त्रियोकी सभाओमे मैंने स्वराज्यको रामराज्य कहा है और देशमे जबतक हजारो सीता पैदा नही होती, तबतक रामराज्य होना असम्भव है। मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि राम और सीताके जमानेमे हाथ कते और हाथ बुने वस्त्र खद्दरके अतिरिक्त दूसरा कोई वस्त्र ही नही होता था। सीता आपकी तरह विदेशी वस्त्रोमे सजकर देश-भरमे नही घूमी थी। सीताके लिए तो अपनी सज्जाके लिए अपने देशमे तैयार वस्त्र पर्याप्त था। यह तो भारतकी आधुनिक स्त्रियाँ ही है, जो मुझसे कहती है कि खद्दर इतना मोटा-झोटा और खुरदरा है कि वे उसे नही पहन सकती। लेकिन क्या आप जानती है कि आपके खद्दर पहनना बन्द कर देनेसे हमारे सैकडो भाई-बहिन गरीब हो गये है। आप

१. श्रीमती चिन्नास्वामी आयगार द्वारा भेंट किये गये मूल तमिल अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें गाधीजीने अंग्रेजीमें भाषण दिया था। उसका वाक्यश तमिल अनुवाद श्री एस० श्रीनिवास आयगरने किया था।

खाते-पीते घरोकी है, इसलिए १८ हाथकी साडियाँ पहनकर मजेमे सामाजिक समारोहोमें और इधर-उधर आ-जा सकती है। पर आप यह भी याद रखे कि गाँवोमे रहनेवाली आपकी बहनोको साडियाँ तो क्या, पेट-भर भोजनतक नही मिलता। यह मैं आपसे बिलकुल सच कह रहा हूँ, मैंने खुद अपनी आँखोसे ऐसी हजारो नही तो सैकडो बहनें तो देखी ही है, जो वस्त्रोके अभावमे चिथडोसे अपना तन ढकती है।

इसलिए मै उन बहनोके तथा धर्म और ईश्वरके नामपर आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप जिन विदेशी वस्त्रोको काममे ला रही है उन्हे त्याग दे और खद्दरकी साडियाँ, जैसी भी मिल सके पहने। खद्दरको सस्ते दामोमे सुलभ बनाने और अपनी पसन्द-लायक महीन साडियाँ प्राप्त करनेके लिए आप रोज कमसे-कम आधा घण्टा कताई करे और अपना कता हुआ सूत देशको दे। इससे खद्दर सस्ते दामोमे सुलभ हो सकेगा। आप सबने पिछवाडेके बडे कमरेमे बहनोको सूत कातते देखा ही होगा। यदि न देखा हो, तो मै अनुरोध करता हूँ कि आप दस-दसकी टोलियाँ बनाकर सूतकी कताई देखें। इसे अभी कोई बडा जमाना नही गुजरा है जब हमारे यहाँ हर घरमे जैसे आज चूल्हा रहता है वैसे ही एक चरखा भी रहता था। चरखेको अपने घरोसे निकालकर हमने अपनी कमसे-कम एक-चौथाई आमदनीका रास्ता बन्द कर लिया है। मै फिर आपसे आग्रह करता हूँ कि आप चरखेको पुन उचित स्थानपर प्रतिष्ठित करे। आपके यहाँ आनेसे मुझे बहुत खुशी हुई है। लेकिन यदि आप इन सभाओमे विदेशी वस्त्र पहनकर आती रही तो वह मेरे लिए अत्यन्त पीडाजनक और असहनीय बन जायेगा। अपनी ही आवाज सुननेकी मेरी कोई इच्छा नही। मै सभाओमें आकर भाषण इसलिए करता हूँ कि मुझे अब भी यह आशा बनी हुई है कि मेरे कुछ शब्द तो श्रोताओके हृदयोमें उतर ही जायेगे। ईश्वर करे, आज शाम यहाँ कहे गये मेरे शब्द आपके मनपर ऐसा ही प्रभाव डाले।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-३-१९२५

२०२. भाषण : 'हिन्दू' कार्यालयमे[1]

२२ मार्च, १९२५

अध्यक्ष महोदय और मित्रो,

मुझे जब इस चित्रका अनावरण करनेके लिए आमन्त्रित किया गया था तब मैंने उत्तर देते हुए कहा था कि इसे मै अपना सम्मान मानूँगा। अब मुझे दुहरा सम्मान महसूस हो रहा है। एक तो इसलिए कि आपने मुझे स्वर्गीय श्री कस्तूरी रगा आयगरके चित्रका अनावरण करनेका सौभाग्य प्रदान किया है, और दूसरे इसलिए कि यह अनावरण मै एक ऐसे व्यक्तिकी अध्यक्षतामे कर रहा हूँ जिसके प्रति मेरा

१ एस० कस्तूरी रगा आयगरके चित्रके अनावरणके अवसरपर वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीकी अध्यक्षतामें दिया गया।

प्रेमभाव है और जिनका मै सम्मान करता हूँ। आमन्त्रणकर्त्ताओने इस समारोहमे किसी दल विशेषको नही, वल्कि सभी दलोको आमन्त्रित करके वहुत वुद्धिमानीका परिचय दिया है।

मेरा खयाल है कि श्री कस्तूरी रगा आयगरसे मेरा परिचय पहले-पहल १९१५ मे हुआ था। मै कह सकता हूँ कि उन दिनो मै अखवार वहुत-कुछ नियमित रूपसे पढता था। आज मै उतने नियमसे नही पढता (हँसी)। इन अखवारोमे से एक 'हिन्दू' भी था; और उसका महत्व मै तभीसे समझने लगा था। मै मानता हूँ कि श्री कस्तूरी-रगा आयगर भारतीय पत्रकारिताके कुछ श्रेष्ठ गुणोके प्रतिनिधि थे। मै जानता हूँ कि उनकी अपनी एक अलग ही शैली थी। उनकी व्यगोक्तियाँ भी अपने ढगकी अनूठी होती थी। वे चाहे मित्रके रूपमे लिखते, चाहे विरोधीके रूपमे – उनकी शैलीकी प्रशसा सभीको करनी पडती थी। वे कभी-कभी अपने प्रतिपक्षियोपर वडे तीखे और सीधे प्रहार करते थे। ये प्रहार यद्यपि उनको उस समय कटु लगते थे, लेकिन उनमे सदा ही बहुत-कुछ सचाई दिखाई पडती थी, क्योकि श्री आयगरकी शैली अत्यधिक विवेकयुक्त लगती थी। मै समझता हूँ कि उनके वारेमे वहुत-कुछ निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि अपने देशके प्रति उनकी आस्था अडिग थी। हालाँकि उनकी आलोचना सदा ही विनम्रतापूर्ण रहती थी, फिर भी वे सरकारके अत्यन्त निर्भय आलोचक थे।

मुझे कई मौकोपर उनसे मतभेद भी रखना पडता था पर मै उनके निर्णयकी हमेशा कद्र करता था, क्योकि उससे मै इतना जरूर समझ जाता था कि मेरे तर्क या दृष्टिकोणमे कहाँ कमजोरी है। मुझे ऐसा कोई भी मौका याद नही आता जब उनकी दलीलमें कुछ-न-कुछ सार न रहा हो। और तुलना की जाये तो मै कहूँगा कि अक्सर मुझे लगता था कि मद्रास अहातेमे उनका स्थान वही है जो इग्लैडमे 'लन्दन टाइम्स' के सम्पादक का है। (तालियाँ) और वात ऐसी है कि मैने श्री कस्तूरी रगा आयगर-को निरा सुधारक तो कभी नही माना। उन्होने पत्रकारिताका जो उद्देश्य समझा, उसकी सेवामे अपनी सारी प्रतिभा लगा दी। (हर्ष ध्वनि)। तदनुसार वे महसूस करते थे कि यदि उन्हे इसी रूपमे काम करना है, तो उनको देशके नेतृत्वकी, कमसे-कम हर मामलेमे नेतृत्व करनेकी कोशिश तो नही करनी चाहिए, उन्हे तो देशकी जनताकी रायको ही हमेशा सही रूपमे पेश करना चाहिए।

'हिन्दू' के नियमित पाठकोने अवश्य ही महसूस किया होगा कि उन्हे जब भी उसकी सम्पादकीय नीतिमे कोई परिवर्तन हुआ दिखा, तो वह इसलिए हुआ कि देश किस तरफ जा रहा है, या हवाका क्या रुख है इसको रगा अच्छी तरह पहचान पाते थे। लोग कह सकते हैं कि यह उनकी खामी थी, पर मै इसे खामी नही मानता। (श्री सी० आर० रेड्डी द्वारा हर्षध्वनि)। अगर उन्होने सुधारकका काम अपने ऊपर ले लिया होता, जैसा कि मैने किया है, तो उनको जनताके सामने अपनी निजी राय रखनी पडती। फिर सारा देश उसके वारेमे भले ही कुछ भी क्यो न सोचता। मै समझता हूँ कि देशके जीवनमे एक दौर ऐसा भी आता है; लेकिन यह पत्रकारका खास काम नही है। पत्रकारका खास काम तो देशकी जनताके मनोभावको समझना और उसे निश्च-यात्मक शब्दोमे निर्भयताके साथ व्यक्त करना ही है। और मेरा खयाल है कि जहाँ-

तक इस गुणकी बात है, श्री कस्तूरी रगा आयगर अपना कोई सानी नही रखते थे (तालियाँ)।

इतना ही नही। मैंने 'हिन्दू' में एक और भी विशेषता देखी है। पूरा समाचार पानेके उत्सुक पाठक भी उसके समाचारोसे सतुष्ट हो जाते है (हर्षध्वनि), क्योकि श्री कस्तूरी रगा आयगर देशमे होनेवाली घटनाओके विषयमें पाठकोको जो-कुछ दिया जाना चाहिए, वह सभी कुछ दे देते थे। और उन्होने काट-छाँटकी कला भी सीख ली थी। मैं अपने अनुभवसे कहता हूँ कि काट-छाँट करना भी एक कला है। उनके सक्षिप्त समाचार सचमुच प्रशसनीय होते थे। और चूँकि उनकी रुचि अत्यन्त व्यापक थी, इसलिए 'हिन्दू' के पाठकोको, जहाँतक ससारके समाचारोका सम्बन्ध है, फिर कोई दूसरा अखबार पढनेकी जरूरत नही रहती थी। वे ससार-भरके समाचारपत्रोको छान डालते, सभी पत्रो और पत्रिकाओमे से सर्वोत्तम अशोके उद्धरण लेते और उनको अपने पाठकोके सामने आकर्षक ढगसे पेश कर देते थे। इसलिए यदि मद्रास अहातेमे रहनेवाला कोई भी मनुष्य 'हिन्दू'को पढ लेता और उसके जवाबमे निकलनेवाले 'मद्रास मेल' को भी देख लेता तो फिर उसे किसी भी प्रश्नके दोनो पहलुओकी पूरी जानकारी मिल जाती। मेरी समझसे तो श्री कस्तूरी रगा आयगरकी पत्रकारिताकी सारी विशेषता इसीमे आ जाती है। और यह कहनेके बाद मुझे लगता है कि मै उनकी पत्रकारिताकी जितनी प्रशसा कर सकता था, उतनी मैंने कर दी है।

मै 'हिन्दू' को उन गिने-चुने समाचारपत्रो — उन थोडेसे दैनिक पत्रो — में गिनता हूँ जिसके बिना सचमुच काम नही चल सकता, (तालियाँ) अत. श्री कस्तूरी रगाकी मृत्युसे जो उनकी क्षति हुई है, वह दक्षिण भारतमे ही नही उत्तर भारतमे भी अनुभव की जायेगी। क्योकि मद्रास अहातेमे तो पत्रोके पाठकोपर श्री कस्तूरी रगाका प्रभाव अनुपम था ही तथापि समस्त भारतके सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओपर भी उनका प्रभाव कुछ कम नही था। वे हमेशा यह जानना चाहते थे कि किसी भी प्रश्न-विशेषके बारेमें 'हिन्दू' का मत क्या है। इसलिए मुझे जेलमे यह जानकर बडा सदमा पहुँचा कि श्री कस्तूरी रगा आयगर अब नही है। मै सदा अनुभव करता था कि उचित सार्वजनिक अवसर मिले तो मै उसमे सार्वजनिक रूपसे अपना दु ख प्रकट करूँ। इसलिए मुझे बहुत प्रसन्नता है कि मुझे एक ऐसे व्यक्तिके प्रति श्रद्धाजलि अर्पित करनेका गौरव दिया गया है जिसका मै अत्यधिक सम्मान करता था। यद्यपि उनसे बहुत बार मेरा मतभेद हो जाता था और वे कर्त्तव्यभावमे जब भी जरूरत पडती थी अपना मतभेद प्रकट करनेमे जरा भी हिचक नही दिखाते थे। उनको जब भी लगता था कि देशके हितकी दृष्टिसे उनके लिए अपना विचार जोरदार शब्दोमें व्यक्त करना जरूरी हो गया है, और उसके बिना कोई चारा नही है, तब वे व्यक्तियो और उनकी भावनाओको अपने आडे नही आने देते थे। ऐसे थे श्री कस्तूरी रगा आयगर।

मै आपको बतला चुका हूँ कि इधर कई वर्षोसे मै अखबारोको नियमित रूपसे नही पढ पाता। पर मैंने सुना है कि 'हिन्दू' के वर्तमान सम्पादक और श्री कस्तूरी रगा आयगरके सुपुत्र अपने प्रख्यात प्रधान सम्पादककी नीति और परम्पराओका ही सावधानीसे अनुगमन कर रहे है। आशा है कि 'हिन्दू' फले-फूलेगा और ठीक उसी

प्रकार देशकी सेवा करता रहेगा जिस प्रकार श्री आयगरके सम्पादकत्वमे लम्बे अर्सेसे करता आ रहा है। लोकमतको व्यक्त और प्रचारित करनेमे पत्रकारिताका एक अपना विशिष्ट स्थान है। हम अभी अपने देशमे पत्रकारिताकी सर्वोत्तम परम्पराएँ बना रहे है या कहना चाहिए कि हमे अभी बनानी है। हमारे यहाँ कई अत्यन्त सुयोग्य पत्रकार है। हम उनका अनुसरण कर सकते है। हमारे देशमे बहुत पहले क्रिस्टोदास पाल[1] जैसे देशभक्त भी हो चुके है। जिन दिनो निर्भयताके साथ अपने विचार व्यक्त करना या लिखना बहुत ही कठिन था, उन दिनो उन्होने लोकमतका नेतृत्व किया था और उन्होने खुद जो भी महसूस किया तथा देशने जो-कुछ कहा उसे व्यक्त करनेमे कभी कोई हिचक नही दिखाई थी। इसलिए हमारे सामने इतनी श्रेष्ठ परम्पराएँ है, जिनका हमे अनुसरण करना है। फिर भी मुझे पत्रकारिताका जो-थोडा-बहुत अनुभव है उसके आधारपर मै खयाल करता हूँ कि अभी हमे बहुत-कुछ करना है। मै जानता हूँ कि हम अपने ध्येयकी ओर जैसे-जैसे आगे बढते जायेगे, पत्रकारिता हमारे देशके भाग्यके निर्माणमे तैसे-तैसे अधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती जायेगी।

मै इसीलिए अपने परिचित पत्रकारोसे हर अवसरपर यही बात कहता रहता हूँ कि अपने स्वार्थ साधन करने या केवल अपने जीविकोपार्जन करने या उससे भी बुरी बात धन-सचय करनेके लिए पत्रकारिताका दुरुपयोग नही किया जाना चाहिए। पत्रकारिता देशके लिए तभी उपयोगी और कारगर होगी और अपना उचित स्थान प्राप्त करेगी जब वह नि स्वार्थ भावसे चलाई जायेगी, जब उसकी अधिकाश शक्ति सम्पादको या स्वय पत्र-पत्रिकाओपर आनेवाली किसी भी विपत्तिका विचार किये बिना देशकी सेवामे लगेगी और जब सम्पादक परिणामोकी परवाह छोडकर देशकी जनताके विचारोको व्यक्त करेगे। मै समझता हूँ कि हमारे देशमे इस तरहकी पत्रकारिता पनप रही है। 'हिन्दू' भी उन चन्द समाचारपत्रोमे से एक है, जो इसे अजाम दे सकते है। उसने अपनी एक विशेष प्रतिष्ठा बना ली है। इसलिए मै आशा करता हूँ कि 'हिन्दू' के वर्तमान प्रबन्धक और सम्पादक अपनी सर्वोत्तम परम्पराओका अनुसरण करते रहेगे और यहाँ मै यह भी कह दूँ कि अपनी विरासतको और शानदार बनानेका तरीका उसे ज्योकी-त्यो बनाये रखना नही, बल्कि उसे अधिक समृद्ध बनाना है।

मेरा खयाल है कि इजाफा करनेकी, नये विचारोकी हमेशा गुजाइश रहती है और इसीलिए मुझे उम्मीद रखनी चाहिए कि सम्पादक मण्डल इस बातको स्वीकार करेगा कि भारतमे तेजीसे पाठकोका एक नया वर्ग ऐसा पैदा हो रहा है जो बिलकुल ही भिन्न प्रकारके विचार, कार्य और कदाचित् समाचार भी चाहता है। यह नया वर्ग जनतामे से खडा हुआ है। आपको शायद मेरी बातपर विश्वास हो जायेगा। मैंने देश-भरमे घूम-घूमकर खुद देखा है कि भारतकी जनतामे अधिक अच्छी व्यवस्थाके लिए एक स्पष्ट आकाक्षा पैदा हो गई है। वह अपने लिए एक अधिक अच्छी व्यवस्था चाहती है। पत्रकार अभीतक भारतकी महान् जनताकी सेवा नही कर पाये है; अत यदि वे उसके हृदयमे सचमुच बैठना चाहते है—तो उन्हे एक बिलकुल

१. (१८३४-१८८४), प्रमुख राजनीतिज्ञ, **हिन्दू पैट्रियट**के सम्पादक।

दूसरा ही मार्ग ढूंढना होगा, दूसरी ही नीति अपनानी होगी। आप मुझसे यह उम्मीद तो अवश्य ही नही करेगे कि मै यह भी बताऊँ कि वह नीति क्या होनी चाहिए। अगर इसका निर्णय मुझपर छोड दिया जाये तो आप जानते ही है कि वह नीति क्या होगी या क्या होनी चाहिए। मै इन विचारोको सिर्फ आपपर छोडता हूँ।

मै इन शब्दोके साथ सम्पादक महोदय और श्री कस्तूरी रगा आयगरके सुपुत्रोको इस विशिष्ट सम्मानके लिए एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ, विशिष्ट इसलिए कि मुझे इस चित्रका अनावरण करनेका सौभाग्य मिला। (जोरसे देरतक तालियाँ)।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-३-१९२५

२०३. भाषण: मद्रासकी सार्वजनिक सभामें[1]

२२ मार्च, १९२५

सभापति महोदय और मित्रो,

जिन महानुभावो और सस्थाओने मुझे ये अभिनन्दन-पत्र दिये है, मै उन सभीका आभारी हूँ। सभापति महोदय,[2] आपने हिन्दू-मुसलमान एकताके प्रश्नकी चर्चा कुछ विस्तारसे की है। मै आपके द्वारा व्यक्त किये गये भावोकी पुष्टि करता हूँ। अगर हिन्दू और मुसलमान समझदारीके साथ अपने बीच स्वय एकता कायम नही करेगे तो उनको ऐसा मजबूरन करना होगा, क्योकि कोई भी एक दल इस देशका नेतृत्व नही कर सकता। जबतक देशमे थोडेसे भी हिन्दू और मुसलमान ऐसे है जो सभी जातियो-की एकतामें सर्वोपरि आस्था रखते हैं, तबतक मुझे पूरी आशा है कि हम सबमे एकता, हार्दिक एकता होगी। काग्रेसको समाजसेवी सस्था या कताई-सस्था माना जाये तो मुझे खुद अपनी तरफसे इसमें कोई आपत्ति नही है, क्योकि यदि हम सामाजिक और आर्थिक कहे जानेवाले मसलोकी उपेक्षा करेगे तो कोई भी यह देख ले सकता है कि स्वराज्य हासिल करना नामुमकिन है। लेकिन साथ ही काग्रेस एक राजनीतिक सस्था भी है, क्योकि स्वराज्य दल काग्रेस सगठनका एक अविभाज्य अग है, और काग्रेस राजनीतिक महत्वाकाक्षाकी पूर्तिकी इच्छा रखनेवाले प्रत्येक काग्रेसीको स्वराज्य दलके जरिये उसकी चरम पूर्तिका अवसर देती है। लेकिन जहाँतक मेरा सवाल है, कमसे-कम फिलहाल मेरी राजनीति चरखेसे आगे नही जाती। उसका चक्र इतनी तेजीसे और ऐसे निश्चित भावसे घूमता है कि उसकी गतिमे अन्य सभी गतिविधियाँ आ जाती है। चरखेका काम सभी जातियोके बीच एकता स्थापित करने और अस्पृश्यता-निवारणके कामके साथ मिलकर एक ऐसी आधारशिला प्रस्तुत कर देता है जिसपर

१ यह भाषण गुजराती सेवक मन्दिर, अमरवाला विलासिनी सभा और तिलक घाट (ट्रिप्लीकेन बीच) स्थित नौरोजी-गोखले सघ द्वारा दिये गये अभिनन्दन पत्रोंके उत्तरमें दिया गया था।

२ याकूब हसन।

आप किसी भी राजनीतिक या राष्ट्रीय भवनका निर्माण कर सकते हैं। अस्पृश्यता-निवारणके बिना तो आप जिस भवनका भी निर्माण करेंगे, वह रेतपर बने मकानकी तरह ढह जायेगा। इसलिए आपका ध्यान कुछ देरतक वाइकोम सत्याग्रहकी ओर आकर्षित करनेके लिए मुझे कोई सफाई देनेकी जरूरत नही रह जाती।

आपमे से जो लोग अखबार पढते है, उन्होने शायद मेरे त्रावणकोरके दौरेके बारेमे सब-कुछ पढा होगा। मुझे पूरी-पूरी उम्मीद है कि कट्टरपन्थी हिन्दुओके पूर्वग्रहकी दीवार सुदृढ और सगठित लोकमतके आगे ढह जायेगी। मेरी अपनी राय यह है कि त्रावणकोर-सरकार सुधारके खिलाफ नही है। अस्पृश्यता एक ऐसा अभिशाप है जिसे शीघ्रसे-शीघ्र दूर करना हर हिन्दूका कर्त्तव्य है। मैंने अस्पृश्यताका बुरेसे-बुरा स्वरूप देखा है। अन्त्यजोका सवर्णोके पास आना ही नही, उनकी निगाहके सामने आना भी अनुचित माना जाता है। धर्मान्ध लोग, कुछ लोगोको देखनातक पाप समझते हैं नयाडी लोगोके लिए तो यह आवश्यक होता है कि वे सवर्णोकी नजरके सामने भी न आये। मैंने त्रिचूरमे इस जातिके दो मनुष्य देखे थे जिनकी देह तो मनुष्यकी थी और फिर भी वे मनुष्य नही थे। (हँसी) भाइयो, यह हँसनेकी बात नही, बल्कि खूनके आँसू बहानेकी बात है। आँखोके नामपर वहाँ मात्र दो गड्ढे थे। अगर उनके साथ मानवीयताका बर्ताव किया जाता तो उनके आँखे हो सकती थी। आप लोगोकी आँखोमे जैसी चमक दिखाई देती है, वैसी चमक उनकी आँखोमे नही थी। उनको आकर मुझे मानपत्र भेट करने थे। लेकिन उनको गाडीतक हाथोमे उठाकर लाना पडा था और वे अपने काँपते हुए हाथोसे मानपत्र पकडे हुए थे। मैंने उनको चेतन करनेकी और उनके चेहरोपर थोडी खुशी लानेकी कोशिश की। लेकिन मैं कतई कामयाब नही हो सका। वे मानपत्रोको मुझे पकडा नही पाये। मुझे स्वय आगे बढकर उनके हाथोसे उन्हे लेना पडा। फिर उन लोगोको, जैसे वे लाये गये थे वैसे ही, उठाकर वापस ले जाना पडा। अगर हममे पर्याप्त विचारशक्ति हो और अगर हमारे दिलोमे अपने देश या धर्मके लिए पर्याप्त प्रेम हो, तो हम जबतक देशको इस अभिशापसे मुक्त नही कर लेते तबतक चैनसे न बैठे। यदि कोई मुझसे कहे कि शास्त्रोमे किसी ऐसी बुराईका समर्थन है तो मुझे ऐसे शास्त्रोकी जरूरत नही, लेकिन जिस प्रकार सभामे हमारी उपस्थितिकी बात निश्चित है उसी प्रकार मै निश्चित रूपसे जानता हूँ कि शास्त्रोमे ऐसी किसी पैशाचिकताका प्रतिपादन या आदेश नही है। यह कहना कि जन्मके कारण कोई भी मनुष्य अस्पृश्य, अनुपगम्य या अदर्शनीय हो जाता है, ईश्वरकी सत्ता माननेसे इन्कार करना है। मै इसीलिए आपसे कहता हूँ कि त्रावणकोरके सत्याग्रही जो साहसिक सघर्ष चला रहे है, आप सार्वजनिक सभाओ और अन्य सभी वैध तरीकोके जरिये लोकमत जगाकर उसका समर्थन करे। मै पजाबसे कन्याकुमारीतक और असमसे सिन्धतकके हिन्दुओको इस एक बातपर एकमत कर सकूँ तो अवश्य करूँगा।

अभी-अभी एक सज्जनने मुझे एक पर्चेमे इस विषयमे कुछ प्रश्न लिखकर भेजे है।

मै बडी खुशीसे उनके उत्तर देता हूँ। उन्होने पूछा है कि यदि अछूतोको सडकोका इस्तेमाल करनेकी इजाजत दे दी जाये तो क्या आप उसके बाद सभी हिन्दुओ-

की तरह हिन्दू मन्दिरोमे प्रवेशकी उनकी माँगका समर्थन करेगे? मुझे तो इस समय इस प्रश्नके पूछे जानेपर आश्चर्य हो रहा है। मै इसके उत्तरमे जोर देकर कहता हूँ — हाँ। मै तो कहता हूँ कि अछूतोके लिए सब सार्वजनिक सडके ही नही खुली होनी चाहिए, बल्कि ब्राह्मणोके लिए खुले सब मन्दिर भी उनके लिए खुले रहने चाहिए, और वे सभी सार्वजनिक स्कूल, जिनमे अब्राह्मण और अन्य लोगोके बच्चे दाखिल किये जाते है और सभी सार्वजनिक स्थान, जैसे कुएँ या यात्रियोके बगले या आम लोगोके लिए अन्य सभी स्थान अछूतोके लिए भी उसी तरह खुले रहने चाहिए जैसे कि हम सबके लिए खुले रहते है। जबतक ईश्वरकी धरतीके इस खण्डपर यह एक सीधा-सा और बुनियादी मानवीय अधिकार हर मनुष्यके लिए सुनिश्चित नही बना दिया जाता तबतक मै समझता हूँ कि अस्पृश्यताके बारेमे मेरी माँग अपूर्ण ही है। यह जितना अछूतोका अपना हक हे, उससे ज्यादा हम सवर्ण हिन्दुओका उनके प्रति कर्त्तव्य हे। अस्पृश्यो और समस्त ससारके प्रति हमने जो पाप किये है उनका यह कमसे-कम प्रायश्चित्त है। किन्तु आप मेरी बातका अर्थ गलत न लगाएँ। मै इस अधिकारको सत्याग्रहके बलपर इसी समय प्राप्त करना नही चाहता। वाइकोम सत्याग्रह तो अस्पृश्योके लिए खास-खास सडकोके खुलते ही बन्द हो जायेगा। मै महसूस करता हूँ कि मन्दिरोके प्रश्नपर हमारे खिलाफ पूर्वग्रहकी एक भारी और ठोस दीवार खडी हुई है, हालाँकि यह अनुचित है। यह बुराई हिन्दू जातिको सत्वहीन बनाती जा रही है, फिर भी मै इसका उन्मूलन करनेके लिए किसी भी रूपमे हिंसाका प्रयोग करनेके पक्षमें नही हूँ। लेकिन यह बात भी बिलकुल निश्चित है कि जबतक अछूतोके लिए यह पूरा अधिकार सुनिश्चित नही कर दिया जाता और जबतक अस्पृश्य और अदर्शनीय शब्द ही कोषसे नही निकाल दिये जाते, तबतक प्रत्येक हिन्दूका कर्त्तव्य है कि वह दम न ले।

इस भाईने दूसरे प्रश्नमे मुझसे पूछा है कि सनातनी हिन्दूकी परिभाषा क्या है, और क्या सनातनी हिन्दू ब्राह्मण किसी माँसाहारी अब्राह्मण हिन्दूके साथ बैठकर भोजन कर सकता हे? मेरी परिभाषाके अनुसार सनातनी हिन्दू वह है जो हिन्दू धर्मके मूलभूत सिद्धान्तोमे विश्वास करे और हिन्दू धर्मके मूलभूत सिद्धान्त है — सत्य और अहिंसामे पूर्ण आस्था। 'उपनिषदो' ने कहा है और 'महाभारत' ने ऊँचे स्वरमे घोषित किया है कि "यदि तुम अपने सारे राजसूय और अश्वमेघ यज्ञोको और अपने सारे सुकृतोको तराजूके एक पलडेमे और सत्यको दूसरे पलडेमें रखो तो सत्यका पलडा भारी बैठेगा।" इसलिए जो भी चीज सत्य रूपी निहाईपर रखी जाने और अहिंसारूपी घनसे पीटी जानेपर टूट जाये और उस कसौटीपर खरी न उतरे, उसे अहिन्दू मानकर त्याग दो। इस भाईको और इसी प्रकारकी शकाएँ रखनेवाले दूसरे भाइयोको सनातनी हिन्दूकी अधिक विस्तृत परिभाषाके लिए 'यग इडिया' के पृष्ठ देखने चाहिए। मैंने बार-बार कहा है कि अन्तर्जातीय भोजो और अन्तर्जातीय विवाहोका अस्पृश्यता-निवारणसे कोई सम्बन्ध नही है, क्योकि अन्तर्जातीय भोज या विवाह तो अपनी-अपनी पसन्दकी बात है और हर मनुष्यको उसे इसी रूपमे लेना भी चाहिए। यह

तो विलास या रुचिकी तृप्ति है, परन्तु अस्पृश्यताका मतलव तो अपने भाइयोकी सेवासे पराड्मुख होना है, जबकि सत्य और अहिंसाकी अपेक्षा है कि कोई भी मनुष्य किसी भी दूसरे मनुष्यको, चाहे वह कैसा ही पापी हो, अपनी सेवासे वंचित न करे।

इस भाईने वर्णाश्रम धर्मके वारेमे मेरे विचार पूछे है। मै चार वर्णो और चार आश्रमोमे विश्वास करता हूँ। हमने इन चारो वर्णोकी व्यवस्थाको विगाड दिया है और उनको उचित रूपमे न मानकर एकको दूसरेसे ऊँचा मान लिया है। हमने अपने तीन आश्रम तो विलकुल समाप्त कर दिये है और चौथा गृहस्थाश्रम, वस नाम-मात्रका ही रह गया है। हमारी गिरावट और दुर्दशाका कारण यही है। ऋषियोने हिन्दू धर्ममे अनुशासन और सयम लानेके लिए मनुष्यके जीवनको इन चार अवस्थाओमे या आश्रमो-मे वॉटा था। गृहस्थाश्रम वहुत वर्षोके ब्रह्मचर्य-पालनका पूर्ण परिपाक है। हमारी आदत-सी वन गई है कि हम छोटी-छोटी वातोको लेकर वेचैन हो जाते है और वडी-वडी वुराइयोको पचा जाते है। ब्रह्मचर्य आश्रमसे ही हिन्दू-धर्मको स्थिरता मिली है। यहॉतक कि वह युगोसे चला आता है। अनेक सभ्यताएँ समाप्त हो गई है, किन्तु वह अवतक सुरक्षित है। अगर हम वानप्रस्थ और सन्यास दो अन्य आश्रमोको भी पुनर्जीवित करते, अपना पूरा समय और मन राष्ट्रकी सेवामे लगाते और पूरे तौरपर राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता वन जाते तो हमे यह विडम्वना न देखनी पडती, हमारा इतना पतन न होता और न हमारे सम्मुख वाल-विवाहो और बाल-विधवाओके दु खद प्रसग ही आते। हम वर्णाश्रम धर्मका पालन केवल उनके सही अर्थोमे करे तो हम इतने कापुरुष न रहे। तव हम केवल ईश्वरका ही भय मानेगे और किसी भी मनुष्यसे कभी न डरेगे। आज हम एक-दूसरेसे डरते है, मुसलमानोसे डरते है और अग्रेजोसे भी डरते है। हमने पूर्वजोसे जो पौरुष पाया था, वह अव हममे नही रहा है और अब हम हाड-मॉसके पुतले-मात्र रह गये है।

उक्त भाईने आखिरी प्रश्न, जो असलमे पहला ही प्रश्न है, यह पूछा है कि "विधान परिषदोके आगामी चुनावोमे मतदाताओका क्या कर्त्तव्य हे? क्या आप मुझे मतदान न करनेकी सलाह देते है?" यह तो आसमानसे धरतीपर आ गिरने जैसा है। यदि मै मतदाता होऊँ और इस अधिकारका प्रयोग करूँ तो मै क्या करूँगा — यह मै आपको वताता हूँ। मै सवसे पहले उम्मीदवारोकी भली-भॉति जॉच-पडताल करूँगा और यदि देखूँगा कि कोई भी उम्मीदवार सिरसे पैरतक खद्दर नही पहने है तो मै किसीको भी मत न दूँगा, मतदान पत्रको हिफाजतसे अपनी जेवमे ही रखे रहूँगा। किन्तु यदि मुझे यह इत्मीनान हो जायेगा कि उनमे से कमसे-कम एक सज्जन ऊपरसे नीचेतक खद्दरधारी है तो मै उनके पास जाकर उनसे पूरी विनम्रतासे पूछूँगा कि उन्होने इसी अवसरके लिए खद्दर पहन रखा है या वे आदतन घर और बाहर सर्वत्र हाथकता और हाथवुना खद्दर पहनते है। अगर उनका उत्तर 'नही' मे होगा तो भी मै अपना मतदान पत्र जेवमे ही रखे रहूँगा। उनसे मै फिर यह कहूँगा, "आप सदा खद्दर पहनते है, यह तो वहुत ही अच्छी बात है। लेकिन क्या आप जनताके लिए रोजाना कमसे-कम आधा घटा कताई करते है?" उनके उत्तरसे विलकुल पूर्ण

सन्तुष्ट हो जानेपर उनसे मेरा अगला प्रश्न यह होगा, "क्या आप हिन्दू-मुसलमान-पारसी-ईसाई-यहूदी एकतामे विश्वास करते है?" इस प्रश्नका उत्तर भी सन्तोषजनक मिले तो मै पूछूंगा, "क्या आप हिन्दू है और क्या यह सभी जातियोका सम्मिलित निर्वाचन-क्षेत्र है, जिसमे मै हिन्दुओ, मुसलमानो और अन्य जातियोके लोगोको भी मत दे सकूँगा? कृपया यह भी वताएँ कि क्या आप उस अर्थमे अस्पृश्यता-निवारणमे विश्वास करते है, जिस अर्थमे मैने उसे आपके सामने रखा है?" मै एक बहुत ही महत्वाकाक्षी और उत्साही मतदाता हूँ। इसलिए मै उनसे एक प्रश्न और पूछूंगा, "क्या आप मद्यपान-निषेध सम्बन्धी सुधारके पक्षमें है और क्या आप तुरन्त पूरी शराबवन्दी करानेके पक्षमे है, भले फिर उसके फलस्वरूप राजस्वमे कमी होनेके कारण सभी स्कूल वन्द क्यो न कर देने पडे?" अगर उनका उत्तर होगा—"हाँ," तो मै आश्वस्त हो जाऊँगा और उनसे तुरन्त ब्राह्मण-अब्राह्मण समस्यापर एक-दो अन्य प्रश्न पूछकर यह देख लूँगा कि उनके इस वारेमे भी ठीक विचार है तो मै उनको मत दूंगा। मैं तो वस यही करूँगा। आप और भी पचासो प्रश्न पूछ सकते है। लेकिन मैं आपको यही सलाह दूंगा कि आप जवतक ये सब और कुछ अन्य प्रश्न भी पूछ न ले तवतक सन्तोष न करे।

अब मैं उस वातके वारेमे कुछ शब्द कहूँ जो मेरे मनमे सर्वोपरि है। इस समय तिरुपुरमे १०,००० चरखे और १,००० करघे चल रहे है। वहाँ वुनकर बहनोमें तीन लाखसे कुछ ऊपर रुपये वाँटे जाते है। तमिलनाडके मन्त्री, श्री सन्तानमको शिकायत है कि आप लोगोको जो खद्दर दिया जाता है, आप उसे नही खरीदते, और इसलिए उन्हे, चन्द पैसोपर आठ घटे रोज खुशीसे कताई करनेके लिए तैयार, कई वुनकर बहनोको विना काम दिये लौटा देना पडता है। उन्होने मुझे वताया है कि एक उसी जिलेमे साल-भरमें लगभग ५० लाख रुपयेतक का खद्दर तैयार किया जा सकता है। इस अहातेके कई अन्य स्थानोमें भी ऐसी ही स्थिति है। यहाँ यदि कुछ शकालु अब्राह्मण लोग हो, तो मै उनको वताये देता हूँ कि ये वुनकर और कतैये अब्राह्मण ही है। अकेले तिरुपुरमें ही ७५,००० रुपयेकी खादी सचित है। आपके यहाँके महा-मन्त्री श्री भरूचा आज आपसे कहने आये है कि आपको अपने देशभाइयोकी खातिर सूत कातना और खद्दर पहनना चाहिए। वे अपने कन्धोपर खद्दरकी गठरी लेकर जगह-जगह और घर-घर जायेंगे और आपसे कहेगे कि आप अपने देशवासियोकी ओर देखें। भगवानके लिए समय वर्वाद न करे, इसपर वहस न करे कि क्या खद्दर भारत-की नित्य वढती हुई गरीवीकी भारी समस्याको हल कर सकता है या नही। मेरी वातपर विश्वास करे कि यदि हम इस एक समस्याको ही उचित रूपसे और पूरी तरह हल कर ले तो उससे हमारी वर्तमान हजारो असाध्य समस्याओके हलका रास्ता खुल जायेगा। जन साधारणको खद्दर सस्ता मिले इसके लिए रोज कमसे-कम आप आधा घटा सूत कातनेमे सकोच न करे। ईश्वरने चाहा तो मैं तीन महीने वाद यहाँ फिर आऊँगा। (हर्षध्वनि) जब मै यहाँ आऊँ तब मुझे यह दुखद स्थिति तो न देखनी पडे कि आप तीन महीने वाद भी जहाँके-तहाँ ही खडे है। मेरी प्रार्थना है

कि आप ऐसे प्रयत्न करे कि विभिन्न राष्ट्रीय भण्डारोमे पडा सारा खद्दर खत्म हो जाये और इन तीन महीनोमे आप ऐसे ढगसे सगठित हो जाये कि खद्दरके उत्पादनमे लगे हुए कार्यकर्त्ता फिर कभी यह शिकायत न कर पाये कि वे खद्दरके खरीदार न मिलनके कारण अनेक बुनकरो और कतैयोकी भूख नही मिटा सकते। मुझे आशा है कि आप ऐसा ही करेगे। आप इस महानगरके बारेमे यह कहनेका अवसर न दे कि वह इस कसौटीपर कच्चा उतरा।

आपने धैर्य और शान्तिके साथ मेरा भाषण सुना, इसके लिए मै आपका आभारी हूँ।

कृपया जबतक मै मुख्य सडकपर न पहुँच जाऊँ तबतक आप सभास्थलको न छोडे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-३-१९२५

२०४. भाषण: विद्यार्थियोंकी सभामें[1]

२२ मार्च, १९२५

मै इस सुन्दर मानपत्रके लिए आपका आभारी हूँ। मै अपने भ्रमणमे विभिन्न मतोके हजारो विद्यार्थियोसे मिला हूँ। मैने उनके साथ राजनीतिपर ही नही, सभी तरहके मामलोपर बातचीत की है। मै आज भी उनके साथ पत्र-व्यवहार करता रहता हूँ, इसलिए मै विद्यार्थी समाजकी महती आकाक्षाओसे परिचित हूँ। मै उनकी कठिनाइयोका अनुभव करता हूँ और उनकी उमगे क्या है यह जानता हूँ। आपने कहा है कि मुझे विद्यार्थी समाजकी ओरसे निराश नही होना चाहिए। मै हो भी कैसे सकता हूँ? मै खुद भी विद्यार्थी रह चुका हूँ और जहाँतक मेरा खयाल है मैने मद्रासमे ही एक सभामे आपको "साथी विद्यार्थी" कहकर सम्बोधित किया था, लेकिन वह एक दूसरे अर्थमे था। यह सही है कि मै अपनेको विद्यार्थी मानता हूँ और इसलिए मै आपके साथ अपनी एकात्मता अनुभव कर सकता हूँ। विद्यार्थी सत्यशोधी होता हे। मै यहाँ विद्यार्थी शब्दका प्रयोग उसके सकुचित अर्थमे नही कर रहा हूँ। मै विद्यार्थीका सिर्फ इतना अर्थ नही लगा रहा हूँ कि वह कुछ पुस्तकोका अध्ययन करके, उनमे से कुछको याद करता है और कक्षाओमे शिक्षकोके व्याख्यान सुनकर परीक्षाएँ पास करता है। मै समझता हूँ कि यह तो विद्यार्थियोके कार्य या कर्त्तव्यका न्यूनतम भाग है। विद्यार्थी तो असलमे वह है जो अपनी अवलोकन-शक्तिका निरन्तर उपयोग करता है, उससे ससारके बारेमे सही निष्कर्ष निकालता है और जीवनमे अपने लिए एक मार्ग बनाता है। उसे जीवनमे अपने कर्त्तव्यकी बात पहले सोचनी चाहिए और अधिकार प्राप्तिकी बात पीछे। अगर आप अपना कर्त्तव्य पूरा करे, तो

१. 'गोखले हॉल' में मद्रास अन्तर्छात्रावास वाद-विवाद समितिकी ओरसे दिये गये मानपत्रके उत्तरमें।

आपके अधिकार आपको मिलना उतना ही निश्चित है, जितना रातके वाद दिनका होना। विद्यार्थियोको जीवनके अन्य पहलुओकी अपेक्षा इस पहलूपर अधिक ध्यान देना चाहिए। मै देशभरमे विद्यार्थियोमे यही अनुरोध करता आ रहा हूँ कि वे स्कूलो और कालेजोमे कुछ भी करे, पर यह वात हमेशा याद रखे कि वे देशके चुने हुए प्रतिनिधि है, और स्कूल-कालेजोमे पढनेवाले विद्यार्थी देशके युवक समाजका एक वहुत ही छोटा-सा अश है और वर्तमान शिक्षा-व्यवस्थाके कारण हमारे देहातोके लोग विद्यार्थी समाजके सम्पर्कमे विलकुल ही नही आते। जवतक शिक्षाकी स्थिति ऐसी वनी रहेगी, तवतक मेरा विश्वास है कि विद्यार्थियोका यही कर्त्तव्य वना रहेगा कि वे जनताके दिमागको समझे और जनताकी सेवा करे। जनताकी सेवा करने और उसके लिए अपने-आपको तैयार करनेके लिए आपको क्या करना चाहिए—इस सिलसिलेमे मै आपको एक वडी सुन्दर वात सुनाता हूँ। यह वात श्री सी० एफ० एन्ड्रयूजने शान्ति-निकेतनके विद्यार्थियोके वारेमे 'यग इडिया' के लिए लिखी थी।

महात्माजीने इस वातको सुनाते हुए वतलाया कि शान्तिनिकेतन आश्रमके कुछ छात्र जनताकी सेवा करनेके लिए पासके कुछ गाँवोमें गये थे। लेकिन वे वहाँ सरपरस्तोके रूपमें गये थे, सेवकोके रूपमें नहीं। गाँवोके लोगोने उनकी वातोके प्रति उत्साह नहीं दिखाया, इसलिए उन्हे शुरूमें तो निराशा हुई। उन्होने गाँवोके लोगोसे कुछ काम करनेके लिए कहा था, किन्तु जव वे दूसरे दिन यह पता लगाने गये कि कितना काम हो चुका है तव उन्हे मालूम हुआ कि काम विलकुल ही नहीं किया गया है। लेकिन छात्र जव खुद फावडे और कुदाल लेकर काममें जुट पडे, तव उन्होने तुरन्त फर्क देखा। महात्माजीने आगे वताया कि छात्रोने कैसे उन देहातोमें चरखे चालू करवाये और गाँवोके लोगोने फिर कैसे उनके साथ हर सेवा-कार्यमें हाथ वँटाया। इसके वाद उन्होने भारत सेवक समाजके डा० देवका उल्लेख किया। उनको चिकित्सा सम्वन्धी सेवाकार्यके लिए चम्पारनके पासके कुछ गाँवोमें भेजा गया था। महात्माजी उन दिनो स्वय भी वहाँ ग्रामीण जनताकी कुछ शिकायतें दूर करानेके लिए कार्य कर रहे थे। उन्होने वताया कि डा० देव गाँवोकी सफाई व्यवस्था और गन्दगी तथा रोग दूर करनेसे सम्वन्धित कुछ सुधार करके आदर्श गाँव तैयार करनेकी कोशिश कर रहे थे। उन्होने आगे वताया कि डा० देवने कैसे गाँवोकी जनताका सहयोग प्राप्त किया और कैसे खुद कुओकी सफाई करके और घरोकी गन्दगी दूर करके उन्हें सफाईके सिद्धान्तोका पालन करना सिखाया। डा० देव और उनके सहयोगियोको गाँवोंके लोगोसे इस प्रकारके सेवाकार्योमें तत्परतापूर्ण सहयोग मिला और गाँवोके लोग शर्मिन्दा होकर डा० देव और उनके साथियोकी सहायता करनेके लिए ही नहीं निकल पडे, वल्कि यह भी जानना चाहा कि वे उन कामोको खुद कैसे कर सकते है।

महात्माजीने छात्रोको इन शब्दोमें समाज सेवाकी तैयारी करनेका उपदेश दिया:

आपकी वास्तविक शिक्षा तो स्कूल-कालेज छोडनेके वाद ही शुरू होती है। आप दिन-प्रतिदिन कक्षाओमे कुछ वाते सीखते है, लेकिन उनको अमलमे लाना भी तो

आपको सीखना चाहिए। अक्सर होता यह है कि आपने वहाँ जो भी कुछ सीखा है वह आपको भुलाना पडता है, जैसे कि वे गलत-सलत अर्थशास्त्रीय विचार जो आपके दिमागोमे ठूँसे गये है और इतिहासके झूठे तथ्य पढाये गये है। इसलिए आपको अपनी अवलोकन-शक्तिका उपयोग करना है और उनकी तहमे जाकर असलियत समझनी है। राष्ट्र-सेवा और आपकी शिक्षाकी आधार-शिला शैक्सपियर, मिल्टन और अग्रेजीके अन्य कवियो या कालिदास, भवभूति या अन्य सस्कृत कवियोके अध्ययनपर नही रखी जा सकती। वह आधार-शिला तो सूत कातने और खद्दर बुननेपर ही रखी जा सकती है। मै यह क्यो कहता हूँ? इसलिए कि आपको करोडो लोगोके बीच काम करना हे और आपको खेतीमे एक दानेकी जगह दो दाने पैदा करवाने है। यदि आप देशकी सम्पदा और उसके उत्पादनमे वृद्धि करना चाहते है तो विश्वास करे कि उसका एकमात्र उपाय चरखा ही है। कालिदास या रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी कृतियाँ उच्च वर्गोमे ही पढी जाती है। मै बगालके जीवनसे परिचित हूँ और कह सकता हूँ कि वहाँ ये केवल उच्च वर्गोमे ही पढी जाती है। और सबसे बडी समस्या यही है कि उच्च वर्गो ओर जनसाधारणके बीच कडी कैसे कायम की जाये? गुजरात विद्यापीठमे हजारो विद्यार्थी है। उनके कल्याणका दायित्व मुझपर भी माना जाता है। मेरे लिए यह एक जटिल समस्या है। लेकिन मेरा खयाल है कि विद्यार्थियोका वास्तविक कार्य उन बडे-बडे शहरोमे नही है जहाँ वे शिक्षा पाते है, बल्कि गाँवोमे है, जहाँ उन्हे अपनी शिक्षा समाप्त करके जाना चाहिए और अपनी शिक्षा द्वारा उपलब्ध सन्देशको वहाँ पहुँचाना चाहिए, जिससे गाँववालोके साथ एक जीवन्त सम्पर्क स्थापित किया जा सके। मै ऐसे किसी भी व्यक्तिकी बात नही मान सकता जो कहता है कि यह सम्पर्क उनकी अपनी शर्तोपर ही स्थापित किया जा सकता है। गाँवोके लोग रूखी-सूखी रोटी-भर चाहते है, वे एक व्यवस्थित ढगका काम चाहते है, ऐसा काम जिसे वे खेतीके कामोसे बचे हुए समयमे कर सके, क्योकि खेतीका काम बारहो महीने नही चलता। दोस्तो, आप अगर अपने जीवनके मुख्य कार्यके बारेमे गम्भीरतासे सोचे तो आप उसकी आधार-शिला इसी विचारपर रखे। मुझे भरोसा है कि आप ऐसा ही करेगे (तुमुल हर्षध्वनि)।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-३-१९२५

२०५. भाषण : मद्रासके मजदूरोकी सभामें[1]

२२ मार्च, १९२५

मित्रो और साथी मजदूरो,

मै आपके मानपत्रके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। मै मद्रास साहित्य अकादमीके मानपत्रके लिए भी आभार प्रकट करता हूँ। आपको साथी मजदूर कहनेमे मेरा तात्पर्य यह है कि मै भी अपने-आपको मजदूर मानता हूँ। मुझे अपने आपको कतैया, बुनकर, किसान और भगी कहनेमे गर्वका अनुभव होता है। मेरे जैसे मनुष्यके लिए जहाँतक सम्भव है, वहाँतक मैने अपना भाग्य आपके साथ जोड दिया है। मैने ऐसा इसलिए किया है कि मेरा विश्वास है, भारतकी मुक्ति आपके जरिये ही होगी। मैने ऐसा इसलिए भी किया है कि मै महसूस करता हूँ कि भारतकी मुक्ति श्रम अर्थात् हाथ-पैरोकी मेहनतके बलपर ही हो सकती है, किताबे पढनेसे या दिमागी कसरत करनेसे नही। मैने महसूस किया है और दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक महसूस करता जा रहा हूँ कि मनुष्य शारीरिक श्रमसे ही अपनी शरीर-रक्षा करनेके लिए पैदा हुआ है। कतैयो, बुनकरो और अन्य मजदूरोसे मै जब मिलता हूँ तब उनमे यही कहता हूँ कि वे शारीरिक श्रम कभी बन्द न करे, बल्कि उसके साथ अपना बौद्धिक विकास भी करे। लेकिन मै जानता हूँ कि श्रममे जो सुख मुझे मिलता है वह आपको नसीब नही है। आपमे से अधिकाशके लिए श्रम कष्टप्रद और सुखहीन है। श्रमके कष्टप्रद और सुखहीन होनेका आशिक कारण यह है कि धनिक लोग आपके श्रमका शोषण करते है, लेकिन उसका मुख्य कारण यह है कि स्वय आपमें कुछ दोष और त्रुटियाँ है। मेरे श्रमिक बननेका तीसरा कारण यह है कि मै आपके ही धरातलपर रहता हुआ आपके दोषो और आपकी त्रुटियोकी ओर आपका ध्यान आकर्षित कर सकूँ। आप जानते है कि मै अहमदाबादमे व्यवहारत हजारो मजदूरोके साथ रह रहा हूँ। मुझे उनके रहन-सहनकी पूरी जानकारी है और मेरा खयाल है कि आप उनमे अधिक भिन्न नही है। वहाँ मैने देखा है कि ये मजदूर, और शायद आप भी, शराब पीनेके आदी है। आपमे से अधिकतर लोग जुएमे अपना रुपया गँवा देते है। आप अपने पडोसीके साथ शान्तिसे नही रहते, बल्कि परस्पर झगडा करते रहते है। आप लोग एक-दूसरेसे जलते है। अक्सर आप अपना काम ईमानदारीसे पूरा नही करते। अकसर आप ऐसे लोगोको अपना नेता बना लेते है, जो आपको सही रास्तेपर नही चलाते और मै जानता हूँ कि वे आपके साथ किये जानेवाले हर अन्यायसे अधीर हो जाते है। आप लोग कभी-कभी सोचते हैं कि आप हिंसाका आश्रय लेकर उस अन्यायको मिटा सकते है। आपमे से जो भी लोग पचम नही है, वे पचम

१ सभामें चूलै काग्रेस और मद्रास साहित्य अकादमीकी ओरसे मानपत्र भेंट किए गए थे। श्री एम० एस० सुब्रह्मण्यम् अय्यर गाधीजीके इस भाषणका तमिल भाषामें वाक्यश अनुवाद करते गये थे।